इकाई 1 अर्थशास्त्र का अर्थ, प्रकृति और विषय वस्तु

इकाई की रुपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 अर्थशास्त्र की परिभाषाएँ
1.2.1 धन सम्बन्धी परिभाषाएँ
1.2.2 धन सम्बन्धी परिभाषा की आलोचना
1.2.3 अर्थशास्त्र की कल्याण सम्बन्धी परिभाषाएँ
1.2.3.1 मार्शल द्वारा प्रतिपादित परिभाषा की विशेषताएँ
1.2.3.2 कल्याण सम्बन्धी परिभाषा की आलोचना
1.2.4 रोब्बिंस द्वारा प्रतिपादित परिभाषा : दुर्लभता
1.2.4.1 रोब्बिंस द्वारा प्रतिपादित परिभाषा की विशेषताएँ
1.2.4.2 रोब्बिंस द्वारा प्रतिपादित परिभाषा की आलोचना
1.2.5 विकास सम्बन्धी परिभाषाएँ
1.3 अर्थशास्त्र की प्रकृति
1.3.1 अर्थशास्त्र की विषय वस्तु
1.3.2 अर्थशास्त्र विज्ञान के रूप में
1.3.3 अर्थशास्त्र कला के रूप में
1.3.4 सकारात्मक व नियामक अर्थशास्त्र
1.3.5 अर्थशास्त्र का क्षेत्र
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 बोध प्रश्न
1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.8 स्वपरख प्रश्न
1.9 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- मार्शल द्वारा प्रतिपादित परिभाषा की व्याख्या कर सकें ।
- अर्थशास्त्र की धन सम्बन्धी परिभाषा की व्याख्या कर सकें ।
- अर्थशास्त्र की प्रकृति, क्षेत्र व उपयोगिता का वर्णन कर सकें ।
- अर्थशास्त्र को कला व विज्ञान के रूप में परिभाषित कर सकें ।
- सकारात्मक व नियामक अर्थशास्त्र का वर्णन कर सकें ।

1.1 प्रस्तावना

अर्थशास्त्र की परिभाषा के बारे में अर्थशास्त्री स्वयं एकमत नहीं हैं । कुछ प्रमुख सिद्धान्तों पर आधारित अर्थशास्त्र की परिभाषायें निम्नवत् हैं–

कोलमैन तथा वेल्स के अनुसार 'अर्थशास्त्र व्यक्ति के स्तर पर तथा सम्पूर्ण समाज के स्तर पर आर्थिकीय का अध्ययन है ।

कोलेण्डर के अनुसार 'चुनाव करने की प्रक्रिया सामाजिक परम्प्राओं और समाज की राजनीतिक वास्तविकताओं के दृष्टिगत मानव किस प्रकार अपनी

आवश्यकताओं और इच्छाओं में समन्वय करते हैं, इस प्रक्रिया का अध्ययन ही अर्थशास्त्र है ।'

एक अन्य अर्थशास्त्री मैनक्यू यह मानते हैं कि 'अर्थशास्त्र इस बात का अध्यरयन है कि समाज किस प्रकार अपने सीमित संसाधनों को व्यवस्थित करता है ।'

डेड तथा पार्किन के अनुसार 'अर्थशास्त्र वह समाज विज्ञान है जो व्यक्तियों, व्यवसाय, सरकारों तथा सम्पूर्ण समाज के द्वारा दुर्लभता के सापेक्ष चुनाव करने के अध्ययन से संबंधित है ।'

ग्वाटने, स्ट्रोक, सोबेल और मैक्स्फर्सन ने अर्थशास्त्र को इस प्रकार परिभाषित किया है कि 'यह कई मानव व्यवहार का अध्ययन है जिसमें मानव की निर्णयन क्षमता पर विशेष ध्यान दिया जाता है ।'

इस प्रकार उक्त् विभिन्न् परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र, अर्थव्यवस्था का, अर्थव्यवस्थ् में जारी समन्वय प्रक्रिया का तथा दुर्लभता के प्रभाव का, चुनाव करने के विज्ञान का तथा मानव व्यवहार का अध्ययन है ।

परिभाषाओं में एकरूपता न होना संभवत इस निष्कर्ष की ओर इंगित करता है कि वास्तव में परिभाषा महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि वे तथ्य अधिक महत्वपूर्ण हैं जो इस विषय का आधार हैं । अर्थशास्त्र की भिन्नत–भिन्न परिभाषायें कई रूपों में बहुत से मिलते–जुलते तथ्यों को उद्घाटित करती है और यह भी तथ्य है कि अर्थशास्त्र जैसे व्यापक विषय को किसी परिभाषा या कुछ परिभाषाओं में बांधा नहीं जा सकता । इसी दृष्टि से रिचर्ड लिपसे ने व्यापक रूप से प्रयोग की जाने वाली अपनी पाठ्य पुस्तड 'An Introduction to Positive Economics' (1963) में इस विषय को परिभाषित करने से मना किया और इसके स्थान पर बहुत सी आर्थिक समस्याओं एवं प्रश्नों का उदाहरण दिया जिससे एक व्यापक विषय को किसी एक परिभाषा में बांधकर न रखा जाय । संभवत जैकब वाइनर ने अपने बहुप्रचारित कथन 'अर्थशास्त्र वह है जो अर्थशास्त्री करते हैं में समाहित करने का प्रयास किया है ।

अर्थशास्त्र वास्तव में बहुत व्यापक विषय है और पिछले 200 वर्षों से अधिक के समय में यह और अधिक विकसित हुआ है । अत इस विषय को कुछ शब्दों की परिभाषा में बांधकर रखने का प्रयास उचित नहीं है । प्रसिद्ध अर्थशास्त्री वाइनर का कहना है कि परिभाषाओं की तुलना में अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य अधिक महत्वनपूर्ण हैं । विषय की परिभाषायें सामान्यतः कुछ शब्दों में इसी बात को प्रस्तुत करने का प्रयास करती हैं कि किस प्रकार अर्थव्यंवस्था की समस्याओं का विश्लेषण किया जाता है ? उस विश्लेषण की विधियां, रीतियां और तकनीकें क्या होती हैं ? दूसरे शब्दों में इसी को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र वही है जो अर्थशास्त्री करते हैं । समय के साथ विषय के विभिन्न पक्ष उद्घाटित हुए हैं । अतः इसी दृष्टि से परिभाषायें भी बदलती रही हैं ।

1.2 अर्थशास्त्र की परिभाषायें

जैसा कि ऊपर के प्रस्तरों में चर्चा की जा चुकी है, अर्थशास्त्र की परिभाषा किया जाना दुरूह एवं विवादास्पद कार्य है । वर्तमान समय तक विषय की बहुत सी परिभाषायें की जा चुकी हैं और यदि इन सभी का क्रमबद्ध विश्लेषण

किया जाय तो यह पता चलता है कि एक वैज्ञानिक विषय के रूप में अर्थशास्त्र का विकास किसी क्रमबद्ध व्यवस्था के अन्तर्गत नहीं हुआ है बल्कि यह अनियमित सा है । किन्तु अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से अर्थशास्त्र के विकास क्रम में परिभाषाओं को निम्न वर्गों में बांटकर समझा जा सकता है–

1. धन केन्द्रित परिभाषायें
2. कल्याण केन्द्रित परिभाषायें
3. दुर्लभता केन्द्रित परिभाषायें
4. विकास केन्द्रित परिभाषायें

1.2.1 धन केन्द्रित परिभाषायें–

विषय के विकास की प्रारम्भिक अवस्था् में पुराने अर्थशास्त्रियों के द्वारा अर्थशास्त्र को राष्ट्रीय धन और आर्थिक विकास से जोडकर देखा गया था तथा विषय का नाम भी अर्थशास्त्र के स्थाथन पर राजनीतिक अर्थशास्त्र रहा । ग्रीस के लेखक जैनोफोन ने चौथी शताब्दी (BCE) में अर्थशास्त्र शब्द का प्रयोग किया था (222 Journal of Economic Perspectives)। उन्होंने अर्थशास्त्र को दैनिन्दन के घरेलू प्रतिबंध की कला के रूप में व्क्त किया और अर्थव्यवस्था के लिए यह प्रयोग आज भी हो रहा है । इस अर्थव्यवस्था के साथ राजनीतिक शब्द लगाने का तात्पर्य यह था कि इस प्रकार इस विधा को राष्ट्रों के स्तर तक विस्ताारित किया जा सके ।

एडम स्मिथ ने तर्क दिया कि राष्ट्र का धन सोने और चांदी से निर्धारित नहीं होता बल्कि उन वस्तुओं और सेवाओं के द्वारा निर्धारित होता है जो देश में अथवा देश से बाहर उत्पन्न् की जाती है और जिन्हें लोगों के उपभोग के लिये प्रयोग किया जाता है अथवा संचित किया जाता है । उन्हों ने यह मान्यता भी प्रस्तुत की कि अर्थव्यवस्था के सफल बाजार विनिमय व्यवस्था में निजी हित एक रचनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करता है । जब कोई व्यक्ति बाजार अर्थव्यावस्था में किसी दूसरे व्यक्ति को कुछ मूल्यवान वस्तुयें या सेवायें उपलब्ध कराता है तो उसके अपने हित के रूप में उसकी अपनी आय का उदय होता है । यदि उत्पादन और विनिमय की क्रियाओं को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाले विधिक प्रावधान हटा दिये जायं तो बाजार की अदृश्य शक्ति मूल्यवान वस्तुओं और सेवाओं को ऐसे क्षेत्रों में लगा देगी जिसकी उत्पापदकता अधिक हो, इस तरह अर्थव्यवस्था को नियोजित और निर्देशित करने वाली किसी केन्द्रित सत्ता की अनुपस्थिति में भी समन्वय व्यवस्था और कुशलता बनी रहती है क्यो्कि बाजार की अदृश्य शक्ति निजी हित की इस अवधारणा के अन्तंर्गत सदैव नियमन करती चलती है । स्मिथ का विश्वास था कि यह प्रक्रिया राष्ट्रों में उत्पादन और उनके धन की कुंजी है ।

एडम स्मिथ ने अपने अध्ययन के प्रयासों को किसी राष्ट्र के विकास, उसकी समृद्धि और धन को निर्धारित करने की दिशा में मोडा । उनकी प्रमुख रूचि उन तथ्यों को विश्लेषित करने की थी जो किसी राष्ट्र के धन को निर्धारित करते हैं अर्थात् उत्पादन के आकार को निश्चित करते हैं । स्मिथ के अनुसार राष्ट्र का धन अधिकतर श्रम शक्ति के द्वारा किये जाने वाले उत्पादन पर निर्भर करता है । उनके अनुसार यह कुल श्रम शक्ति में से उत्पादक शक्ति के अनुपात पर निर्भर करता है । इस दृष्टि से किसी भी राष्ट्र का धन या

उसकी संपदा तब तक नहीं बढ सकती है जब तक उस राष्ट्र के मानव एवं भौतिक संसाधनों का उपयुक्त और प्रभावी प्रयोग सुनिश्चित न किया जाय । इस प्रकार स्मिथ ने समाज के धन के निर्माण और विस्तार को अर्थशास्त्रथ की विषय–वस्तु माना ।

एडम स्मिथ ने इस प्रकार अर्थशास्त्र को 'धन की प्रकृति और कारणों के अनुसंधान' प्रक्रिया माना । एडम स्मिथ के एक अनुयायी J.B.Say ने अर्थशास्त्र को 'धन के उत्पादन और वितरण के व्यवहारिक विज्ञान' के रूप में माना । अमेरिकी अर्थशास्त्री F.A.Waker ने कहा कि ' अर्थशास्त्र ज्ञान का वह समूह है जो धन से संबंधित है ।' इस प्रकार पुराने अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को उस विषय–वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जिसमें धन का सृजन और विस्तार होता है ।

'धन के विज्ञान' के रूप में अर्थशास्त्र की परिभाषा की कटु आलोचना हुई है । वास्तव में जब यह परिभाषा सामने आई उस समय धर्म और नीति शास्त्र का समाज में अति महत्व था । धन और वैभव संपदा को हेय दि्ष्ट से देखा जाता था, इसी कारण से अर्थशास्त्र को लोगों के बीच बहुत पसंद नहीं किया गया । यह तर्क दिया गया कि अर्थशास्त्रियों ने जीवन के उच्च तर मूल्योंउ की अवहेलना की और वे उन नियमों को बनाने में लगे रहे जो लोगों को और देश को अधिक धनवान बनाते हैं । धन के विज्ञान के रूप में अर्थशास्त्रन को एक निम्न कोटि और निराशाजनक विज्ञान कहकर संदर्भित किया गया । धन केन्द्रित परिभाषाओं की निम्न प्रमुख आलोचनाएं हैं–

1.2.2 'धन केन्द्रित परिभाषाओं की आलोचनाएं'–

1. 7वीं शताब्दी के दूसरे भाग में और 18वीं शताब्दी के कार्लाइल और रस्किन जैसे विद्वानों ने अर्थशास्त्र को एक निराशाजनक विज्ञान अथवा धन का देवता कहकर सम्बोधित किया । उन्होंने यह आरोप लगाया कि अर्थशास्त्री उन नियमों के पीछे दौड़ रहे हैं जो जीवन के उच्चरतर मूल्यों को महत्व नहीं देते बल्कि लोगों को, राजसत्ता को और अधिक धनी बनाने का प्रयास करते हैं । चूंकि अर्थशास्त्रा के अध्यधयन का केन्द्र बिन्दु जीवन के भौतिक संसाधनों की प्राप्ति था, अर्थशास्त्रियों ने धन को इस स्तर तक पहुंचा दिया कि यह वैज्ञानिक अध्यनयन का उद्देश्य हो गया ।
2. पुराने अर्थशास्त्रियों ने भौतिक धन तक केन्द्रित रहकर अर्थशास्त्र की परिभाषा को संकुचित कर दिया। केवल भौतिक धन पर केन्द्रित होने के कारण एडम स्मिथ और पुराने अर्थशास्त्रियों ने अभौतिक धन को अधिक महत्व नहीं दिया ।

   रॅबिन्सि ने इंगित किया कि जो वस्तुएं मांग की तुलना में सीमित होती हैं उनके कारण चुनाव की समस्या पैदा होती है और इसी का अर्थशास्त्र में अध्ययन किया जाना चाहिए । अतः यह तथ्य महत्वहीन है कि वे वस्तुएं भौतिक हैं अथवा अभौतिक । वास्तव में कई ऐसी सेवाएं हैं जो सीमितता की कोटि में आती हैं जैसे अध्यापक, डॉक्टकर, चाटर्ड लेखाकार, गायक इत्यादि की सेवाएं और ये मानव की महत्वंपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं अतः सीधे तौर पर धन से न जुडे

होने पर अर्थशास्त्र में इनका अध्ययन होना चाहिए और ये अर्थशास्त्र की विषयवस्तु हैं । अभौतिक धन पर ध्यान न देकर पुराने अर्थशास्त्रियों ने अनावश्यक रूप से अर्थशास्त्र की विषय वस्तु को संकुचित कर दिया है ।

3. चूंकि पुराने सभी अर्थशास्त्रियों ने अभौतिक चीजों जैसे शिक्षा, स्वास्य्य , अच्छा प्रशासन इत्यादि को अर्थशास्त्रथ की परिधि से बाहर रखा तो वे भौतिक धन की परिभाषा का विस्तार नहीं कर पाए जो आर्थिक विकास के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण है । वास्तव में शिक्षा, स्वास्य्य इत्यादि ऐसी सेवाएं हैं जो मानव की उत्पादकता को बढाती हैं और किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करती है । अतः बिना अभौतिक धन के अध्ययन के अर्थशास्त्रं का अध्ययन अपूर्ण है ।

4. अर्थशास्त्रअ की यह धन केन्द्रित परिभाषा मानव कल्याण के विचार को महत्व नहीं देती है जबकि धन पर बहुत अधिक बल देती है। मानवीय और सामाजिक कल्याण इसमें कोई स्थान नहीं पाते हैं जबकि वास्तविकता यह है कि धन केवल एक साधन है न कि साध्य । वास्तव में मानव और समाज का कल्याण अन्तिम साध्य है ।

एडम स्मिथ और रिकार्डो ने साधनों पर अर्थात् धन पर अनावश्यक बल दिया और जो अन्तिम लक्ष्य था अर्थात् सामाजिक कल्याण उसे महत्व नहीं दिया। इस प्रकार इन लोगों के द्वारा दी गयी अर्थशास्त्र की परिभाषायें अपूर्ण हैं ।

1.2.3 'अर्थशास्त्र की कल्याण केन्द्रित परिभाषायें '

दीर्घ अवधि तक यह विचार महत्वपूर्ण रहा कि अर्थशास्त्र उन मानवीय गतिविधियों पर केन्द्रित है जो धन के इर्द–गिर्द घूमती है किन्तु यह धन उन गतिविधियों के लिए न होकर बल्कि उस भौतिक कल्याण के लिए है जिन्हें यह प्रोत्साहित करता है । वेबराइड ने अर्थशास्त्र को इस प्रकार परिभाषित किया कि यह उन सामान्य पद्धतियों का अध्ययन है जिनसे लोग अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं । कैनन के शब्दों में 'राजनीतिक अर्थशास्त्र का लक्ष्य उन कारणों की व्याख्यां देना है जिन पर मानव मात्र का भौतिक कल्याण आधारित है । '

पिगू एक अन्य महत्वपूर्ण विद्वान हैं जिन्हों ने अर्थशास्त्रय को कल्याएण की विचारधारा की दृष्टि से परिभाषित किया है। पिगू के अनुसार 'हमारे परीक्षण की सीमा उस सामाजिक कल्याण तक सीमित होती है जो प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः धन के पैमाने से नापी जा सकती है।' मार्शल ने अर्थशास्त्र को अग्रांकित प्रकार से परिभाषित किया है। 'राजनीतिक अर्थव्यवस्था अथवा अर्थशास्त्र मानव मात्र के सामान्य जीवन व्यवहार का अध्ययन है।' यह व्यक्ति और समाज के कार्यों के उस भाग का परीक्षण करता है जो अभिन्न रूप से भौतिक कल्याण के साधनों की प्राप्ति एवं उनके प्रयोग से संबंधित है।'

आप ध्यान देंगे कि उक्त सभी परिभाषाओं में एक सामान्य सी बात पाई जा रही है और वह है भौतिक कल्याण । वेबराइड भौतिक आवश्यरकताओं की पूर्ति की बात करते हैं, कैनन भौतिक कल्याण के कारणों की बात कर रहे हैं और मार्शल भौतिक कल्याण के साधनों की बात कर रहे हैं अर्थात् भौतिक

कल्याण का बिन्दु समान रूप से पाया जाता है । अतः इन अर्थशास्त्रियों के अनुसार अर्थशास्त्र के अन्तार्गत उन मानवीय गतिविधियों का अध्ययन किया जाना है जो भौतिक दृष्टि से मानव कल्याण के लिए उचित हैं और यह भी स्वयं सिद्ध है कि धन ही मानव को उन भौतिक संसाधनों की प्राप्ति कराने का साधन है जो उसकी आवश्यतकताओं की पूर्ति करता है और उसके कल्याण का संवर्धन करता है ।

1.2.3.1– मार्शल की परिभाषा के प्रमुख तत्व –

मार्शल इत्यादि अर्थशास्त्रियों के द्वारा दी गयी कल्याण केन्द्रित परिभाषाओं के अन्तंर्गत निम्न बिन्दु महत्वपूर्ण हैं–

1. **मानव कल्याण–** अर्थशास्त्र व्यापक रूप से और प्रायोगिक रूप से मानव का अध्ययन है न कि धन का (जैसे पुराने सभी अर्थशास्त्रियों के द्वारा साबित किया गया था) । अर्थात् सभी धन से अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित हैं और वह इस अर्थ में कि यह मानव की क्रियाओं का अध्यंयन करता है अर्थात् उसकी धन कमाने की क्रियायें और धन को व्यंय करने की क्रियायें । इस प्रकार कोई भी बात जो धन के कमाने और धन के व्यय करने से संबंधित है वह आर्थिक क्रिया है । अतः मार्शल के अनुसार अर्थशास्त्र का केन्द्रीय बिन्दु मानव और उसकी धन से संबंधित क्रियायें हैं ।

2. **सामान्य जीवन व्यापार–** मार्शल ने अर्थशास्त्र को सामान्य जीवन व्याापार का अध्ययन कहा । अतः यह केवल मानव मात्र का अध्ययन है पशु पौधों और जीव जन्तुओं का नहीं । इसके अतिरिक्त यह मानव मात्र के जीवन के आर्थिक पक्षों से ही संबंधित है जबकि मानव की और भी बहुत सी गतिविधियां होती हैं । जैसे राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक और अर्थशास्त्र मानव की सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक गतिविधियों से बिल्कुल संबंधित नहीं है । यह विशुद्ध रूप से मानव की आर्थिक गतिविधियों से ही संबंधित है वास्तव में सामान्य जीवन व्यापार से मार्शल का अर्थ स्पष्ट रूप से इतना ही है कि कैसे एक व्यक्ति अपनी आय कमाता है और कैसे उसे व्यय करता है । अगर अर्थशास्त्र की भाषा में और बहुत विशिष्ट रूप से इस प्रक्रिया की व्याख्या की जाय तो इसमें निम्न बातें आएंगी ।

अ. किस वस्तु का उत्पाभ्दन किया जाय ।

ब. एक निश्चित मूल्य पर कम विक्रय किया जाय अथवा अधिक ।

स. एक निश्चित मूल्य पर अधिक क्रय किया जाय अथवा कम ।

द. एक निश्चित मजदूरी पर किसी कार्य को स्वीकार किया जाय अथवा नहीं इत्यादि ।

अर्थात् उक्त् अथवा इनसे मिलते–जुलते आर्थिक प्रश्न ही अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु हैं ।

1.2.3.2 –'कल्याण केन्द्रित परिभाषाओं की आलोचनाएं '–

मार्शल और पिगू इत्यादि के द्वारा दी गयी कल्याण केन्द्रित परिभाषाओं की हाल के वर्षों में कई आधारों पर तीव्र आलोचना हुई है । भौतिक कल्याण के विचार के प्रमुख आलोचक प्रोफेसर लियोनल रॅबिन्सय रहे हैं । आलोचना के कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नवत हैं –

1. **भौतिक कल्याण–** रॅबिन्स मानते हैं कि यह उचित नहीं है कि अर्थशास्त्री अपनी सोच को केवल भौतिक कल्याण तक सीमित करें क्योकि अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों में वस्तुतः भौतिक और अभौतिक दोनों प्रकार के कल्याण को सम्मिलित किया जाता है ।

2. **अर्थशास्त्र केवल एक सामाजिक विज्ञान हैः–** मार्शल के अनुसार अर्थशास्त्र मानव विज्ञान के स्थाहन पर सामाजिक विज्ञान बनकर रह जाता है। सामाजिक विज्ञान उन्हीा व्याक्तियों की गतिविधियों का अध्यमयन करता है जो समाज के सदस्यय के रूप में रहते हैं जबकि मानव विज्ञान सभी मानवों से जुडी हुई समस्याोओं का अध्ययन करता है, चाहे वे संगठित समुदाय में रह रहे हों अथवा इससे बाहर, यद्यपि मार्शल ने जो वांक्याश प्रयोग किया है उसमें व्यक्ति व समाजिक क्रियायें केवल हैं किन्तु धन के पैमाने से गतिविधियों को मानने के कारण उन्होंने अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु को उन लोगों के अध्ययन तक सीमित कर दिया जो समाज में रहते हुए किसी न किसी प्रकार की मुद्रा का प्रयोग करते हैं। व्यापक रूप में समझा जाय तो अर्थशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त सम्पूर्ण मानव मात्र पर लागू होते हैं और इस प्रकार अर्थशास्त्र को एक मानव विज्ञान माना जाना चाहिए न कि सामाजिक विज्ञान।

3. **मार्शल की परिभाषा श्रेणी विभाजक हैः–** इस परिभाषा के अन्तगर्त भिन्न–भिन्न प्रकार की श्रेणियों का निर्माण हो जाता है क्योंकि यह मानव की गतिविधियों को आर्थिक और अनार्थिक, भौतिक तथा अभौतिक जैसी श्रेणियों में विभाजित कर देता है। प्रोफेसर रॉबिन्स कहते हैं कि वास्तविक जीवन में भौतिक व अभौतिक के बीच का अन्तर इतना स्पष्ट नहीं है जितना कि मार्शल के द्वारा मान लिया गया है, न जाने ऐसी कितनी वस्तुएं हैं जो हमारी रोज की आधारभूत आवश्यताओं की पूर्ति करती हैं, किन्तु उन्हें किसी भी अर्थ में भौतिक नहीं कहा जा सकता रॉबिन्स के अनुसार आर्थिक समस्या का जन्म तब होगा जब सीमित साधनों के प्रयोग से कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास किया जायेगा और यह समस्या उस व्यरक्ति के लिए भी उत्पन्न होगी जो समाज से बाहर रहता है और मार्शल के विचार के अनुरूप कोई भी आर्थिक क्रय नहीं करता है। अतः अर्थशास्त्र को आर्थिक समस्या का अध्ययन करना चाहिए जो कभी भी और कहीं भी उत्पन्न हो सकती है।

4. **परिमाणात्माक मापन की असम्भव्यताः–** यह भी प्रश्न है कि कल्याण को परिमाणात्मनक रूप से मापा नहीं जा सकता क्योंकि यदि मौद्रिक मूल्य को कल्याण का पैमाना जाय तो यह एक काम चलाउ मापक तो हो सकता है पर संतोषजनक मापक नहीं। दो व्यक्ति एक ही वस्तु को क्रय करते समय समान मूल्य चुकाते हैं किन्तु उन्हें कल्याण की उपयोगिता अलग–अलग प्राप्त होती है क्योंकि तुलनात्मक रूप से गरीब व्यक्ति के लिए किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में कल्याण की मात्रा अधिक होगी।

5. **कल्याण स्वयं में अस्पष्ट हैः–** रॉबिन्स ने यह भी स्पष्ट किया कि कल्याण शब्द स्वयं में अस्पष्ट शब्द है। इसकी बहुत नपी–तुली परिभाषा नहीं दी जा सकती वास्तव में यह एक विषयगत अवधारणा है क्योंकि इसका अर्थ अलग–अलग देशों में अलग–अलग समय पर भिन्नं होता है। इसी प्रकार अलग–अलग व्यक्तियों के लिए भी कल्याण शब्दं भिन्न–भिन्न अर्थ रखता है

उदाहरण के लिए नशीले पदार्थों अथवा शराब का उपभोग किसी का कल्याण बढ़ाता है तो किसी दूसरे का घटाता है और इस प्रकार यह कहना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है कि कौन सी वस्तुअ या सेवा कल्याण में वृद्धि करती है और कौन सी वस्तु या सेवा कल्याण के लिए हानिकारक है । इसी प्रकार रॉबिन्स यह भी कहते हैं कि बहुत सी वस्तुयें या गतिविधियां इस प्रकार की होती है कि वे समाजिक कल्याण के लिए हानिकारक होती हैं जैसे शराब और कुछ नशीली दवायें अच्छा करने के स्थान पर हानि करती हैं इनसे सामाजिक कल्याण बढ़ने के स्थान पर घटता है। जबकि सूक्ष्म अर्थशास्त्र में हम यह अध्ययन करते हैं कि इन वस्तुओं का मूल्य किस प्रकार निर्धारित होता है । इस प्रकार की वस्तुओं का अध्ययन दो ही प्रकार से किया जाता है अर्थात ये वस्तुएं दुलर्भ हैं (सीमित हैं) और ये वस्तुयें भी कुछ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त लगती हैं। वास्तव में रॉबिन्स के अनुसार अर्थशास्त्र मानव कल्याण से जुड़ा हुआ विषय नहीं है बल्कि यह प्रत्येक व्यक्ति समाज की महत्वपूर्ण आर्थिक समस्याओं से संबंधित है और सबसे बड़ी समस्या है सीमितता की अथवा दुर्लभता की। उनके मत से अर्थशास्त्र में उन समस्याओं का अध्ययन होता है जो संसाधनों की सीमितता अथवा दुर्लभता के कारण उत्पन्न होती क्यों कि अधिकांश वांछित वस्तुएं और सेवाएं दुर्लभ ही होती हैं।

1.2.4– रॉबिन्स की परिभाषा (सीमितता केन्द्रित):–

वस्तुतः सर्वाधिक समान्य रूप से स्वीकार्य अर्थशास्त्र की परिभाषा लियोनल रॉबिन्स के, 'Essay on the Nature and Significance of Economic Science (1932[1935])', से उत्पन्न होती है जहॉ रॉबिन्स ने कहा कि अर्थशास्त्र वह विज्ञान है 'जो सीमित किन्तु वैज्ञानिक प्रयोगों वाली साध्यों और साधनों के बीच के मानव व्यवहार का सही संबंध है।'

फेटर (1915) और फेयरचाइल्डा फरनिशे तथा बर्क (1926) ने भी इसी विचारधारा का समर्थन किया। बर्क ने अर्थशास्त्र को इस प्रकार चिन्हित किया कि यह 'मानव की अतृप्ता और प्रकृति की कृपणता के बीच सीधा संबंध है और यही अर्थशास्त्र का आधार है। इस प्रकार इन लोगों के विचार रॉबिन्स के विचार के बहुत निकट हैं।

रॉबिन्स की परिभाषा में निम्न प्रमुख तथ्य हैं–

1.2.4.1– रॉबिन्सम की परिभाषा में निम्न प्रमुख तथ्यः–

1. अर्थशास्त्रा एक विज्ञान हैः–

रॉबिन्स के अनुसार अर्थशास्त्र केवल एक समाजिक विज्ञान नहीं बल्कि यह एक मानव विज्ञान है। यह मानव की उस क्रिया पर केन्द्रित है जिसका उदय सीमित संसाधनों से असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के दौरान संसाधनों के आवंटन में किया जाता है। रॉबिन्सं बल देते हैं कि अर्थशास्त्र एक सकारात्मक विज्ञान है अर्थात यह आर्थिक कारकों के बीच कारण परिणाम संबंध की व्याख्या करता है । यह चीजों को उस तरह प्रस्तुत करता है जैसी वे हैं ना कि वैसी जैसी उन्हें होना चाहिए। उदाहरण के लिए सकारात्मक व्यापक अर्थशास्त्र में हम इस बात पर ध्यान देते हैं कि किस प्रकार राष्ट्रीय आय का निर्धारण और वितरण किया जायेगा और इस बात की चिन्ताष नहीं की जाती कि वह वितरण समान है अथवा नहीं अथवा आय के वितरण का क्या आदर्श

स्वरूप होना चाहिए । दूसरी ओर आदर्शात्मक विज्ञान क्या आदर्श होना चाहिए इस पर ध्यान केन्द्रित करता है।

2. **असीमित इच्छाएंः–**

आर्थिक जीवन का आधारभूत तथ्य यह है कि लक्ष्य असीमित रहे अर्थात व्यक्ति की आवश्यकतायें अन्नत हैं । यदि आवश्यकता सीमित अथवा निश्चित होती तो आर्थिक समस्या उत्पन्न नहीं होती । किन्तु असीमित आवश्यकतायें होने के कारण हमें उनके बीच चुनाव करना पड़ता है। हालांकि यह ध्यान देने योग्य है कि सभी आवश्यताओं की तीव्रता एक बराबर नहीं होती कुछ आवश्यकतायें औरों के मुकाबले अधिक तीव्र होती हैं और सत्य भी यही है कि आवश्कयताओं की विभिन्न तीव्रताओं के कारण हमें उनके चुनाव करना पड़ता है।

3. **असीमित साधनः–**

आर्थिक समस्या को जन्म देने वाला एक अन्यभ महत्वपूर्ण कारक यह है कि साधन अथवा संसाधन जिनसे की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है इच्छाओं की तुलना में बहुत कम होती है। यदि संसाधन प्रचुर मात्रा में होते और असीमित होते तो सारी आवश्यकतायें स्वतः ही पूरी हो जाती चुनाव करने की समस्यात नहीं रहती और अर्थशास्त्र नाम का वैज्ञानिक भी विषय न होता।

4. **संसाधनों का वैज्ञानिक प्रयोग होनाः–**

रॉबिन्स के अनुसार उपलब्ध संसाधनों को अलग–अलग प्रयोगों में लगाया जा सकता है और इस कारण से समाज को यह चुनना होता है कि किसी संसाधन को किस प्रयोग में लगाया जाय । चूंकि संसाधनों के वैज्ञानिक प्रयोग हैं तो हमें विभिन्न प्रयोगों के बीच चुनाव करना पड़ता है और यह निर्धारण करना होता है कि इन संसाधनों का सर्वोतम प्रयोग क्या होगा। उदाहरण के लिए विद्युत एक संसाधन है इसे कितने ही प्रयोगों में लगाया जा सकता है । आज समाज को यह निर्धारित करना पड़ेगा कि कौन सा प्रयोग अधिक महत्वपूर्ण हैं अर्थात खेत में सिंचाई के लिए अथवा घरों में शीतल वायु प्रदान करने के लिए इत्यादि। अतः हम यह पाते हैं कि रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र को एक वैज्ञानिक अध्ययन के रूप मी प्रस्तुत किया है। उन्होंने अर्थशास्त्र को चुनाव का एक विज्ञान बनाया है लेकिन उन्होंने मानव आवश्यकताओं को संतुष्ट करने वाली वस्तुओं और सेवाओं को सम्मिलित करते हुए अर्थशास्त्र की विषय वस्तु को व्यापक स्वरूप प्रदान किया है।

फिर भी रॉबिन्स की परिभाषा में भी कुछ सीमायें है और इस आधार पर इसकी आलोचना भी की जाती है।

1.2.4.2– रॉबिन्स की परिभाषा की आलोचनाः–

रॉबिन्स के विचार को इसी आधार पर आलोचना का सामना करना पड़ा कि इसने अर्थशास्त्र को एक ही साथ बहुत व्यापक और संकुचित दोनों ही स्वरूप प्रदान किये। इसे इस अर्थ में बहुत व्यापक कहा जा सकता है कि इसने अन्य समाज विज्ञानों से अर्थशास्त्र को भिन्न नहीं किया दूसरी ओर इसे बहुत संकुचित इसलिए कहा जाता है कि क्योंकि यह सिद्धान्त पक्ष की ओर बहुत झुका हुआ विचार है और इसमें प्रायौगिक विश्ले षण का महत्व कम हो जाता है। ऐसा लगता है अर्थशास्त्र में से नीतिशास्त्र लिखा गया है।

- रॉबिन्स के विचार को एक ही साथ बहुत व्यापक बहुत संकुचित माना गया है। यह बहुत व्यापक इस अर्थ में है कि सामान्यीकरण की प्रक्रिया में यह अर्थशास्त्र और अन्य समाज विज्ञानों के बीच की विभाजन रेखा को भी समाप्ता कर देता है और विषय का क्षेत्र बहुत व्यापक हो जाता है। दूसरी ओर यह बहुत संकुचित है क्योंकि इसमें व्यापक अर्थशास्त्र के प्रश्न सम्मिलित नहीं है जबकि वास्तविकता यह है कि व्याापक अर्थशास्त्र के प्रश्न आधुनिक युग में बहुत महत्वपूर्ण हो गये हैं। उक्त के अतिरिक्त इसमें आर्थिक विकास का सिद्धान्त भी सम्मिलित नहीं है इन अर्थों में यह बहुत संकुचित है।
- रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र को लक्ष्यों के बीच तटस्थ माना है किन्तु बहुत से अर्थशास्त्रियों का यह तर्क है कि यदि अर्थशास्त्र को सामाजिक कल्याण और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना है तो इसे लक्ष्यों के बीच की अपनी तटस्था को छोड़ना होगा। अर्थशास्त्र सामाजिक बेहतरी के वाहक के रूप में तभी काम कर सकता है जब ये निर्णय ले सके कि विभिन्न प्रकार के लक्ष्यों की पूर्ति में क्या सही और क्या गलत है। अर्थशास्त्र को लक्ष्यों के प्रति तटस्थत घोषित कर रॉबिन्स ने इस विषय का आदर्शात्मक पक्ष समाप्त कर दिया है।
- रॉबिन्स की परिभाषा के अन्तर्गत व्यापक अर्थशास्त्र के विषय क्षेत्र से बाहर हो जाते हैं वह मूलतः सूक्ष्म अर्थशास्त्र पर ध्यान केन्द्रित करते हैं अर्थात इसमें प्रमुखतः उत्पाद का सिद्धान्त और उत्पादन के साधनों का मूल्य प्रमुख रूप से आते हैं। दूसरी ओर आजकल व्यापक अर्थशास्त्र का महत्व बढ़ गया है क्योंकि इसमें हम उन आर्थिक पक्षों की व्याख्या करते हैं जो सम्पर्ण अर्थव्यवस्था की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं जैसे राष्ट्रीय आय का निर्धारण एवं वितरण, अर्थव्यवस्था में विस्तार एवं संकुचन, उत्पादन, आय एवं रोजगार के अवसरो के प्रश्न इत्यादि। रॉबिन्स ने, इस प्रकार इन पक्षों पर ध्यान नहीं दिया और उनकी परिभाषा इस अर्थ में व्यापिक नहीं है।
- रॉबिन्स की परिभाषा में आर्थिक विकास का सिद्धान्त सम्मिलित नहीं है क्योंकि उन्होंने किसी एक समय विशेष में उपलब्ध संसाधनों के वितरण की ही व्याख्या की है और इस बात की कोई चर्चा नहीं है कि संसाधनों की सीमितता को कैसे कम किया जा सकता है। आर्थिक विकास के सिद्धान्त में हम यह अध्ययन करते हैं कि संसाधनों की सीमितता को कैसे कम किया जा सकता है अर्थात राष्ट्रीय आय के स्तर को बढ़ाकर और अधिक धन एकत्रित कर संसाधनों की कमी को दूर किया जा सकता है। रॉबिन्स की परिभाषा में यह महत्वपूर्ण पक्ष सम्मिलित नहीं है।
- रॉबिन्स ने बेरोजगारी की समस्यां को बिल्कुल छोड़ दिया है क्योंकि अल्प बेरोजगारी सीमितता की नहीं बल्कि प्रचुरता की समस्या है और इस दृष्टि से अर्थशास्त्र में बेरोजगारी के कारणों का अध्ययन अवश्य होना चाहिए और इसे कम करने के मार्गों पर विचार किया जाना चाहिए।

1.2.5– विकास केन्द्रित परिभाषायें–

बहुत से आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की परिभाषा को विकास के पक्ष से जोड़ा है यद्यपि रबिन्स के द्वारा प्रस्तुत सीमितता और चुनाव की समस्या का पक्ष प्रयोग किया गया है किन्तु उसके स्तैतिक स्वरूप में सुधार किया गया है।

प्रोफेसर बोल्डिंग कहते हैं कि 03 प्रकार की मानवीय क्रियाओं को आर्थिक क्रियायें कहा जा सकता है, जैसे–उत्पादन, उपभोग और विनिमय। इन क्रियाओं के अध्ययन में मात्राएं अवश्य आती हैं। उदाहरण के लिए वस्तुओं का उत्पादन, मूल्य, मजदूरी, ब्याज और लगान। इन्हें आर्थिक मात्राएं कहा जाता है और अर्थशास्त्र इन आर्थिक मात्राओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। आप इस दृष्टि से देखें तो अर्थशास्त्र आर्थिक मात्राओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। आर्थिक मात्राओं से संबंधित आंकड़ों का संग्रहण और निर्वचन आर्थिक सांख्यिकी और आर्थिक इतिहास कहलाता है।

प्रोफेसर सैमुलसन के अनुसार आर्थिक विज्ञान की पारम्परिक सीमाओं के बारे में कुछ भी आधारभूत सत्य नहीं है क्योंकि कोई भी व्यवस्था उद्देश्य की दृष्टि से बहुत व्यापक और संकुचित हो सकती है। इसी तरह एक व्यवस्था में प्रयुक्त आंकड़े एक बहुत व्यापक आधार से लिये जा सकते हैं। किसी भी सिद्धान्त की उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि संबंधित विश्लेषण में प्रयोग होने वाले घटक प्रमुख होने चाहिए। विशेष रूप से सैमुलसन अर्थशास्त्र कल्याण पर परिभाषित करते हैं, ''यह इस बात का अध्ययन है कि किस प्रकार व्यक्ति और समाज मुद्रा का प्रयोग करें अथवा मुद्रा का प्रयोग किये बिना वैज्ञानिक प्रयोगो वाले सीमित उत्पादक संसाधनों का प्रयोग कर एक निश्चित समय अंतराल में विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन करते हैं और किस प्रकार उन्हें वर्तमान और भविष्य के उपभोग के लिए लोगों में और समाज के समूहों में वितरित करते हैं।

इस प्रावेगिक परिभाषा का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि यह न केवल विकास केन्द्रित है बल्कि यह अपने क्षेत्र में वस्तु विनिमय व्यवस्था को भी सम्मिलित कर लेती है। चुनाव की समस्या मौद्रिक अर्थव्यवस्था और वस्तुत विनिमय अर्थव्यवस्था दोनों में समान रूप से उत्पन्न होती है और समय तत्व के समावेश से अर्थशास्त्र प्रावेगिक हो जाता है क्योंकि मानवीय आवश्यकतायें निश्चित या स्थिर नहीं होती हैं और समय के साथ यह बदलती रहती हैं। इस दृष्टि से सैमुलसन की परिभाषा चुनाव की समस्या को प्रावेगिक आधार प्रदान करती है। यह परिभाषा सार्वभौमिकता का तथ्य भी रखती है। इस दृष्टि से यह प्रोफेसर रबिन्स की दुर्लभता केन्द्रित परिभाषा के ऊपर एक सुधार है।

- अर्थशास्त्र के संबंध में प्रचलित सामान्य प्रस्तुतीकरण के अन्तर्गत पाठ्य–पुस्तकों में विषय के विकास का क्रम उपयुक्त प्रकार से ही आता गया है अर्थात् अर्थशास्त्र की परिभाषा को 04 वर्गों में बांटकर समझने का प्रयास किया गया है और प्रत्येक की विशेषताएं और आलोचनाएं बतायी गयी हैं। वास्तव में सत्य यह है कि किसी भी विषय की विकास यात्रा के कुछ चरण होते हैं और प्रारम्भिक चरण से लेकर सामान्य रूप से समझी जाने वाली परिपक्वता की स्थिति तक उस विषय के मूलभूत ढांचे में परिवर्तन होते रहते हैं और अंततः उसका एक आधारभूत स्वरूप निर्मित हो जाता है।

ठीक इसी प्रकार अर्थशास्त्र की विकास यात्रा में भी उक्त 04 वर्गीकरण वास्तव में 04 प्रमुख पड़ाव हैं जिनसे होते हुए विषय का वर्तमान स्वरूप आज हमारे सामने उपलब्ध है।

1.3 अर्थशास्त्र की प्रकृति

अर्थशास्त्र की प्रकृति को समझने के लिए निम्न पर विचार किया जाना उचित होगा–

1. अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु
2. अर्थशास्त्र एक विज्ञान अथवा एक कला के रूप में
3. अर्थशास्त्र एक सकारात्मक अथवा आदर्शात्मक विज्ञान के रूप में
4. अर्थशास्त्र एक समाज विज्ञान के रूप में
5. अर्थशास्त्र और व्यवहारिक समस्यायें

1.3.1 अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु–

अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु के बारे में भिन्न–भिन्न मत व्यक्त किये हैं सामाजिक परिस्थितियों में बदलाव एवं विकास के साथ ही अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु में भी परिवर्तन हुआ है। प्रारम्भ में अर्थशास्त्र के अन्तर्गत धन को प्रमुख विषय–वस्तु माना गया और एडम स्मिथ तथा अन्य पुराने अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को धन का विज्ञान कहा किन्तु इसके पश्चात् प्रोफेसर एल्फ्रेड मार्शल की अगुवाई में अर्थशास्त्र को कल्याण का विषय कहा गया अर्थात् धन से हटकर कल्याण, अर्थशास्त्र की प्रमुख विषय–वस्तु हो गया। बहुत से अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को धन और कल्याण दोनों से संबंधित माना। मार्शल ने अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु को मानव के द्वारा जीवन के सामान्य व्यापार में उपभोग, उत्पादन, विनिमय और वितरण तक सीमित कर दिया, इसी के साथ मानव को तार्किक प्राणी माना गया और यह मान लिया गया कि वह समसामयिक, सामाजिक, विधिक और संस्थागत ढांचे में कार्य करता है। इस प्रकार अतार्किक व्यक्तियों के व्यवहार को अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु से बाहर रखा गया। तार्किक व्यक्तियों में वे सभी लोग सम्मिलित होते हैं जो अपवाद स्वरूप हैं जैसे अत्यधिक कृपण व्यक्ति अथवा नशे में निर्णय लेने लेने वाला व्यक्ति इत्यादि।

आगे चलकर रबिन्स और अन्य आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को मानव और उसके व्यवहार से जोड़ा। इसमें बहुत से विषय सम्मिलित हुए जैसे उत्पादन और उत्पादकता, बेरोजगारी उद्योगो की प्रास्थिति फर्मो का आकार, एकाधिकार, मजदूरी, लाभ, ब्याज, लगान, कराधान, आयात, निर्यात इत्यादि। रबिन्स ने ऐसे बहुत से उदाहरण दिये और बताया कि बहुत सी मानवीय क्रियायें आर्थिक महत्व रखती हैं किन्तु उनका भौतिक कल्याण से कोई संबंध नहीं है क्योंकि एक ही वस्तु या सेवा एक समय में भौतिक कल्याण में वृद्धि करती है जबकि दूसरे समय और दूसरी परिस्थिति में ऐसा नहीं होता। इसीलिए रबिन्स की मान्यता है कि किसी भी वस्तु या सेवा के आर्थिक महत्व को मूल्य के संबंध में परखा जाना चाहिए । उनका कहना है कि किसी भी वस्तु जिसका कि मूल्य होता है के संबंध में यह आवश्यक नहीं है कि वह वस्तु भौतिक कल्याण में वृद्धि ही करे । केवल महत्वपूर्ण यह है कि यह वस्तु दुर्लभ होनी चाहिए और उसके वैकल्पिक प्रयोग होने चाहिए। इस प्रकार अर्थशास्त्र

धन के उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण की तुलना में सीमित संसाधनों के असीमित लक्ष्यों की प्राप्ति की प्रक्रिया से संबंधित है। इस दृष्टि से अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु प्रमुखतः परिवारों, फर्मों और प्रशासकीय इकाइयों की आर्थिक समस्या से प्रमुख रूप से संबंधित है।

पूर्व में ही यह बताया जा चुका है कि बोल्डिंग के अनुसार मानव की आर्थिक क्रियायें प्रमुखतः 03 प्रकार की हैं 'उत्पादन, उपभोग और विनिमय'। इनमें से उत्पादन वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति उपलब्ध संसाधनों से उत्पाद का निर्माण करता है और ये वे उत्पाद होते हैं जिनकी लोगो को आवश्यकता है। इन उत्पादों को उस स्थान पर उपलब्ध कराया जाता है जहां इनकी आवश्यकता होती है इसलिए अर्थशास्त्र गतिविधियों की एक लम्बी श्रृंखला होती है जैसे भेड़ की ऊन आस्ट्रेलिया की एक फर्म में उत्पादित की जाती है और वहां से लेकर कपड़े की बुनाई के बाद सिलाई की दुकान तक पहुॅचाने की प्रक्रिया में जितनी भी क्रियायें आती हैं वे सभी क्रियायें अर्थशास्त्र के अन्तर्गत हैं। दूसरी ओर उपभोग मानव के श्रम के प्रयोग से उत्पन्न वस्तुओं के प्रयोग करने से है जैसे कपड़ों का पहनना, यातायात के साधनों का प्रयोग करना, टी0वी0 सेट का प्रयोग करना, किसी भवन का प्रयोग करना इत्यादि। इसी क्रम में आर्थिक विश्लेषण में प्रयुक्त अधिकांश प्रक्रियायें विनिमय से प्रभावित होती हैं क्योंकि सामान्यतः वस्तुओं व सेवाओं को मुद्रा के माध्यम से विनिमय कर प्राप्त किया जाता है और यही मुद्रा कालांतर में अन्य वस्तुओं और सेवाओं के लिए प्रयोग की जाती है। प्रोफेसर बोल्डिंग का कहना है कि विनिमय वस्तुओं और सेवाओं का मौद्रिक विनिमय से ही संबंधित नहीं है बल्कि यह उत्पादन के साधनों के मूल्य का निर्धारण भी करता है तथा बाजार में उपलब्ध वस्तुओं के मूल्य का निर्धारण करता है चूंकि उत्पादन के साधनों के विनिमय और उनके मूल्य निर्धारण का अध्ययन अलग से किया जाता है अतः उत्पादन के साधनों का अध्ययन वितरण के अन्तर्गत आता है। इस प्रकार प्रोफेसर बोल्डिंग के द्वारा बताई गई प्रमुख 03 क्रियाओं में वितरण भी जुड़ जाता है।

किसी वस्तु का क्रय–विक्रय विनिमय कहा जाता है। विनिमय के और भी कई उदाहरण हो सकते हैं जैसे मकानों को किराये पर उठाना, धन उधार दिया जाना और श्रमिकों का मूल्य निर्धारण इत्यादि। जब एक मकान किराये पर उठाया जाता है तो मुद्रा के रूप में प्राप्त राशि के बदले में मकान के प्रयोग की सुविधा दूसरे पक्ष को दी जाती है। जब धन उधार लिया जाता है तो वर्तमान में उपलब्ध धन के सापेक्ष भविष्य के धन को विनिमय किया जाता है और यह एक ज्ञात सत्य है कि भविष्य में चुकाई जाने वाली राशि वर्तमान में उधार ली गयी राशि से अधिक होती है और यह आधिक्य ही ब्याज कहलाता है। इस प्रकार धन के प्रयोग की अवधि के दौरान जो राशि चुकाई जाती है वही ब्याज है इसी प्रकार जब किसी श्रमिक की सेवायें किराये पर ली जाती हैं तो इस प्रक्रिया में भी विनिमय होता है क्योंकि एक ओर श्रमिक का श्रम प्राप्त किया जाता है तो दूसरी ओर उसे भुगतान किया जाता है जिसे मजदूरी कहते हैं।

यदि हम अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु को सूक्ष्म स्तर पर परखें तो यह ज्ञात होता है कि समस्त सूक्ष्म अर्थशास्त्र मांग और पूर्ति पर आधारित वस्तुओं के मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया के सिद्धान्तों के बारे में है। मांग पक्ष में हम उपभोक्ता के व्यवहार से संबंधित नियमों का अध्ययन करते हैं जबकि पूर्ति पक्ष में उत्पादन के नियम और उत्पादकों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। बाजार संतुलन का अध्ययन विनिमय के अन्तर्गत किया जाता है इस प्रकार अर्थशास्त्र में उत्पादन, उपभोग तथा वस्तुओं एवं सेवाओं के विनिमय से संबंधित पक्षों का अध्ययन किया जाता है लेकिन केवल इन गतिविधियों का अध्ययन किया जाना ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि उन मात्राओं का अध्ययन भी किया जाना चाहिए जिन मात्राओं में ये सभी क्रियायें होती हैं अर्थात् उपभोग, उत्पादन और विनिमय की मात्रा या इसका आकार क्या है अर्थशास्त्री केवल उन्हीं मुद्दों तक केन्द्रित नहीं रहते हैं जो वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन से संबंधित हैं बल्कि अर्थशास्त्र में रोजगार में लगे लोगों की संख्या, कार्मिकों की मजदूरी, आयात पर शुल्क की दरें और उत्पादों के मूल्य इत्यादि सभी विषयों का अध्ययन किया जाता है इन्हीं को वास्तव में आर्थिक मात्रायें कहा जा सकता है।

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत उन संगठनों का भी अध्ययन किया जाता है जो किसी देश की आर्थिक गतिविधियों के अधिकांश भाग को नियंत्रित और निर्देशित करते हैं क्योंकि उपभोग, उत्पादन और विनिमय की आर्थिक क्रियायें व्यक्तियों के द्वारा की जाती हैं पर इस सब प्रक्रिया में व किसी न किसी संगठन से प्रभावित होते हैं अथवा उनसे जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिये विनिमय की प्रक्रिया में मण्डी एक संस्था है और इस दृष्टि से मण्डी की गतिविधियों का अध्ययन भी अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु में सम्मिलित है ऐसी संस्थाओं के माध्यम से आर्थिक क्रियाओं का बड़ा भाग संचालित और नियंत्रित होता है उक्त के अतिरिक्त सार्वजनिक वित्त भी अर्थशास्त्र के अन्तर्गत सम्मिलित है क्योंकि इसके अन्तर्गत सार्वजनिक प्राधिकारियों की आय और उनके व्यय के विषय आते हैं राज्य के द्वारा उपलब्ध करायी जाने वाली सेवाओं का बहुत विस्तार हो चुका है और इसलिए समुदाय की रक्षा के लिये नियमों का बनाया जाना और लागू किया जाना भी महत्वपूर्ण है। इसी कारण से वर्तमान में राज्य व्यक्तियों के आर्थिक जीवन में नियमित रूप से हस्तक्षेप करता है जिससे लक्षित सामाजिक और आर्थिक उद्देश्य प्राप्त किये जा सकें इस प्रकार अर्थशास्त्र एक समाज विज्ञान है जिसमें विकास और स्थिरता बनाये रखने के लिए सीमित संसाधनों के वितरण पर ध्यान दिया जाता है।

1.3.2– अर्थशास्त्र एक विज्ञान के रूप में–

किसी भी ऐसे विषय को विज्ञान कहते हैं जो ज्ञान का क्रमबद्ध स्वरूप हो अर्थात् इसमें केवल तथ्यों का संकलन नहीं होना चाहिए बल्कि तथ्यों के बीच कारण परिणाम का संबंध भी होना चाहिए । इसमें एकरूपताएं भी होती हैं और कुछ निष्कर्ष रूप सामान्य नियम बनाये जा सकते हैं जिन्हें स्वः स्वीकार्य अर्थात् आर्थिक नियम कहा जा सकता है । इस दृष्टि से देखें तो भौतिकी एक विज्ञान है क्योंकि यह बाह्य जगत की समानताओं का अध्ययन करता है और इसी प्रकार सामाजिक जगत की समस्याओं का अध्ययन करने वाले विषय

मनोविज्ञान को भी विज्ञान कहा जाता है। इस दृष्टि से अर्थशास्त्र को भी एक विज्ञान कहा जा सकता है क्योंकि यह सामान्य जीवन व्यापार में मानवीय क्रियाओं में निहित समानताओं का अध्ययन करता है इस विषय में मानव व्यवहार और आर्थिक उद्देश्य से किये गये मानव व्यवहार के आधार पर सामान्यीकरण किये जाते हैं और ये नियम कहलाते हैं अतः अर्थशास्त्र विज्ञान है क्योंकि यह बिखरे हुए तथ्यों में से समानतायें निकालकर नियमों का निर्माण करता है। प्रोफेसर मार्शल के अनुसार अर्थशास्त्री एक में बहुतों और बहुतों में एक की खोज करने का प्रयास करता है।

यह कहा जाता है कि विज्ञान की अवधारणा सामान्यतया मापन के योग्य होती है और इस दृष्टि से भी अर्थशास्त्र में मानव की उन्हीं क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जिन्हें मुद्रा के पैमाने से मापा जा सकता है किसी भौतिक विज्ञानी के संतुलन के समान ही अर्थशास्त्र में भी मानवीय उद्देश्यों से की गयी क्रियाओं के मापन के लिए मुद्रा का पैमाना उपयोग किया जाता है। इस तरह अन्य सभी समाज विज्ञानों की तरह अर्थशास्त्र अधिक निश्चित है क्योंकि किसी भी अन्य समाज विज्ञान में कोई बाह्य मापक प्रयोग नहीं होता है जो निश्चित परिणात्मक माप प्रस्तुत कर सके।

फिर भी यह याद रखना चाहिये कि आर्थिक दृष्टि से किये गये मानवीय व्यवहार को भी पूर्ण शुद्धता के साथ नहीं मापा जा सकता और इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मापन का कार्य वास्तव में शत–प्रतिशत पूर्ण नहीं होता फिर भी अर्थशास्त्र में बहुत हद तक मापन संभव है और अन्य समाज विज्ञानों की तुलना में यह अधिक शुद्धता से मापन कर सकता है किन्तु भौतिक विज्ञान के समान शुद्ध नहीं हो सकता। इसका प्रमुख कारण यह है कि मानवीय व्यवहार और बाजार की शक्तियां सभी कुछ अनियंत्रित मापन में होती है । यद्यपि मानव एक तर्क युक्त प्राणी है और उसमें किसी भी क्रिया से संबंधित सभी पक्षों पर विचार करने की शक्ति है । लेकिन अन्ततोगत्वा विभिन्न मानवों का व्यवहार एक सामान्य परिणाम दर्शाता है और यही मानव परिणाम किसी नियम का निर्माण करता है और यही कारण है कि आर्थिक नियमों का निर्माण किया जा सकता है । किन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो अतार्किक व्यवहार करते हैं । अतः अर्थशास्त्री यह मान लेते हैं कि ऐसे लोगों का एक अच्छा सा समूह है और वे सामान्य नियम को प्रभावित करते हैं और इस प्रकार अर्थशास्त्र के कथन अधिकांश दशाओं में सही होत हैं । किन्तु सबके लिए सही नहीं होते। भौतिक विज्ञानियों के द्वारा बनाये गये नियम सामान्य स्वीकार्यता के नियम है और उनके अन्तर्गत शुद्ध परिणात्मक गणना की जा सकती है। दूसरी ओर अर्थशास्त्र के नियम सीमित किन्तु सामान्य मान्यता रखते हैं क्योंकि अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु मानव व्यवहार है जिसका शुद्ध परिणात्मक मापन नहीं किया जा सकता और इसके बारे में कोई स्वःस्वीकार्य नियम नहीं बनाया जा सकता।

मानव में विद्यमान स्वतंत्र इच्छाशक्ति वास्तव में अर्थशास्त्र के नियमों को पूर्ण विज्ञान बनाने से रोकती है और अर्थशास्त्री ऐसे नियमों में शत–प्रतिशत पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाते हैं । इसी स्वतंत्र इच्छाशक्ति के कारण यह भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि सभी लोग एक सी परिस्थिति में एक सा

व्यवहार करेंगे । किन्तु यह निश्चित है कि अधिकांश व्यक्ति किसी एक परिस्थिति में एक सा ही व्यवहार करते हैं। इस दृष्टि से स्वतंत्र इच्छाशक्ति होते हुए भी संभवतया के गणितीय नियम के आधार पर मानव की आर्थिक क्रियाओं की भविष्यवाणी की जा सकती है । क्योंकि यह स्थापित तथ्य है कि सामान्यतया लोग तकपूर्ण निर्णय लेते हैं। इस प्रकार मूल्य कम होने पर उपभोक्ता अधिक क्रय करते हैं और उत्पादक मूल्य बढ़ने पर माल अधिक बेचते हैं । इसी तरह से हम मानव की क्रियाओं की भविष्यवाणी करते हैं और सामान्य नियम नियमित करते हैं।

यह भी निर्विवाद रूप से सत्य है कि अर्थशास्त्र की भविष्यवाणियां कई बार गलत सिद्ध होती हैं और इसे अर्थशास्त्र के अवैज्ञानिक स्वरूप के कारण संभव हुआ माना जाता है किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है वास्तविकता यह है कि संबंधित कारको के प्रति हमारी जानकारी अपूर्ण होती है जबकि विषय और उसके स्वरूप में वैज्ञानिक। जीव विज्ञान के नियम बाद की घटनाओं से उत्पन्न नहीं होते बल्कि हो चुकी घटनाओं से उत्पन्न होती हैं । किन्तु इस आधार पर कोई भी यह नहीं कहता कि जीव विज्ञान एक विज्ञान नहीं है व्यापारिक मंदी की स्थिति का बहुत पहले ही अनुमान लगाया जा सकता है जबकि आने वाले तूफान का अनुमान इतनी निश्चितता के नहीं लगाया जा सकता। इसका अर्थ है अर्थशास्त्र की भविष्यवाणियां मौसम विज्ञान की भविष्यवाणियों से अधिक विश्वसनीय होते हैं । अतः अर्थशास्त्री का काम बिल्कुल वही है जो एक प्राकृतिक विज्ञानी का काम है अर्थात् बिना पक्षपात के तर्कों का प्रयोग कर प्राप्त किये गये आंकड़ों के आधार पर घटनाओं से संबंधित सामान्य नियम बनाना । अतः अर्थशास्त्र का यह दावा कि यह विज्ञान है केवल इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता कि इसमें निश्चितता और भविष्यवाणी की बिल्कुल शुद्ध शक्ति नहीं है।

1.3.3– अर्थशास्त्र एक कला के रूप में–

प्रोफेसर कीन्स के अनुसार व्यवस्थित ज्ञान का प्रयोग एक कला है और कला वस्तुतः निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नियमों की व्यवस्था को प्रयोग करना होता है । इस दृष्टि से अर्थशास्त्र को एक कला कहा जाता है । अर्थशास्त्री अपने सैद्धान्तिक ज्ञान के आधार पर किसी अनुकूलतम परिस्थिति को प्राप्त करने के लिए मार्ग प्रस्तुत करता है । जैसे इसमें सीमान्त उपयोगिता का नियम यह बताता है कि किस प्रकार उपभोक्ता अपनी कुल संतुष्टि को अधिकतम कर सकता है।

उक्त के अतिरिक्त किसी आर्थिक निर्णय को लेने के लिये 03 प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता होती है।

1. निर्णयकर्ता के लिए उपलब्ध विकल्पों की जानकारी।
2. इन विकल्पों का चुनने की दशा में होने वाले परिणामों की जानकारी।
3. वह आधार अथवा नियम जो निर्णयकर्ता को यह बताता है कि किस निर्णय से प्राप्त होने वाले कौन से परिणाम फर्म के लिए बहुत महत्वपूर्ण है ।

उदाहरण के लिये यदि उत्पादक यह जानना चाहता है कि उसे वस्तु की कितनी मात्रा उत्पादित करनी चाहिये तो उसके पास उन सभी संभावित

मात्राओं को उत्पन्न करने के विकल्पों की जानकारी होती है जो संबंधित उद्योग के द्वारा उत्पादित की जा सकती है किसी भी विकल्प को चुनने के परिणामों के रूप में प्रत्येक दशा में 02 जानकारियां उपलब्ध होती हैं। इनमें से एक है उत्पादित करने की लागत और दूसरी है वह आय जो इसे बेचने से प्राप्त होगी। यह भी एक ज्ञात सत्य है कि उत्पादक का लक्ष्य अपने लाभो को जितना संभव हो उतना बढ़ाना होता है। इस आधार पर वह उन विकल्पों की तलाश करता है जो कुल आगम (TR) और कुल लागत (T) को अधिकतम करते हैं जिस बिन्दु पर सीमान्त लागत सीमान्त आगम की बराबर हो जाती है ।वही बिन्दु अधिकतक लाभ का बिन्दु होता है और यह एक आर्थिक नियम है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि नियमों का वस्तुस्थिति रूप से प्रयोग किया जाना कला है और इस दृष्टि से अर्थशास्त्र भी एक कला है । किन्तु यह एक स्थापित तथ्य है कि अर्थशास्त्र मूलतः एक विज्ञान है । अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि वास्तव में अर्थशास्त्र एक विज्ञान है किन्तु कला की दृष्टि से अपनाई गई तकनीकी और सिद्धान्तों का भी इसमें व्यापक प्रयोग होता है।

1.3.4– सकारात्मक और आदर्शात्मक अर्थशास्त्र–

अर्थशास्त्र दो प्रकार के प्रश्नों का उत्तर उपलब्ध कराता है और ये दो प्रकार हैं वास्तविक स्थिति और आदर्शात्मक स्थिति। वास्तविक अथवा सकारात्मक अर्थशास्त्र सही या गलत के बारे में कोई निर्णय किये बिना आर्थिक प्रणालियों के व्यवहार की व्याख्या करता है । यह बताता है कि क्या वास्तव में है और ये किस तरह कार्य करता है इसका इस बात से कोई संबंध नहीं है कि क्या होना चाहिए इस प्रकार वास्तविक अर्थशास्त्र में कुछ इस प्रकार के प्रश्न होते हैं कि अकुशल श्रमिकों की मजदूरी किस तरह निर्धारित होती है अथवा यदि कंपनियों पर आयकर हटा दिया जाय तो क्या होगा इत्यादि । इन प्रश्नों के उत्तर वास्तविक या सकारात्मक अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु हैं।

दूसरी ओर आर्दशात्मक अर्थशास्त्र आर्थिक व्यवहार के परिणामों पर सोचता है कि वे सही हैं या गलत और इन्हें किस तरह और उत्तम बनाया जा सकता है आर्दशात्मक अर्थशास्त्र में आदर्शात्मक स्थिति के बारे में निर्णय लिया जाता है और भविष्य के लिए सुझाव दिये जाते हैं जिससे आदर्श स्थिति प्राप्त की जा सके । जैसे क्या सरकार को उच्च शिक्षा में आर्थिक सहायता देनी चाहिए या क्या सरकार को उच्च शिक्षा की लागत को नियंत्रित करना चाहिए अथवा चिकित्सा सुरक्षा योजना के अन्तर्गत क्या चिकित्सकीय लाभ उन्हीं वरिष्ठजनों को मिलना चाहिए जिनकी आय एक निश्चित सीमा से अधिक नहीं है अथवा क्या भारत को उन विदेशी वस्तुओं का आयात अनुमत करना चाहिए जो भारत में उत्पादित वस्तुओं से प्रतियोगिता करते हैं अथवा क्या हमें उत्तरा करों को समाप्त कर देना चाहिए आदि इत्यादि । उपर्युक्त सभी प्रश्नों के उत्तर आर्दशात्मक अर्थशास्त्र में आते हैं और चूंकि ये सभी राष्ट्र की नीतियों के निर्धारण में सहायक हैं । अतः आर्दशात्मक अर्थशास्त्र को नीतियों का अर्थशास्त्र भी कहा जाता है।

यह भी सत्य है कि बहुत से आदर्शात्मक प्रश्न सकारात्मक प्रश्नों से अलग नहीं होते हैं बल्कि ये दोनों से एक दूसरे से जुड़े होते हैं । क्योंकि अगर हम यह जानना चाहें कि सरकार ने कौन एक खास कदम उठाना चाहिए तो हमें दो बाते मालूम होनी चाहिए कि क्या सरकार इस कदम को उठा पाएगी और दूसरी यह कि इसके क्या परिणाम होंगे । उदाहरण के लिए यदि हम आयात शुल्क कम करते हैं तो इसका परिणाम यह होगा कि प्रतियोगिता बढ़ेगी और मूल्य नीचे गिरेंगे । इन दोनों पक्षों की बिना जानकारी के वास्तव में कोई भी निर्णय नहीं लिया जा सकता अर्थात् यह स्पष्ट है कि सकारात्मक और आदर्शात्मक दोनों ही पक्ष साथ–साथ चलते हैं। कुछ लोगों का यह तर्क है कि मूल्य विहीन वास्तविक अर्थशास्त्र असंभव है क्योंकि उनका तर्क है कि जब कभी भी आर्थिक नियमों की व्याख्या की जाती है तो राजनीतिक, सैद्धान्तिक और नैतिक विचार अर्थशास्त्रियों को अवश्य ही प्रभावित करते हैं यद्यपि इस तर्क में दम है । लेकिन ये समझना महत्वपूर्ण है कि विश्लेषण दो प्रकार का होता है ।इनमें से एक विशुद्ध आर्थिक विश्लेषण है और दूसरा आर्दशात्मक परिस्थितियों तक पहुँचने की दृष्टि से किया गया विश्लेषण है और इसलिए आर्दशात्मक परिस्थितियों तक पहुँचने के लिए किये गये निर्णयों का आधार वास्तविक अर्थशास्त्र के अध्ययन ही उपलब्ध होता है । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र वास्तव में एक सकारात्मक विज्ञान है किन्तु आर्दशात्मक निर्णय लिये जाने से इसका किसी प्रकार विरोधाभाष नहीं है और कल्याणवादी राज्य की अवधारणा में जब कल्याणकारी निर्णय लिये जाने की बात होती है तो आर्दशात्मक अर्थशास्त्र स्वाभाविक रूप से प्रविष्ट हो जाता है । अतः अर्थशास्त्र यद्यपि कि वास्तविक विज्ञान है किन्तु इसमें आदर्श पर आधारित निर्णय लिये जाते हैं और इस दृष्टि से आर्दशात्मक विज्ञान के रूप में भी यह स्थापित है।

1.3.5– अर्थशास्त्र का क्षेत्र–

अर्थशास्त्र की सीमाएं क्रमशः विस्तारित हो रही हैं । आज यह केवल वह विषय नहीं रह गया है जो केवल उत्पादन और उपभोग के पक्षों की व्याख्या करे बल्कि ना जाने कितने ही पक्ष जैसे पर्यावरण की चिन्तायें, स्वास्थ्य की चिन्तायें, शहरी विकास के प्रश्न और विकास से जुड़े हुये अन्य पक्ष सभी कुछ अर्थशास्त्र में सम्मिलित हो गये हैं । यद्यपि अभी भी बल इसी बात पर है कि किस तरह उपलब्ध संसाधनों का सर्वोत्कृष्ट तरीके से उपयोग किया जाये जिससे कि अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो या लोगों का अधिकतम कल्याण हो और वह भी वहनीय तरीके से। इस पृष्ठभूमि में अर्थशास्त्र की निम्न शाखायें उभरती हैं–

1. **‘सूक्ष्म अर्थशास्त्र’–** यह आधारभूत अर्थशास्त्र है। सूक्ष्म अर्थशास्त्र को अर्थशास्त्र की वह शाखा माना जा सकता है जो व्यक्तिगत इकाइयों के आर्थिक व्यवहार की व्याख्या करती है । यह व्यक्तिगत इकाई एक व्यक्ति हो सकता है एक परिवार हो सकता है या एक फर्म हो सकती है इस प्रकार सूक्ष्म अर्थशास्त्र में सभी इकाइयों के सम्मिलित व्यवहार के स्थान पर एक इकाई के व्यक्तिगत व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। सूक्ष्म अर्थशास्त्र को मूल्य और महत्व का सिद्धान्त, परिवार का सिद्धान्त, फर्म का सिद्धान्त अथवा उद्योग का सिद्धान्त

कहा जाता है। अधिकांश उत्पादन और कल्याण के सिद्धान्त सूक्ष्म अर्थशास्त्र की प्रकृति के होते हैं।

2. **'व्यापक अर्थशास्त्र'**— यह अर्थशास्त्र की वह शाखा है जिसमें किसी एक इकाई का नहीं बल्कि सभी इकाइयों के सम्मिलित व्यवहार का अध्ययन किया जाता है । अतः इसे समूहों के अध्ययन का अर्थशास्त्र कहा जाता है । वस्तुतः यह आर्थिक विश्लेषण की वास्तविक स्थिति है इसमें हम यह अध्ययन करते हैं कि किस तरह सूक्ष्म दरों और समूहों में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप अर्थशास्त्र संतुलन की स्थिति में पहुॅचती है। 1936 में कीन्स की पुस्तक के प्रकाशन के बाद आधुनिक और व्यापक अर्थशास्त्र के विकास को नई दिशा मिली है।

3. **'अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र'**— जैसे—जैसे आधुनिक जगत में विभिन्न देशों को दूसरे देशों के साथ व्यापार का महत्व स्पष्ट होता गया । वैसे—वैसे अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का महत्व बढ़ता गया है । आज के समय में एक देश से दूसरे देश के बीच व्यापार के प्रश्न अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की विषय—वस्तु हैं।

4. **'सार्वजनिक वित्त'**— 1930 की महान मंदी के बाद सरकारों ने यह अनुभव किया कि उन्हें आर्थिक विकास के स्थलीकरण के अतिरिक्त धन का पुनः वितरण इत्यादि के लक्ष्यों पर भी ध्यान देना है । तब लोकवित्त या सार्वजनिक वित्त नामक अर्थशास्त्र की नई शाखा का उदय हुआ । लोकवित्त या वित्तीय अर्थशास्त्र के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था में सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है दूसरी ओर मुक्त व्यवस्था के अन्तर्गत यह माना गया कि सरकारों की कोई भूमिका नहीं है और आर्थिक तंत्र स्वयं अपने को समायोजित कर लेगा । किन्तु अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि ऐसा नहीं है और इसलिए सरकारों को हस्तक्षेप करना ही होगा इस प्रकार लोकवित्त के नाम से अर्थशास्त्र की यह शाखा प्रचलित हुई।

5. **'विकास का अर्थशास्त्र'**— द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बहुत से देशों को आजादी मिली और अपने कॉलोनी के स्वरूप से मुक्ति मिली । इसमें इन राष्ट्रों के सामने सबसे बड़ा प्रश्न विकास का था । अतः विकास केन्द्रित अर्थशास्त्र की शाखा का उदय हुआ।

6. **'स्वास्थ्य का अर्थशास्त्र'**— मानव विकास की अवधारणा सामने आने पर यह प्रश्न उठा कि किसी भी देश के नागरिकों का स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण कारक है । अतः स्वास्थ्य का अर्थशास्त्र विकसित हुआ । इसी प्रकार अब शिक्षा का अर्थशास्त्र भी विकसित हो चुका है।

7. **'पर्यावरणीय अर्थशास्त्र'**— बिना पर्यावरण का संरक्षण किये प्राकृतिक संसाधनों का नियमित विदोहन विकास की अवधारणा पर प्रश्न चिन्ह लगा देता है । इसलिए पर्यावरणीय अर्थशास्त्र, अर्थशास्त्र की एक महत्वपूर्ण शाखा के रूप में स्थापित हुआ है क्योंकि बिना इसका अध्ययन किये वहनीय विकास संभव नहीं है।

8. **'शहरी एवं ग्रामीण अर्थशास्त्र'**— आर्थिक उपलब्धियों एवं विकास की अवधारणा के साथ जुड़े हुए पक्षों में स्थान का विशेष महत्व है। स्थान को अन्य स्वरूपों के अतिरिक्त शहरी और ग्रामीण इन दो दृष्टियों से भी देखा जाता है

। क्योंकि हमारे समाज में शहरी और ग्रामीण दोनों ही स्तरों को अर्थशास्त्र अलग–अलग होता है। इसी कारण से अर्थशास्त्र में भी ग्रामीण क्षेत्रों व शहरी क्षेत्रों के लिए अलग–अलग योजनायें बनाई जाती हैं । इन्हीं सब पक्षों को ध्यान में रखते हुए धीरे–धीरे अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की दो शाखायें बनाई जो वर्तमान समय में स्थापित हैं । अर्थात् ग्रामीण अर्थशास्त्र और शहरी अर्थशास्त्र उक्त के अतिरिक्त भौगोलिक असमानताओं को समझने के लिए क्षेत्रीय अर्थशास्त्र पर भी बल दिया जाता है और यह भी अर्थशास्त्र में एक महत्वपूर्ण विषय है।

उपर्युक्त आठ वर्गीकरणों के अतिरिक्त अर्थशास्त्र की कई शाखायें भी हैं जो अर्थशास्त्र के क्षेत्र को व्याख्यायित करती हैं जैसे कल्याणवादी अर्थशास्त्र, मौद्रिक अर्थशास्त्र, ऊर्जा अर्थशास्त्र, यातायात अर्थशास्त्र, जनांकित अर्थशास्त्र, श्रम अर्थशास्त्र, कृषि अर्थशास्त्र, लैंगिक अर्थशास्त्र, ढांचागत संसाधनों का अर्थशास्त्र, नियोजन का अर्थशास्त्र इत्यादि।

उक्त विवरण से यह सिद्ध होता है कि अर्थशास्त्र एक ऐसा विषय है जो समाज के बदलते स्वरूप के साथ विकसित होता रहा है और इसी कारण से इसकी बहुत सी शाखायें स्थापित हो चुकी हैं।

अर्थशास्त्र की उपयोगिता– अर्थशास्त्र एक प्रायोगिक विज्ञान है । इसका मुख्य महत्व इस बात में है कि यह समाज के आर्थिक जीवन में प्रभावी विभिन्न कारको शक्तियों और तत्वों की समझ विकसित करने में सहायक है। इस दृष्टि से अर्थशास्त्र दो प्रकार से उपयोगी है 'अ– ज्ञान की दृष्टि से और ब–व्यावहारिकता अथवा प्रायोगिकता की दृष्टि से।

अ. ज्ञान की दृष्टि से– बहुत से लोग अर्थशास्त्र इसलिए पसन्द करते हैं कि यह ज्ञान की दृष्टि से बहुत ही तार्किक और वैज्ञानिक विषय है । लोगों को अर्थशास्त्र में प्रयुक्त नियमों के प्राकृतिक स्वरूप अर्थात् उनमें निहित कारण–परिणाम संबंधी तत्व समझने में अच्छा लगता है। ऐसे लोगों के लिए यह महत्वपूर्ण नहीं है कि अर्थशास्त्र समाज की कितनी समस्यायें हल करता है बल्कि इन लोगों के लिए अर्थशास्त्र विषय में अर्न्तनिहित तार्किकताओं का अध्ययन ही उत्सुकता पैदा करता है और इसी कारण से वे इसका अध्ययन करना चाहते हैं । इसे कुछ इस प्रकार से भी कहा जा सकता है जैसे कि कुछ लोगों को संगीत सुनने की आदत होती है । वैसे ही यह भी कहा जा सकता है कि कुछ लोगों को अर्थशास्त्र पढ़ने की आदत होती है । ऐसे लोग यह जानने में गम्भीरता से रूचि लेते हैं कि उत्पादन कैसे होता है उपभोक्ता किस तरह प्रतिक्रिया देते हैं अर्थव्यवस्थायें किस तरह विकसित होती हैं आदि इत्यादि । इन विधाओं में रूचि लेने वाले व्यक्ति अर्थशास्त्र के बन जाते हैं और यह पाया गया है कि ऐसे लोगों के द्वारा अर्थशास्त्र के बहुत से सिद्धान्त विकसित किये गये हैं।

ब. प्रायोगिक दृष्टि से–

प्रायोगिक दृष्टि से अर्थशास्त्र विभिन्न व्यक्तियों के लिए उपयोगी है इनमें से कुछ प्रमुख निम्नवत् हैं–

i- व्यापारियों के लिये– व्यापारियों के लिए अर्थशास्त्र स्वाभाविक रूप से महत्वपूर्ण विषय है । क्योंकि उन्हें अपने विषय से संबंधित निर्णयों को लेने के

लिए आर्थिक तकनीकों की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार मांग के पुर्वानुमान के आधार पर किसी व्यवसायी को क्या उत्पादित करना है वह यह निर्णय कर पाता है । ऐसे ही अन्य बहुत से निर्णय हैं जो अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों से प्रभावित होते हैं और व्यवसायियों की मदद करते हैं जैसे व्यवसाय के स्थान का चुनाव, व्यवसाय का आकार, उत्पाद मिश्रण, उत्पादन के साधनों का मिश्रण, मूल्यन, वितरण आदि इत्यादि। इन सभी के बारे में निर्णय लेने में अर्थशास्त्र की तकनीकें सहायक होती हैं । व्यवसायी को अपनी लागतों को न्यूनतम करते हुए लाभों को अधिकतम करने की प्रक्रिया में उत्पादन के सिद्धान्तों से सहायता मिलती है। इसी प्रकार अर्थशास्त्र के बहुत से निर्दश (Model) जैसे आवंटन निर्दश, सूची निर्दश, रहतिये का निर्दश इत्यादि। व्यवसाय को प्रभावित करने वाले आंतरिक और बाह्य कारकों का ज्ञान भी व्यवसायी के निर्णयों व उसकी योजनाओं को प्रभावित करता है। उक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि व्यवसायियों के लिए अर्थशास्त्र बहुत ही उपयोगी विषय है।

ii- नियोजकों के लिए– नियोजन के कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए अर्थशास्त्र का ज्ञान प्रमुख है । आर्थिक विकास के लिए नियोजन एक प्रमुख तकनीक है और इस हेतु आर्थिक समस्यायें और आर्थिक तकनीकी का ज्ञान होने पर ही इन समस्याओं से निपटने के मार्ग खोजे जा सकते हैं । अतः नियोजन की प्रक्रिया से जुड़े हुए व्यक्तियों के लिए यह बहुत आवश्यक है कि तद्संबंधी प्रशासनिक व्यवस्थायें करते समय वह सभी आर्थिक सिद्धान्तों और तकनीकों का प्रयोग करें जिससे कि संबंधित कामों का क्रियान्वयन, इनका परीक्षण और प्रगति का मूल्यांकन नियमित रूप से होता रहे और विकास की प्रक्रिया आगे बढ़ती रहे।

iii- प्रशासकों के लिए– आधुनिक युग में प्रशासकों के लिए सामान्य प्रशासन के अतिरिक्त अर्थशास्त्र का ज्ञान बहुत आवश्यक है क्योंकि अधिकांश आर्थिक समस्यायें आर्थिक कारणों से उत्पन्न होती हैं और इन्हें कम करने के निर्णय आर्थिक ज्ञान में विहित तकनीकों पर आधारित होते हैं । उदाहरण के लिये यदि कोई अर्थव्यवस्था मुद्रास्फीति की चपेट में है तो प्रशासक को यह मालूम होना चाहिये कि कौन से मौद्रिक उपाय (नकद जमा अनुपात से बैंक दर इत्यादि) और कौन से वित्तीय उपाय (उदाहरणार्थ सरकारी व्यय को कम करना इत्यादि) । इसके नियंत्रण के लिए तो अन्य भी ऐसी बहुत सी नीतियां हैं जिनमें सामान्य प्रशासक की सक्रिय भागीदारी होती है । किन्तु ये समस्त प्रक्रियायें अर्थशास्त्र के ज्ञान से स्पष्ट होती हैं जैसे रणनीति आर्थिक नीति, औद्योगिक लाइसेंस नीति, आयात–निर्यात नीति इत्यादि प्रशासकों को इनका ज्ञान होने पर ही वे शासन की नीतियों का सही क्रियान्वयन करते हैं।

iv- सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए– सामाजिक कार्यकर्ताओं को भी अर्थशास्त्र का उपयुक्त ज्ञान होने पर वे सही अर्थों में सफल और सही सामाजिक कार्यकर्ता जाने जाते हैं । क्योंकि यह स्थापित सत्य है कि आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियां बहुत निकटता से जुड़ी हुई हैं । सामाजिक पिछड़ापन और आर्थिक पिछड़ापन अधिकांशतः साथ–साथ चलते हैं । पिछड़ेपन के कारणों की जानकारी के लिये अर्थशास्त्र का अध्ययन आवश्यक है और इस

प्रकार के ज्ञान को रखने वाला सामाजिक कार्यकर्ता इसे दूरे करने का उपाय सुझा सकता है । सामाजिक समूहों की रूचि के बहुत से विषय अर्थशास्त्र के अन्तर्गत आते हैं । जैसे क्या सरकारों को रक्षा पर अधिक व्यय करना चाहिये अथवा वे कौन से तरीके हैं जिनसे एकाधिकार पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है अथवा क्या सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुविधायें निःशुल्क उपलब्ध करायी जायं अथवा सरकारों के व्यय का कौन सा स्वरूप अधिकतम रोजगार का सृजन करेगा अथवा किस तरह मुद्रा की स्फीति को नियंत्रित किया जाय अथवा किस तरह संसाधनों का संरक्षण कर विकास सुनिश्चित किया जाय या पिछड़े क्षेत्रों का विकसित करने के लिए स्थान के चुनाव की नीति क्या हो आदि इत्यादि।

उक्तानुसार यह स्पष्ट है कि सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए भी अर्थशास्त्र का ज्ञान हितकर है।

v- **गृहणियां–** गृहणी के लिये अर्थशास्त्र बहुत ही उपयोगी है क्योंकि गृहणी सामान्यतः परिवार के व्यय का प्रबंधन करती हैं और दैनिन्दन आवश्यकता की वस्तुओं का क्रय करने के लिए उसका निर्णय महत्वपूर्ण होता है । वह पारिवारिक आय का इस प्रकार वितरण सुनिश्चित करती है जिससे परिवार की आवश्यकतायें भी पूरी हों और परिवार का अधिकतम कल्याण हो । अतः यदि गृहणी ने अर्थशास्त्र का अध्ययन किया है तो वह बहुत सी परिस्थितियों में उपयुक्त निर्णय लेकर पारिवारिक समस्याओं का समाधान खोज सकती है जैसे किसी फसल के सीजन में कम मूल्य होने पर उस खाद्य सामग्री का अधिकतम भण्डारण कर बाद में बढ़ने वाली कीमतों के प्रभाव से परिवार को बचाना । यद्यपि कि अर्थशास्त्र की गहन तकनीकों का प्रयोग प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाता है । किन्तु विषय की सामान्य समझ गृहणी को यह विवेक प्रदान करती है कि वह परिवार के कल्याण के लिए सर्वोत्तम निर्णय ले सके।

अतः हम यह पाते हैं कि अर्थशास्त्र जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को स्पर्श करता है और बिना इस विषय का अध्ययन किये कोई भी व्यक्ति न तो अर्थव्यवस्था को समझ सकता है न ही अर्थव्यवस्था की कार्यप्रणाली को समझ सकता है और न ही व्यक्तियों या समूहों के निर्णय को समझ सकता है। यह विषय प्रत्येक देश के द्वारा अनुभव की जारी आर्थिक समस्याओं के संबंध में गहरी समझ प्रदान करता है। सूक्ष्म स्तर पर यह उन प्रश्नों और समस्याओं का उत्तर उपलब्ध कराता है जो व्यापक स्तर पर अर्थशास्त्र की समझ को विकसित करते हैं।

वास्तविकता यह है कि बिना अर्थशास्त्र के ज्ञान के हम अपने जीवन के बहुत से आधारभूत निर्णय तार्किक रूप से नहीं ले सकते हैं । जैसे कौन सा विषय पढ़ा जाय, कौन सी संस्था में अध्ययन किया जाय, नौकरी के लिये कौन सा क्षेत्र सर्वोत्तम है, वेतन से आय होने पर आय को किस तरह निवेशित किया जाय, किस तरह आयकर के प्रावधानों का लाभ उठाया जाय और किस तरह की योजनायें अपनाकर सेवानिवृत्ति के बाद के जीवन को सुखी और निश्चिंत बनाया जाय अर्थात् केवल वह व्यक्ति ही उक्त सभी निर्णय तार्किक रूप से ले सकता है जिसे अर्थशास्त्र की आधारभूत समझ होगी।

उक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि अर्थशास्त्र कितना महत्वपूर्ण विषय है।

1.4 सारांश

अर्थशास्त्र प्रत्यक्ष रूप से अर्थव्यवस्था का अध्ययन है इसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था में संयोजन की प्रक्रिया, दुर्लभता के प्रभावों का अध्ययन, चुनाव के विज्ञान का अध्ययन और मानव व्यवहार का अध्ययन किया जाता है।

एडम स्मिथ ने अर्थशास्त्र को धन की प्रकृति एवं कारणों की खोज कहकर संबोधित किया किन्तु इस विचार की कालांतर में बहुत आलोचना हुई दूसरी ओर पुराने सभी अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को भौतिक धन तक सीमित करते हुए अर्थशास्त्र के क्षेत्र को संकुचित कर दिया किन्तु वास्तव में अर्थशास्त्र दुर्लभता की समस्या के कारण उत्पन्न होता है और चुनाव की प्रक्रिया के दौरान मानव व्यवहार का अध्ययन अर्थशास्त्र की विषय–वस्तु है। अर्थशास्त्र को कला एवं विज्ञान दोनों ही कहा जाता है क्योंकि यह दोनों के लिए आवश्यक मानकों को पूरा करता है अर्थशास्त्र का अध्ययन दो रूपों में किया जाता है । अर्थशास्त्र सकारात्मक विज्ञान के रूप में और आदर्शात्मक विज्ञान के रूप में किन्तु वास्तव में अर्थशास्त्र सकारात्मक विज्ञान ही है । क्योंकि जो आदर्श है वह भविष्य की संकल्पना की ओर इंगित करता है । जबकि इस विषय में व्यापत स्थिति का वास्तविक अध्ययन किया जाता है । क्योंकि अर्थशास्त्र में यह निर्णय नहीं दिया जाता कि क्या अच्छा है क्या बुरा जो है उसका अध्ययन किया जाता है । किन्तु यह भी सत्य है कि आदर्शात्मक प्रश्न अर्थशास्त्र की दिशा निर्धारित करते हैं।

अर्थशास्त्र के क्षेत्र में सूक्ष्म अर्थशास्त्र, व्यापक अर्थशास्त्र, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, सार्वजनिक वित्त, विकास का अर्थशास्त्र, स्वास्थ्य का अर्थशास्त्र, पर्यावरण का अर्थशास्त्र, क्षेत्रीय अर्थशास्त्र और ग्रामीण व शहरी अर्थशास्त्र आते हैं।

अर्थशास्त्र एक प्रायोगिक विज्ञान है इसका प्रमुख महत्व इस बात में निहित है कि यह समाज में कार्यरत् आर्थिक शक्तियों के व्यवहार का आधारभूत ज्ञान उपलब्ध कराता है। यह विषय ज्ञान की दृष्टि से और व्यवहारिक दृष्टि से बहुत पक्षों के लिये उपयोगी है । इनमें प्रमुख रूप से व्यवसायी, नीति नियामक, प्रशासनिक, सामाजिक कार्यकर्ता एवं गृहणियां सम्मिलित हैं।

1.5 शब्दावली

वैकल्पिक उपयोग: वैकल्पिक उपयोग से आशय है कि संसाधन वैकल्पिक उपयोग करने में सक्षम हैं ।

जीवन का समान्य व्यवसाय: जीवन के समान्य व्यवसाय से आशय है कि एक व्यक्ति अपनी आय कैसे कमाता है और वह इसे कैसे खर्च करता है ।

सकारात्मक अर्थशास्त्र: बिना कोई निर्णय लिए कि क्या परिणाम अच्छे या बुरे हैं आर्थिक प्रणाली के व्यवहार और संचालन को समझने का प्रयास करता है।

नियामक अर्थशास्त्र: इसमें कार्यवाई की योजना के निर्णय और निर्देश शामिल हैं ।

1.6 बोध प्रश्न

रिक्त स्थान भरें:

(ए) अर्थशास्त्र की आर्थिक कल्याण की परिभाषा .... द्वारा दी गई है।

(बी) .... अर्थशास्त्र को इस प्रकार से परिभाषित करता है कि "वह विज्ञान जो मानव व्यवहार का अध्ययन साध्य और दुर्लभ साधन जिनके वैकल्पिक उपयोग हैं के मध्य संबंध के रूप में करता है।"

(सी) .... को अर्थशास्त्र विश्लेषण की उस शाखा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी एक विशेष इकाई के व्यवहार का अध्ययन नहीं करता है, बल्कि सभी इकाइयों का एक साथ अध्ययन करता है।

(डी) ....अर्थशास्त्र बिना कोई निर्णय लिए कि क्या परिणाम अच्छे या बुरे हैं, आर्थिक प्रणाली के व्यवहार और संचालन को समझने का प्रयास करता है ।

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए) अल्फ्रेड मार्शल, (बी) रॉबिंस, (सी) समष्टि अर्थशास्त्र, (डी) सकारात्मक अर्थशास्त्र

1.8 स्वपरख प्रश्न

1. विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने एक समय अवधि के दौरान अर्थशास्त्र को कैसे परिभाषित किया है? व्याख्या कीजिए ।
2. अर्थशास्त्र की प्रविधि की व्याख्या कीजिए ।
3. अर्थशास्त्र के लक्ष्यों और क्षेत्र का वर्णन कीजिए।
4. विभिन्न व्यक्तियों के लिए अर्थशास्त्र की उपयोगिता क्या है?

1.9 सन्दर्भ पुस्तकें

1. H.S.Agarwal, Microeconomic Theory', (2008) Seventh Edition, Ane's Student Edition.
2. Hajela, T.N., (2009), Macroeconomic theory', 10th Edition, Ane Book Pvt. Ltd. New Delhi.
3. Deepashree & Vanita Agarwal,'Macroeconomics', Ane Book Pvt Ltd. New Delhi.
4. Errol D'Souza, ' Macroeconomics', (2008), Pearson Education, New Delhi.
5. S.P.Singh, 'Managerial Economics', AITBS, New Delhi.
6. Sampat Mukherjee, Principles of Macroeconomics, (2009), New Central Book Agency, New Delhi.
7. D.D.Tewari & Kartar Singh,'Principles of Microeconomics, (1996), New age publishers, New Delhi.

इकाई 2 अर्थव्यवस्था की आधारभूत समस्याएं

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 अवसंरचना

2.3 यातायात व्यवस्था

 2.3.1 रेलवे

 2.3.2 सड़क नेटवर्क

 2.3.3 हवाई यातायात

 2.3.4 उर्जा क्षेत्र

 2.3.5 मुख्यक्षेत्र तथा अवसंरचना सेवाओं में वृद्धि

2.4 बेरोजगारी

2.5 शिक्षा का स्तर

2.6 भारत में गरीबी

2.7 क्षेत्रीय विषमता

2.8 धनी और गरीब के बीच बढ़ती खाई

2.9 भुगतान शेष की असंस्थिति

2.10 मुद्रा स्फीति

2.11 सारांश

2.12 शब्दावली

2.13 बोध प्रश्न

2.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.15 स्वपरख प्रश्न

2.16 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- अवसंरचना की समस्या का वर्णन कर सकें।
- बेरोजगारी की समस्या का वर्णन कर सकें।
- अशिक्षा की समस्या का वर्णन कर सकें।
- धनी और गरीब के बीच बढ़ती खाई की समस्या का वर्णन कर सकें।

2.1 प्रस्तावना

सभी अर्थव्यवस्थाएं विकास के चाहे जिस स्तर पर हो, कुछ मूलभूत आर्थिक समस्याओं का सामना करती है, पर समस्याओं की प्रकृति तथा गहनता अलग–अलग स्तर में अलग होती है। उन देशों की आर्थिक समस्याएं जो विकसित स्थिति में हैं, अल्पविकसित देशों से अलग हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था जो विकासशील अवस्था में हैं, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विकास पथ पर काफी आगे बढ़ा है, पर एक विचित्र तरह की समस्या से ग्रस्त हैं। पिछले साठ वर्षों मे भारत ने खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल की है, उद्योगों का एक मजबूत आधार स्थापित किया है तथा निवेशकों के लिए एक आकर्षण के केन्द्र कं रूप में उभरा है। अर्थव्यवस्था की मजबूत, आधार देश को संयुक्त

राज्य अमेरिका सब प्राईम सकंट, यूरोपियन संकट तथा ग्रीस के संकट जैसे बड़े आर्थिक संकट को वहन करने में सहायता प्रदान किया। लेकिन साथ हीं साथ भारतीय अर्थव्यवस्था रोगों से मूक्त नहीं है। यह कुछ आधारभूत आर्थिक संकटों से जूझ रहा है। जिसमें शहरों की गलत योजना, अवसंरचना की कमी जो औद्योगिक विकास को बढ़ाते हैं एवं अधि मात्रा में अकुशल तथा अशिक्षित कार्यबल विदेशी मुद्रा पर अत्याधिक निर्भरता, प्रगति तथा विकास के लिए कमजोर राजनैतिक इच्छा शक्ति लालफीता शाही एवं कार्यान्वित सामाजिक कल्याण योजनाएं, धनी एवं गरीब के बीच बढ़ती खाई आदि। निम्नांकित वाक्याशों में देश द्वारा सामना की जा रही समस्याओं की चर्चा की जायेगी।

2.2 अवसंरचना

किसी देश में अवसंरचना की महता, मकान के नींव के समान है। जिस प्रकार नींव मजबूत होने पर मकान भी मजबूत होता है और उसकी उंचाई बढ़ने की उम्मीद रहती है। संरचना में यातायात, कृषि, जल प्रबंधन, दूर संचार, औद्योगिक एवं वाणिज्यिक विकास, उर्जा, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस, घर तथा अन्य घटक जैसे खनन, आपदा प्रबंधन सेवायें और तकनीक संबंधित संरचना शामिल हैं। अपने देश में भूत में संरचनात्मक विकास के लिए अत्यधिक संसाधन के साथ बड़े प्रयास किये है, जिसके परिणामस्वरूपम संरचनत्मक आधार में ठोस विकास हुआ है। लेकिन सही योजना का आभाव एवं संरचनात्मक विकास की योजनाओं का खराब क्रियान्वयन के कारण देशे के संरचनात्मक विकास में संतोषजनक प्रगति नहीं हुई है। विभिन्न प्रकार की संरचना तथा उससे संबंधित समस्याओं का विस्तृत विवरण नीचे दिया जा रहा है।

2.3 यातायात व्यवस्था

यातायात अर्थव्यवस्था की एक महत्वपूर्ण जरूरत हैं। भारत में यातायात क्षेत्र की प्रगति की विशेषताओं को निम्नवत् संक्षेपित किया गया हैः

1. भारत जो 1950 क दशक में रेल प्रधान अर्थव्यवस्था हुआ करती थी, आज सड़क प्रधान अर्थव्यवस्था बन गई है। सड़क यातायात आज कुल अंतरशहरी माल ढुलाई का 60 प्रतिशत से अधिक तथा यात्री यातायात क 80 प्रतिशत से अधिक का योगदान दे रहा है।
2. इसी समयावधि में रेल माल ढुलाई प्रधान यातायात से यात्री यातायात प्रधान बन गया है।

   निम्नांकित वाक्यांश यातायात के विभिन्न तरीके तथा उनकी समस्याओं का विवरण प्रस्तुत कर रहा है।

2.3.1 रेलवे

भारतीय रेल देश में यातायात का एक प्रमुख स्त्रोत हैं, जिसे एशिया का प्रथम तथा दूनिया का दूसरा रेल जाल होने का गौरव प्राप्त है, जो एक प्रबंधन व्यवस्था में है। रूट की लम्बाई के हिसाब से भारतीय रेलवे व्यवस्था दूनिया की चौथी बड़ी व्यवस्था हैं, यू. एस. ए., रूस, तथा चीन ही केवल भारत से आगे हैं। भारतीय रेल का जाल 63,273 किलोमीटर में कार्य करते हुए प्रतिदिन 11,000 रेलगाड़ी संचालित करता है। जिसमें से 7000 यात्री गाड़ियां

13 मिलियन लोगों को उनक गणतव्य तक पंहुचाता है। भारतीय रेल आर्थिक विकास को तेज करने में अहम भूमिका निभाया है तथा आज भी यह अर्थव्यवस्था के विकास के रूप में अहम हिस्सा बना हुआ है। निकट भूत में भारतीय रेल का तेज गति से विकास हुआ है, बहुत अधिक मात्रा में वैसे रेलवे लाईन को बदल दिया गया है जिनका जीवन काल समाप्त हो गया तथा साथ हीं उनके स्थान पर नये विजली लाईन, भाप तथा डीजल इंजन के स्थान पर विद्युत इंजन में बदलना, रेलगाड़ी एवं प्लेटफॉर्म पर यात्री सुविधाओं में वृद्धि, दिल्ली मेट्रो रेल की सुविधा भारतीय रेल व्यवस्था को और भी चमकदार बनाता है। यात्री सूरक्षा पर भी विशेष बल दिया गया है पर भारतीय रेल को दूनिया का सबंसे अच्छा रेलवे व्यवस्था बनने के लिए लम्बी दूरी तय करना है। कुछ चिन्ताजनक समस्याओं में, पुराने रेलवे लाइन, पहियों की खराब स्थिति, बिना टिकट यात्रा, रेलवे हादसा, रेलवे पर नक्सलियों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में आक्रमण, आधूनिक प्रबंधन का आभाव तकनीकी, प्रतिस्थापन की समस्या, रेल लाईन दोहरीकरण की समस्या, रेल में भीड़ की समस्या आदि इनमें से कुछ है।

रेलवे विकास की समस्या

रेलवे की आधारभूत समस्याओं की चर्चा निम्नांकित बिन्दुओं में की जा सकती है:

(i) **अप्रर्याप्त नेटवर्क तथा संरचनात्मक क्षमताः** 1950–51 से 2007–08 की समयाविधि में रेलवे रूट में 18% की तथा रेलवे लाईन में 11% की वृद्धि हुई है, जबकि माल ढूलाई तथा यात्रियों की संख्या में 12% तथा 11% की क्रमशः वृद्धि दर्ज की गई है।

(ii) **गिरती बाजार हिस्सेदारीः** भारतीय रेल सड़क यातायात से कड़ी प्रतिस्पर्धा कर रहा है। रेलवे के स्वेत पत्र के अनुसार रेल यातायात का बाजार में हिस्सेदारी 89%, 1950–51 से घटकर 2007–08 में 30% हो गया है। फिर भी भारी वस्तुओं जैसे, लौह अयस्क, रासायनिक खाद आदि की ढूलाई में अपनी प्रधानता बनाये हुये है। रेलवे प्रतिस्पर्धा प्रशुल्क पर बेहतर सेवा प्रदान करने के लिए केन्द्रीत रणनीति अपनाना होगा।

(iii) **सलीब आर्थिक साहायताः** भारत में माल ढुलाई की दर कम यात्री किराया दर को तिर्यक सहायता प्रदान करती है। यात्री किराया कें दर इतनी कम है कि यात्री गाड़ियों का संचालन में रेलवे को नुकसान उठाना पड़ता है। यानि संचालन में हानि की मात्रा 2008–09 में 13958 करोड़ के बराबर थी। इस हानि की भरपाई के लिए भारतीय रेल माल ढूलाई की दर को बढ़ाता है, जिसके कारण वस्तुओं की कीमतें बढ़ जाती है और अर्थव्यवस्था पर अवस्फीतिक दबाव बनाती है।

(iv) **कोष तथा लागत से अधिक खर्च की समस्याः** नये प्रयोजनाओं को शुरू मरने का सत्त दबाव, ज्यादातर नये रेलवे लाईन बनाने के लिए अत्याधिक कोष की आवश्यकता होती हैं, पर इनमें ज्यादातर प्रयोजनाएं कोष की कमी के कारण आवश्यक समय पर पूरी नहीं होती है जिसके कारण लागत में और वृद्धि होती है और प्रयोजना का वित्तीय प्रबंधन मुश्किल हो जाता है।

(v) **पुरानी तकनीकः** विद्युत तथा डीजल दोनों में ही भारतीय रेल पुरानी तकनीक की समस्या से जूझ रहा है। भारतीय रेल के लिए यह आवश्यक है कि अपने जरूरत के अनुसार तकनीकी का विकास करे जो भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त हो ना कि बाहर से आयातित तकनीकि पर निर्भर रहे।

भारतीय रेल के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती 19,000 किलो मीटर से ज्यादा उंच घनत्व वाले पटरियों को पूर्णनवा करने की है, जो सभी प्रमुख बंदरगाहों तथा चार महानगरों को जोड़ता है, जो 64000 किलोमीटर दूरी के कुल पटरी में 80% यातायात के दबाव का वहन करता है। इसके अलावा 1,28,000 रेल पूलों में से 11.250 रेलवे पूल को अधिक यातायात दबाव तथा गति को वहन करने लायक बनाना है। अभी हाल मे ही दो समीतियां जो रेलवे के पुर्न उत्थान के लिए अगले पांच वर्ष में 6,60,000 करोड़ निवेश करने की आवश्यकता है। रेलवे सुरक्षा के लिए बनी अनील काकोदकर समिति की संस्तुती है कि अगले पांच वर्ष में 1,00,000 करोड़ निवेश होना चाहिए। रेलवे आधुनिकीकरण के लिए बनी सैम पिदोद्वा पैनल ने इसी समय अन्तराल में निवेश को 5,60,000 करोड़ करने की संस्तुति की है। भारत में रेलवे राष्ट्र जीवन रेखा है तथा यातायात व्यवस्था की रीढ़ है।

2.3.2 सड़क यातायात तन्त्र

रेलवे के बाद भारत में यातायात का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण माध्यम सड़क यातायात है। ये देश के लगभग 90 प्रतिशत यात्री यातायात तथा 65 प्रतिशत माल ढूलाई के दबाव का वहन करता है। भारत मे राजमार्गों का घनत्व 0.66 किमी. प्रति 59 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल के बराबर है, जो लगभग संयुक्त राज्य अमेरिका (0.65) के बराबर है। भारतीय राजमार्ग का घनत्व चीन (0.16) तथा ब्राजील (0.20) से अधिक है। जबकि, भारत में सड़क मार्ग यातायात के सबसे पसंदीदा यातायात व्यवस्था हैं, फिर भी इसकी क्षमता समाज के जरूरतों को पूरा करने लायक नहीं है। 1990 के बाद से भारत में सड़क मार्ग की लम्बाई तथा गुणवता में अत्याधिक प्रगति हुआं है। परन्तु अभी भी यह कई तरह की समस्याओं जैसे ज्यादातर राष्ट्रीय राजमार्ग या दो एकल पथ या दोहरी पथ है, जो आवश्यक क्षमता होने चाहिए, से कम है। भारत का लगभग एक चौथाई सड़क राजमार्ग जाम रिकरेंट, गति को 30–40 किमी/घंटा कम काम करता है। भारतीय सड़क मार्ग पर जाम, गाड़ियों की इंधन उपयोग क्षमता को कम कर देता है, गाड़ियों को नुकसान पहुंचाता है साथ हीं पर्यावरण को भी प्रभावित करता है। सड़क यातायात एवं राष्ट्रीय राज मार्ग मंत्रालय के अनुसार लगभग 22 प्रतिशत राष्ट्रीय राजमार्ग या तो एकल पथ/माध्यमिक पथ के हैं जबकि लगभग 53 प्रतिशत दोहरे पथ के तथा लगभग 25 प्रतिशत है तथा उनका रख रखाव अल्प वितीयन के अन्तर्गत है जिसके परिणाम स्वरूप केवल एक–तिहाई रख रखाव की जरूरतों को पूरा किया जा रहा है। इसके कारण सड़कों की स्थिति खराब हो रही है तथा उपभोक्ताओं को अधिक यातायात खर्च वहन करना पड़ रहा है। भारत में सड़क यातायात आठवीं सबसे अधिक सड़क अनिवार्यता दर रखता है। जहां

तक ग्रामीण क्षेत्रों का सड़क मार्ग से संबंध है। भारत का लगभग का लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। भारत में ग्रामीण सड़क मार्गों का विकास हुआ है, लेकिन आज भी लगभग 40 प्रतिशत भारतीय गांव बारिश के मौसम में अलग–थलग पड़ जाते हैं, क्योंकि वे पक्की सड़कों से जूड़े नहीं हैं। यह समस्या उतर तथा उतर पूर्व के राज्यों में अत्याधिक विकट है, जो देश के प्रमुख आर्थिक केन्द्रों से सही सड़क मार्ग से नहीं जुड़े है। इससे भी महत्वपूर्ण है कि जहां भी सड़क मार्गों का विकास हो रहा है, वह निजि तथा सार्वजनिक साझेदारी मॉडल है, जो निजि क्षेत्र को टोल वसुलने की अनुमति देता है। जो अत्याधिक टोल शुल्क, वसुलते हैं, कुछ तो कार्य शुरू होने के पहले से वसूलना शुरू करते हैं और कुल निवेश तथा लाभ पूरा होने के पश्चात् भी वसूलते रहते हैं।

2.3.3 वायु यातायात तंत्र

रेलवे तथा सड़क यातायात के अलावा, नागरिक उड्डयन भी आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, विशेषतः आज के वैश्विक संसार में, सरकार द्वारा वायु यातायात व्यवस्था को सुदृढ़ करने में 1991 के सुधार के बाद से काफी प्रयास किया गया है। इन्दिरा गांधी हवाई अड्डा का उन्नयन कोलकता तथा चेन्नई हवाई अड्डे का उन्नयन, साथ हीं साथ नये सात्रिक का निर्माण आदि प्रगति पर है। अन्य नॉन मेट्रो 18 हवाई अड्डे विभिन्न उन्नयन कार्य जैसे सात्रिक भवनों का विस्तार एप्रन, टैक्सी के रास्ते और हवाईपूल का निर्माण शुरू किया गया है, वायु यातायात सेवा को बढ़ावा देने के लिए भारतीय विमानपतन् प्राधिकरण ने नया ए.टी.एस. ऑदोमेसन व्यवस्था चेन्नई में शुरू किया है। सरकार ने भारतीय विमानपतन् प्राधिकरण को 378.0 करोड़ रू. का एकमूश्त ग्रांट–इन–एड जी.पी.एस. एडेड जी.ई.ओ. ऑगमेंटेंड नेवीगेशन (GAGAN) प्रायोजना को दिया है। इन्दिरा गांधी हवाई अड्डा दिल्ली को वर्तमान काग्रो टर्मिनल के उन्नयन तथा ग्रीनफील्ड काग्रों टर्मिनल के निर्माण को शुरू किया गया है। मुबंई हवाई अडडे् पर विमानपतन् विकास प्रयोजना के साथ रनवे का उन्नयन 09/27 पूरा हो चुका है। बढ़ते हुए यातायात दबाव को पूरा करने के लिए टर्मिनल भवन का विस्तार तथ एप्रोन के कार्य को बैंगलो हवाई अड्डे पर शुरू किया गया है। सरकार ने सिद्धांतः पूडूचेरी के कारीकाल तथा महाराष्ट्र के श्रीडी में ग्रीनफील्ड हवाई अडड्ा बनाने की अनुमति दे दी है।

भारत में वायु यातायात आज तेजी से बढ़ रहा है, और पिछले सात साल में 18.5% की औसत वृद्धि दर दर्ज किया है। भारतीय विमान पत्तन द्वारा 90.5 मिलियन घरेलू यात्री को जनवरी– नवम्बर 2010 में सूविधा प्रदान की गई, जो जनवरी–नवम्बर 2011 में बढ़कर 108.1 मिलियन हो गया, जो 19.4% की वृद्धि प्रदर्शित करता हैं। भारतीय हवाई अड्डों द्वारा अर्न्तराष्ट्रीय यात्री तथा सामान यातायात के प्रबंधन में जनवरी नवम्बर 2011 में 7.7% की वृद्धि हुई है, जिसमें 33.6 मिलियन यात्री और 1.4 मिलियन मैट्रिक टन काग्रों का परिवहन हुआ है। घरेलू समान ढुलाई जनवरी–नवम्बर 2011 तक 0.75 मैट्रिक टन रहा है, जो पिछले वर्ष के बराबर था।

सारणी 2.1: यातायात क्षेत्र के आंकड़े

मदें	इकाई	2009 के अनुसार
सड़क की लम्बाई	**Km.**	**3,516,452**
मुख्य सड़क	Km.	666,452
खड़ौजा सड़क	%	47.3
पक्का सड़क	%	61
सड़क घनत्व	km/1,000 sq. km.	1115
रेलवे पटरी की लम्बाई	***Km.***	***63,327***
बंदरगाह की संख्या		***199***
बदलने में लगा समय	दिन	3
विमानपत्तन्		***125***
अर्न्तराष्ट्रीय		11

2.3.4 उर्जा क्षेत्र

उर्जा किसी देश के आर्थिक विकास की रीढ़ होती है। किसी देश को कृषि विकास, विनिर्माण क्षेत्र तथा यहां तक सेवा क्षेत्र का विकास भी उर्जा उद्योग की क्षमता पर निर्भर करता है। भारत विश्व में उर्जा सृजन की क्षमता वाला पांचवा सबसे बड़ा देश है, जिसकी स्थापित क्षमता 30 सितम्बर 2009 तक 152 वॉट जौ वैश्वीक उर्जा सृजन का 4 प्रतिशत था। विश्व के चार प्रमुख देश यू. एस. ए., जापान, चीन, रूस वैश्वीक उर्जा सृजन को लगभग आधे का उपयोग करते हैं। भारत में 2008–09 में औसत प्रतिव्यक्ति विद्युत की खपत 704 किलोवॉट प्रतिघंटा अनुमानित की गई है, जबकि वैश्वीक औसत 2300 किलोवाट प्रतिघंटा हैं। इसके अलावा भारत में बिजली कटौती दैनिक प्रकृति है जिससे विकसित स्थान दिल्ली, मुबंई, चेन्नई, बैंगलोर भी अछूते नहीं है। भारत में कोई भी सम्मानित व्यापार या कारखाना के लिए डीजल जेनेरेटर विद्युत कटौती के समय सत्त विद्युत आपूर्ति के लिए अनिवार्य है। कटौती कुछ समय तक हीं सीमित नहीं हैं बल्कि घंटो तक कभी–कभी तो कई घंटों तक कई जगहों पर अंधेरा बना रहता है। औद्योगिक मशीन तथा संगणक के चलाने के अलावा कार्यलय के कार्य हेतु भी वातानुकूलित मशीन की इस प्रचण्ड गर्मी वाले देश में आवश्यक हैं। साथ हीं सेवा उपलब्ध कराने वालों को उर्जा की वैकल्पिक व्यवस्था करना अनिवार्य है।

किसी अच्छे होटल में लोग सबसे पहले जेनेरेटर की उपलब्धता को जांचते हैं, लेकिन यह आवश्यकता भारत में निर्माण तथा क्रियान्वयन लागत में वृद्धि कर देता है। क्योंकि सरकार संरचानत्मक लागत को निवेशकों की तरफ पास कर देती है, जिससे जेनेरेटर लागत सम्मिलित है। कुछ औद्योगिक पार्क तथा शोध पार्क सतत् उर्जा प्रदान करते हैं, जो छोटे कम्पनियों के लिए बड़ा पर्क का काम करती है, क्योंकि इसके रख रखाव पर लागत पर्क के लिए कम्पनी को कुछ प्रिमियम देना होता है। जो बड़े कारखानों के लिए उचित नहीं है। भारत में जेनेरेटर के साथ कैसे कार्य करना है, तथा कारखाने के स्थान पर जेनेरेटर मैकेनिक कैसे उपलब्ध हो भारत में कारखाने या कार्यालय खोलने के लिए आवश्यक है।

भारत सरकार राष्ट्रीय पावर ग्रीड का अन्नयन के लिए प्रतिबंध है। अतंतः मुद्रा केवल कुछ उत्पादन तक सीमित नहीं हैं पर उन्नत प्रबंधन, जो वर्तमान में हाई टेक कारखाना तथा निवास क्षेत्र एक जैसे प्रभावित है।

2.3.5 मुख्यक्षेत्र तथा अवसंरचना सेवाओं में वृद्धि

भारत में मुख्य क्षेत्र के उद्योग तथा संरचात्मक सेवा का विकास संतोषजनक नहीं है। बहुत सारी समस्यायें हैं जो इस क्षेत्र के विकास में बाधा का कार्य कर रहें है। उदाहरण स्वरूप उर्जा क्षेत्र कोयले की अनुपलब्धता, अन्य मुख्य उद्योग एवं उचित मात्रा में उर्जा की अनुपलब्धता से ग्रसित हैं। सारणी 2. 2 मुख्य क्षेत्र में वृद्धि तथा संरचनात्मक सेवा में साल के वृद्वि के आंकड़े प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

सारणी 2.2: मुख्य उद्योगों में वृद्धि तथा संरचनात्मक सेवायें (प्रतिशत में)

कम संख्या	क्षेत्र	2007–08	2008–09	2009–10	2010–11	2011–12 (अप्रैल–दिस.)
1.	उर्जा	6.3	2.5	6.8	5.7	9.3
2.	कोयला	6.0	8.2	8.0	0.0	–2.7
3.	विनिर्मित स्टील	6.8	13.2	3.2	9.6	5.7
4.	खाद्य	–8.6	–2.6	13.2	1.0	–0.5
5.	सीमेंट	7.8	7.6	10.1	4.3	5.1
6.	पेट्रोलियम					
	(क) क्रूड तेल	0.4	–1.8	0.5	11.9	1.9
	(ख) रिफाइनरी	6.5	3.0	–0.4	3.0	4.1
	(ग) प्राकृतिक गैस	2.1	1.4	44.8	9.9	–8.8
7.	रेलवे राजस्व, आय, स्त्रोत यातायात	9.0	4.9	6.6	3.8	4.7
8.	महत्वपूर्ण बंदरगाह पर कारगो प्रबंधन	12.0	2.2	5.7	1.6	0.4
9.	नागरिक उड्डयन					
	(क) निर्यात कार्गो पबंधन	7.5	3.4	10.4	13.4	–1.1
	(ख) आयात कार्गो प्रबंधन	19.7	–5.7	7.9	20.6	1.4

	(ग) अंर्तराष्ट्रीय टर्मिनल पर यात्री प्रबंधन	11.9	3.8	5.7	11.5	7.2
	(घ) यात्री घरेलू सिरा का प्रबंधन	20.6	−12.1	14.5	16.1	17.5
10.	दूर संचार					
	सेल फोन कनेक्शन	38.3	80.9	47.3	18.0	−51.0
11.	सड़क उच्च मार्गों का उन्नयन*					
	(क) एन.एच. ए.आई.	164.6	30.9	214	−33.3	8.9
	(ख) एन.एच. (ओ) बी.आर. डी.बी.	12.5	17.3	4.0	−6.8	−36.5

स्त्रोतः सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कियान्वयन मंत्रालय (MOSPI)

* यह दो मार्गों एवं चार में चौड़ीकरण तथा कमजोर सड़क की मरम्मत को समाहित करता है।

नोटः एन.एच.(ओ) अर्थात राष्ट्रीय उच्च मार्ग संगठन और बी.आर.डी.बी. (सीमा सूरक्षा विकास बोर्ड)।

2.4 बेरोजगारी

बेरोजगारी से आशय वे लोग जो काम करने योग्य हैं तथा काम करने को इच्छुक हैं पर बिना रोजगार के हैं। केन्ज के अनुसार, विकसित अर्थव्यवस्थाओं में बेरोजगारी का कारण प्रभावी मांग का न होना है, जबकि भारत जैसे विकासशील देशों में इसका कारण विल्कुल अलग है। विकासशील देशों में बेरोजगारी और महंगाई एक साथ चलती है। नीचे के सारणी में प्रतिशत के रूप में आंकडें पिछले नौ साल में भारतीय युवाओं की बेरोजगारी के आंकड़े प्रदर्शित कर रहें हैं:

सारणी में दिये गये आंकड़े अमेरिका के केन्द्रीय खूफिया विभाग के वेबसाईट से लिया गया है। यह आंकड़े सूचित करते हैं कि भारत में बेरोजगारी की समस्या हमेशा से संकंटपूर्ण रहा है। जो 10 प्रतिशत के बरीब पूरे साल रहता है। 2009 तथा 2010 में बेरोजगारी और भी नाजूक हो गई क्योंकि यह 10 प्रतिशत से उपर चला गया था।

वर्ष	बेरोजगार युवा का प्रतिशत
2002	8.8
2003	9.5
2004	9.2
2005	8.9

2006	7.8
2007	7.2
2008	6.8
2009	10.7
2010	10.8

स्त्रोतः सी.आई.ए. विश्व फैक्टबूक

श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण के अनुसार 2010 में कुल बेरोजगार युवाओं की संख्या 40 मिलियन था। पुरूषों की बेरोजगारी 8 प्रतिशत तथा महिला युवतियों की बेरोजगारी 14.6 प्रतिशत विद्यमान है। मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम) जा जो सरकार प्रत्येक वर्ष 100 दिन की रोजगार देने की गारंटी के साथ बेरोजगार युवाओं के लिये बनाया गया है। यह ऐक्ट बेरोजगारी की समस्या को दूर करने में विशेष कर ग्रामीण क्षेत्र में अच्छा काम कर रहा है। इसके अलावा इसने ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र की ओर पलायन पर भी अंकुश लगाया है।

2.5 शिक्षा का स्तर

सामाज के विकास के स्तर को मापने का सबसे महत्वपूर्ण मापक शिक्षा की दर है। जनगणना की परिभाषा के अनुसार सात साल या उसके उपर का कोई व्यक्ति जो किसी भी भाषा में पढ़ना व लिखना जानता है, भारत में शिक्षित माना जाता है। भारत मे शिक्षा दर का कम होना, बेरोजगारी का एक मूख्य कारण माना जाता है। सामाज में शिक्षा का स्तर बढ़ाने के लिए सरकार ने कुछ साल पहले दो योजना 'मध्याह्न भोजन योजना' तथा सर्व शिक्षा अभियान लाई। इस दो योजनाओं के अलावा भारत सरकार ने अनेक अन्य उपाय किये हैं शिक्षा के स्तर को बढ़ाने के लिए दोनों ग्रामीण क्षेत्र तथा शहरी क्षेत्र में किया है। राज्य सरकारों को यह निर्देशित किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्र में जहां गरीबों की संख्या अधिक हैं, वैसे जिलों में शिक्षा के स्तर को बढ़ाना सुनिश्चित किया जाय।

2011 के जनगणना के अनुसार भारत में शिक्षा का स्तर में लगभग 9% की वृद्धि हुई है। यह 2001 में 65.38% से बढ़कर 2011 में 74.04% हो गया है, जो पिछले 10 वर्ष में 9% की वृद्धि दर्शा रहा है। जिसमें पुरूष साक्षरता दर 82.14% और महिला साक्षरता दर 65.46% है। 93.9% साक्षरता दर के साथ केरल सबसे शीर्ष पर है, जबकि लक्ष्यद्वीप और मिजोरम 92.3% तथा 91.06% के साथ क्रमशः दूसरे और तीसरे स्थान पर है। बिहार 63.08% साक्षरता दर के साथ भारत में सबसे निचले पायदान पर है।

पिछले दस साल में भारत के साक्षरता दर में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। नीचे के सारणी में राज्यों की साक्षरता दर को श्रेणीबद्व किया गया है।

सारणी 2.3 भारत में राज्यों की साक्षरता दर की श्रेणी

क्रम संख्या	राज्य/ केन्द्रशासित राज्य	साक्षरता दर (जनगणना 2011)	पुरूष साक्षरता दर (जनगणना 2011)	महिला साक्षरता दर (जनगणना 2011)

1	अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	86.3%	90.1%	81.8%
2	आंध्र प्रदेश	67.7%	75.6%	59.7%
3	अरूणाचल प्रदेश	67.0%	73.7%	59.6%
4	असम	73.2%	78.8%	67.3%
5	बिहार	63.8%	73.5%	53.3%
6	चण्डीगढ़	86.4%	90.5%	81.4%
7	छतीसगढ़	71.0%	81.5%	60.6%
8	दादर नगर हवेली	77.7%	86.5%	65.9%
9	दमन और द्वीव	87.1%	91.5%	79.6%
10	दिल्ली	86.3%	91.0%	80.9%
11	गोवा	87.4%	92.8%	81.8%
12	गुजरात	79.3%	87.2%	70.7%
13	हरियाणा	76.6%	85.4%	66.8%
14	हिमाचल प्रदेश	83.8%	90.8%	76.6%
15	जम्मू और कश्मीर	68.7%	78.3%	58.0%
16	झारखण्ड	67.6%	78.5%	56.2%
17	कर्नाटक	75.6%	82.8%	68.1%
18	केरल	93.9%	96.0%	92.0%
19	लक्ष्यद्वीप	92.3%	96.1%	88.2%
20	मध्य प्रदेश	70.6%	80.5%	60.0%
21	महाराष्ट्र	82.9%	89.8%	75.5%
22	मणिपूर	79.8%	86.5%	73.2%
23	मेघालय	75.5%	77.2%	73.8%
24	मिजोरम	91.6%	93.7%	89.4%
25	नागालैंड	80.1%	83.3%	76.7%
26	उड़िसा	73.5%	82.4%	64.4%
27	पूडुचेरी	86.5%	92.1%	81.2%
28	पंजाब	76.7%	81.5%	71.3%

29	राजस्थान	67.1%	80.5%	52.7%
30	सिक्किम	82.2%	87.3%	76.4%
31	तमिलनाडू	80.3%	86.8%	73.9%
32	त्रिपूरा	87.8%	92.2%	83.1%
33	उतर प्रदेश	69.7%	79.2%	59.3%
34	उतराखण्ड	79.6%	88.3%	70.7%
35	पश्चिम बंगाल	77.1%	82.7%	71.2%
-	भारत	74.04%	82.14%	65.46%

स्त्रोतः भारत की जनगणना, 2011

2.6 भारत में गरीबी

गरीबी एक ऐसा सामाजिक परिघटना/तथ्य हैं जिसमें सामाज के कुछ लोगों के पास इतना भी संसाधन नहीं होता है कि वे अपनी आधारभूत जरूरतों को पूरा कर सकें। गरीबी विकसित देशों मे भी विद्यमान है पर यह समस्या अल्प विकसित तथा विकासशील देशों में अधि विकट हैं। विभिन्न प्राधिकरणों में गरीबी को अलग–2 तरीके से परिभाषित किये हैं। न्यूनतम आवश्यकता और प्रभावी उपभोग मांग पर टास्क फोर्स के अनुसार गरीबी को प्रतिव्यक्ति कैलोरी खपत क अनुसार किया गया है। इस टास्क फोर्स के अनुसार, कोई व्यक्ति जो शहरी क्षेत्र में 2400 कैलोरी तथा ग्रामीण क्षेत्र में 2100 प्राप्त करने में प्राप्त करने में असफल हैं, उसी गरीब कहेगें। भारतीय योजना आयोग के अनुसार व्यक्ति जो 28.65 रूपये शहरी क्षेत्र में तथा 22.42 रू. ग्रामीण क्षेत्र में अर्जित करता है, तो वह गरीब नहीं हैं। भारतीय योजना आयोग के अनुसार भारत में 2009–10 में 34.47 करोड़ लोग जो 29.8 प्रतिशत जनसंख्या के बराबर, गरीबी रेखा नीचे हैं। गरीबी रेखा के नीचे रह रहे, उंची जनसंख्या का अनुपात चिन्ता का प्रश्न हैं। पर इनके साथ कुछ नाजूक आयाम जुड़े हैं। एक बहुत हीं कष्टदायी स्थिति है कि उतर पूर्व भारतीय राज्यों असम, मेघालय, मणिपूर, मिजोरम तथा नागालैंड में गरीबी बढ़ी है। यहां तक बड़े राज्य बिहार, छतीसगढ़ और उतर प्रदेश में भी गरीबी अनुपात में एक मामूली कमी आयी है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में। हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़िसा, सिक्किम, तमिलनाडू, कर्नाटक तथा उतराखण्ड में गरीबी में 10 प्रतिशत की कमी देखी गई है।

बिहार जैसे राज्य जहां गरीबी दर 53.5 प्रतिशत, छतीसगढ़ 48.7 प्रतिशत, मणिपूर 47.1 प्रतिशत, झारखण्ड 39.1 प्रतिशत, असम 37.9 प्रतिशत और उतर प्रदेश 37.7 प्रतिशत सबसे अधिक प्रभावित है। ग्रामीण सामाजिक समूहों में सबसे अधि गरीबी अनुसूचित जन जाति 47.4 प्रतिशत, उसके बाद अनुसूचित जाति 42.3 प्रतिशत, अन्य पिछड़ी जाति 31.9 प्रतिशत तथा अन्य वर्ग में 33.8 प्रतिशत दर्ज की गई है।

बिहार तथा छतीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग दो तिहाई अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की आबादी गरीब है, जबकि मणिपुर, उड़िसा, उतर प्रदेश 50 प्रतिशत से अधिक लोग गरीबी रेखा के नीचे है।

शहरी क्षेत्र में 34.1 प्रतिशत अनुसूचित जाति, 30.4 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति और 24.3 प्रतिशत अन्य पिछड़ी जाति के लोग गरीबी की श्रेणी में है जबकि अन्य वर्ग के 20.9 प्रतिशत गरीबी रेखा के नीचे हैं।

2.7 क्षेत्रीय विषमताएं

भारत में एक क्षेत्रीय द्वैत पाया जाता है। ऐसी स्थिति हमेशा खतरा उत्पन्न करती है जब एक क्षेत्र दूसरे से तेजी से विकास करता है। यह राष्ट्रीय अखण्डता के लिए खतरा उत्पन्न करता है तथा सबसे बड़ी सामाजिक–राजनैतिक समस्या के रूप में देखी जाती है। यह क्षेत्रीय विषमता कही जाती है। राज्य की आय की वृद्धि दर तथा प्रतिव्यक्ति आय अन्तर काफी अधिक है। एक तरफ जहां पंजाब और महाराष्ट्र जैसे धनी राज्य हैं, जिनकी प्रतिव्यक्ति आय वर्तमान मूल्य पर 19000 रू. अधिक है, वहीं दूसरी तरफ बिहार, जहां प्रतिव्यक्ति आय क्रमशः 4700 रू. और 6800 रू. है। गुजरात, महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश जैसे पिश्चिमी और दक्षिणी राज्य में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अन्य राज्य से अधिक है, तथा तकनीकी रूप से ये राज्य अन्य राज्यों से अधिक विकसित है। सभी क्षेत्र में क्षेत्रीय विषमता हैं, जैस महाराष्ट्र, तमिलनाडू जैस औद्योगिक रूप से विकसित राज्य कुल और औद्योगिक निर्गत में 44 प्रतिशत योगदान करते है जबकि इनकी शहरी जनसंख्या 39 प्रतिशत और 34 प्रतिशत क्रमशः है। जबकि, असम जैसा गरीब राज्य में शहरी जनसंख्या 9 प्रतिशत मात्र है। केरल में शिशू मृत्यु दर 12 प्रति एक हजार जीवित बच्चे हैं जबकि उड़िसा में 96 प्रति एक हजार जीवित बच्चे है।

2.8 धनी और गरीब के बीच बढ़ती खाई

समाज में गरीब और अमीर वर्ग के बीच खाई काफी चौड़ी है। यह आय तथा धन वितरण में समानता कहीं जाती है। विशेषज्ञों के अनुसार उपर आय समूह के 10 प्रतिशत लोगों का राष्ट्रीय उत्पाद में 45 प्रतिशत का योगदान है, जबकि नीचे आय समूह के 10 प्रतिशत लोगों का राष्ट्रीय उत्पाद में 1.9 प्रतिशत का योगदान है। यहां तक की पंचवर्षीय योजनाओं का लाभ भी समाज के धनी वर्ग को जाता है, औद्योगिकीकरण तथा कृषि विकास छोटे व 'सीमान्त किसानों' के बजाय बड़े किसानो तथा पूंजी पतियों को अधिक फायदा हुआ है। यहां तक की आर्थिक सहायता का लाभ भी बड़े किसानो के पास जाता है, क्योंकि उनके पास बड़े खेत होते हैं। जिससे वे नये तकनीकी को अपना सकते हैं। जबकि 77 प्रतिशत किसान छोटे तथा मझौले हैं। ग्रामीण क्षेत्र में धनी और गरीब के बीच खाई और चौड़ी होती जा रही है। सामाज के उपरी वर्ग के पास कुल सम्पति का 80 प्रतिशत है, जबकि सामाज के निचले वर्ग के पास मात्रा 2 प्रतिशत सम्पति है।

2.9 भुगतान शेष का असंतुलन

भुगतान शेष किसी देश द्वारा किये गये आयात तथा निर्यात का लेखा जोखा है। भारत के संदर्भ में भुगतान शेष हमेशा घाटे का रहा है। हमारा विश्व

व्यापार में निर्यात में हिस्सेदारी केवल 1 प्रतिशत है जबकि आयात प्रत्येक वर्ष लगातार बढ़ रहा है। भुगतान शेष का असंतुलन हमारी अर्थव्यवस्था के कई समस्याओं का कारण है। निर्यात को बढ़ाने की आवश्यकता है जिससे भुगतान शेष संतुलन में रह सके।

2.10 मुद्रा स्फीति

वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य में लगातार वृद्धि मुद्रास्फीति कहलाती है। भारतीय अर्थव्यवस्था सदैव मुद्रा स्फीति से प्रभावित रही है, कभी–कभी यह कम चिंताजनक होती है लेकिन अधिकतर समय यह ज्यादा चिंताजनक होती है। मुद्रा स्फीति की उच्च दर ने केवल आम जनता के दो जून की रोटी जुटाने में समस्या पैदा करती है बल्कि यह देश के आर्थिक विकास की दर में भी बाधक होती है। मुद्रा स्फीति का मुख्य कारण मुद्रा पूर्ति में वृद्धि के साथ–साथ घाटे की वित व्यवस्था की तकनीक और भुगतान शेष का असंतुलन हैं। वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था डालर की तुलना में रूपये के लगातार गिरते हुए मूल्यस्तर की गंभीर समस्या से जूझ रहीं है। कच्चे तेल के बढ़ते हुए मूल्य भी अन्य कारक के रूप में है जो मुद्रा स्फीति की वृद्धि में मुख्य भूमिका निभा रहे है।

यदि हम अपने देश के सम्पूर्ण आर्थिक विकास के स्तर को देखें तो विश्व बैंक द्वारा जारी मानव विकास सूचकांक रिर्पोट के अनुसार भारत का 127वां (कुल 177 देशों में) स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था एक विकासशील अर्थव्यवस्था है जिसमें लोगों पिछड़ापन कृषि की निम्न उत्पादकता, निम्न जीवन स्तर, कमजोर औद्योगिक क्षेत्र और आधारभूत संरचना की कमी तथा सामाजिक समस्याओं जैसे गरीबी, असमानता, भ्रष्टाचार, असमता, उत्पादन में कमी, जल का अभाव, बिजली का अभाव, साफ–सफाई की खराब स्थिति आदि विकास को बुरी तरह प्रभावित कर रहे हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि आधारित अर्थव्यवस्था हैं, जहां लगभग 40 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर है, जबकि अमेरिका, कनाडा, इंग्लैंड आदि देशों में केवल उसे 4 प्रतिशत लोग हीं कृषि व्यवसाय में लगे हुए है। कृषि प्राकृतिक कारकों पर निर्भर है, सिंचाई एवं अन्य पुरातन तकनीक कृषि में प्रयुक्त होती है। साख का अभाव, भण्डारण अक्षमता और अक्षम परिवहन तंत्र आर्थिक विकास को बुरी तरह प्रभावित कर रहे हैं।

29 प्रतिशत लोग खराब चिकित्सकीय सुविधा और आधारभूत संरचना की वजह से गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में भारत में संस्थागत साख में वृद्धि हुई है, लेकिन ग्रामीण भारत में अभी भी व्यवस्थित वितीय संस्थाओं से साख की आवश्यकताओं की पूर्ति में कठिनाईयां पाई जा रहीं है। ग्रामीण भारत में अभी भी लोग अपनी वितीय आवश्यकताओं के लिए साहूकारों पर निर्भर हे जो बहुत ज्यादा व्याजदर वसूल करते हैं।

2.11 सारांश

भारत अनेक प्रकार की आर्थिक समस्याओं से ग्रसित है। पिछले 60 वर्षों से ज्यादा के व्यवस्थित प्रयासों ने भारत में एक मजबूत अर्थव्यवस्था के आधार तैयार करने में सफलता पाई है, परन्तु अभी भी इसे काफी आगे तक

जाना है। भारतीय रेलवे भीड़ग्रस्त, सुरक्षा मानक से कम है। रेल के अन्दर तथा प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध यात्री सेवायें लोगों को परेशान करती है। उड्डयन उद्योग (वायु यातायात) डमाडोल स्थिति में हैं, उदाहरण के लिए एयर इंडिया और किंगफिशर अपन अस्तित्व के लिए संर्घष कर रही है। सड़क विकास की कार्ययोजना में अभाव के वजह से सड़क परिवहन समस्याओं से ग्रसित है। सड़कों का संकरा होना, अक्षम यातायात प्रबंधन यातायात में जाम की समस्या को हमेशा बढ़ावा देता है। भारत में राष्ट्रीय राजमार्गों पर वाहनों की औसत गति 30 से 40 किलोमीटर प्रतिघंटा की हैं। इन सबके अतिरिक्त तीव्र मुद्रा स्फीति की दर, बेरोजगारी की उच्च दर गरीबी, गरीब और अमीर के बीच बढ़ता हुआ अन्तर, कमजोर औद्योगिक आधार, आवश्यक वस्तुओं की कमी आदि, देश के आर्थिक विकास में सबसे बड़े बाधक हैं।

उपरोक्त समस्याओं से निपटने के लिए भारत को एक मजबूत राजनीतिक मतैक्य की आवश्यकता है।

2.12 शब्दावली

- **अवसंरचनाः** से आशय समाज या उद्यम के संचालन के लिए आवश्यक बुनियादी भौतिक और संगठनात्मक ढांचे और सुविधाओं से हैं।
- **बेरोजगारीः** से आशय वे लोग जो काम करने योग्य हैं तथा काम करने को इच्छुक हैं पर बिना रोजगार के हैं।
- **गरीबीः** एक ऐसी सामाजिक परिघटना हैं जिसमें सामाज के कुछ लोगों के पास इतना भी संसाधन नहीं होता है कि वे अपनी आधारभूत जरूरतों को पूरा कर सकें।
- **भुगतान शेषः** किसी देश द्वारा किये गये आयात तथा निर्यात का लेखा जोखा है।
- **मुद्रास्फीति** : वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य में लगातार वृद्धि।

2.13 बोध प्रश्न

(A) खाली जगह को भरें

1. भारतीय रेल की एक दिन में ––––––––––– गाड़ियां चलती हैं।
2. भारत सरकार चाहती है कि वह 2012 तक विजली की उपलब्धता का लक्ष्य –––––––––––– इकाई प्रतिव्यक्ति है।
3. भारत में दो मार्ग वाले सड़क मात्र –––––––––––– प्रतिशत हैं।
4. भारत में वायु परिवहन का औसत वृद्धि दर पिछले सात सालों में –––––––– है।
5. भारत मे सड़क परिवहन विश्व में सबसे अधिक –––––––– सड़क दूर्घटना के लिए जिम्मेदार है।

(B) सत्य या असत्य

1. विश्व रेलवे नेटवर्क में भारतीय रेल दूसरे नम्बर पर है।
2. जेनेरेटर के द्वारा उद्योंगों में बिजली की आपूर्ति करना एक आवश्यकता है।

3. लोक व निजी साझेदारी भारत में संरचनात्मक विकास के लिए एक मात्र रास्ता है।
4. भारत में 29 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे रहते हैं।
5. भारत मे 2011 की जनगणना के अनुसार 74.04 प्रतिशत साक्षरता दर है।
6. भारत में श्रम सर्वेक्षण ब्यूरो के अनुसार 2010 के अंत में बेरोजगार यूवा की संख्या 60 मिलियन था।
7. बिहार मे गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का प्रतिशत 67 प्रतिशत था।

2.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

(A)

1. 11,000, 2. 1000, 3. 53, 4. 18.5 प्रतिशत, 5. 8वां

(B)

1. असत्य, 2. सत्य, 3. असत्य, 4. सत्य, 5. सत्य, 6. असत्य, 7. असत्य।

2.15 स्वपरख प्रश्न

1. भारत में सरंचना की स्थिति का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें।
2. ''भारत में सभी समस्याओं की जड़ गरीबी और निम्न साक्षरता दर है'' इस कथन पर अपनी प्रतिक्रिया दें।
3. भारतीय सामाज के विभिन्न आधार भूत समस्याओं पर एक निबंध लिखें।
4. क्षेत्रीय विषमता से आप क्या समझते हैं? इसके कारणों की चर्चा कीजिए तथा इसे दूर करने के उपाय सुझाईए।

2.16 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Edward Shaprio, Macroeconomic Analysis (1960).
2. Keynes, J. M., General Theory of Employment, Interest and Money, (1936).
3. Norman, P. Keiser, Macro-Economics, (1960).
4. Desai, Ashok, V., Technology Absorption in Indian Industry, New Delhi, Wiley Eastern, 1998.
5. Indian Economic Review (Delhi School of economics).
6. Lall, Sanjaya, Technology Development and Export Performance in LDCs: Leading Engineering and Chemical Firms in India, Review of World Economics, Vol. 122(1), pp. 80, 1996.
7. Economic Survey, Govt. of India.
8. Planning Commission, Govt. of India.

*****

इकाई 3 मांग विश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 मांग का अर्थ
3.3 मांग का नियम
3.4 मांग फलन
3.5 बाजार मांग
3.6 मांग के प्रकार
3.7 बाजार मांग के कारक
3.8 सारांश
3.9 शब्दावली
3.10 बोध प्रश्न
3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.12 स्वपरख प्रश्न
3.13 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- मांग के अर्थ का वर्णन कर सकें।
- मांग के नियम एवं मांग फलन की व्याख्या कर सकें।
- मांग के प्रकार एवं बाजार मांग के घटकों की व्याख्या कर सकें।

3.1 प्रस्तावना

यदि सभी व्यक्तिगत उपभोक्ताओं के मांग को एकीकृत किया जाय, तब हम किसी वस्तु की बाजार मांग प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, बाजार में प्रत्येक कीमत पर मांगी गई वस्तुओं की मात्रा उस कीमत पर सभी व्यक्तिगत उपभोक्ताओं का योग है। व्यवासाय के नीति –निर्धारण में बाजार मांग विश्लेषण का अति महत्वपूर्ण/निर्णायक भूमिका है। एक वस्तु के मात्रा या परिमाण से सम्बन्धित वर्तमान एवं भविष्य में मांग की सूचना फर्म के लिए आवश्यक होते हैं जिसके आधार पर भविष्य में उत्पादन, स्टॉक की व्यवस्था, विज्ञापन योजना को बनाने तथा उत्पाद को बेचने के लिए जगह को निर्धारित करने में सहायक हो सके। बाजार मांग का विश्लेषण, फर्म के व्यवसाय कार्यकारी या अधिकारी को आन्तरिक मूद्दें सुलझाने हेतु राह प्रसस्त कराता है, जैसेः

1. मांग को निर्धारित करने वाले कौन–कौन से कारक हैं?
2. विभिन्न कारकों द्वारा मांग को किस हद तक प्रभावित करती है?
3. विक्री को किस तरह से प्रोत्साहित किया जा सकता है?
4. इस उत्पाद के विज्ञापन व्यय की लोच क्या है?

इस अध्याय में हम बाजार मांग का अर्थ, मांग के प्रकार, मांग के घटक एवं उसके माप, मांग फलन तथा मांग की लोच की चर्चा करेंगें।

3.2 मांग का अर्थ

अर्थशास्त्र में 'मांग' शब्द का प्रयोग विशेष अर्थ में प्रयोग किया जाता है। स्टोनियर एवं हेग के अनुसार, 'अर्थशास्त्र में मांग का अर्थ मांगी गई वस्तु का, प्रर्याप्त मुद्रा द्वारा भुगतान के लिये पीछा करना है।'' क्रयशक्ति के न होने पर मांग प्रभावी नहीं होता है। एक क्षण के लिए, बहुत सारे लोग यथासंभव एक बड़ा आधूनिक घर, एक ब्रांडेड नई कार, एवं एक ग्रीष्मकालीन कोलाज़ पसन्द करते हैं। लेकिन उनके पास इन वस्तुओं के लिए प्रभावी मांग नहीं है। इस क्रम में उन्हें इन वस्तुओं की मांग होनी चाहिए, उनमें इसके लिए राशि भुगतान या खरीदने की क्षमता एवं इच्छा होना आवश्यक है। अतः अर्थशास्त्र में 'प्रभावी मांग' का विशेष अर्थ है। मांग प्रदर्शित करता है कि कोई व्यक्ति किसी वस्तु को खरीदने की इच्छा रखता है और उसके लिए विभिन्न कीमतों को चुकाने के लिए तैयार हैं। बेनहम राईट कहते हैं, 'किसी वस्तु की मांग, दिये गये कीमत पर उसकी मात्रा है जिसे प्रति इकाई समय पर उस कीमत पर खरीदना चाहेगें या चाहते हैं।' मांग का अर्थ सदैव एक दिये गये कीमत पर मांग से है, इस शब्द का कोई सार्थकता नहीं रह जाती है यदि इसमें से कीमत न हो तो।

मांग की विशेषताएं

मांग के चार प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैः

1. **कीमतः** मांग सदैव एक समय पर की जाती है। यदि हम कहते हैं कि बाजार में 1000 मोटर वाहन की मांग है, तब इस प्रकार के कथन का कोई अर्थ नहीं है। व्यक्ति को जिस वस्तु को खरीदने के लिए तैयार है उसके कीमत एवं मात्रा दोनों को बताना आवश्यक है।
2. **समयः** मांग का निश्चित अर्थ है प्रति इकाई समय अर्थात् प्रति माह, प्रति सप्ताह या प्रति दिन मांग से है।
3. **बाजारः** मांग के अध्ययन में, बाजार निश्चित रूप से पाई जाती है। बाजार उन विन्दुओं या केन्द्रों का समुच्च है जहां क्रेता एवं विक्रेता एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं। इसके लिए किसी निश्चित भौगोलिक सीमा का होना आवश्यक नहीं है।
4. **मात्राः** मांग सदैव हीं एक मात्रा के रूप में होती है जिसे व्यक्ति खरीदने को इच्छूक होता है। यह एक कोई अनुमान सन्निकटीकरण नहीं है बल्कि इसे संख्या में व्यक्त किया जाता है।

3.3 मांग का नियम

सामान्यतया कहा जाता है, लोगों द्वारा एक वस्तु की निश्चित मात्रा को खरीदने की इच्छा एवं क्षमता उसके कीमत के साथ परिवर्तित होती है। कम कीमत पर, लोग अधिक वस्तुओं को खरीद सकते हैं, जबकि कीमत अधिक होने पर कम हीं वस्तु खरीद पाते हैं। वास्तव में, मांग का नियम कहता है कि एक उत्पाद की मात्रा के मांग का कीमत के साथ विपरीत परिवर्तन होता है। और अधिक संक्षेप में हम कह सकते हैं, कम कीमत पर अधिक प्रभावी मांग, या अधिक कीमत होने पर, कम प्रभावी मांग। इस नियम का पालन करते हुए विक्रेता वस्तुओं की कीमत ज्यादा अधिक नहीं कर सकते क्योंकि अधिक कीमत

होने पर वस्तुओं की मांग की मात्रा घट जायेगी। वे किसी वस्तु के अधिक मात्रा को बेचने के लिए कोशिश करते हैं कि वस्तु की कीमत निश्चित रूप से कम हीं होना चाहिए।

मांग के नियम का सामान्यीकरण किया जाता है जिसके कुछ अपवाद भी हैं। मुख्यतः, दो ऐसी स्थितियां हैं, जहां यह नियम सही साबित नहीं होते हैं, लेकिन वे अपवाद हैं। यदि एक वस्तु के कीमत में कमी होती है, और यह उम्मीद की जाती है कि आगे भी घटती रहेगी, क्रेता यह सोचकर साथ रहते हैं कि जब तक कीमत बिल्कुल नीचे तक पहुंच जाय, ताकि यह अपने संभावित न्यूनतम कीमत हो जाय। यह तथ्य विशेषकर डीलर एवं पूर्वाग्रही व्यक्ति के स्थिति में हीं सत्य हो सकता है, लेकिन यह उपभोक्ताओं की स्थिति में भी कुछ हद तक सत्य हो सकता है। लेकिन, जब कीमत अपने न्यूनतम स्तर तक पहुंचने पर वे लोग उच्च कीमत के तुलना में अधिक वस्तुओं को खरीदेगें, ताकि नियम के सामान्य सिद्धान्त लागू हो, यहां तक इस स्थिति में भी। दूसरा अपवाद प्रत्यक्ष रूप से सिद्धान्त के साथ चलते रहती है। कुछ ऐसी भी वस्तुएं हैं जैसे हीरा, जिसे लोग अधिक कीमत पर खरीदते है जिससे कि इसको रखने वाले व्यक्ति की प्रतिष्ठा सामाज में उंची मानी जाय। गले में बड़ा सा हीरे का हार या अंगुली में हीरे की अंगुठी का पहनना, उस व्यक्ति को बाकि लोगों से भिन्न एवं अधिक सपन्न व्यक्ति के रूप में प्रदर्शित या प्रस्तुत करते हैं। यदि हीरे ज्यादा मंहगें न रहें तो निर्धन व्यक्ति भी इसे प्रचुर मात्रा में खरीद सकते है, तब यह ज्यादा प्रतिष्ठा की वस्तु नहीं रह जायेगी और इसे पसन्द करने वाले लोगों की संख्या भी कम हो जायेगी। ऐसे बहुत सारे वस्तुएं पाई जाती हैं, जिन वस्तुओं पर मांग का नियम का सामान्यीकरण निश्चित रूप से लागू होते हैं।

अल्फ्रेड मार्शल ने मांग के नियम को निम्न रूप से परिभाषित किया हैः ''अधिक मात्राएं बेची जाती है, कम कीमत पर जिसका प्रस्ताव इस क्रम में किया जाता है कि क्रेता इसे प्राप्त कर सके; या दूसरे शब्दों में, वस्तु की मांगी गई मात्रा में वृद्धि कीमत में कमी के साथ होती है, और कीमत में बढ़ने के साथ कम होती है।'' मार्शल इसे मांग के सामान्य नियम के रूप समझते हैं। इसे उचित रूप से तैयार करना होगा ताकि अर्थशास्त्र के अन्य नियमों की तरह स्पष्ट रूप से जाना या समझा जा सके, मांग का नियम तभी लागू होगें जब केवल अन्य बातें सदैव स्थिर रहें या अपरिवर्तित रहें। इस मान्यता को 'अन्य बातें समान रहे' मान्यता के नाम से जानते हैं।

3.4 मांग फलन

किसी वस्तु के मांग फलन को, दिये गये बाजार के समय अवधि में, मांगी गई विभिन्न मात्रा एवं उसके मात्रा को निर्धारित करने वाले कारकों के बीच, सम्बन्ध के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। सामान्यतया, वस्तु की मांग को निर्धारित करने वाले कारक निम्नलिखित हैंः

1. वस्तु की कीमत,
2. उपभोक्ता की आय,
3. उपभोक्ता की रूचि, और
4. अन्य वस्तुओं की कीमत

अतः, सामान्य रूप में, एक वस्तु की मांग फलन निम्न रूप में लिखा जा सकता हैः

$D_x = f(P_x, P, Y, T)$

D_x = X वस्तु की प्रति इकाई समय पर मांग की मात्रा,

P_x = X वस्तु की कीमत,

P = अन्य वस्तु की औसत कीमत,

Y = उपभोक्ता की आय,

T = उपभोक्ता की रूचि।

एक विशुद्ध मांग फलन वो होता है, जो प्रत्येक कारकों के परिवर्तन पर उपभोक्ता के प्रतिक्रिया को प्रदर्शित करता है। अन्य वस्तुओं की कीमतों, उपभोक्ता की आय एवं रूचि को स्थिर मान लेने पर मांग फलन का हमें एक निम्नलिखित सरल रूप प्राप्त होता हैः

$D_x = f(P_x)$

मांग फलन बताता है कि वस्तु X की मांग केवल या सिर्फ इसकी अपनी कीमत P_x का एक फलन है।

लेकिन, जब अन्य कारक स्थिर न हो या जब अर्थव्यवस्था में एक समय अवधि में परविर्तन हो, तब इन सभी परिवर्तनों को स्वीकारने के लिए प्रवैगिक मांग फलन का प्रयोग किया जा सकता है। अर्थमिति वह विषय है जो आर्थिक एवं सांख्यिकी सिद्धान्त का परिशुद्ध आर्थिक सम्बन्धों को मापने के उद्देश्य से जोड़कर अध्ययन करता है। आर्थिक सिद्धान्तों के आधार पर गणितीय मॉडलों का व्युत्पन्न किया जाता है। इन गणितीय मॉडलों में प्रयोग की गई प्राचलों के मूल्यों का आंकलन एकत्रित आनुभविक सांख्यिकीय आंकड़े से सांख्यिकीय विधि एवं तकनीकों का प्रयोग करके किया जाता है।

सामान्यतया मांग फलन कीमत एवं आय कि शून्य कोटि की सजातीय फलन होती है अर्थात् यदि सभी कीमतों एवं आय में परिवर्तन एक हीं अनुपात में हो, तब मांगी गई मात्रा में भी अपरिवर्तित रहती है।

यदि आय, अन्य वस्तुओं की कीमत, उपभोक्ता की रूचि एवं अन्य स्वतंत्र चर स्थिर रहे, तब मांग फलन एक सरल रूप में होती है, $D_x = f(P_x)$। मांग फलन के इस रूप में मांगी गई मात्रा एवं कीमत में परिवर्तन एकस्वर में परिवर्तन तो होते हैं, साथ हीं मांग वक्र विपरीत सम्बन्ध सम्बन्ध को प्रस्तुत करते हैं।

3.5 बाजार मांग

बाजार मांग किसी कीमत पर सभी व्यक्तिगत मांगी गई मात्राओं का उस कीमत पर योग को प्रदर्शित करता है। किसी वस्तु के लिए बाजार मांग, सभी व्यक्तिगत उपभोक्ताओं का क्षैतिज योग होता है। दूसरे शब्दों में, बाजार में प्रत्येक कीमत पर मांगी गई वस्तुओं की मात्रा, प्रत्येक कीमत पर सभी व्यक्तिगत उपभोक्ताओं के मांगी गई मात्रा का योग है। व्यक्तिगत मांग, एक व्यक्ति द्वारा किसी दिये गये कीमत पर प्रति इकाई समय में मांगी गई मात्रा

का संकेत देता है। एक उत्पाद के लिए व्यक्तिगत मांग का समग्र हीं, उस उत्पाद के मांग का बाजार मांग कहलाता हैं। प्रत्येक व्यक्तिगत उपभोक्ताओं के मांग को जोड़कर बाजार मांग प्राप्त किया जा सकता है और व्यक्तिगत मांग वक्र के समग्र से बाजार मांग वक्र व्युत्पन्न किया जा सकता है। बाजार मांग वक्र व्युत्पन्न करने के लिए व्यक्तिगत मांग वक्र को क्षैतिज रूप से जोड़ कर प्राप्त किया जा सकता है। इन सामान्य मांग वक्रों की ऋणात्मक ढ़ाल, कीमत एवं मांगी गई मात्रा के बीच में विपरीत सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।

माना कि किसी क्षेत्र विशेष में तीन उपभोक्ता A, B और C है। सारणी 3.1 में विभिन्न कीमतों पर मांगी गई मात्रा को प्रदर्शित किया गया है। बाजार मांग अनुसूची को ज्ञात करने के लिए हम सभी व्यक्तिगत मांग अनुसूची का योग करके निकाल सकते हैं।

सारणी 3.1: उपभोक्ता A, B, C के लिए व्यक्तिग मांग अनुसूची

प्रति इकाई कीमत	मांगी गई मात्रा			बाजार मांग
	उपभोक्ता A	**उपभोक्ता B**	**उपभोक्ता C**	
10	4	3	2	9
8	5	6	3	14
5	6	7	5	18

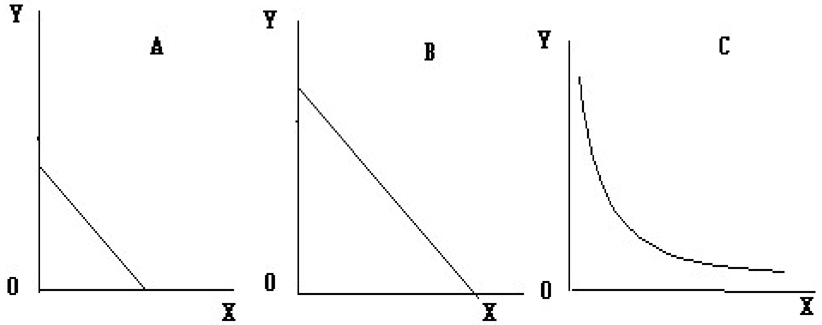

चित्र 3.1'क' व्यक्तिगत मांग वक्र

चित्र 3.1 'ख' बाजार मांग वक्र

चित्र 3.1 'ख' व्यक्तिगत मांग वक्र के योगात्मक वक्र को बाजार मांग वक्र के रूप में प्रदर्शित करता है।

एक प्रतिनिधि उपभोक्ता मांग अनुसूची ज्ञात करने का दूसरा तरीका है कि कुल उपभोक्ताओं के द्वारा मांगी गई वस्तुओं की मात्रा को, विभिन्न कीमतों से गुणा करके प्राप्त किया जा सकती है।

तीसरी विधि है कि उपभोक्ताओं का तीन समूह बनाकर–एक धनी, दूसरा मध्यम आय एवं तीसरा निर्धन। इसके बाद प्रत्येक समूह के लिए प्रतिनिधि उपभोक्ता के लिये व्यक्तिगत मांग अनुसूची तैयार करते हैं। तब संगत उपभोक्ता कीं संख्या को विभिन्न कीमतों पर मांगी गई मात्रा से गुणा करके ज्ञात किया जा सकता है। हम तीन अनुसूची ज्ञात करते हैं– प्रत्येक समूह के लिए एक अनुसूची। अब तीनों अनुसूचियों को क्षैतिज रूप से जोड़कर ज्ञात करते हैं। इस प्रकार, हम एक बाजार मांग अनुसूची प्राप्त करते हैं।

3.6 मांग के प्रकार

प्रबन्धकीय निर्णय लेने के लिए एक अर्थपूर्ण बाजार मांग विश्लेषण को पूरा करने हेतु प्रत्येक अर्थव्यवस्था में वस्तुओं एवं सेवाओं के संख्याओं का सावधानी पूर्वक वर्गीकरण करना महत्वपूर्ण है। एक व्यवसायी फर्म की नीति निर्धारण के लिए मांग के बारे में प्रत्येक स्तर पर समग्र मांग की सुस्पष्ट समझ होना आवश्यक है। यहां हम मांग के प्रमुख प्रकारों की विवेचना करेगें जिसका व्यवसाय के नीति–निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका होता है।

1. फर्म के उत्पाद एवं उद्योग के उत्पाद के लिए मांग

एक फर्म के मांग वक्र की बनावट एवं आकार विभिन्न बाजार संरचनाओं में अलग–अलग होते हैं।

विशूद्ध प्रतियोगी फर्म में व्यक्तिगत मांग वक्र पूर्ण लोचदार होती है। पूर्ण प्रतियोगी बाजार सजातीय उत्पाद/वस्तु, एवं बड़े पैमाने पर विक्रेता की मान्यता को स्वीकारता है। एक व्यक्तिगत फर्म में, बहुत से प्रस्ताव के बावजूद बाजार में किसी वस्तु की कुल मात्रा का बहुत कम भाग पाया जाता है। अतः यह कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती है। फर्मे यहां कीमत स्वीकारक होते हैं। बाजार कीमत, बाजार पूर्ति एवं मांग फलन के द्वारा निर्धारित होती है तथा इस कीमत पर फर्म एक वस्तु की कितनी भी मात्रा बेच सकती है।

एकाधिकरी बाजार में एक फर्म उद्योग भी होता है। अतः एक फर्म की मांग, एक उद्योग की मांग होती है। एकाधिकारी हीं अपने उत्पाद की कीमत निर्धारित करता है, जो बाजार मांग वक्र के नीचे गिरते हुए ढ़ाल वाले वक्र के आधार पर होती है। यह इंगित करता है कि एकाधिकारी वस्तुओं की अधिक मात्रा को बेचने के लिए कीमतों में कमी कर सकते हैं।

एकाधिकारिक प्रतियोगी बाजार में, व्यक्तिग फर्म का मांग वक्र सामान्य बाजार मांग वक्र की भांति नीचे गिरती हुई होती है। उत्पादों में विभिन्नता या अन्तर होने के कारण फर्म को कुछ हद तक कीमत को निर्धारित करने की स्वतंत्रता होती है। प्रत्येक फर्म के अपने उपभोक्ता होते हैं, जिनका इन उत्पादों के प्रति विशेष पसन्दगी या प्राथमिकता होती है।

अल्पाधिकारी बाजार में, फर्मों के मांग वक्र के बहुत से प्रकारों का सूझाव दिया जाता है। अल्पाधिकारी बाजार के फर्मों के मांग वक्र के सन्दर्भ में बड़ी अनिश्चितता की स्थिति पाई जाती है, क्योंकि फर्मों के समूह के अन्तर्गत,

अन्तर–आश्रित प्रतियोगिता होने के साथ हीं किसी एक निर्णय के सापेक्ष प्रतिक्रिया की अनिश्चितता पाई जाती है।

2. व्यक्तिगत एवं बाजार मांग

एक वस्तु के लिए किसी व्यक्तिगत क्रेता द्वारा की गई मांग को व्यक्तिग मांग कहते हैं, जबकि एक बाजार में एक वस्तु की मांग सभी व्यक्तिगत क्रेताओं द्वारा एक साथ की गई मांग को हीं बाजार मांग कहते हैं। खण्ड 3.2.1 में इसके उदाहरण दिये गये हैं, जिसमें व्यक्तिगत एवं बाजार मांग को प्रर्याप्त रूप से व्याख्या किया गया है।

3. टिकाउ एवं गैर–टिकाउ की मांग

दोनों उपभोक्ता एवं उत्पादक वस्तुओं को आगे टिकाउ एवं गैर–टिकाउ वस्तुओं में वर्गीकृत किया जाता है। टिकाउ वस्तुएं वे होती हैं जिसकी उपयोगिता या उपयोग केवल एक बार प्रयोग करने पर समाप्त नहीं होती है, बल्कि कुछ समय तक इसका प्रयोग किया जा सकता है। इनका प्रयोग लगातार एक समय अवधि तक बार–बार किया जाता हो। टिकाउ वस्तुएं आंशिक रूप से नयी मांग एवं आंशिक रूप से पूरीनी मांग को संतुष्ट करती है। ऐसी वस्तुएं गैर–टिकाउ वस्तुओं की तुलना में ज्यादा महंगी होती है तथा इनकी मांग पहले या अभी एवं बाद के परिघाटनाओं के परिप्रेक्ष्य पर आधारित होती है, जो बाजार की वर्तमान एवं भविष्य की संभावित शर्तो के अनुसार कीमत तय की जाती है।

टिकाउ वस्तुएं उपभोक्ता के साथ–साथ उत्पादक प्रकार की हो सकती है। टिकाउ उपभोक्ता वस्तुओं के अन्तर्गत मोटर कार, स्कूटर, लकड़ियों के सामान, घर, कपड़े, जूत्ते, कपड़े धोने की मशीन इत्यादि। टिकाउ उत्पादक वस्तुओं के अन्तर्गत भवन जैसे मद, कार्यालय के फर्नीचर एवं स्थावर द्रव्य, प्लांट एवं मशीनरी इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है। इन वस्तुओं को सामान्यतया 'अचल परिसम्पति' कहते हैं।

गैर–टिकाउ वस्तुएं वे वस्तुएं हैं जो एक बार या कुछ समय प्रयोग के उपरान्त नष्ट या कमजोर हो जाते हैं। इनका प्रयोग या उपभोग केवल एक बार या एक उपयोग के बाद समाप्त हो जाती है। गैर टिकाउ वस्तुओं को भी गैर–टिकाउ उपभोक्ता वस्तुएं एवं गैर–टिकाउ उत्पादक वस्तुओं में वर्गीकृत किया जा सकता है। पहले वर्ग में सभी खाद्य, पेय एवं साबून, रसोई ईंधन, सौन्दर्य सामग्री, प्रकाश, दूध, मछली, अण्डा, कागज का कप, एवं प्लेट आदि आते हैं। कच्चे पदार्थ, ईंधन एवं शक्ति, तैयारयुक्त सामग्री एवं पैकिंग पदार्थ आदि, दूसरे यानि उत्पादक गैर–टिकाउ वस्तु वाले श्रेणी में आते हैं।

4. स्वतः मांग एवं व्युत्पन्न मांग

वह मांग जो उपभोक्ता के अपने प्राकृतिक इच्छा या व्यक्ति के मानवीय इच्छा को प्रत्यक्ष या स्वतः संतुष्ट करें, स्वतः मांग कहलाता है। स्वतः मांग किसी अन्य वस्तु से प्रतिबन्धित नहीं होती है। यह किसी अन्य वस्तु के मांग से बिल्कूल स्वतंत्र होती है। खाद्य पदार्थ, कपड़े, आवास, साबून, दंतमंजन, टैप रिकोर्डर, टी.वी. सेट आदि वस्तुओं की मांग एक स्वतः मांग है। सभी उत्पादक वस्तुओं की मांग व्युत्पन्न मांग है, जैसे कि वे उभोक्ता या उत्पादक वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। फिर भी, शायद हीं कोई वैसी वस्तुएं होगी जिनकी मांग

अन्य मांगों से पूर्णतः स्वतंत्र हो। लेकिन निर्भरता की यह कोटि एक वस्तु से दूसरे वस्तु तक विस्तृत रूप से परिवर्तित होती रहती है। स्वतः मांग में वृद्धि, 'प्रदर्शन प्रभाव' या उपभोक्ता की आय में वृद्धि, जनसंख्या में वृद्धि एवं नये वस्तुओं के विज्ञापन के कारण हो सकती है। दूसरी तरफ वस्तुओं की मांग जो किसी अन्य वस्तुओं की मांग पर निर्भर रहती है, व्युत्पन्न मांग कहलाती है। ये वस्तुएं वे होती हैं जिनका प्रयोग कच्चे माल या दूसरे वस्तु के उत्पादन में आगत के रूप में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, पैंकिंग किये जाने वाली सामग्री की मांग, पैकेट वाली वस्तुओं की मांग पर निर्भर करेगी जिसके पैंकिंग के लिए इन वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है। साबून बनाने के लिए सब्जी तेल की मांग साबून की मांग पर निर्भर करेगा जिसको बनाने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। किसी यंत्र की मांग, उसके द्वारा उत्पादित वस्तुओं की मांग पर निर्भर करती है। सम्पूरक या प्रतिस्थापन वस्तुओं की मांग भी एक व्युत्पन्न मांग है। उदाहरण के लिए, ऑटोमोबाईल के लिए पेट्रोल की मांग सम्पूरक मांग तथा एक कुर्सी की मांग एक मेज के लिए सम्पूरक मांग है। मक्खन की मांग ब्रेड के लिए सम्पूरक मांग है; कोट के लिए मैट्रेस की मांग, चाय के लिए चीनी की मांग सम्पूरक मांग को प्रदर्शित करता है। इसलिए व्युत्पन्न मांग में वृद्धि या कमी, इससे सम्बन्धित 'जनक/मूल' वस्तुओं की मांग में वृद्धि या कमी पर निर्भर करता है।

5. बाजार खण्ड की मांग एवं सम्पूर्ण बाजार मांग

यदि बाजार भौगोलिक विस्तार, उत्पाद प्रयोग, वितरण माध्यम, उपभोक्ता की संख्या या उत्पादों की विविधता, एवं यदि इसके अतिरिक्त कोई और अन्तर के कारण उत्पाद की कीमत, लाभ का अन्तर, प्रतियोगिता, मौसमी प्रतिमान या चक्रीय अतिसंवेदनशीलता महत्वपूर्ण हो, तब यह आवश्यक होता है कि बाजार बेहतर व अर्थपूर्ण विश्लेषण के लिए बाजार के किसी विशेष भाग/खण्ड का अलग से अध्ययन किया जाय। एक विशेष बाजार का मांग किसी विशिष्ट वस्तुओं के मांग से सम्बन्धित होता है जबकि कुल मांग सम्पूर्ण बाजार खण्ड के मांग को धोतित करता है।

6. अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक मांग

उन वस्तुओं की मांग जो एक लघु अवधि के अन्तर्गत की जाती है उस लघु या अल्पकालिक मांग कहते हैं। इस वर्ग में फैशन उपभोक्ता वस्तुएं, मौसमी स्वभाव की वस्तुएं, निकृष्ट प्रतिस्थापन वस्तुएं आदि सम्मिलित किये जाते हैं। इसके विपरीत, सामान्य वस्तुओं की मांग लम्बे समय तक की जाती है। पाजामा, जूता, टाई आदि वस्तुओं की मांग लम्बे अवधि के लिए किया जाता है। छाता, बरसाती, गोंद, जूते, शीतल पेय, आईस क्रीम आदि मौसमी स्वभाव की वस्तुएं है। कुछ वैसी वस्तुएं हैं जिनकी मांग एकदम अल्प समय के लिये की जाती है। उदाहरण के लिए, नये वर्ष के ग्रीटिंग्स कार्ड, दिवाली के अवसर पर मोमबत्ती एवं पटाखे आदि भी मौसमी स्वभाव के हैं परन्तु अति लघु समय के लिए मांग किये जाते हैं। विद्युतीय पंखे, उनी कपड़े आदि ऐसे मौसमी स्वभाव की वस्तुएं हैं जिनका प्रयोग किसी मौसम विशेष में प्रयोग किये जाते हैं लेकिन वे सभी टिकाउ वस्तुएं हैं।

मांग जो लम्बे समय अवधि के लिए किये जाते हैं उसे दीर्घकालीक मांग कहते हैं। ज्यादातर सामान्य वस्तुएं दीर्घकालिक मांग वाली वस्तुएं होती है। दीर्घकालिक आय, बेहतर प्रतिस्थापन की उपलब्धता, बिक्री प्रोत्साहन, उपभोक्ता साख सुविधा आदि कारक हैं जो दीर्घ कालिक मांग को निर्धारित एवं प्रभावित करते हैं। दूसरी तरफ वस्तु की अपनी कीमत, प्रतिस्थापन वस्तु की कीमत, प्रचलित प्रायोज्य आय, समय समायोजन एवं विज्ञापन काफी हद तक दीर्घकालीन मांग को प्रभावित करता है। उत्पादकों के नये उत्पाद को स्थापित करने एवं नये उद्यमी के लिए उत्पाद की चयन, कीमत नीति में एवं विज्ञापन व्यय के निर्धारण तथा फेजिंग करने में अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक मांग के अवधारणाएं काफी उपयोगी होती है।

7. उपभोक्ता वस्तु एवं उत्पादक वस्तु

उपभोक्ता वस्तुएं एवं सेवाएं वे वस्तुएं है जिनका प्रयोग मानव द्वारा अन्तिम रूप से उपभोग के लिए प्रयोग किया जाता है। इसमें कपड़े, आवासीय घर, दवाईयां, डॉक्टर की सेवाएं, वकीलों की सेवायें, मोची की सेवाएं आदि को सम्मिलित किया जाता हैं। दूसरी तरफ उत्पादक वस्तुएं वे वस्तुएं है जिनका प्रयोग किसी दूसरे वस्तु के उत्पादन के लिए किया जाता है। इसके अतंर्गत प्लॉन्ट एवं यंत्र, उद्योग भवन, व्यवसायी कर्मचारियों की सेवायें, कच्चे माल आदि आते हैं। फिर भी, इनमें अन्तर करना मनमाने ढंग से किये जाते हैं। एक हीं वस्तु उपभोक्ता वस्तु एवं उत्पादक वस्तु हो सकती है फर्क सिर्फ उसके प्रयोग करने के तरीके में है। उदाहरण के लिए, एक उपभोक्ता के ड्रांईग कक्ष में रखे गये सोफा सेट उभोक्ता वस्तु है, जबकि व्यवसायी के स्वागत कक्ष में रखे गये सोफा एक उत्पादक के लिए उत्पादक वस्तु है। फिर भी अन्तर करना उचित मांग विश्लेषण के लिए उपयोगी है। जबकि उपभोक्ता वस्तुओं की मांग उपभोक्ता की आय पर निर्भर करता है, लेकिन उत्पादक वस्तुओं की मांग उसकी उत्पादन स्तर में परिर्वतन पर निर्भर करता है।

8. नई मांग बनाम प्रतिस्थापन मांग

कभी–कभी कुछ समय के लिए नई मांग एवं प्रतिस्थापन मांग में अन्तर स्पष्ट करना आवश्यक हो जाता है। जब कोई नये यंत्र खरीदे या संस्थापित किये जाते हैं तो इसे नई मांग कहते हैं, वजाय कि जब उस मशीन को मरम्मत एवं उसके कुछ भाग या सहायक को प्रतिस्थपित किया जाय।

3.7 बाजार मांग के घटक/कारक

मांग एक बहुकारक फलन है। इसका अर्थ है कि एक वस्तु की मांग बहुत से चरों/कारकों द्वारा निर्धारित होता है। बाजार मांग को निर्धारित करने के लिए वस्तु की कीमत स्वयं, सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत, उपभोक्ता की आय एंव रुचि महत्वपूर्ण कारक/घटक हैं। वस्तु की कीमत में परिवर्तन के परिणाम को एक हीं मांग वक्र में एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक गतिमान के रुप में प्रदर्शित किया जा सकता है, जबकि अन्य कारकों में परिवर्तन के प्रभाव को मांग वक्र के प्रतिस्थापन या विस्थापन के रुप में प्रदर्शित किया जा सकता है। अतः इन कारकों को खिसकने/प्रतिस्थापन कारक कहते हैं। मांग वक्र को खिसकने या प्रतिस्थापित कारकों को स्थिर या अपरिवर्तित मानकर बनाया जाता है। इसके बावजूद, मांग बहुत से अन्य कारकों से भी प्रभावित होते हैं,

जैसे आय का वितरण, कुल जनसंख्या एवं इसका संघटन, सम्पति, साख उपलब्धता, स्टॉक एवं आदतें आदि। अन्तिम दो कारक वर्तमान व्यवहार को पूर्व के अनुसार प्रभावित होने की अनुमति प्रदान करता है, अतः मांग विश्लेषण प्रवैगिक स्वरुप का है।

1. **वस्तु की कीमत**

वस्तु की मांग उसके कीमत के साथ विपरीत रुप में परिववर्तित होती है। यदि X वस्तु की कीमत में वृद्धि होती है, तो उस वस्तु की मांग कम/घट जाती है और विलोमशः। एक वस्तु के क्रेता को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता हैः सीमान्त एवं अन्तरा–सीमान्त क्रेता। अन्तरा–सीमान्त क्रेता वे हैं जो किसी वस्तु के लिए अपने उपभोग को बढ़ाते या घटाते हैं लेकिन उस वस्तु के उपभोग को नहीं छोड़ते न हीं नई वस्तु का उपभोग करते हैं भले हीं अन्य कारकों या कीमतों में परिवर्तन हो। सीमान्त क्रेता वे हैं जो कीमत में कमी होने पर एक वस्तु का उपभोग प्रारम्भ करते हैं जबकि कीमत में वृद्धि होने पर उस वस्तु के उपभोग को बन्द कर देते हैं। अन्तरा–सीमान्त क्रेता के व्यवहार को आय प्रभाव एवं प्रतिस्थापन प्रभाव के मदद से आसानी से वर्णन किया जा सकता है।

जैसे हीं एक वस्तु की कीमत घटती है, अन्य सम्बन्धित वस्तु की कीमत परिवर्तित नहीं होती है, तब यह वस्तु अपेक्षाकृ सस्ती होती है और इसलिए, इस वस्तु की मांग बढ़ जाती है। अतः प्रतिस्थापन प्रभाव सदैव ऋणात्मक होता है। एक वस्तु के कीमत में कमी होती है, अन्य चीजें स्थिर रहती हैं, उपभोक्ता की वास्तविक आय में वृद्धि होती है फलतः उस वस्तु की अधिक मात्रा खरीदते हैं। इसका परिणाम होता है कि उपभोक्ता की श्रेष्ठ वस्तु की मांग में वृद्धि होता है और निकृष्ट वस्तु की मांग घट जाती है। इस प्रकार, कीमत में परिवर्तन का आय प्रभाव श्रेष्ठ वस्तु के लिए ऋणात्मक तथा निकृष्ट वस्तु के लिए धनात्मक होती है। चूंकि कीमत में परिवर्तन आय प्रभाव एवं प्रतिस्थापन प्रभाव दोनों को बढ़ाता है, इन दोनों प्रभाव हीं कीमत प्रभाव को मापते हैं। श्रेष्ठ वस्तु के लिए दोनो प्रतिस्थापन एवं आय प्रभाव धनात्मक या एक हीं दिशा में होते हैं, जबकि निकृष्ट वस्तु कि स्थिति में दोनों विपरीत दिशा में कार्य करते हैं।

2. **सम्बन्धि वस्तु की कीमत**

एक वस्तु की मांग को सम्बन्धित वस्तु की कीमतें भी प्रभावित करती है। सम्बन्धित वस्तुएं प्रतिस्थापन या सम्पूरक वस्तएं हो सकती है।

(a) **प्रतिस्थापनः** प्रतिस्थापन वस्तुएं वे होते हैं जो एक दूसरे के स्थान पर प्रतिस्थापित/प्रयोग किये जाते हैं। प्रतिस्थापित वस्तुओं की कीमत एवं वस्तुओं की संख्या (अर्थात प्रतियोगी वस्तुएं) भी वस्तु की मांग को निर्धारित करता है। जब प्रतिस्थापन वस्तुओं की कीमत उंच्ची होगी तब इस वस्तु की मांग अधिक होती है साथ हीं लोग प्रतिस्थापन वस्तुओं को खरीदना छोड़ देते हैं। किसी वस्तु के कीमत में कमी होने का अर्थ है कि उसके प्रतिस्थापन्न वस्तुओं की मांग में कमी हुई है। वस्तु को प्रतिस्थापन्न होने के लिए, दोनों वस्तुओं को एक तरह का या समरुप होना आवश्यक नहीं है। समरुप वस्तुएं पूर्ण प्रतिस्थापन्न वस्तुएं

कहलाती हैं। जापान की मोटर कार अमेरिका की मोटर कार के समरूप नहीं होते हैं। फिर भी, सभी में कुछ सामान्य लक्षण होगें जैसे, चार पहिये, लोगों को ढोने की क्षमता और गैसोलिन के मदद से चलना आदि। इस प्रकार, एक देश के कार के कीमत में महत्वपूर्ण कीमत से यह अनुमान किया जा सकता है कि दूसरे देश के कार के मांग भी प्रभावित होगें। घर में बने भोजन का प्रतिस्थापन भोजन रेस्टोरेंट का स्वदिष्ट भोजन हो सकता है, एवं नई दिल्ली से मुम्बई हवाई जहाज से जाना रेल के द्वारा जाने या रेल का प्रयोग करने का एक अच्छा प्रतिस्थापन्न है।

(b) **सम्पूरक वस्तुएंः** सम्पूरक वस्तुएं वे होते हैं जिनका उपभोग एक साथ किया जाता है, जैसे, मोटर कार एवं पेट्रोल, जूत्ते एवं पॉलिस, फिश एवं चिप। सम्पूरक वस्तुओं के कीमत अधिक होते हैं तब इसका कम/कुछ हीं मात्राएं खरीदते हैं एवं अतः इस वस्तु की मांग कम हो जायेगी। यदि आप अधिक चिट्ठियां लिखेंगें उतना हीं अधिक स्टम्प एवं स्टेशनरी की मांग करेंगें, और जैसे हीं अधिक ई–मेल भेजेंगें आपको अधिक इंटरनेट उपागमन की आवश्यकता होगी। हवाई उड़ानों के बीच कीमत प्रतियोगिता की स्थिति है जब यात्रा करना अधिक सस्ता वा कम खर्चीला होता है, टैक्सी सेवा की अधिक मांग होती है एवं हवाई यात्रा से यात्री गमन बढ़ जाता है। जब दो वस्तुएं सम्पूरक हों तब एक वस्तु के कीमत में कमी का परिणाम होता है कि दूसरे वस्तु की मांग बढ़ जाती है, यद्यपि इसके कीमत में कोई गिरावट न हो फिरभी तथा इसके विपरीत भी।

किसी दिये गये वस्तु के एक हीं समय में कई सारे सम्भावित प्रतिस्थापन एवं सम्पूरक वस्तु हो सकते हैं जो कीमत में एक हीं परिवर्तन होने पर एक साथ उपभोक्ता के कई वस्तुओं के मांग को प्रभावित कर सकते हैं; इन उत्पादों में से कुछ वस्तुओं के मांग में वृद्धि हो सकती है तो कुछ वस्तुओं के मांग में कमी हो सकती है। उदाहरण के लिए, अब हम सीडी में बहुत सारे आंकड़ें एवं सूचनायें एकत्र कर सकते हैं जिसे एक व्यक्तिगत संगणक द्वारा अध्ययन किया जा सकता है। जैसे हीं सीडी एवं सीडी हार्डवेयर के दाम अधिक से अधिक घटेगें, मुद्रित शब्द कोशों की मांग घट जायेगी।

3. उपभोक्ता की आय

आय एक उपभोक्ता की क्रय शक्ति को निर्धारित करती है एवं इसलिए, एक उत्पाद के मांग को निर्धारित करने वाला यह एक आधारभूत कारक है। वे लोग जिनकी व्यक्तिगत प्रायोज्य आय अधिक है वे कम व्यक्तिगत प्रायोज्य आय वालों की तुलना में अधिक वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग करेंगें। स्वयं वस्तु की कीमत, सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत लघु अवधि में महत्वपूर्ण/सार्थक होते हैं, जबकि आय किसी वस्तु की मांग के लिए अल्प काल एवं दीर्घकाल दोनों हीं अवधियों में सार्थक भूमिका निभाता है। आय वस्तु के मांग के निर्धारक तत्व के रुप में आय तथा वस्तुओं के स्वभाव से सम्बन्धित बातों पर परिवर्तन निर्भर करता है। अतः व्यवसाय अधिकारी को जिस वस्तु के

बारे में वे बात कर रहे हैं उनके स्वभाव एवं उपभोक्ता के आय के बीच सम्बन्धों से भलिभांति परिचित होने चाहिए।

आय–मांग सम्बन्ध के उद्देश्य से उपभोक्ता वस्तुओं एवं सेवाओं को चार श्रेणी/वर्ग/प्रवर्ग में वर्गीकृत करते हैंः

1. आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं,
2. सामान्य वस्तुएं,
3. निकृष्ट या घटिया वस्तुएं एवं
4. विलासिता की वस्तुएं।

आय में विचलन या परिवर्तन के साथ इन वस्तुओं के मांग में होने वाले प्रभाव की चर्चा नीचे संक्षेप में की गई हैः

a. **आवश्यक वस्तुएंः** आवश्यक वस्तुएं वे वस्तुएं एवं सेवाएं हैं जिनका उपभोग समाज के सभी व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। वे सब 'अधारभूत आवश्यकता' के मद या चीजें होती हैं जैसे, न्यूनतम कपड़े, आवास, खाद्यान्न आनाज, नमक, सब्जी तेल, दियासलाई, रसोई ईंधन, इत्यादि। आवश्यक वस्तुओं की मांग में वृद्धि, उपभोक्ता के आय में वृद्धि के साथ होती है परन्तु केवल एक निश्चित सीमा तक जहां कि आधारभूत आवश्यकताएं पूरी होती है। उस विन्दू के बाद इस श्रेणी के गुणवत्ता एवं अच्छी वस्तुओं पर व्यय में वृद्धि होती है। चित्र 3.2 में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं एवं आय के बीच सम्बन्ध को प्रदर्शित किया गया है। वक्र B दर्शाता है कि एक उपभोक्ता की आवश्यक वस्तुओं की मांग तब तक बढ़ती है जब तक कि उसकी आय OY_2 तक हो जाय। इसके आगे यह संतृप्ति कि ओर अग्रसर होती है।

b. **सामान्य वस्तुएंः** वे वस्तुएं एवं सेवाएं जिसकी मांग आय में जब वृद्धि होती है तब वृद्धि होती है तथा जब आय में कमी होती है तब मांग में भी कमी होती है तब ऐसी वस्तुएं सामान्य वस्तुएं कहलाती है। सिनेमा का टिकट, रेस्टोरेन्ट को भोजन, टेलीफोन कॉल एवं शर्ट ये सभी सामान्य वस्तुएं है। वक्र C, चित्र 3.2 में सामान्य वस्तुओं की आय–मांग सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।

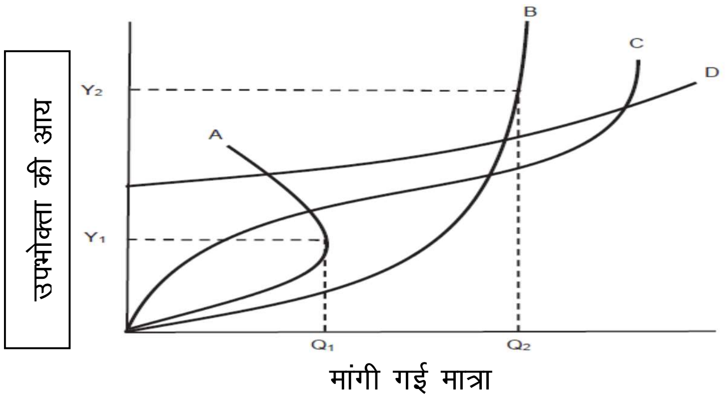

चित्र 3.2: आय–मांग सम्बन्ध वक्र

c. **निकृष्ट वस्तुएंः** एक निकृष्ट वस्तु वह है जिसकी मांग कम होती है जब उपभोक्ता की आय बढ़ती है। निकृष्ट वस्तु की स्थिति में यह ऋणात्मक आय प्रभाव होती है। जैसे हीं उपभोक्ता की आय में वृद्धि होती है वह यात्रा के लिए बस के बजाय टैक्सी से यात्रा करने के नाम से जाने जाते हैं; बीड़ी के जगह सिगरेट पीना ज्यादा पसन्द करता है; रसोई के लिए किरोसीन तेल के बजाय रसोई गैस का प्रयोग करते हैं, बाजरा के स्थान पर गेहूं एवं चावल के तरफ विस्थापित हो जाते हैं। निकृष्ट वस्तुओं की मांग में वृद्धि केवल एक निश्चित आय के स्तर तक वृद्धि होती है, इसके आगे मांग का यह स्तर आय में वृद्धि होने पर घटती है। चित्र 3.2 में वक्र A, आय में वृद्धि होने पर निकृष्ट वस्तुओं की मांग के व्यवहार को प्रदर्शित करता है।

d. **सम्मान या प्रतिष्ठा या विलाशिता की वस्तुः** कोई उत्पाद जिसकी मांग की आय–लोच एक से अधिक होता है तो उसे विलासिता की वस्तु कहते हैं। जैसे हीं उपभोक्ता की आय में वृद्धि होती है वह आनुपातिक रुप से आय से अधिक व्यय ऐसे वस्तुओं पर की जाती है। अन्तर के रुप में, उत्पाद जिसकी आय लोच इकाई से कम हो तो वह एक आवश्यक वस्तु होती है। विलासिता की वस्तु, उपभोक्ता के आय में वृद्धि किये बिना हीं, उसकी खुशी एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि करती है। उदाहरण क लिए, विलाशितावाली मोटर कार, पांच सितारा होटल में ठहरना व आवास, प्रथम श्रेणी वातानुकुलित रेल से यात्रा, उच्च श्रेणी में हवाई यात्रा, कीमती गहने आदि विलासिता के वस्तु की श्रेणी में रखा जा सकता है। एक विशिष्ट श्रेणी के विलाशिता वस्तु वे प्रतिष्ठित वस्तुएं हैं जैसे पुराकालीन एवं विरल पेटिंग को रखना, हीरे की गुलमेख एवं घड़ी, प्रतिष्ठित विद्यालय, भवन की तड़क–भड़क सजावट आदि। ऐसे वस्तुओं की मांग आय के एक स्तर के नीचे शून्य या नहीं होती है, जैसें हीं आय उस स्तर तक पहुंचते है कि वो विलाशिता की वस्तु के परिधि में प्रवेश कर लेते हैं और उपभोग में अधिका से अधिक वृद्धि होती है जैसे –2 आय में वृद्धि होती जाती है। प्रतिष्ठित एवं विलाशिता की वस्तुओं को उत्पादित करने वाले उत्पादक इन वस्तुओं के मांग को निर्धारित करते समय समाज के धनी वर्ग के आय में परिवर्तन को भी ध्यान में रखते हैं। वक्र D, विलाशिता वस्तुओं के मांग का वर्णन करता है।

4. **उपभोक्ता की रुचि एवं अधिमान**

किसी दिये गये कीमत पर खरीदे जाने वाली वस्तु, सामान्यतया एक उत्पाद के लिए लोगों के रुचि या अधिमान में परिवर्तन किसी दूसरे वस्तु की मांगी गई मात्रा में परिवर्तन लायेगी। लोग अपने पसन्द की वस्तु का तालाश करते हैं फिर इस वस्तु की मांग करते हैं। रुचि विज्ञापन, फैशन, दसूरे उपभोक्ता को देखने या अवलोकन से, स्वास्थ्य को ध्यान में रखने एवं इससे पूर्व के अवसर पर उपभोग की गई अनुभव से प्रभावित लोगों की रुचि तथा वस्तुओं एवं सेवाओं की अधिमान से प्रभावित होती है।

5. **उपभोक्ता की सूचनाएं**

एक वस्तु से सम्बन्धित सूचनाओं में परिवर्तन भी मांग वक्र के प्रतिस्थापन का मूख्य कारण हो सकता है। उदाहरण के लिए, जब लोग धुम्रपान के खतरे को समझ व जान लेगें तब सिगरेट की मांग भी कम हो जायेगी। इसी प्रकार, कोलेस्ट्रोल का प्रभाव, गाय व भैंस की मांस को घटाने तथा चिकेन एवं शाकाहारी भोजन में वृद्धि ला सकती है।

6. **विज्ञापन व्यय**

विज्ञापन व्यय का वस्तु की मांग के साथ धनात्मक संबंध है। जैसे–जैसे विज्ञापन व्यय बढ़ता है, विक्री की मात्रा भी बढ़ती है। विज्ञापन का उद्देश्य है कि वस्तु के उपभोक्ता को वस्तु की अस्तित्व एवं उसके उपयोग के बारे में सूचना प्रदान करना, बाजार में उपलब्ध अन्य प्रतियोगी उत्पादों अन्तर बताना, अन्य प्रतियोगी उत्पादों को पसन्द करने वाले उपभोक्ताओं को भी प्रभावित करना एवं उपभोग के नये प्रतिमान तय करना है। यदि अन्य बातें स्थिर रहें, तब विज्ञापन व्यय में कुल वृद्धि, बिक्री की मात्रा में भी वृद्धि लाता है। संकेत के रुप में, विज्ञापन व्यय एवं बिक्री की मात्रा को निम्न तरीके से व्यक्त किया जा सकता हैः

$$S = f(AD)$$

दोनों कारकों के बीच के सम्बन्ध को, ग्राफ के माध्यम से नीचे चित्र 3.3 प्रस्तुत किया गया हैः

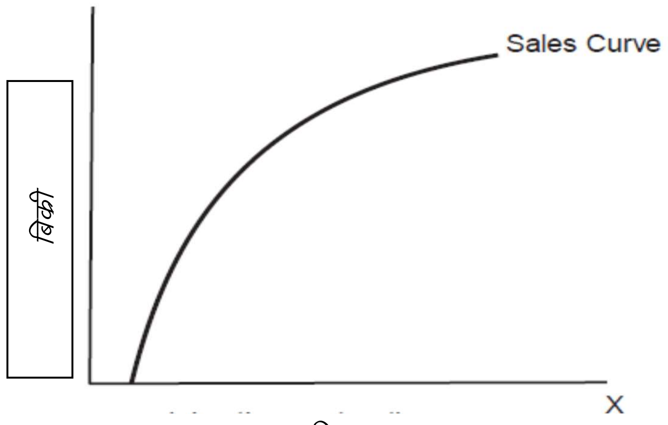

चित्र 3.3ः विज्ञापन व्यय एवं बिक्री के बीच संबंध

7. **उपभोक्ता की प्रत्याशाएं**

उपभोक्ता की भविष्य में वस्तुओं की कीमत बढ़ने या घटने की प्रत्याशाएं भी वस्तु की मांग को प्रभावित करता है। यदि लोग अपेक्षा करते हैं कि कीमत बढ़ने वाली है तो वह कीमत में वृद्धि होने से पहले हीं इसको खरीद लेते हैं। इसके विपरीत, यदि लोग आशा करते हैं कि कीमत कम होगी, तब वे कम वस्तु खरीदेगें तथा कीमत कम होने का इन्तजार करेगें। हम अक्सर देखते हैं कि लोग भविष्य में वस्तुओं के कीमत में परिवर्तन की अपेक्षा करते हैं। ''हम कीमत बढ़ने से पूर्व वस्तुओं की अधिक मात्रा खरीदकर बेहतर स्थिति में होगें'' या ''हम वस्तु की खरीद की इच्छा को उसकी कीमत के गिरने तक इन्तजार

करें'' आदि, अब या तब वस्तुओं के खरीदने के सामान्य कारण हो सकते हैं या विभिन्न वस्तुओं के खरीदने के इरादा को स्थगित करना है। सामान्यतया, भविष्य के बारे में प्रत्याशा या अनुमान लगाना कठिन है, लेकिन कभी–कभी उपभोक्ता अच्छी तरह से अनुमान लगाने में सफल होते हैं कि कब वस्तु की कीमत वृद्धि होगी या कमी होगी, और उसी के अनुसार प्रतिक्रिया करने के लिए तैयार रहते हैं। इस प्रकार, मांग बढ़ेती है यदि लोग अपेक्षा करते हैं कि भविष्य में वस्तु की कीमत में वृद्धि होगी, एवं मांग में कमी होती है यदि लोग उम्मीद करते हैं कि भविष्य में वस्तु की कीमत में कमी आयेगी।

8. प्रदर्शन प्रभाव

सम्पन्न लोग, अक्सर बाजार में जैसे हीं नई वस्तु या पाई जाने वाली वस्तु की नई मॉडल आती है वे इसे खरीदना पसन्द करते क्योंकि या तो यह उसकी वास्तविक आवश्यकता है या फिर उनके पास इसे खरीदने की प्रर्यापत क्रयशक्ति है। कुछ लोग इन वस्तुओं, बिना वास्तविक आवश्यकता के भी खरीदते है। वे इन वस्तुओं को खरीदते हैं क्योंकि वे अपने आप को सम्पन्न लोग के बराबर प्रदर्शित करना चाहते हैं। इन कारणों से ऐसे वस्तुओं के खरीद में वृद्धि को 'प्रदर्शन प्रभाव या 'बैण्ड–वॉगन–प्रभाव' के नाम से जानते हैं। इन कारकों का मांग पर धनात्मक प्रभाव होता है। सामान्यतया, सम्पन्न लोग उन वस्तुओं एवं सेवाओं को खरीदना या उपभोग करना कम या बन्द कर देते हैं जिनका उपभोग या उपयोग साधारण या सामान्य लोग करते हैं। इस कारक का एक वस्तु के मांग पर ऋणात्मक प्रभाव होता है और इसे 'स्नॉब या अभिमानी या दंभी–प्रभाव' के नाम से जानते हैं।

9. उपभोक्ता–साख सुविधा

साख पर बिक्री एवं आसान साख में बिक्री, जैसे किस्तों का विस्तार, किस्तों की अधिक संख्या एवं न्यूनतम भुगतान आदि भी फर्म के उत्पाद के मांग को काफी हद तक प्रभावित करता है। उपभोक्ता की साख उपलब्धता, मांग वक्र को दायें ओर प्रतिस्थापित कर सकती है जो मांग में वृद्धि को प्रदर्शित करती है। यदि प्रतियोगी उत्पादक साख के रुप में विशेष छूट प्रदान करें, तब फर्म की मांग घटेगी एवं मांग वक्र बायीं ओर प्रतिस्थापित हो जायेगी।

10. देश की जनसंख्या

कुल जनसंख्या, लिंगानुपात, आयू–संयोजन या व्यवसाय संरचना आदि में परिवर्तन वस्तु की मांग में परिवर्तन लायेगी। उदाहरण के लिए, जब बच्चे जन्म लेते हैं, तब दूध की मांग, दूध से बनी वस्तुओं की मांग में वृद्धि होगी। फिर, प्रतिवर्ष, विद्यायलय जाने वाले बच्चों की संख्या में वृद्धि होगी, महाविद्यालय जाने वाले छात्रों की संख्या में वृद्धि होगी आदि, और अधिक विद्यालय पोशाक, किताबों आदि की मांग बढ़ती है इसके बावजूद की इनके कीमत में कोई कमी नहीं होती है।

11. राष्ट्रीय आय का वितरण

एक देश की राष्ट्रीय आय का स्तर एवं वितरण प्रतिमान भी एक वस्तु के बाजार मांग को निर्धारित करती है। अधिक राष्ट्रीय आय होने पर अधिक धनी व्यक्ति सामान्य वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग करते हैं। अधिक सामान

तरीके से राष्ट्रीय आय का वितरण आवश्यक वस्तुओं के मांग में वृद्धि लाता है और अन्य प्रकार के सम्बन्धित वस्तुओं के मांग में कमी आती है।

12. मांग फलन

एक फलन वह है जो चर एवं उसके कारकों के बीच सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है। एक मांग फलन, वस्तु या सेवा तथा इसको प्रभावित करने वाले कारक या चर जैसे इसकी कीमत, प्रतिस्थापन एवं सम्पूरक वस्तु की कीमत, उपभोक्ता की आय, साख सुविधा, विज्ञापन व्यय आदि के निर्भरता सम्बन्ध को बताता है। मांगी गई मात्रा आश्रित चर और घटक कारक स्वतंत्र चर है। प्रत्येक स्वतंत्र चर का आश्रित चर पर प्रभाव को सांख्यिकीय तरीके से प्राक्कलित किया जा सकता है।

हम मांग फलन के साधारण या सामान्य स्थिति को लेगें। माना कि कीमत को छोड़कर मांग को प्रभावित करने वाले कारक घटक स्थिर है। यह अल्पकालिक मांग फलन की स्थिति है, जहां एक वस्तु की मांगी गई मात्रा कीमत के साथ परिवर्तित होती है। इस मांग फलन को संकेत के रुप में निम्न तरीके से लिखा जा सकता है:

$$D_x = f(P_x) \qquad (3.1)$$

D_x = X वस्तु की प्रति इकाई समय पर मांग की मात्रा,

P_x = X वस्तु की कीमत,

इस मांग फलन में D_x आश्रित चर है तथा P_x स्वतंत्र चर है।

स्वतंत्र चर हीं आश्रित चर में परिवर्तन का कारण है। यदि हम आश्रित चरों एवं स्वतंत्र चरों के बीच सम्बन्ध को मात्रात्मक रुप से जानने में सक्षम हैं, तब मांग फलन के स्वरुप निम्न तरह का हो सकता है:

$$D_x = a - bP_x \qquad (3.2)$$

जहां,

a = a एक अचर राशि है जो शून्य कीमत पर अधिकतम मांग की मात्रा को प्रदर्शित करता है।

b = b कीमत में परिवर्तन के फलस्वरुप मांगी गई मात्रा में परिवर्तन ($\Delta D/\Delta P$) है। यह अनुपात भी सदैव स्थिर है।

यदि हम a एवं b के मूल्य को ज्ञात करने में सक्षम हैं, तब हम एक मांग अनुसूची तैयार कर सकते हैं जो विभिन्न कीमत स्तर पर मांगी गई मात्रा को प्रदर्शित करेगें।

जब मांगी गई मात्रा एवं कीमत के बीच सम्बन्ध का परिणाम रैखिक वक्र हो, तब मांग फलन रैखिक मांग फलन कहलाता है। मांग फलन से, कीमत को आसानी से ज्ञात किया जा सकता है। जब मांग वक्र के साथ–साथ ढ़ाल भी परिवर्तित होते जाते हैं तब ऐसे फलन को गैर–रैखिक फलन कहते हैं। गैर–रेखीय मांग फलन एक घातीय फलन के रुप में होते हैं।

अल्प काल में, वस्तु की कीमत के अतिरिक्त अन्य सभी कारक स्थिर रहते हैं। तथापि, दीर्घ काल में, अन्य कारकों में भी परिवर्तन होते हैं। दीर्घ काल में, उत्पादों की मांग इसके सभी कारकों के संयुक्त प्रभाव पर निर्भर करता है जो एक साथ संचालित होते हैं। इसलिए, एक उत्पाद के दीर्घ काल

मांग को प्राक्कलित करने के हेतु, इसके सभी सम्बन्धित कारकों को भी सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार के फलन को बहु–चर या प्रवैगिक मांग फलन कहते हैं। ऐसे मांग फलन बताते हैं कि एक वस्तु की मांग की मात्रा (D_x) इसके कीमत, सम्बन्धित वस्तुओं की कीमतें, उपभोक्ता की आय, विज्ञापन व्यय, उपभोक्ता की रुचि आदि पर निर्भर करता है। इस बहु–चर फलन, को संकेत के रुप में निम्नलिखित तरीके से व्यक्त किया जा सकता हैः

$$D_x = f(P_x, Y, P_s, P_c, A, T) \quad \ldots(3.3)$$

जहां,

Y = उपभोक्ता की आय

Ps = प्रतिस्थापन वस्तु की कीमत

Pc = सम्पूरक वस्तुओं की कीमत

A= विज्ञापन व्यय

T = उपभोक्ता की रुचि

यदि सभी स्वतंत्र चरों को असानी से मात्रा में व्यक्त किया जा सकता है, और इनके बीच सम्बन्ध रैखिक हो, तब मांग फलन को पुनः निम्न रुप से लिख सकते हैं,

$$D_x = a + bP_x + cY + dPs + gPc + hA + jT \quad \ldots(3.4)$$

जहां,

'a' एक अचर राशि है जो शून्य कीमत पर अधिकतम मांग की मात्रा को प्रदर्शित करता है।

b, c, d, g, h और j मांगी गई मात्रा X एवं सम्बन्धित स्वतंत्र चरों को गुणांक को प्रदर्शित करते हैं। अन्य स्वतंत्र चरें जैसे देश की जनसंख्या, उपभोक्ता की प्रत्याशाएं भी सम्मिलित किये जा सकते हैं।

3.8 सारांश

यदि सभी व्यक्तिगत उपभोक्ताओं का योगफल किया जाय, तब हम एक उत्पाद के बाजार मांग प्राप्त करते हैं। बाजार मांग का विश्लषण व्यवसाय के नीति निर्धारण में निर्णायक भूमिका अदा करती है। क्या कारक है कि मांग निर्धारित हाती है? बाजार मांग किसी कीमत पर व्यक्तिगत मात्राओं की मांग का योग है। व्यक्तिगत मांग, एक व्यक्ति द्वारा किसी दिये गये कीमत पर प्रति इकाई समय में मांगी गई मात्रा का संकेत देता है। एक उत्पाद के लिए व्यक्तिगत मांग का समग्र हीं उस उत्पाद का बाजार मांग कहलाता हैं।

मांग एक बहु–चर फलन है। इसका अर्थ है कि एक वस्तु की मांग बहुत सारे चरों से निर्धारि होते हैं। एक वस्तु की मांग अपने कीमत से विपरीत दिशा में परिवर्तित होती है। सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत भी वस्तुओं की मांग को प्रभावित करते हैं। सम्बन्धित वस्तुएं प्रतिस्थापन्न वस्तु या सम्पूरक वस्तु हो सकती है। प्रतिस्थापन्न वस्तुएं वे हैं जो एक दूसरे के स्थान पर प्रतिस्थापित होती है। प्रतिस्थापन्न वस्तुओं की संख्या एवं कीमत (अर्थात् प्रतियोगी वस्तुएं) भी वस्तु की मांग को निर्धारित करती है।

एक उत्पाद से संबन्धित सूचनाएं भी मांग वक्र के प्रतिस्थापित या विस्थापित का कारण है।

एक फलन वह है जो चरों एवं उसके निर्धारक तत्वों के बीच सम्बन्ध का वर्णन करता है। एक मांग फलन, वस्तु या सेवा तथा इसको प्रभावित करने वाले कारक या चर जैसे इसकी कीमत, प्रतिस्थापन एवं सम्पूरक वस्तु की कीमत, उपभोक्ता की आय, साख सुविधा, विज्ञापन व्यय आदि के निर्भरता सम्बन्ध को बताता है।

इस प्रकार, इस इकाई में, हम इसका अर्थ, इसकी विशेषताएं जिसमें कीमत, समय बाजार एवं मात्रा की चर्चा की। हमने मांग के नियम एवं इसके अपवाद, मांग फलन, बाजार मांग और बाजार मांग के प्रकार का वर्णन किया है। बाजार मांग फर्म के उत्पाद एवं उद्योगों के उत्पाद के मांग, व्यक्तिगत एवं बाजार मांग, टिकाउ एवं गैर–टिकाउ वस्तुओं की मांग, स्वतः मांग एवं व्यूत्पन्न मांग, बाजार खण्ड के द्वारा मांग और कुल मांग, अल्प–कालिक एवं दीर्घ कालिक मांगं, उपभोक्ता वस्तुओं की मांग तथा उत्पादक वस्तुओं की मांग, नई मांग बनाम बनाम प्रतिस्थापित मांग को भी सम्मिलित करता है। मांग के कारकों के बारें में भी चित्रण किया गया है।

3.9 शब्दावली

मांगः किसी वस्तु की मांग, दिये गये कीमत पर इसकी मात्रा, जो प्रति इकाई समय पर उस कीमत खरीदी जाती है।

मांग का नियमः मांग का नियम बताता है कि कम कीमत होने पर, अधिक प्रभावी मांग, या, अधिक कीमत पर कम प्रभावी मांग होते हैं।

मांग फलनः दिये गये समय अवधि में दिये गये बाजार में मांग की विभिन्न मात्राओं एवं उसको निर्धारित करने वाले तत्वों या कारकों के बीच के सम्बन्ध का व्यक्त करता है।

बाजार मांगः एक उत्पाद के लिए व्यक्तिगत मांग का समग्र हीं उस उत्पाद का बाजार मांग कहलाता हैं।

टिकाउ वस्तुएंः टिकाउ वस्तुएं वे होती हैं जिसकी उपयोगिता या उपयोग केवल एक बार प्रयोग करने पर समाप्त नहीं होती है बल्कि कुछ समय तक के लिए प्रयोग की जा सकती है।

प्रतिस्थापन्नः प्रतिस्थापन्न वस्तुएं वे हैं जो एक दूसरे के स्थान पर प्रतिस्थापित होती है।

सम्पूरक वस्तुएंः सम्पूरक वस्तुएं वे होती हैं जिसका उपभोग साथ–साथ की जाती है, जैसे– कार एवं पेट्रोल, जूत्ता एवं पॉलिस आदि।

सामान्य वस्तुएंः वे वस्तुएं जिसकी मांग में वृद्धि आय में वृद्धि होने पर होती है तथा आय में कमी होने पर मांग में भी कमी होती है, सामान्य वस्तु कहलाती है।

निकृष्ट वस्तुएंः निकृष्ट वस्तुएं वे होती हैं जिसकी मांग आय में वृद्धि होने पर वस्तु की मांग में कमी आती है।

प्रदर्शन–प्रभावः कुछ लोग इन वस्तुओं, बिना वास्तविक आवश्यकता के भी खरीदते है। वे इन वस्तुओं को खरीदते हैं क्योंकि वे अपने आप को सम्पन्न

लोग के बराबर प्रदर्शित करना चाहते हैं। इन कारणों से ऐसे वस्तुओं के खरीद में वृद्धि को 'प्रदर्शन प्रभाव या 'बैण्ड–वॉगन–प्रभाव' के नाम से जानते हैं।

3.10 बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों को भरें

(a) एक विशिष्ट वस्तु एवं सेवाएं जिसे एक उपभोक्ता या उपभोक्ताओं का समूह दिये गये कीमत पर खरीदना चाहे तो वह ——————— कहलाता है।

(b) ————————— बताता है कि उच्च कीमत पर, कम वस्तुओं की मांग करते हैं।

(c) ————————— वे हैं जिनकी मांग कमी होती है जबकि उपभोक्ता की आय में वृद्धि होता हो।

(d) कार के साथ पेट्रोल एवं जूत्ते के साथ पॉलिस ————————— वस्तुएं कहलाते हैं

3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(a) मांग, (b) मांग का नियम, (c) निकृष्ट वस्तएं (d) सम्पूरक वस्तुएं।

3.12 स्वपरख प्रश्न

1. मांग वक्र का ढ़ाल सदैव नीचे दाहिनी ओर क्यों होता है? किस स्थिति में मांग वक्र का ढ़ाल उपर दाहिनी ओर की होती है?
2. उस स्थिति का विश्लेषण करें जिसमें कीमत में कमी होने के कारण मांग में भी कमी आती है।
3. वर्णन करें कि कैसे वस्तु की मांग को प्रभावित होती हैं:
   (i) दूसरे संबंधित वस्तु की कीमत में परिवर्तन हाने पर एवं
   (ii) उपभोक्ता के आय में परिवर्तन हाने पर।
4. मांग फलन क्या है? मांग के नियम का वर्णन इसके अपवाद के साथ करें।
5. मांग के घटकों का वर्णन करें।

3.13 सन्दर्भ पुस्तकें

8. H.S.Agarwal, Microeconomic Theory', (2008) Seventh Edition, Ane's Student Edition.
9. Hajela, T.N., (2009), Macroeconomic theory', 10th Edition, Ane Book Pvt. Ltd. New Delhi.
10. Deepashree & Vanita Agarwal,'Macroeconomics', Ane Book Pvt Ltd. New Delhi.
11. Errol D'Souza, ' Macroeconomics', (2008), Pearson Education, New Delhi.
12. S.P.Singh, 'Managerial Economics', AITBS, New Delhi.
13. Sampat Mukherjee, Principles of Macroeconomics, (2009), New Central Book Agency, New Delhi.
14. D.D.Tewari & Kartar Singh,'Principles of Microeconomics, (1996), New age publishers, New Delhi.

*****

इकाई 4 मांग की लोच

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.1.1 मांग की लोच अवधारणा का महत्व
4.2 मांग की कीमत लोच
4.2.1 चाप लोच
4.2.2 रेखीय मांग वक्र पर बिन्दु लोच
4.3 गैर रेखीय मांग वक्र के विभिन्न बिन्दुओं पर कीमत लोच
4.4 कीमत लोच एवं कुल आगम
4.5 कीमत लोच एवं सीमान्त आगम
4.6 मांग की कीमत लोच के निर्धारक तत्व
4.7 मांग की आड़ी लोच
4.8 मांग की आय लोच
4.8.1 आय संवेदनषीलता
4.9 बिक्री की विज्ञापन लोच
4.10 विज्ञापन लोच के निर्धारक तत्व
4.11 प्रत्याशित मूल्य लोच
4.12 पूर्ति की लोच
4.13 पूर्ति की कीमत लोच
4.14 पूर्ति की कीमत लोच को प्रभावित करने वाले तत्व
4.15 मांग और पूर्ति की कीमत लोच के उपयोगी अनुप्रयोग
4.16 सारांश
4.17 शब्दावली
4.18 बोध प्रश्न
4.19 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.20 स्वपरख प्रश्न
4.21 सन्दर्भ

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- मांग की लोच को परिभाषित कर सकें।
- मांग की लोच का वर्गीकरण बता सकें ।
- मांग की कीमत लोच के निर्धारक तत्वों का वर्णन कर सकें।
- मांग की आय लोच के निर्धारक तत्वों को स्पष्ट कर सकें।
- मांग की लोच के महत्व को स्पष्ट कर सकें।

4.1 प्रस्तावना

मांग का नियम, किसी वस्तु के मूल्य में होने वाले परिवर्तन के प्रत्युत्तर में मांग में होने वाली कमी अथवा वृद्धि की व्याख्या करता है। उपभोक्ता मूल्य में होने वाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप वस्तु की मात्रा कम अथवा अधिक खरीदते हैं। यदि किसी वस्तु के मूल्य में कमी होती है, उसकी मांग बढ़ जाती

है। इसी प्रकार यदि किसी वस्तु की कीमत में वृद्धि होती है, तब उसकी मांग कम हो जाती है। मांग के नियम का यह सरोकार नहीं है कि मूल्य में कितने परिवर्तन के उत्तर में मांग में कितना परिवर्तन होता है। मूल्य परिवर्तन के कारण मांग में होने वाले परिवर्तन के मात्रात्मक पहलू का अध्ययन मांग की लोच के सिद्धान्त के अन्तर्गत किया जाता है। किसी वस्तु की कीमत मे परिवर्तन के फलस्वरूप उसकी मांग में जो परिवर्तन होता है, उसको मांग की लोच अथवा मूल्य सापेक्षता कहा जाता है। दूसरे शब्दों मे, मांग की लोच किसी वस्तु की कीमत में हुए परिवर्तन एवं उसकी मांग में हुये परिवर्तन का अनुपात है। इस इकाई में, मांग के लोच को मापने की विविध रीतियों के विषय में बताया गया है और मांग की लोच की विभिन्न अवधारणाओं को समझाया गया है।इसमें सम्मिलित हैं–(अ)कीमत लोच (ब) आय लोच (स) आड़ी लोच (द) विज्ञापन लोच एवम् (य) मूल्य सम्भाव्य लोच।

4.1.1 मांग की लोच अवधारणा का महत्व (Importance of Elasticity of Demand)

(A) सैद्धान्तिक महत्व

अर्थशास्त्र में मांग की लोच के सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दोनों महत्व हैं। मूल्य की सापेक्षता का विचार अर्थशास्त्र के अनेक सिद्धान्तों की व्याख्या करने के लिये विश्लेशण साधन के रूप में प्रयुक्त होता है। मूल्य निर्धारण के सिद्धान्त में मांग की लोच का अत्यधिक महत्व है, विशेशकर अपूर्ण प्रतियोगिता और एकाधिकार अवस्था में इसकी उपयोगिता और भी अधिक है। मांग की लोच से यह तय किया जाता है कि मूल्य विभेद कब लाभदायक होगा। साथ ही, एकाधिकारी शक्ति के अंष को मापने मे यह सहायक है। वस्तुओं के वर्गीकरण, यथा– स्थानापन्न वस्तुयें, पूरक वस्तुओं, में मांग की लोच का आधार लिया जाता है। उत्पादन शुल्क अथवा दूसरे अप्रत्यक्ष करों के सन्दर्भ में मांग की लोच का उपयोग किया जाता है। अर्थशास्त्री कीन्स के अनुसार मार्शल के योगदान में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है– मांग की लोच के विचार की प्रस्तुति।

(B) व्यवहारिक महत्व

(i) **कराधान नीति के लिये उपयोगी** –मांग की लोच अवधारणा राजकीय वित्त के क्षेत्र में अतिशय महत्वपूर्ण है। वित्त मन्त्री जब किसी वस्तु पर कर लगाने का निर्णय लेते हैं, तब यह बात अनिवार्य रूप से देखी जाती है कि वस्तु की मांग लोचपूर्ण है अथवा बेलोच है। यदि मांग बेलोच है अथवा कम लोचदार है, कर में वृद्धि करके राजस्व अर्जन किया जा सकता है। यदि वस्तु की मांग लोचदार है, तब कर बढ़ाने से राजस्व में वृद्धि नहीं होगी। अपितु, मांग में कमी आ जायेगी और राजस्व में भी गिरावट होगी।

(ii) **एकाधिकारी द्वारा मूल्य विभेद**–एकाधिकारी को जब यह ज्ञात होता है कि उसके उत्पाद की मांग बेलोच है, तब वह तुरन्त वस्तु के मूल्य को बढ़ाकर अपने लाभ को अधिकतम करने का

प्रयास करेगा। इसके विपरीत, जब एकाधिकारी को ज्ञात हो कि उसकी वस्तु की मांग लोचदार है, तब वह कीमत को कम करके अपनी बिक्री बढ़ाकर अपने लाभ को अधिकतम करेगा। इस से स्पष्ट है कि एकाधिकारी के लिये मांग की लोच का सिद्धान्त बहुत उपयोगी होता है।

(iii) **संयुक्त पूर्ति में मूल्य विभेद के लिये उपयोगी**—कुछ संयुक्त उत्पाद ऐसे होते हैं जिनकी लागत का पृथक—पृथक निर्धारण संभव नहीं होता है। इस प्रकार के संयुक्त उत्पादों के मूल्य का निर्धारण मांग की लोच के आधार पर किया जाता है। रेलवे द्वारा विविध किराया दरों को तय करने में मांग की लोच के नियम का आधार लिया जाता है।

(iv) **व्यवसायियों के लिये उपयोगिता**—मांग लोच अवधारणा का उपयोग व्यापारियों द्वारा खूब किया जाता है। यदि माल की मांग लोचदार है, तब व्यापारी बिक्री को बढ़ाकर लाभ कमायेंगे। यदि वस्तु की मांग बेलोच है, तब वे वस्तु की कीमत बढ़ाकर लाभार्जन करेंगे।

(v) **श्रम संघों के लिये सहायक**—ऐसे उद्योग जिनमें वस्तुओं की मांग बेलोच हो, वहां पर श्रम संघ अधिक मजदूरी की मांग करके अपनी शर्तें मनवाने में सफल हो सकते हैं। इसके विपरीत, जिन उद्योगों के उत्पादन की मांग अपेक्षाकृत लोचदार है, वहां श्रम संघ मजदूरी में वृद्धि के लिये दबाव बनाने में कामयाब नहीं हो सकते।

(vi) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उपयोगी**— मांग की लोच के आधार पर ही दो देशों के मध्य व्यापार की शर्तें तय होती हैं।

(vii) **विदेशी विनिमय दर निर्धारण**—विदेशी विनिमय दर किसी देश के आयात और निर्यात के लोचपूर्ण अथवा बेलोच होने पर निर्भर करती है।

(viii) **उत्पादकों के लिये मार्गदर्शक**—मांग की लोच का विचार उत्पादकों के लिय मार्गदर्शक का कार्य करता है। विशेष रूप से, विज्ञापन व्यय के निर्धारण के लिये मांग की लोच की परीक्षा की जाती है। यदि किसी वस्तु की मांग लोचपूर्ण है, तब उत्पाद को बिक्री बढ़ाने के लिये विज्ञापन पर अधिक व्यय करने की आवश्यकता होगी।

(ix) **कारक मूल्य निर्धारण** (factor pricing) में उपयोगी—मांग की लोच अवधारणा का उपयोग कारक मूल्य निर्धारण में होता है। उत्पादन के ऐसे साधन जिनकी मांग बेलोच होती है, वे बाजार में अधिक मूल्य वसूल कर सकते हैं, उनकी तुलना में जिनकी मांग लोचदार हो। मांग की लोच का सिद्धान्त कारक मूल्य निर्धारण में होने वाले परिवर्तनों की व्याख्या करता है। राशिपातन करते समय एकाधिकारी मांग की मूल्य सापेक्षता का ध्यान रखता है।

मांग की लोच के वर्गीकरण का वर्णन आगे किया गया है:

(अ) मांग की कीमत लोच

(ब) मांग की आय लोच

(स) मांग की आड़ी लोच

(द) मांग की विज्ञापन लोच

(य) मांग की मूल्य प्रत्याशा लोच

4.2 मांग की कीमत लोच

अर्थशास्त्र में अधिकांश, मांग की कीमत लोच का ही अध्ययन किया जाता है। मांग की लोच का अर्थ, मांग की कीमत लोच से ही लिया जाता है, जब तक कि कोई अन्यथा उल्लेख न किया गया हो। मांग की कीमत लोच किसी वस्तु की कीमत के परिवर्तन का उस वस्तु की मांग की मात्रा पर कितना प्रभाव पड़ रहा है, उसको मापती है। यह दो चरों में होने वाले सापेक्ष परिवर्तन का अनुपात है जिसमें मांगी गई मात्रा आश्रित चर है जबकि मूल्य स्वतन्त्र चर है। मांग की कीमत लोच के लिये गणितीय सूत्र का प्रयोग किया जाता है। मांग की कीमत लोच को e_p संकेताक्षर से व्यक्त किया जाता है। मांगी गई मात्रा में सापेक्ष परिवर्तन को मूल्य में हुये सापेक्ष परिवर्तन से भाग देकर मांग की कीमत लोच ज्ञात की जाती है।

$$e_p = \frac{\text{relative change in quantity demanded}}{\text{relative change in price}} \qquad 4.1$$

इसी प्रकार, मांग की कीमत लोच को प्रतिशत रूप में भी व्यक्त किया जाता है। इसके लिये मांगी गई मात्रा में परिवर्तन प्रतिशत को मूल्य में हुए परिवर्तन प्रतिशत से भाग दिया जाता है। सूत्र रूप में इसे इस तरह व्यक्त किया जाता है–

$$e_p = \frac{\text{Percentage change in quantity demanded}}{\text{Percentage change in price}} \qquad 4.2$$

यदि प्रतिशत ज्ञात हों, मांग की कीमत लोच की गणना सरलता से की जा सकती । मांग की लोच के गुणांक की भी गणना की जाती है, यह स्वतन्त्र संख्या होती है क्योंकि इसका सम्बन्ध माप की इकाईयों से नहीं होता। मांग की कीमत लोच गुणांक ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र प्रयुक्त होता है–

$$e_p = \frac{\Delta Q}{Q} \cdot \frac{P}{\Delta P} \qquad 4.3$$

जहाँ

Q मात्रा है

P मूल्य है

$\Delta Q/Q$ मांग की गई मात्रा में सापेक्ष परिवर्तन

$\Delta P/P$ मूल्य में सापेक्ष परिवर्तन

यह ध्यान देने योग्य है कि मांग की लोच के सूत्र में भिन्न से पूर्व प्रायः ऋण चिन्ह (minus sign) लगाया जाता है ताकि मांग की लोच के गुणांक का मूल्य धनात्मक ही प्राप्त हो।

मांग की लोच की माप मांग वक्र पर दो नियत बिन्दुओं पर हो सकती है जिसे चाप लोच (arc elasticity) कहा जाता है। इसी प्रकार, मांग की लोच किसी एक बिन्दु पर की जा सकती है जिसे बिन्दु लोच (point elasticity) कहा जाता है।

4.2.1 चाप लोच **(arc elasticity)**

मांग वक्र पर कोई दो बिन्दु लेने पर चाप बनता है। बाउमोल के शब्दों में, 'मांग वक्र पर एक परिमित खण्ड में मूल्य परिवर्तन के प्रति औसत प्रतिक्रिया की माप को चाप लोच कहा जाता है।' मांग वक्र पर दो निश्चित बिन्दुओं पर मांग की लोच की माप को चाप लोच कहा जाता है। निम्न सूत्र की सहायता से मांग की लोच गुणांक की गणना की जा सकती है–

$$e_p = \frac{\Delta Q}{Q} \cdot \frac{P}{\Delta P} \qquad 4.4$$

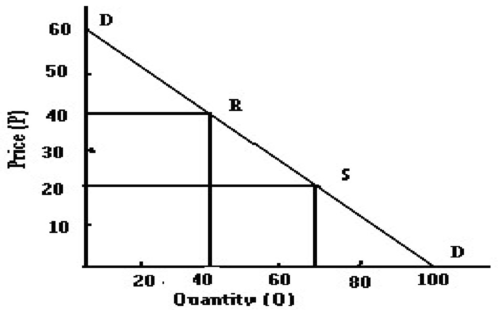

Fig. 4.1 Linear Demand Curve

उदाहरण के लिए, रेखाचित्र 4.1 में मांग की लोच मापने के लिये मांग वक्र पर दो बिन्दु R एवम् S चुने। बिन्दु R कीमत 40 रुपये है और बिन्दु S पर 20 रुपये है, इस प्रकार कीमत में 20 रुपये की कमी आई है। इस कमी के प्रत्युत्तर में मांग में 30 इकाईयों की वृद्धि दर्ज हुई है, बिन्दु R पर मांग 40 इकाई है, जबकि बिन्दु S पर 70 इकाई है। सूत्र में संकेताक्षरों के मूल्य रखने पर–

$$e_p = \frac{-30}{20} \cdot \frac{20}{20} \qquad 4.4$$

इसका अर्थ यह है कि वस्तु के मूल्य में 1 प्रतिशत की कमी के परिणामस्वरूप, वस्तु की मांग में 1.5 प्रतिशत की वृद्धि होती है।

मांग की चाप लोच के मापांकन, निर्वचन और उपयोग में, व्यवसाय प्रबन्धकों को बहुत सावधानी रखनी होती है क्योंकि परिवर्तन की भिन्न दिशा में लोच गुणांक भिन्न हो सकता है। उदाहरण में, बिन्दु आर से बिन्दु एस की ओर गिरावट में लोच गुणांक की गणना की गई है। यदि लोच गुणांक की गणना बिन्दु एस से बिन्दु आर की ओर बढ़ोत्तरी की दिशा में की जाये, तब गुणांक भिन्न आयेगा। कीमत के 20 रुपये से 40 रुपये होने पर और मांग के 70 इकाई से 40 इकाई होने पर, मांग की लोच गुणांक 42 प्राप्त होगा। इसका अभिप्राय यह है कि कीमत में 1 प्रतिशत की वृद्धि होने पर मांग में 42 प्रतिशत की कमी होगी। इस प्रकार लोच गुणांक मूल्य परिवर्तन की दिशा से प्रभावित

होता है। अतः चाप विधि से लोच मापते समय मूल्य में परिवर्तन की दिशा का ध्यान रखा जाना चाहिए।

इस कठिनाई के समाधान के लिये औसत कीमत और मात्रा को लिया जाता है। अतः चाप के मध्य बिन्दु पर लोच की माप की जाती है। तब, यह सूत्र इस प्रकार होता है–

$$\frac{\Delta Q}{½(Q_1+Q_2)} \Big/ \frac{\Delta P}{½(P_1+P_2)} \qquad 4.5$$

सूत्र से विदित है कि कीमत और मांग की मात्रा के औसत मूल्य लेने के कारण लोच गुणांक अपरिवर्तित रहता है, चाहे कीमत बढ़ रही हो अथवा कम हो रही हो।

4.2.2 रेखीय मांग वक्र पर बिन्दु लोच

मूल्य में होने वाले अति सूक्ष्म परिवर्तन के उत्तर में मांग में होने वाले अति सूक्ष्म सापेक्ष परिवर्तन के अनुपात को बिन्दु लोच कहा जाता है। यदि मूल्य में परिवर्तन को सूक्ष्म से सूक्ष्म कर दिया जाये और यह एक बिन्दु तक सीमित हो जाये, तब मांग में होने वाला परिवर्तन भी अत्यन्त सूक्ष्म होगा। मूल्य में हुए सूक्ष्म परिवर्तन के फलस्वरूप, मांग में होने वाले सापेक्ष सूक्ष्म परिवर्तन के अनुपात को बिन्दु लोच का नाम दिया जाता है। मूल्य में आनुपातिक सूक्ष्म परिवर्तन के कारण होने वाले मांग में हुए आनुपातिक परिवर्तन को बिन्दु लोच के रूप में परिभाषित किया जाता है। रेखा चित्र 4.2 में मांग वक्र के किसी बिन्दु पर लोच मापने का तरीका दर्शाया गया है:

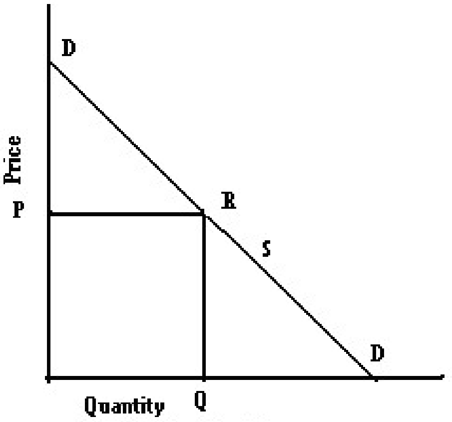

Fig.4.2 Point Elasticity

मांग वक्र पर एक बिन्दु R ले लिया, इस बिन्दु पर मांग की लोच मापने के लिये निम्न सूत्र का उपयोग किया जायेगा।

$$e_p = \frac{\Delta Q}{Q} \cdot \frac{P}{\Delta P} \qquad 4.6$$

मांग वक्र के नियत बिन्दु पर कीमत–मात्रा अनुपात और मांग रेखा पर इनके परस्पर ढाल का गुणनफल बिन्दु लोच होता है। मांग रेखा का ढाल होता है = RQ/QD और मांग रेखा के ढाल का व्युत्क्रम होता है=QD/RQ

$$e_p = \partial Q/\partial P = QD/RQ \qquad 4.7$$

At point R, price P = RQ and Q = OQ

$$e_p = RQ/OQ . QD/RQ = QD/OQ \quad 4.8$$

यदि QD और OQ का मान उपलब्ध हो, तब बिन्दु R पर मांग के लोच की गणना की जा सकती है।

4.3 गैर रेखीय मांग वक्र के बिन्दुओं पर कीमत लोच

रेखीय मांग वक्र पर बिन्दु लोच मापने की रीति को गैर–रेखीय मांग वक्र पर बिन्दु लोच मापने के लिये उपयोग नहीं किया जा सकता। गैर–रेखीय मांग वक्र पर बिन्दु लोच ज्ञात करने के लिये चयनित बिन्दु पर स्पज्या (tangent) खींची जाती है और इसे रेखीय मांग वक्र पर लाया जाता है। रेखा चित्र 4.3 में गैर–रेखीय मांग वक्र के बिन्दु 'आर' पर मांग की लोच ज्ञात करने का तरीका स्पष्ट किया गया है।

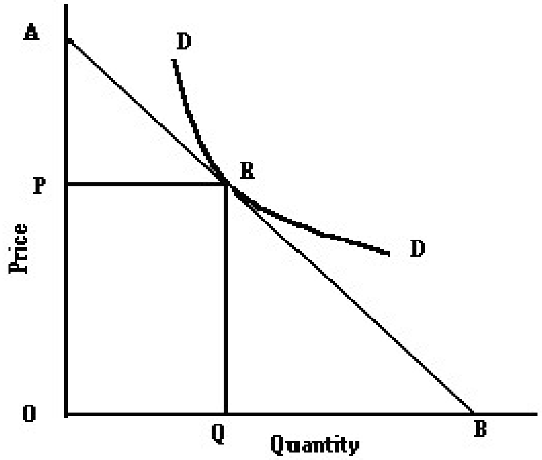

Fig.4.3 Point elasticity on a non-linear demand curve

सर्वप्रथम, बिन्दु R को स्पर्श करते हुए एक स्पज्या (tangent) खींची। मांग वक्र DD और स्पज्या दोनों एक ही बिन्दु से गुजरते हैं। इसलिए, इन दोनों का ढाल समान होगा। अतः मांग वक्र के बिन्दु R और स्पज्या के बिन्दु R पर मांग की लोच समान होगी। अब, रेखीय मांग वक्र पर मांग की लोच मापने के लिये प्रयुक्त सूत्र का उपयोग किया जा सकता है क्योंकि गैर–रेखीय मांग वक्र को रेखीय मांग वक्र में परिवर्तित किया जा चुका है।

4.4 कीमत लोच और कुल आगम (Price elasticity and total Revenue)

लोच एक महत्वपूर्ण उपयोग यह है कि इससे पता लगाया जाता है कि मूल्य वृद्धि से कुल आगम में वृद्धि होगी अथवा कमी आयेगी। व्यवसाय प्रबन्धन का सरोकार होता है कि उन्हें मालूम हो जाये कि कीमत में बढ़ोत्तरी करना फायदेमन्द होगा अथवा मांग में कमी का कारण बनेगा।

मूल्य और मात्रा के गुणनफल को कुल आगम(TR = P.Q) कहा जाता है। यदि हमें मांग की लोच का ज्ञान हो, तब हम यह बता सकते हैं कि मूल्य में परिवर्तन का कुल आगम पर क्या प्रभाव होगा:

(1) यदि मांग अधिक लोचपूर्ण है ($e_p > 1$) तब, कीमत में कमी होने पर कुल आगम में वृद्धि होगी।

(2) यदि मांग पूर्णतया बेलोच है ($e_p = 0$) तब, मूल्य वृद्धि होने पर मांग में कोई कमी नहीं आयेगी।

(3) यदि मांग कम लोचदार है ($e_p < 1$) तब, कीमत में कमी होने पर कुल आगम में गिरावट आती है। मूल्य में वृद्धि होने पर कुल आगम में वृद्धि होती है।

(4) यदि मांग इकाई लोचदार (unitary elastic demand : $e_p = 1$) होती है, तब मूल्य कम होने पर मांग बढ़ती है और मूल्य अधिक होने पर मांग कम होती है। मूल्य में कमी अथवा वृद्धि के अनुपात में ही मांग में वृद्धि अथवा कमी होती है। अतः कुल आगम अप्रभावित रहता है।

कुल आगम और सीमान्त आगम के मांग की लोच के साथ सम्बन्ध को समझने के लिये निम्नलिखित समीकरणों की सहायता ली जाती है–

$TR = P.Q$ 4.9

The marginal revenue (MR) is the derivative of the TR function

$MR = \Delta (TR)/ \Delta Q = \Delta (PQ)/\Delta Q$ 4.10

Or

$MR = P + Q.\Delta P/DQ$ 4.11

If the demand curve is linear its equation is

$Q = b_0 – b_1 P$ 4.12

Solving for P

$P = a_0 - a_1Q$ 4.13

Where

$a_0 = b_0/b_1$

and $a_1 = 1/b_1$

Substituting P in the total revenue function we find

$TR = Pq = a_0Q - a_1Q^2$ 4.14

The MR is then

$MR = \Delta (TR)/\Delta Q = a_0 – 2a_1Q$ … (3.18)

रेखाचित्र 4.4 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जब मांग वक्र गिरता है, कुल आगम शुरू में बढ़ता है, अधिकतम हो जाता है, बाद में कम होना प्रारम्भ हो जाता है। कुल आगम वक्र के आकार को समझने के लिये सीमान्त आगम, मूल्य और लोच के सम्बन्ध का उपयोग किया जा सकता है।

कुल आगम वक्र अपने अधिकतम स्तर पर पहुंच जाता है, जहां $e_p=1$ क्योंकि अपने ढाल के इस बिन्दु पर सीमान्त आगम शून्य होता है।

$$MR = P\ (1 – 1/1) = 0$$

यदि $e_p > 1$, तब कुल आगम वक्र का ढाल धनात्मक होता है । यह बढ़ता जाता है जब तक कि अधिकतम स्तर तक नहीं पहुंच जाता। यदि $e_p<1$, तब कुल आगम वक्र का ढाल ऋणात्मक होता है और यह ह्रासमान रहता है।

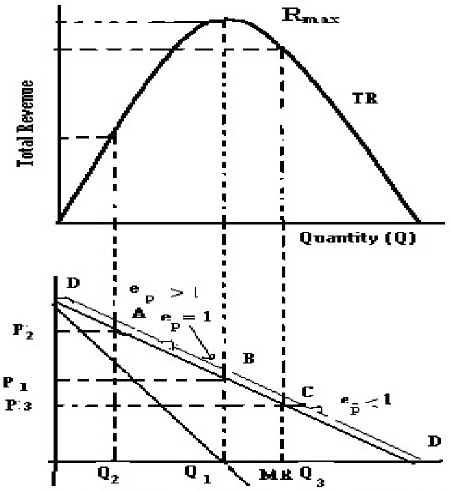

Fig 4.4 Price elasticity and total revenue

निष्कर्ष रूप में, कहा जा सकता है–

(1) यदि $e_p<1$,मांग बेलोचदार है, तब कीमत में वृद्धि होने पर कुल आगम में वृद्धि होती है। मूल्य में कमी होने पर कुल आगम में कमी होती है।

(2) यदि $e_p> 1$,मांग लोचदार है, तब कीमत में वृद्धि होने पर कुल आगम में कमी होगी और मूल्य में कमी होने पर कुल आगम में वृद्धि होगी।

(3) यदि $e_p =1$,मांग की लोच इकाई के बराबर है, तब कीमत में परिवर्तन होने पर कुल आगम पर कोई प्रभाव नहीं होगा क्योंकि सीमान्त आगम शून्य पर पंहुच चुका है।

4.5 कीमत लोच एवं सीमान्त आगम

मांग वक्र एवं सीमान्त आगम वक्र यह दर्शाते हैं कि मांग कहां पर लोचदार है, कहां पर इकाई सापेक्ष लोच है, कहां पर मांग बेलोच है। यह स्पष्ट है कि कीमत के निचले स्तर पर मांग कम लोचदार होती है। यह रेखीय वक्र की विशेषता है क्योंकि वक्र रेखीय है इसलिए dQ/dPस्थिर (constant) होगा। अतः च्ध्फ के मान से मांग की लोच का निर्धारण होता है। लेकिन, कीमत में कमी होती है, तब P/Q में भी कमी होती है। फलस्वरूप, कीमत लोच का निरपेक्ष मान कम हो जाता है और मांग लोचदार हो जाती है।

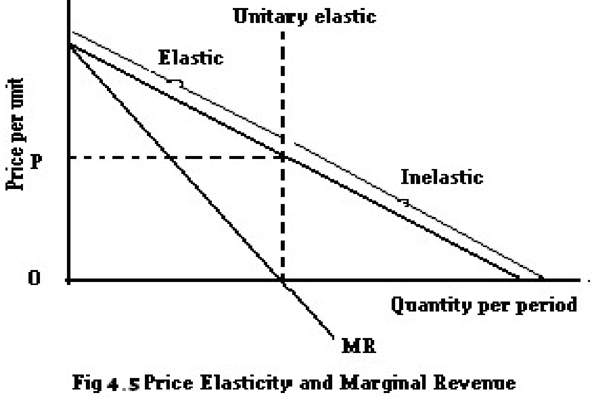

Fig 4.5 Price Elasticity and Marginal Revenue

रेखाचित्र 4.5 से स्पष्ट है कि सीमान्त आगम वक्र मात्रा अक्षांश को जिस बिन्दु पर काटता है, इकाई लोच बिन्दु उसके ठीक सामने पड़ता है। मांग की लोच इकाई सापेक्ष वहां होगी जिस बिन्दु पर सीमान्त आगम शून्य होगा। इकाई लोच का आशय यह है कि मूल्य में 1 प्रतिशत की वृद्धि होने पर मांग की मात्रा में 1 प्रतिशत की कमी होगी। अतः मांग में परिवर्तन मूल्य में परिवर्तन के विपरीत दिशा में उसी अनुपात में होगा। परिणामस्वरूप, कुल आगम में कोई परिवर्तन नहीं होगा क्योंकि सीमान्त आगम यहां शून्य होता है।

मांग लोचदार होने पर सीमान्त आगम धनात्मक होता है। मांग बेलोच होने पर सीमान्त आगम ऋणात्मक होता है। यह उल्लेखनीय है कि गैर–रेखीय मांग वक्र के मामले में भी मांग लोच और सीमान्त आगम में यही सम्बन्ध कायम रहता है। सीमान्त आगम जिस बिन्दु पर शून्य होता है, वही बिन्दु मांग वक्र को लोचपूर्ण और बेलोचदार दो भागों में बांटता है।

लम्बरूप मांग वक्र के मामले में, मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव मांग पर नहीं पड़ता है क्योंकि $dQ/dP = 0$ और कीमत लोच भी शून्य है। क्षैतिज मांग वक्र के मामले में, मूल्य में परिवर्तन के प्रत्युत्तर में मांग में अत्यधिक परिवर्तन देखने को मिलता है। मूल्य में थोड़ा–सा परिवर्तन भी मांग में अत्यधिक परिवर्तन कर सकता है क्योंकि मांग में अपरिमित लोच है। क्षैतिज मांग वक्र का अर्थ है कि मांग में अपरिमित लोच है। अपरिमित लोचपूर्ण और अपरिमित बेलोच मांग वक्र वास्तविक जीवन में दुर्लभ परिस्थितियां हैं, किन्तु आर्थिक विश्लेषण की दृष्टि से इन्हें समझना उपयोगी होता है।

4.6 कीमत लोच के निर्धारक घटक/ तत्व (Determinants of Price Elasticity)

मांग को प्रभावित करने वाले अनेक घटक हैं। मांग को प्रभावित करने वाले कारकों को ही मांग की लोच को प्रभावित करने वाले तत्व माना जाता है। इनमें प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं– स्थानापन्न, वस्तु की प्रकृति, क्रेता के बजट में वस्तु का स्थान, समयावधि, वस्तु की संख्या एवं उपयोग।

(1) **स्थानापन्न**–यदि किसी वस्तु के कई उपयुक्त स्थानापन्न सुलभ हों, तब इस बात की पूरी सम्भावना है कि इस वस्तु की मांग लोचपूर्ण होगी। ऐसी वस्तु जिसके अच्छे स्थानापन्न उपलब्ध हों उसकी मांग अधिक लोचपूर्ण होगी क्योंकि स्थानापन्न प्रभाव इस तरह की वस्तुओं के मामले में बहुत ज्यादा होता है। यदि कीमत में वृद्धि होती है, उपभोक्ता इस वस्तु का उपभोग कम कर देंगे और स्थानापन्न वस्तुओं का उपयोग बढ़ा देंगे। इसके विपरीत, यदि वस्तु की कीमत में कमी होती है, उपभोक्ता स्थानापन्न वस्तुओं को छोड़कर इस वस्तु का उपभोग बढ़ा देंगे। इस प्रकार स्पष्ट है कि ऐसी वस्तु जिसके निकट स्थानापन्न मौजूद हों, उसकी मांग अधिक लोचदार होती है। यदि कोई वस्तु ऐसी है जिसका पूर्ण स्थानापन्न उपलब्ध है, तब इसकी मांग भी पूर्णतया लोचदार अथवा अपरमित लोचदार होगी। इस कारण से किसी वस्तु की एक ब्राण्ड की मांग समूची वस्तु की मांग की तुलना में अधिक होगी। दूसरे शब्दों में, एक फर्म के मांग वक्र में मांग की लोच की तुलना में समग्र उद्योग के मांग वक्र में मांग की लोच कम होगी।

(2) **वस्तु की प्रकृति**–वस्तु प्रकृति का उसकी मांग लोच पर बहुत प्रभाव होता है, उदाहरण के लिये, जैसे अनिवार्यतायें– खाद्य पदार्थ और प्रतिष्ठापरक वस्तुएं, इनकी मांग बेलोच होती है। विलासिता वस्तुएं एवं आरामदायक वस्तुओं की मांग लोचपूर्ण होती है।

(3) **क्रेता के बजट में वस्तु का स्थान**–उपभोक्ता के बजट में किसी वस्तु को कितनी प्रमुखता दी गई है, इस बात का प्रभाव वस्तु की मांग लोच पर पड़ता है। बजट में प्रमुखता का अर्थ है – कुल व्यय में एकल वस्तु का अंश। ऐसी बहुत–सी वस्तुएं हैं जिन पर किसी परिवार में एक सप्ताह में बहुत छोटी राशि व्यय होती है, जैसे– साबुन, नमक, माचिस, स्याही जैसी वस्तुएं। पारिवारिक बजट में इन वस्तुओं का प्रतिषत अंष अत्यधिक कम होता है। इन वस्तुओं की मांग अत्यधिक बेलोच होती है, किन्तु पूर्णतया बेलोच नहीं होती। यह आय प्रभाव के परिमाण के कारण होता है।

किसी वस्तु की कीमत में वृद्धि होने पर हम उस वस्तु के उपभोग में कमी लाने को प्रेरित होंगे जिस पर आय का अधिक हिस्सा खर्च होता हो। आय का जितना बड़ा हिस्सा किसी वस्तु पर खर्च होता होगा, वस्तु की मांग उतनी ही अधिक लोचपूर्ण होगी। इस प्रकार, नमक की कीमत मांग लोच बहुत कम होती है। इसका एक कारण है कि इसका कोई निकट स्थानापन्न नहीं है, दूसरा कारण है कि नमक पर कुल आय का बहुत छोटा हिस्सा व्यय होता है। यदि नमक की कीमत में वृद्धि होती है, तब भी इस पर होने वाले व्यय का अंश कुल आय में बहुत छोटा ही रहेगा और हमें इस भार को वहन करने में बहुत कम कष्ट होगा। यहां, मूल्य वृद्धि का आय प्रभाव बहुत कम होगा। इसके विपरीत, पारिवारिक बजट के किसी प्रमुख मद की कीमत में यदि वृद्धि होती है, तब आय प्रभाव अधिक होगा। आवास ऋण पर ब्याज दर में वृद्धि इसका एक उदाहरण है। आवास ऋण पर ब्याज दर में बढ़ोत्तरी होने पर, उपभोक्ता छोटा मकान लेने को विवश होंगे अथवा किराये के मकान में रहना ही स्वीकार करेंगे। यहां मांग पर आय प्रभाव अधिक होगा।

4. **समयावधि**– किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि होने पर, उपभोक्ताओं को इस बात में समय लग सकता है कि वे अपने उपभोग व्यवहार में समायोजन करें और विकल्प तलाषें। मूल्य वृद्धि के बाद जितना ज्यादा समय होगा, मांग की लोच उतनी ही अधिक होगी। दिसम्बर 1973 से जून 1974 के बीच कच्चे तेल के मूल्य में चार गुना तक वृद्धि हुई। इस कारण, पेट्रोल और सेन्ट्रल हीटिंग ऑयल की कीमतों में वृद्धि हुई। अगले कुछ महीनों में तेल उत्पादों की मांग में बहुत मामूली–सी गिरावट देखी गई। मांग अत्यधिक बेलोच थी। मोटर मालिकों के पास ईंधन के लिये कोई दूसरा विकल्प नहीं था जिसको वे अपना पाते। उन्होंने अपनी यात्राओं में कुछ कमी की और कारों को किफायती ढंग से चलाने के प्रयास किये। इसीप्रकार, तेल आधारित सेन्ट्रल हीटिंग में भी अचानक वायलर्स में गैस अथवा कोयले का उपयोग नहीं किया जा सकता था। बस, वे हीटिंग को कुछ कम करके थोड़ी बचत कर सकते थे। लम्बे समय तक जब तेल की ऊंची कीमतें स्थिर हो गईं, कारों के लिये कम तेल की खपत वाले इंजन विकसित हुए। बहुत लोगों ने छोटी कार का विकल्प अपना लिया। इसी प्रकार, सेन्ट्रल हीटिंग के लिये गैस अथवा कोयले के बायलर प्रयोग होने लगे।

अपने ईंधन के बिल को कम करने के लिये व्यक्तियों ने घर के इन्सुलेशन पर खर्चा किया। इस तरह, दीर्घकाल में मांग काफी लोचदार हो गई।

(5) **बहु–उपयोगी वस्तु** – कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जिनके कई उपयोग सम्भव होते हैं, इनकी मांग अधिक लोचदार होती है। यदि कोई वस्तु ऐसी है जिसके सीमित उपयोग हैं, उसकी मांग बेलोच होगी। कोई ऐसी वस्तु है जिसके कई उपयोग होते हैं, अगर इसकी कीमत बढ़ जाती है, तब उपभोक्ता इसका उपयोग सीमित कर देंगे और इसे केवल अधिक आवश्यक काम में ही प्रयोग करेंगे। दूसरी ओर, बहु–उपयोगी वस्तु की कीमत अगर कम हो जाती है, तब इसका उपभोग बढ़ जायेगा क्योंकि कम महत्व के प्रयोजनों के लिये भी इस प्रयोग किया जायेगा। अतः किसी वस्तु के जितने ज्यादा विविध उपयोग होंगे उसकी मांग में लोचशीलता उतनी अधिक होगी। बहु–उपयोगी वस्तुओं में एक उदाहरण है–दूध। दूध कई प्रकार की दूसरी वस्तुएं बनाने के काम भी आता है, जैसे– दही, पनीर, मिठाई, आइस क्रीम, क्रीम, घी। इसकी मांग काफी लोचदार होगी। दूध की कीमत बढ़ने पर, इसका उपयोग कम कर दिया जायेगा। तब, इसका प्रयोग केवल उच्च प्राथमिकता वाले विकल्पों पर होगा। दूसरी ओर, दूध की कीमत कम हो जाने पर, इसका उपयोग निम्न प्राथमिकता वाले उद्देश्यों के लिये भी प्रारम्भ हो जायेगा। फलस्वरूप, दूध की मांग बढ़ जायेगी।

मांग की लोच के विषय में विचार करते समय, सभी निर्धारक तत्वों को शामिल किया जाना जरूरी है, तभी सही निर्णय तक पहुंचा जा सकता है। मांग को प्रभावित करने वाले घटक परस्पर एक–दूसरे के प्रभाव को बढ़ा सकते हैं अथवा कोई घटक दूसरे के प्रभाव को समाप्त भी कर सकता है। कोई वस्तु हो सकती है जिसके विविध उपयोग होते हैं, किन्तु उसका कोई निकट स्थानापन्न न हो। इसीप्रकार, कोई वस्तु हो सकती है जिसके अच्छे स्थानापन्न उपलब्ध हों, किन्तु उपभोक्ता के बजट में इसका स्थान महत्वपूर्ण न हो।

मांग की लोच का सिद्धान्त मूल्य निर्धारण में बहुत उपयोग में आता है। मांग की लोच के नियम का सर्वाधिक महत्व मूल्य निर्धारण के क्षेत्र में है।

4.7 मांग की आड़ी लोच (Cross Elasticity of Demand)

किसी वस्तु की मांग दूसरी वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य से भी प्रभावित होती है। मांग की आड़ी लोच में दूसरी वस्तुओं के मूल्य में परिवर्तन के उत्तर में किसी वस्तु की मांग में परिवर्तन का माप किया जाता है। किसी दूसरी वस्तु के मूल्य में एक प्रतिशत परिवर्तन के उत्तर में इस वस्तु की मांग में जितने प्रतिशत परिवर्तन होता है उसे मांग की आड़ी लोच कहा जाता है।

$$e_c = \frac{\%\Delta Q_x}{\%\Delta P_y} \qquad 4.15$$

आड़ी लोच का उपयोग वस्तुओं के मध्य सम्बन्ध समझने के लिये किया जाता है।यदि आड़ी लोच शून्य से अधिक है, Y वस्तु के मूल्य में वृद्धि के कारण X वस्तु की मांग में वृद्धि होती है। तब, यह कहा जायेगा कि X एवं Y उत्पाद एक दूसरे के स्थानापन्न हैं। यदि आड़ी लोच शून्य से कम है, तब इसका अर्थ है कि ये वस्तुएं परस्पर पूरक वस्तुएं हैं। वस्तु Y के मूल्य में वृद्धि होने पर, वस्तु X की मांग में कमी आती है। X की मांग में कमी होने पर Y की मांग

में भी कमी होती है। ब्रेड एवं बटर, कार एवं टायर, कम्प्यूटर एवं कम्प्यूटर प्रोग्राम आदि पूरक वस्तुओं के युग्म हैं।

यदि दो वस्तुएं स्थानापन्न हैं, तब मांग की लोच गुणांक धनात्मक होगा क्योंकि एक वस्तु की कीमत में परिवर्तन और दूसरी वस्तु की मांग में परिवर्तन एक ही दिशा में होगा। पूरक वस्तुओं के मामले में मांग की लोच गुणांक ऋणात्मक होगा क्योंकि एक वस्तु की कीमत में परिवर्तन के उत्तर में दूसरी वस्तु की मांग में विपरीत दिशा में परिवर्तन होगा। यह नियम अपनी मान्यताओं पर आधारित है, यदि अन्य बातें समान रहें, जैसे– वस्तु के प्रति उपभोक्ता की रूचि, उपभोक्ता की आय, दूसरी वस्तु के मूल्य में कोई परिवर्तन न हो।

कई कम्पनियां प्रतियोगी वस्तुओं का उत्पादन करती हैं। यदि किसी कम्पनी के उत्पाद परस्पर सम्बद्ध होते हैं, तब एक वस्तु के मूल्य का प्रभाव दूसरी वस्तु की मांग पर होता है। जिलेट कम्पनी रेजर बनाती है और रेजर ब्लेड भी बनाती है। अगर जिलेट रेजर की कीमत में कमी करती है, तब इसका प्रभाव रेजर ब्लेड की बिक्री पर होगा। इसी प्रकार, फोर्ड कम्पनी कई प्रतिस्पर्धी ऑटोमोबाइल्स बनाती है।

दो वस्तुएं एक दूसरे के लिये जितने निकट स्थानापन्न होंगी, आड़ी लोच गुणांक उतना ही अधिक होगा। निकट स्थानापन्न वस्तुओं के मामले में मांग की आड़ी लोच अधिक होती है, इसके विपरीत निम्न स्थानापन्न वस्तुओं की मांग की आड़ी लोच कम होती है।

सामान्यतया, किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि के कारण उसके स्थानापन्न वस्तुओं की मांग में वृद्धि होती है। दूसरी ओर, किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि होने पर उसकी पूरक वस्तुओं में कमी आती है।

4.8 मांग की आय लोच (Income Elasticity of Demand)

आय में होने वाले परिवर्तन के कारण मांग में जो परिवर्तन होते हैं, इस परिवर्तनशीलता को मांग की आय लोच कहा जाता है। आय लोच का नियम भी अपनी मान्यताओं पर आधारित है, यदि अन्य बातें समान रहें– उपभोक्ता की रूचि में परिवर्तन न हो, वस्तु की कीमत स्थिर रहे, दूसरी वस्तुओं के मूल्य में भी परिवर्तन न हो। मांग की आय लोच की गणना के लिये नीचे दिया गया सूत्र प्रयोग किया जाता है।

$$e_y = \frac{\text{Percentage change in quantity demanded}}{\text{Percentage change in quantity demanded}}$$

or

$$e_y = \frac{\text{Relative change in quantity demanded}}{\text{Relative change in the incomes of the buyers}}$$

$$e_y = \frac{\Delta Q}{Q} \Big/ \frac{\Delta Y}{Y} = \frac{Y}{Q} \cdot \frac{\Delta Q}{\Delta Y} \qquad 4.16$$

जहाँ,

e_y से आशय आय लोच का गुणांक

Y से आशय आय

कीमत लोच सदैव ऋणात्मक होती है, जबकि आय लोच सदैव धनात्मक होती है, निम्न कोटि वस्तुएं इसका अपवाद हैं। आय और वस्तु की मांग में धनात्मक सम्बन्ध होता है। निम्न कोटि वस्तुओं के सम्बन्ध में, मांग की आय लोच ऋणात्मक होती है क्योंकि आय बढ़ने पर उपभोक्ता निम्न कोटि वस्तुओं को छोड़कर उच्च कोटि वस्तुओं का उपभोग करने लगता है।

वस्तुओं की प्रकृति के अनुरूप, आय लोच की मात्रा कम अथवा अधिक होती है–

(1) सामान्य वस्तुओं के मामले में आय लोच धनात्मक होती है।

(2) अनिवार्यताओं के मामले में आय लोच इकाई से कम होती है। इसका अर्थ यह है कि आय में वृद्धि होने पर वस्तु की मांग में आनुपातिक रूप से कम वृद्धि होती है। अनिवार्य वस्तुएं जैसे –साबुन, नमक, माचिस, अखबार आदि की मांग की आय लोच कम होती है।

(3) आरामदायक वस्तुओं के मामले में, आय लोच गुणांक इकाई के बराबर होता है। इसका अर्थ यह है कि आय में वृद्धि के उत्तर में मांग में अनुपातिक रूप से वृद्धि होती है।

(4) विलासिता वस्तुओं के मामले में, आय लोच इकाई से अधिक होती है। इसका आशय यह है कि आय में वृद्धि होने पर मांग में अनुपात से अधिक वृद्धि होती है। आभूषण और वाहन आदि विलासिता वस्तुओं के समूह में आते हैं।

मांग की आय लोच का उपयोग व्यापार के महत्वपूर्ण निर्णयों में होता है, इनके उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) आय लोच की धारणा दीर्घकालिक उत्पादन नियोजन और प्रबन्धन में उपयोगी होती है। व्यवसाय चक्रों के दौरान इसकी प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

(2) मांग के पूर्वानुमान लगाने में आय लोच का उपयोग किया जाता है। आय में वृद्धि दर ज्ञात होने पर, उसके लिये विविध स्तरों पर मांग का पूर्वानुमान किया जा सकता है।

4.8.1 आय संवेदनशीलता (Income Sensitivity)

मांग की आय लोच में, आय की वृद्धि होने पर यह देखा जाता है कि वस्तु की मांग में कितनी वृद्धि हुई। इसमें वस्तु के भौतिक उपभोग में हुई वृद्धि को संज्ञान में लिया जाता है। यदि वस्तु की मात्रा के स्थान पर वस्तु पर किये जाने वाले व्यय पर ध्यान दिया जाये, तब यह अवधारणा आय संवेदनशीलता कही जाती है। वस्तु पर किये जाने वाले व्यय में प्रतिशत परिवर्तन को आय में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन से भाग देने पर आय संवेदशीलता को ज्ञात किया जाता है। आय संवेदनशीलता ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र का उपयोग किया जाता है–

$$Y_s = \frac{\text{Percentage change in expenditures}}{\text{Percentage change in income}}$$

$$Y_s = \frac{\Delta R / R}{\Delta Y / Y} \qquad 4.17$$

जहाँ

Y_{es} आय संवेदनशीलता का मापन

ΔR उपभोक्ता व्यय में बदलाव का मापन

ΔY आय में परिवर्तन का मापन

मान लीजिए, आय में 10 प्रतिशत वृद्धि होने पर, व्यय में 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई। ऐसी स्थिति में इस वस्तु की आय संवेदनशीलता 1.2 कही जायेगी।

4.9 बिक्री की विज्ञापन लोच (Advertisement Elasticty of Sales)

विज्ञापन बिक्री को बढ़ाने में सहायक होता है। विक्रय के विविध स्तरों पर, विज्ञापन का प्रभाव समान रूप से नहीं पड़ता। अनुकूलतम विज्ञापन स्तर तय करने में विज्ञापन लोच की धारणा बहुत उपयोगी रहती है। प्रतिस्पर्धी फर्मों द्वारा किये जाने वाले विज्ञापन के सन्दर्भ में विज्ञापन लोच का विचार और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। विज्ञापन में प्रतिशत परिवर्तन के उत्तर में मांग में जो प्रतिषत परिवर्तन होता है, उसे विज्ञापन लोच कहा जाता है। विज्ञापन को व्यय के रूप में मापा जाता है। विज्ञापन लोच मापने के लिये निम्न सूत्र का उपयोग किया जाता है–

$$e_A = \frac{\Delta S}{\Delta A} \cdot \frac{A}{S}$$

जहाँ

S = बिक्री

ΔS= बिक्री में वृद्धि

A = प्रारंभिक विज्ञापन परिव्यय

ΔA = बढ़ा विज्ञापन परिव्यय

विज्ञापन लोच शून्य से अपरिमित के बीच होती है। यदि मांग की लोच शून्य है, तब विज्ञापन व्यय बढ़ाने पर बिक्री में कोई परिवर्तन नहीं होगा। विज्ञापन लोच गुणांक शून्य से अधिक और एक से de(e_A>0<1) होने पर, विज्ञापन व्यय में वृद्धि के अनुपात की तुलना में बिक्री में आनुपातिक वृद्धि कम होगी। विज्ञापन गुणांक 1 होने का अर्थ यह है कि विज्ञापन में वृद्धि के अनुपात में ही बिक्री में वृद्धि होगी। विज्ञापन गुणांक इकाई से अधिक ($e_A > 1$) होने पर, विज्ञापन में होने वाली वृद्धि की तुलना में बिक्री में अनुपातिक आधार पर वृद्धि अधिक होगी।

4.10 विज्ञापन लोच के निर्धारक तत्व (Determinants of Advertisement Elasticity)

(1) **बिक्री का स्तर**– बिक्री की विज्ञापन लोच, विशेषकर बाजार में आई नई वस्तुओं के मामले में इकाई से अधिक होती है। विज्ञापन में वृद्धि की तुलना में अनुपातिक रूप से बिक्री में अधिक वृद्धि होती है। जैसे–जैसे बिक्री बढ़ती है, लोचशीलता में कमी आने लगती है। अब, उत्पाद के नए ग्राहक

बनाने के लिये विज्ञापन दिया जाता है। इसलिए, मांग में विज्ञापन की तुलना में आनुपातिक वृद्धि कम होती है।

(2) **प्रतियोगी विज्ञापन** –मांग की विज्ञापन लोच फर्म द्वारा किए गए विज्ञापन व्यय पर निर्भर करती है, किन्तु साथ–साथ दूसरी प्रतिस्पर्धी फर्मों द्वारा किए जा रहे विज्ञापन से भी प्रभावित होती है।

(3) **विगत विज्ञापन का संचयी प्रभाव**–प्रारम्भिक अवस्था में, विज्ञापन का प्रभाव उतना नहीं हो पाता जितना बाद की अवस्था में होता है। बाद में, पिछले विज्ञापन के संचित प्रभाव का लाभ मिलने लगता है। इसप्रकार, शुरू में विज्ञापन लोच कम होती है। बाद में, एक समयावधि के बाद विज्ञापन लोच में वृद्धि होती है।

किसी उत्पाद की मांग की विज्ञापन लोच का प्रभावित करने वाले कुछ अन्य घटक हैं –उत्पाद की कीमत में परिवर्तन, उपभोक्ता की आय में परिवर्तन, स्थानापन्न वस्तुओं की संख्या में बदलाव, स्थानापन्न वस्तुओं के मूल्य में कमी अथवा वृद्धि।

4.11 प्रत्याशित मूल्य लोच (Elasticity of Price Expectations)

लोगों द्वारा किसी वस्तु का प्रत्याशित मूल्य भी उस वस्तु की मांग को प्रभावित करता है। अर्थशास्त्री जे0आर0 हिक्स ने 1939 में प्रत्याशित मूल्य लोच की अवधारणा प्रस्तुत की। प्रत्याशित मूल्य लोच को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–'भविष्य के प्रत्याशित मूल्य और वर्तमान मूल्य में सापेक्ष परिवर्तन के अनुपात को प्रत्याशित मूल्य लोच कहा जाता है'।

$$e_x = \frac{\text{relative change in expected future prices}}{\text{relative change in current prices}}$$

जहाँ,

$$e_x = \frac{\Delta P_f / P_f}{\Delta Pc / P_c} = \frac{\Delta P_f}{\Delta P_c} \cdot \frac{P_c}{P_f}$$

P_c वर्तमान मूल्य

P_f भविष्य की कीमतें

$e_x > 1$ क्रेता आशा करते हैं कि भविष्य के प्रतिशत मूल्य में वर्तमान की तुलना में अधिक वृद्धि होगी।

$e_x = 1$ क्रेता उम्मीद करते हैं कि भविष्य के मूल्य वर्तमान मूल्य के आधार पर समान प्रतिशत से बढ़ेंगे।

$e_x < 1$ क्रेता आशा करते हैं कि भविष्य के प्रतिशत मूल्य में वर्तमान की तुलना में कम वृद्धि होगी।

$e_x = 0$ क्रेता अनुमान करते हैं कि वर्तमान मूल्यों का भविष्य के मूल्यों पर कोई प्रभाव नहीं होगा।

$e_x < 0$ क्रेता उम्मीद करते हैं कि भविष्य के प्रतिशत मूल्य में वर्तमान की तुलना में कमी होगी।

मूल्य नीति के निर्धारण मे मूल्य प्रत्याशा लोच अवधारणा बहुत उपयोगी होती है।

4.12 पूर्ति की लोच (Elasticity of Supply)

वस्तु की पूर्ति की मात्रा में क्या परिवर्तन होता है, जब उसके निर्धारकों में परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन की माप को पूर्ति की लोच कहा जाता है।

4.13 पूर्ति की मूल्य/कीमत लोच (Price Elasticity of Supply)

वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के उत्तर में वस्तु की पूर्ति पर जो प्रभाव पड़ता है, उसकी माप को वस्तु की पूर्ति मूल्य लोच कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, पूर्ति की कीमत लोच में, कीमत में परिवर्तन और पूर्ति की गई मात्रा में परिवर्तन के सम्बन्ध की माप की जाती है। यदि पूर्ति लोचपूर्ण है, तब उत्पादक बिना लागत बढ़े और बिना कोई समय लगाये उत्पादन बढ़ा सकते हैं। इसके विपरीत, यदि पूर्ति बेलोच है, तब दिए गए समय में उत्पादन में वृद्धि करना मुश्किल होगा।

पूर्ति की कीमत लोच का सूत्र इस प्रकार है–

आपूर्ति मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन / मूल्य में प्रतिशत परिवर्तन

यदि Pes > 1,rc, पूर्ति लोचदार है।

यदि Pes < 1, तब, पूर्ति बेलोच है।

यदि Pes = 0, तब, पूर्ति पूर्णतया बेलोच है।

यदि Pes = infinity, तब, पूर्ति पूर्णतया लोचदार है।

4.14 पूर्ति की कीमत लोच को प्रभावित करने वाले घटक (Determinants of Price Elasticity of Supply)

(1) **अतिरिक्त उत्पादन क्षमता**– यदि अतिरिक्त उत्पादन क्षमता पर्याप्त हो, तब लागत में वृद्धि के बिना पूर्ति को बढ़ाया जा सकता है। मांग के अनुरूप पूर्ति को बढ़ाया जा सकता है। मन्दी के समय में, प्रायः वस्तुओं और सेवाओं की पूर्ति लोचूपर्ण होती है। ऐसे समय में, अतिरिक्त श्रम और पूंजी संसाधन उपलब्ध होते हैं, जैसे ही अर्थव्यवस्था में सुधार होता है इन साधनों का उपयोग किया जाने लगता है।

(2) **तैयार एवं कच्चे माल का स्टॉक**–यदि तैयार माल और कच्चे माल का स्टॉक अधिक रहता है, तब आपूर्तिकर्ता मांग के अनुरूप आपूर्ति बढ़ा सकते हैं। ऐसी स्थिति में पूर्ति लोचपूर्ण होगी। इसके विपरीत यदि स्टॉक कम रहता है, तब पूर्ति बेलोच होगी और मांग के अनुरूप पूर्ति में वृद्धि नहीं की जा सकेगी जब तक कि स्टॉक में कमी को पूरा नहीं किया जाता।

(3) **पूंजी एवं श्रम की गतिशीलता**– यदि किसी व्यवसाय में पूंजी एवं श्रम गतिशील हैं, तब वहां पूर्ति लोचपूर्ण होगी। इसके विपरीत यदि किसी उद्योग में पूंजी और श्रम में गतिशीलता कम है, तब वहां वस्तुओं की पूर्ति में लोच कम होगा।

(4) **उत्पादन प्रक्रिया में लगने वाला समय**– एक फर्म को उत्पादन स्तर के समायोजन में जितना ज्यादा समय लगता है, वस्तु की पूर्ति कीमत लोच उतनी अधिक होती है। कृषि बाजार के मामले में, अल्पकालिक पूर्ति स्थिर होती है और इसका निर्धारण बीज बोते समय कई माह पहले हो चुका होता है जिसका प्रभाव समग्र उत्पादन पर पड़ता है।

विभिन्न कीमत लोच वाले पूर्ति वक्रों के रेखा चित्र आगे दिये गए हैं–

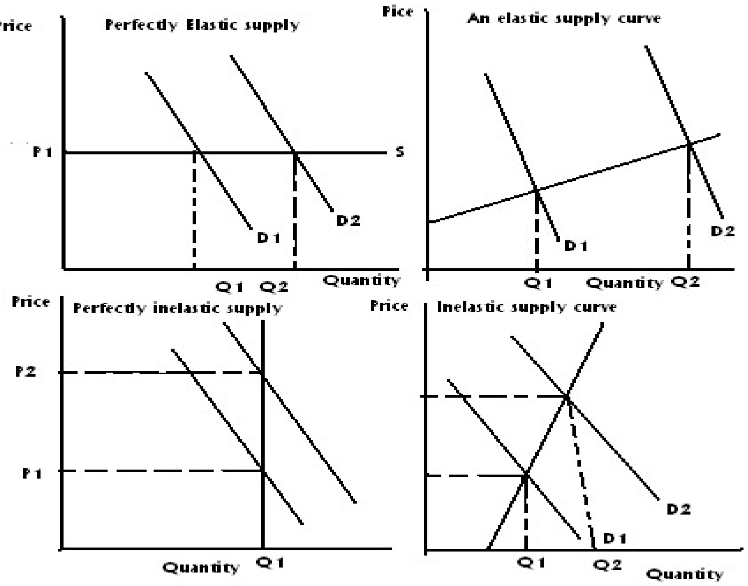

चित्र 4.6 पूर्ति की लोच

अ–रेखीय पूर्ति वक्र

गैर–रेखीय पूर्ति वक्र के विभिन्न बिन्दुओं पर, पूर्ति की कीमत लोच अलग–अलग होती है।

4.15 मांग और पूर्ति की कीमत लोच के विविध उपयोगी अनुप्रयोग

मांग और पूर्ति के सन्दर्भ में कीमत के प्रति उपभोक्ता और उत्पादक की प्रतिक्रिया महत्वपूर्ण होती है। लोच से यह तय होता है कि कीमत और उत्पादन में किस प्रकार के बदलाव होंगे। यदि सरकार मूल्य निर्धारण प्रक्रिया में हस्तक्षेप करना चाहती है, तब सरकारी नीति निर्धारण के समय लोच के कारण होने वाले प्रभावों को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाता है।

कुछ महत्वपूर्ण विषय जिनमें मांग और पूर्ति के लोच का सन्दर्भ अवश्य लिया जाता है, इस प्रकार हैं–

- **कराधान**–बाजार में अप्रत्यक्ष करों और अनुदान का मांग और उत्पादन स्तर पर प्रभाव, उदाहरण के लिए सड़क पर भीड़ नियन्त्रित करने में कन्जेशन शुल्क (congestion charge) की प्रभावशीलता; सिगरेट पर अधिक कर लगाने का तम्बाकू उत्पादों की मांग पर प्रभाव और अन्य अनुषंगी बाह्य प्रभाव।
- **विनिमय दर में परिवर्तन**– निर्यात एवं आयात के लिये मांग पर, विनिमय दर में परिवर्तन होने के कारण पड़ने वाले प्रभाव।
- **बाजार में एकाधिकारी शक्ति का फायदा उठाना**–फर्म बाजार में अपने एकाधिकार की स्थिति का लाभ उठाने के लिये कीमत में कितनी बढ़ोत्तरी कर सकती है और उपभोक्ता की बचत को उत्पादक की बचत में परिवर्तित कर सकती है और अतिरिक्त लाभ कमा सकती है।
- **बाजार में सरकार का हस्तक्षेप**– सरकार द्वारा बाजार मे न्यूनतम मूल्य अथवा अधिकतम मूल्य (price ceiling) घोषित करने के प्रभाव।

मांग और पूर्ति की लोच मूल्य निर्धारण प्रक्रिया में दुर्लभ वस्तु अथवा सेवा की राशनिंग के उपाय के तौर पर भी काम करती है। वस्तु के विविध प्रतियोगी उपयोगों से भी यह प्रभावित होती है। बाजार में ऊंचे मूल्य के प्रति उत्पादक के सम्भावित व्यवहार को समझने में मांग और पूर्ति की लोच उपयोगी होती है।

4.16 सारांश

कीमत में प्रतिशत परिवर्तन और वस्तु की मांगी गई मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन के अनुपात को मांग की लोच कहा जाता है। वस्तु की कीमत में परिवर्तन के उत्तर में वस्तु की मांग में होने वाले परिवर्तन की माप को मांग की कीमत लोच के रूप परिभाषित किया जाता है। चाप लोच मांग वक्र द्वारा मूल्य परिवर्तन के प्रति मांग में औसत अनुक्रियाशीलता (responsiveness) की अभिव्यक्ति है। मूल्य में बहुत छोटे से आनुपातिक परिवर्तन के उत्तर में मांगी गई मात्रा में आनुपातिक परिवर्तन को मांग की बिन्दु लोच कहा जाता है।

सामान्यतया, बाजार मांग के निर्धारकों में मांग की कीमत लोच के निर्धारक घटकों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। कीमत लोच के निर्धारक घटकों में षामिल हैं– स्थानापन्न, वस्तु की प्रकृति, उपभोक्ता के बजट में वस्तु का स्थान, समयावधि, बहु–उपयोगी वस्तु। मांग की आड़ी लोच –किसी दूसरी वस्तु के मूल्य में 1 प्रतिशत परिवर्तन पर एक वस्तु की मांग में परिवर्तन प्रतिशत को मांग की आड़ी लोच कहा जाता है।

4.17 शब्दावली

मांग की लोच : कीमत में परिवर्तन के परिणामस्वरूप खरीदी गई मात्रा के आनुपातिक परिवर्तन में कीमत के आनुपातिक परिवर्तन से भाग देने पर प्राप्त होती है।

मांग की कीमत लोच : कीमत में होने वाले वाले परिवर्तन पर प्रतिक्रियास्वरूप मांग में होने वाले परिवर्तन की माप है।

चाप लोचः मांग वक्र के दो बिन्दुओं के बीच के भाग के लिये मांग की लोच मालूम की जाये, तब इसे मांग की चाप लोच कहते हैं।

बिन्दु लोचः मांग की लोच की माप किसी एक विशिष्ट बिन्दु पर की जाती है। कीमत में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों से वस्तु की मांग पर पड़ने वाले प्रभावों को मापा जाता है।

मांग की आड़ी लोचः एक वस्तु की मांग की मात्रा और दूसरी वस्तु की कीमत में परिवर्तन का पारस्परिक सम्बन्ध मांग की आड़ी लोच द्वारा मापा जा सकता है।

4.18 बोध प्रश्न

रिक्त स्थान भरिएः

(अ) घटिया वस्तुओं की आय लोच ....होती है।

(ब) स्थानापन्न वस्तुओं में मांग की लोच ....होती है।

(स) विलासिता की वस्तुओं की मांग लोच..............................होती है।

कौन सा कथन सत्य हैः

(अ) वस्तु का गुण मांग की लोच पर प्रभाव नहीं डालता।

(ब) समाज में धन का वितरण असमान होने पर मांग की लोच बेलोच होती है।

(स) धनी लोगों के लिये मांग की लोच बेलोच होती है।

4.19 बोध प्रश्नों के उत्तर

रिक्त स्थान

(अ) ऋणात्मक (ब) धनात्मक (स) अत्यधिक

कथन सत्य/असत्य

(अ) असत्य (ब) सत्य (स) सत्य

4.20 स्वपरख प्रश्न

1. मांग की कीमत लोच अवधारणा को स्पष्ट कीजिए। आप मांग की कीमत लोच को किस प्रकार मापेंगे?
2. परिभाषित कीजिए एवं अन्तर बताइए:
   (अ) चाप लोच एवं बिन्दु लोच
   (ब) कीमत लोच एवं आड़ी लोच
   (स) आय लोच एवं कीमत लोच
3. मांग की आय लोच से आप क्या समझते हैं? व्यवसाय प्रबन्धकों के लिये आय लोच की व्यवहारिक उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
4. मांग की आड़ी लोच के सिद्धान्त को समझाइए। आड़ी लोच मापने की विधि लिखिए।
5. निम्नलिखित में किस वस्तु की मांग सर्वाधिक बेलोच होगी और क्यों?
   (अ) साबुन
   (ब) नमक
   (स) आइस क्रीम
   (द) अखबार

4.21 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Watson, Donald S., Price Theory and its Uses, Houghton Mifflin, Boston, Price Theory in Action, Houghton Mifflin, Boston.
2. Baumol, William J. Economic Theory and Operations Analysis, Prentice Hall of India Pvt. Ltd., New Delhi.2000.
3. Ferguson, C.E Microeconomics Theory, Richard D. Irwin, Home Wood. III.
4. George J. Stigler, The Theory of Price, 3rd ed. Macmillan, New York, 1966.
5. Spencer, Milton H., Managerial Economics, Richard D. Irwin, Home-wood, Ill.

इकाई 5 उदासीनता वक्र–विश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उदासीनता वक्र से ऑशय

5.3 उदासीनता मानचित्र

5.4 उदासीनता वक्र विश्लेषण की मान्यताएं

5.5 प्रतिस्थापना की सीमांत दर

5.6 उदासीनता वक्र के गुण

5.7 बजट रेखा अथवा मूल्य रेखा

5.8 उपभोक्ता साम्य (संतुलन)

5.9 उपभोक्ता अधिक्य

5.10 सारांश

5.11 शब्दावली

5.12 बोध प्रश्न

5.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.14 स्वपरख प्रश्न

5.15 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- उदासीनता वक्र के अर्थ की व्याख्या कर सकें।
- प्रतिस्थापन की सीमांत दर की व्याख्या कर सकें।
- उदासीनता वक्र की मान्यताओँ का वर्णन कर सकें।
- उदासीनता वक्र के गुणों का वर्णन कर सकें।
- उदासीनता–वक्र विश्लेषण के अनुप्रयोगों को जान सकें ।

5.1 प्रस्तावना

हिक्स एवँ स्लन ने उदासीनता वक्र का वास्तविक वर्णन किया। 1934 में J. R. Hicks (जे.आर. हिक्स) एवं R. G. D. Allan (आर. जी. डी एलन) ने एक लेख मूल्य सिद्धाँत की पुर्नसंरचना इकनोमिका में लिखा जिसमें उदासीनता वक्र विश्लेषण को प्रस्तुत किया। उदासीनता वक्र विश्लेषण का सबसे बड़ा गुण यह है, कि यह उपयेगिता के क्रमिक (क्रमवाचक) मापन को नीत करती है।

5.2 उदासीनता – वक्र का ऑशय

एक उदासीनता वक्र दो उत्पाद, एक (अकेला) उपभोक्ता दशा का परीक्षण करता है। उदासीनता वक्र दो उत्पादों (वस्तुओं) से उत्पादकता के संतुलित स्तर को निरूपित करता है या इस मान्यता से निष्काषित (लिया गया/प्राप्त) है, कि दो वस्तुओं के समस्त संभव संयोजनों हेतु कुल संतुष्टि समान रहती है इसलिए एक उदासीन वक्र पर स्थित उपभोक्ता संयोजनों के प्रति उदासीन रहता है।

5.3 उदासीनता – मानचित्र

एक उदासीन वक्र समान उपयोगिता प्रदान करने वाले x एवं y दो वस्तुओं के विभित्र संयोजनों को प्रदर्शित करता है, किन्तु विभित्र उदासीनता वक्र उपयेगिता के विभित्र स्तर को दर्शता है। उदाहरणर्थ – L_3 उदासीनता वक्र (निम्न ग्राफ/रेखा चित्र में वर्णित) L_2 अथवा L_1 की उपेक्षा अधिक उपयोगिता स्तर को दिखाता है। अर्थशास्त्री मानते है, कि व्यक्ति उच्यतम (अधिकतम) संभव उपयोगिता स्तर को प्राप्त करना चाहते है (I_3, I_2, से श्रेष्ठतर है जो कि I_1, से श्रेष्ठतर है।)

इस उदासीनता मानचित्र में अनंत उदासीन वक्र है तथा प्रत्येक व्यक्ति का उदासीनता मान चित्र उस व्यक्ति हेतु उवितीय है।

चित्र 5.1 एक उदासीनता मानचित्र को प्रदर्शित करता है

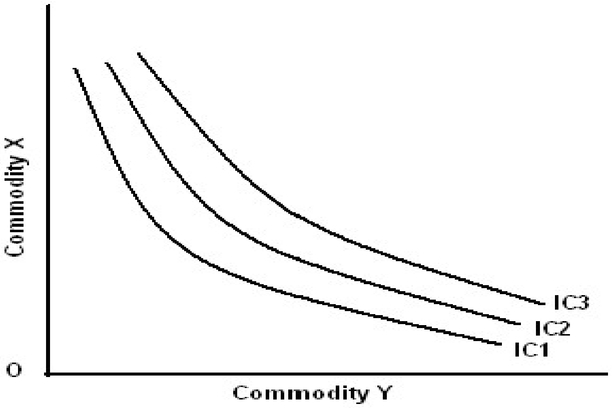

Fig. 5·1 Indifference Map

चित्र 5.1 उदासीनता मानचित्र

इस प्रकार एक उदासीनता मानचित्र समस्त उदासीनता वक्र को दर्शाते हैं, जो ग्राहकों/ उपयोग कर्ताओं के पसंद (वरीयता) का श्रेणी अंकन करते हैं। उदासीनता वक्र पर स्थित वस्तुओं का संयोजन समान संतुष्टि को उत्पन्न करता (प्रदान करता/उपजता/देता) है। उच्च उदासीनता वक्र पर स्थित वस्तुओं का संयोजन उच्च (अधिक) संतुष्टि अस्तर प्रदान करता है तथा वरीयता प्राप्त करता है निम्न उदासीनता वक्र पर स्थित वस्तुओं का संयोजन नियम उपयोगिता प्रदान करता है।

5.4 उदासीनता वक्र विश्लेषण की मान्यताएं

उदासीनता वक्र विश्लेषण निम्नलिखित प्रमुख मान्यताओं पर आधारित है वह

1. <u>समस्त आय उपभोग पर व्यय होती है।</u>

विभिन्न उत्पादों / वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य तथा उपभोक्ता की स्थिर (निश्चित) आए उपभोक्ता के बजट व्यवरोध है। बजट अवरोध के अंतर्गत यह माना जाता है, कि उपभोक्ता अपनी संपूर्ण आय अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के अपने उद्देश्य पर व्यय करता है।

2. <u>पसंदगी (वरीयता) के पैमाने को अव्यक्त किया जा सकता हैं,</u>

प्रत्येक ग्राहक/उपभोक्ता एक क्रमवाचक वरीयता (पसंदगी) पैमाना (मापक) रखता है, जो उसे किन्ही दो या अधिक वस्तुओं की तुलना करने को समर्थ बनाता है तथा यह निर्णय करने में सक्षम करता है, कि दो दिए गए

वस्तुओं के संयोजन Q1 Q2 के संयोजनद्ध को वरीयता प्रदान की जाती चाहिए अथवा नहीं अथवा या किसी अन्य संयोजन के समान ही वरीयता प्रदान किए जाने वाला होना चाहिए। प्राकृतिक रूप से वह संकेत कर सकता है जबकि वह ग्राहक दो विशेष संयोजनों (वस्तुओं के संयोजन) के मध्य वह उदासीन हो। इस संदर्भ में उदासीनता का आशय इस निर्णय से नहीं है। यह सरल रुप से यह बताता है, कि उपभोक्ता ने दोनों उत्पाद संयोजनों को सामान श्रेणीक्रम आवंटित किया है। अतः उपभोक्ता का स्वाद (चयन, इक्ठ्ठा) वर्ग एवं उदासीनता के विचारों के साथ वर्णित किया जा सकता है। यदि वह दो उत्पादों अथवा वस्तुओं के संयोजनों में से चयन कर सकता है, वह एक को दूसरे पर सदैव वरीयता प्रदान करता है, अथवा वह उदासीन रहता है इसलिए एकमात्र मान्यता यह है कि उपभोक्ता या तो वरीयता प्रदान करता है (पसंद करता है) अथवा उदासीन रहता है।

3. बाजार के विषय में पूर्ण जानकारी (ज्ञान)

उदासीनता – वक्र विश्लेषण में यह माना जाता है, कि उपभोक्ता अपने उपभोग निर्णय से संबंधित समस्त विषयों का पूर्ण ज्ञान रखता है। उदाहरणार्थ वह बाजार में उपलब्ध वस्तुओं एवं सेवाओं की संपूर्ण सीमा/क्षेत्र (प्रकार) का पूर्ण ज्ञान रखता है। वह अपनी इच्छाओं को संतुष्टि प्रदान करने की प्रत्येक वस्तु की तकनीकी क्षमता को भी जानता है। वह विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं के मूल्यों की भी जानकारी रखता है।

4. वस्तुओं के संयोजन के प्रति सरिता (पसंदगी)

उदासीनता–वक्र विश्लेषण इस मान्यता पर आधारित है कि एक समय विशेष पर, (तथा उपयोगिता विश्लेषण द्वारा कथित/निष्कासित) उपभोक्ता किसी एक वस्तु के प्रति रुचि नहीं रखता वरन् वह उत्पादन एवं सेवाओं के संयोजन के प्रति रुचि रखता है वह एक संयोजन विषय से प्राप्त संतुष्टि/संतोष कि दूसरे संयोजन द्वारा प्राप्त संतुष्टि से तुलना करने में सक्षम होता है।

5. विवेक पूर्ण व्यवहार

विश्लेषण यह मान्यता रखता है कि उपभोक्ता विवेक पूर्ण व्यवहार करता है या वर्णित करता है कि यदि एक उपभोक्ता वस्तुओं के एक संयोजन को दूसरे संयोजन पर वरीयता प्रदान करता है तो वह अन्य समय पर दूसरे संयोजनों को कभी भी पहले संयोजन परिवर्तन नहीं प्रदान करेगा वह अपने व्यवहार में स्थिर रहता है।

6. प्रतिस्थापना की आसमान सीमांत दर

यह माना गया है कि दूसरे उत्पाद वस्तु के लिए एक उत्पाद वस्तु के प्रतिस्थापन की सीमांत दर सदैव घटती हुई घट रही होती है

5.5 प्रतिस्थापन की सीमांत दर

डॉक्टर जे. आर. हिक्स एवं प्रोफेसर आर. जी.डी. एलन ने हसामान सीमांत उपयोगिता का स्थान लेने के लिए प्रतिस्थापन की सीमांत दर का सिद्धांत प्रतिपादित (प्रस्तुत किया) किया। हिक्स एवं एलन का मत है कि यह अनावश्यक है कि किसी उत्पाद (वस्तु) की उपयोगिता का मापन किया जाये।

उदाहरणार्थ दो वस्तुएं x व y है, जो एक दूसरे की पूर्ण प्रतिस्थापित (स्थापना पत्र) नहीं है । उपभोक्ता वस्तु X को y के लिए विनमय करने को तैयार है। वस्तुओं की एक इकाई के लिए y वस्तु की कितनी इकाई देनी चाहिए जिनसे की संतोष (संतुष्टि) स्तर वही (समान) बनाए रहे।

y के लिए X की प्रत्यय स्थापना की सीमांत दर m r s xy को y की उच्च मात्रा जोकि उपभोक्ता X की एक अतिरिक्त इकाई को प्राप्त करने हेतु त्यागने (देन) की इच्छा रखता है तथा फिर भी सामान उदासीनता वक्र में बना रहता है। अन्य शब्दों में y के लिए X की प्रतिस्थापना की सीमांत दर y की उन इकाइयों की मात्रा का मापन करता है जो x इकाई को प्राप्त करने हेतु त्याग की जानी चाहिए जिससे की संतुष्टी का समान (स्थिर) स्तर बना रहे।

प्रतिस्थापन की सीमांत दर को इस प्रकार भी पर परिभाषित किया जा सकता है, उपभोक्ता द्वारा समान ढंग से (समान रूप से, एक ही प्रकार से) मूल्यित अथवा वरीयता प्राप्त दो वस्तुओं की छोटी इकाइयों के मध्य का विनिमय अनुपात

MRS (प्रतिस्थापन की सीमांत दर को को) सूत्र के रूप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है,

$$M R S xy = Y / X$$

यहां पर यह ध्यान देना है कि प्रतिस्थापन की सीमांत दर (MRS) बाजार विनिमय दर के विपरीत उपभोक्ता की व्यक्तिगत विनिमय दर है।

MRS के सिद्धांत को निम्नलिखित अनुसूचित की सहायता से सरलता से वर्णित किया जा सकता है,

प्रतिस्थापन की सीमांत दर

संयोजन	X वस्तु (उत्पाद)	y वस्तु (उत्पाद)	y के लिये x की प्रतिस्थापन की सीमांत दर
1	1	13	—
2	2	9	4:1
3	3	6	3:1
4	4	4	2:1
5	5	3	1:1

उपरोक्त सारणी में वस्तु x एवं y के समस्त पाँचो और संयोजन उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्रदान कर रहे है। यदि वह प्रथम संयोजन को चुनता है तो वह X की तथा y की 13 इकाई प्राप्त करता है। द्वितीय संयोजन में वह x की एक और (अधिक) इकाई प्राप्त करता है। तथा y की चार इकाई प्राप्त त्यागने (देने) को तैयार है जिससे कि समान संतुष्टि अस्तर बना रहे। इसलिए MRSs प्रतिस्थापन की सीमांत दर 4:1 हैं तृतीय संयोजन में उपभोक्ता X की एक और इकाई प्राप्त करने हेतु Y की केवल तीन इकाई त्यागने का इच्छुक हैं। इस दशा में MRSs (प्रतिस्थापन की सीमांत दर) 3:1 है। इसी प्रकार जब

उपभोक्ता चौथे संयोजन से पांचवें संयोजन की ओर बढ़ता है तो Y के लिए X की प्रतिस्थापन की सीमांत दर घटकर गिरकर 1:1 रह जाती है। या प्रतिस्थापन की हवामान गिरती हुई सीमांत दर को दर्शाता है।

<u>प्रतिस्थापन की असमान गिरती हुई सीमांत दर</u>

उपरोक्त अनुसूचित में हमने देखा कि जैसे जैसे उपभोक्ता प्रथम संयोजन से पंचम संयोजन की ओर बढ़ता है वह वस्तु के लिए एक वस्तु के प्रतिस्थापन की सीमांत दर गिरती है कम होना जाती है अन्य शब्दों में जैसे–जैसे उपभोक्ता एक्स वाई वस्तु की अधिक इकाई रख लेता है वैसे वैसे वह y की न्यूनतम इकाई छोड़ने को तैयार होता है उदाहरणार्थ द्वितीय संयोजन में x वस्तु की एक और इकाई हेतु y वस्तु की 4 इकाइयां त्यागने को तैयार है, जबकि पाँचवें संयोजन में वह x की और इकाई प्राप्त करने हेतु y की केवल 1 इकाई देने को तैयार होता है। यह व्यवहार गिरती हुयी (ह्रासमान प्रतिस्थापन की सीमॉत दर) MRS को दर्शाता है तथा फिर भी (तथापि) समान संतुष्टि स्तर प्राप्त किये रहना (बने रहना) प्रतिस्थापन की गिरती हुई (ह्रासमान) सीमांत दर कहलाता है।

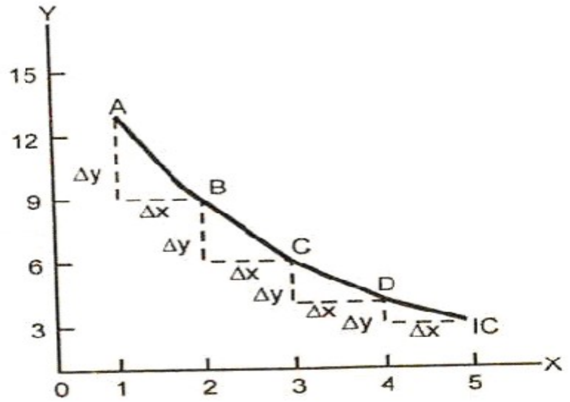

Fig.5.2

चित्रं संख्या – 5.2

चित्र 5.2 (उपरोक्त) उपभोक्ता जैसे – जैसे नीचे, संयोजन 1 से संयोजन 2 की और बढ़ता है वह x की एक अतिरिक्त इकाई प्राप्त करने हेतु डेल्टा (Δx) y वस्तु की (ΔY) 4 इकाई देने को तैयार होता है जैसे जैसे उपभोक्ता संयोजन 2 3 4 से नीचे सकता है (ΔY) की दिशा विमा छोटी होती जाती है जबकि Δx की दिशा उतनी ही बनी रहती है या दर्शाता है कि जैसे जैसे उपभोक्ता का x वस्तु का स्कंद (स्टॉक/ मात्रा) बढ़ता है उसके Y वस्तु के स्टॉक्स का मात्रा घटती जाती हैं। अतः अब वह x की एक अतिरिक्त इकाई प्राप्त करने हेतु y की कम (अल्प) इकाई देना चाहता है। अन्य शब्दों में जैसे ही उपभोक्ता वस्तु X की अधिक इकाई तथा y वस्तु की कम (अल्प) इकाई रखता है, y वस्तु के लिए x की प्रतिस्थापन की सीमांत दर गिरती है। वह एक वस्तु की दूसरी वस्तु के लिए तपृणात्मक एवं असमान प्रतिस्थापन दर को दर्शाता है।

5.6 उदासीनता –वक्र के गुण

1. **उदासीनता वक्र दायें ओर नीचे की ओर झुकता (गिरता है) है,**

उदासीनता वक्र के नकारात्मक ढाल (झुकाव) से ऑशय यह है, कि प्रत्येक उदासीनता वक्र बायें से दायें नीचे की ओ गिरता है (जैसा कि चित्र संख्या 5 में दिखाया गया है) 1 नकारात्मक ढलान (ढाल) यह बताता है, कि यदि उपभोक्ता संतुष्टिका समान स्तर बनाये रहना चाहता है तो एक वस्तु को स्कंध (स्टाक) में वृद्धि करनें हेतु उस अन्य (दुसरी) वस्तु की कुछ इकाइयों का त्याग करना होगा।

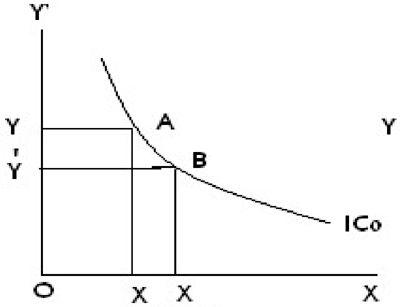

Fig.5.3(a)

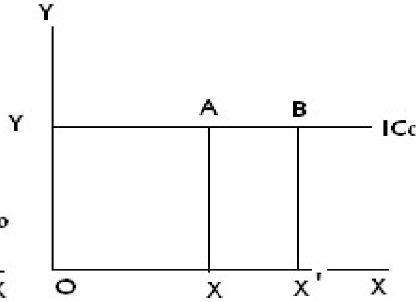

Fig.5.3 (b)

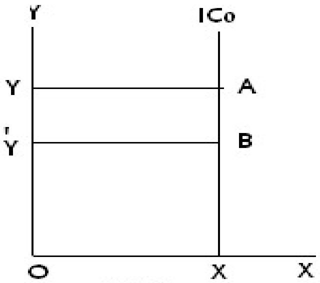

5.3 (c)

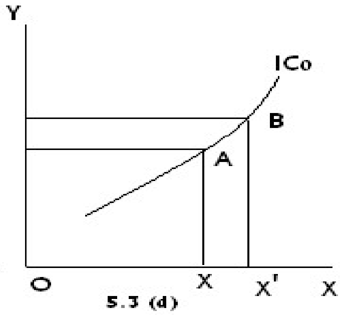

5.3 (d)

कल्पना कीजिये कि उदासीनता वक्र एक श्रैतिज रेखा है, (चित्र 5.3) (बी) में प्रदर्शित) यह स्थिति बताती है, कि जैसे – जैसे उपभोक्ता A बिन्दु B की ओर बढ़ता है, वृद्धि (बढ़ता) होती है।

उदासीनता वक्र को बायें से दायें झुका हुआ (ढाल लेता हुआ/गिरता हुआ) होना चाहिये । इसका अर्थ यह है कि उदासीनता –वक्र ऋणात्मक ढलान रखता है।

यह नीचे की ओर इसलिए गिरता (झुकता है) क्यों कि जैसे – जैसे उपभोक्ता X वस्तु का उपयोग करता है, उसे संतुष्टि का सामानस्तर बनाए रखने हेतु y वस्तु की कुछ इकाइयों का त्याग करना होगा।

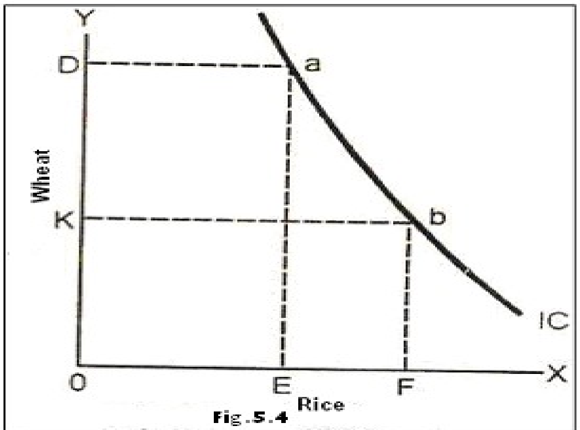

Fig.5.4

चित्र 5.4 समान उदासीनता वक्र पर बिंदु b व a द्वारा दो वस्तुओं चावल एवं गेहूं के दो संयंत्रों को दर्शाता है। उपभोक्ता बिंदु a एवं b के प्रति उदासीन है । अतः वह समान संतुलित स्तर को निरूपित करते हैं। उदासीनता वक्र के बिंदु a उपभोक्ता चावल कि OE इकाईयों तथा गेहूं की OD इकाइयों से संतुष्ट है। वह उदासीनता वक्र के बिंदु b पर चावल की OF इकाइयों एवं गेहूं की OK इकाइयों से समान रुप से संतुष्ट है। यह केवल एक त्रपृणात्मक (नकारात्मक) ढाल वक्र पर ही संभव है, जहां विभिन्न बिंदु X एवं y वस्तुओं के विभित्र संयोजनों को निरूपित कर रहे है जो कि उपभोक्ता को उदासीन बनाने हेतु सामान संतुष्ट अस्तर को प्रदर्शित कर रहे हैं।

2. <u>उदासीनता वक्र एक दूसरे को प्रतिच्छेदित (काटते) नहीं करते हैं</u>

उदासीनता वक्र की परिभाषा एवं मान्यताएं दी गई है। उदासीनता वक्र एक दूसरे को प्रतीक्षेत नहीं करते क्योंकि स्पर्श बिंदु पर उच्च वर्क उतना ही अधिक देना जितना दो वस्तुओं निम्न उदासीनता वक्र पर दी है। चित्र में दो उदासीनता वक्र बिंदु B पर एक दूसरे को काटते दिखाई दे रहे हैं। बिंदु b.एवं F द्वारा निरुपित संयोजन उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्रदान करते हैं, क्योंकि दोनों सामान उदासीनता वक्र IC_2 पर स्थित है। इसी प्रकार बिन्दु B एवं E के द्वारा प्रदर्शित संयोजनों उपभोक्ता तथा को सामान संतुष्टि प्रदान करते हैं, क्योंकि वह समान उदासीनता – वक्र IC_1 पर स्थित होते हैं।

यदि संयोजनों F संयोजन B संतुष्टि के पदों में बराबर है, तथा संयोजन E संतुष्टि में संयोजन B के बराबर है तब इस दशा में संयोजन F संतुष्टि के पदों में संयोजन E के बराबर होगा या निरर्थक एवं असंभव है। अतः यह कहा जा सकता है कि उदासीनता वक्र एक दूसरे को प्रतिच्छेदित नहीं करते हैं।

3. <u>उदासीनता – वक्र आरंभ (उत्पत्ति /मूल्य) पर उत्तल होते हैं;</u>

यह उदासीनता वक्र का एक प्रमुख (महत्वपूर्ण) गुण है। ये मूल पर उत्तल होते हैं। उत्तलता बताती है, कि जैसे हम वक्त के साथ साथ (एक और से दूसरी ओर) बाएं से नीचे की ओर दाएं को बढ़ते हैं उदासीनता वक्र घटता जाता है। यह यह भी वर्णित करता है, कि जैसे जैसे उपभोक्ता एक वस्तु को दूसरी वस्तु से प्रतिस्थापित करता है वस्तुओं की प्रतिस्थापना की सीमांत दर उदासीनता वक्र के एक ओर से दूसरी ओर साथ – साथ घटती (गिरती जाती) जाती है।

वक्र का ऊपरी छोर y वस्तु की अधिक मात्रा तथा सापेक्षिक रूप से X की अल्प (कम) मात्रा को दर्शाता है। यदि उपभोक्ता X प्राप्त करता है, तो वह समान संतुष्टि स्तर बनाए रखने हेतु y की अधिक मात्रा त्यागने को तैयार (नीचे की भांति) है। किंतु नीचे निम्न छोड़कर (वक्र के नियम छोर पर) y की सपेक्षिक रूप से अल्प–मात्रा है एवं X की अधिक मात्रा है। अगर उपभोक्ता नीचे की ओर आता है, तो वह x_2 को y की अल्प मात्रा के बदले में प्राप्त करता है, उपभोक्ता Y_2 को सामान संतुष्टि अस्तर पर बनाएं रहने हेतु Y_2 को त्याग करेगा। इस प्रकार उदासीनता वक्र की उत्तल आकृति X को प्राप्त करने हेतु y को त्यागने की उपभोक्ता की भावना में अंतर को परावर्तित करता है। यह इस पर निर्भर करता है, कि कितने X एवं y उपभोक्ता द्वारा उपयोग में लाए जा चुके हैं। इस चित्र 5.5 में उपभोक्ता x से B, C, D की ओर आगे बढ़ता है, y वस्तु को लिए x को प्रतिस्थापित (स्थापनापत्र) करने की इच्छा गिरती (कम होती जाती) है। इसका अर्थ यह है, कि जैसे जैसे X वस्तु की मात्रा समान मात्रा में बढ़ती है, y छोटे (अल्प) मात्रा में गिरता है। y के लिए X की प्रतिस्थापन की सीमांत दर x वस्तु की एक सीमांत इकाई को प्राप्त करने के लिए y को त्यागने की इच्छा है IC (उदासीनता) वक्र का ढाल ऋणात्मक होता है। यह आरंभ (उत्पत्ति) पर उत्तल होता है।

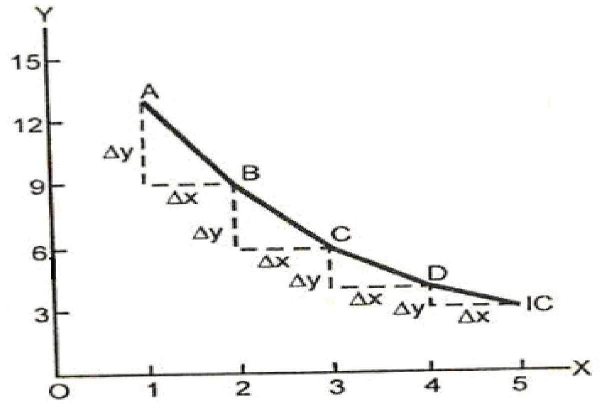

Fig.5.6

4. **उदासीनता – वक्र उच्च संतुष्टि स्तर को दर्शाता है,**

कुछ उदासीनता वक्र जो एक अन्य उदासीनता वक्र के ऊपर दाएं और स्थित होता है उचित संतुष्टि अस्तर को दर्शाता है तथा निम्न उदासीनता वक्र पर स्थित संयोजन निम्न संतुष्टि को उत्पन्न करता (उपजता) है। अन्य शब्दों में एक ग्राहक निम्नलिखित उदासीनता वक्र पर स्थित संयोजन को इन वस्तुओं के संयोजन को वरीयता प्रदान करेगा जो की उदासीनता वक्र पर स्थित हो।

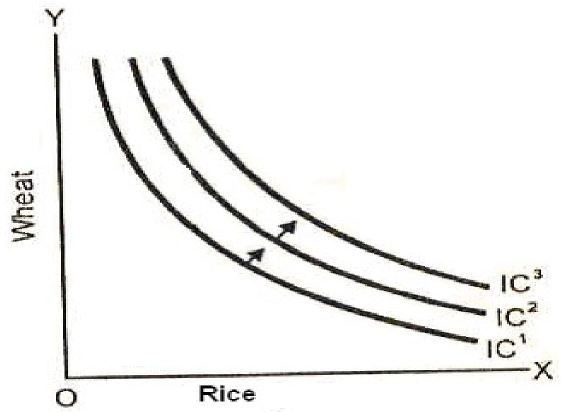

Fig.5.7

चित्र संख्या 5.7 में उदासीनता वक्र Ic^1, Ic^2 तथा Ic^3 है जो विभिन्न संतुष्टि अस्तर को निरूपित करते हैं। उदासीनता वक्र Ic^3 संतुष्टि की अधिक मात्रा को दर्शाता है तथा यह Ic^2 एवं Ic^1 की अपेक्षा दोनों वस्तुओं की अधिक मात्रा रखता है तथा IC^1 ($IC^3 > IC^2 > IC^1$ होते है।

5. **उदासीनता वक्र क्षैतिज अथवा उर्ध्व रेखा को स्पर्श नहीं करते ,**

उदासीनता वक्र की एक अन्य मूलभूत मान्यता यह है कि उपभोक्ता विभिन्न वस्तुओं के संयोजनों को क्रय करते हैं वह एक वस्तु नहीं क्रय करते हैं इस दशा में उदासीनता वक्र एक पक्ष को स्पर्श करेगा यह उदासीनता वक्र के मूलभूत सिद्धांत का उल्लंघन करता है।

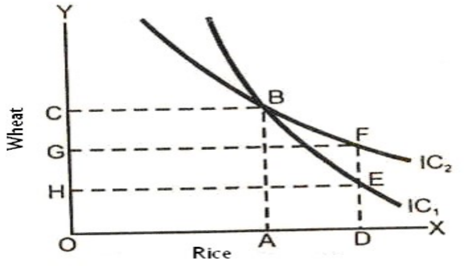

Fig.5.8

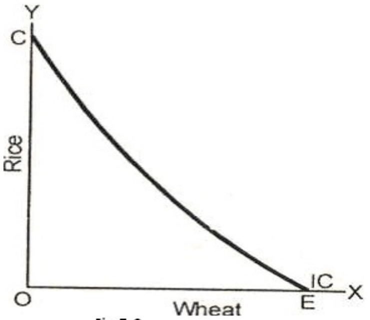

Fig.5.9

चित्र संख्या 5.8 दर्शाता है की उदासीनता वक्र IC Y अक्ष को c बिंदु पर तथा x को E बिंदु पर स्पर्श करता है। C बिंदु पर उपभोक्ता चावल की oc मात्रा तथा गेहूं की कोई मात्रा नहीं क्रय करता है, इस प्रकार E बिंदु पर वह गेहूं की OE मात्रा तथा चावल की कोई मात्रा नहीं खरीदता है। इस प्रकार के (ये) उदासीनता वक्र हमारी मूलभूत मान्यताओं के विरूद्ध है। हमारी मूलभूत मान्यता यह है, कि उपभोक्ता दो वस्तुये संयोजन में क्रय करता है ।

5.7 बजट रेखा अथवा मूल्य रेखा

उदासीनता – मानचित्र मॅहज दो बिंदुओं के विविध संयोजन के अल्पकालीन श्रेणी अल्पकालिक खेड़ी को प्रदान करता है महज उदासीनता वक्र के स्थान पर उपभोक्ता वस्तुओं (उत्पादों) के बंडल (गुच्छे/ समूह) को क्रय

करने में असमर्थ होता है। उदासीनता वक्र उपभोक्ता से या नहीं पूछता कि कौन सा संयोजन उसके पैसे के लिए उसे अधिकतम और अधिक संतुष्टि प्रदान करेगी । उपभोक्ता व्यवहार के अध्ययन एवं पूर्ण भविष्यवाणी हेतु उपभोक्ता के सुप्रसिद्ध वरीयता पद्धति प्रणाली विधि के अतिरिक्त उपभोक्ता की आय एवं वस्तुओं के मूल्य आवश्यक महत्वपूर्ण सूचनाएं है उपभोक्ता संतुलन को जानने हेतु बजट रेखा की संकल्पना (सिद्धांत) को समझना आवश्यक है।

''एक बजट रेखा अथवा मूल्य रेखा दो वस्तुओं के विभिन्न संयोजन को निरूपित करती है जिने एक निर्देशित मौद्रिक आय तथा वस्तुओं की मानी गई कीमत (माने ,मान लीजिए गए मूल्य) पर क्रय किया जा सकता है।

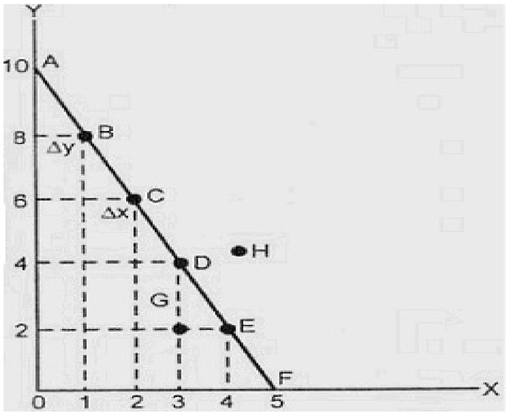

Fig.5.10

चित्र 5.10 में AF रेखा वस्तुओं के विविध (विभित्र) संयोजनों को दर्शाती है, जो उपभोक्ता क्रय कर सकता है। इस लाइन (रेखा) को बजट रेखा (बजट लाइन) कहा जाता है । बजट रेखा बिस्किट एवं कॉफी के 6 संभावित (सम्भाव्य/संभव) संयोजनों को दर्शाती है जो उपभोक्ता साप्ताहिक रूप से (एक सप्ताह में) क्रय कर सकता है। इन संयोजनों को बिंदु a b c d e और f द्वारा इंगित किया गया है। बिन्दु ˙ इंगित करता है, कि यदि संपूर्ण रू 100 की आए बिस्कुट पर खर्च की जाए तो 10 इकाई बिस्किट को क्रय किया जा सकता है। इसी प्रकार बिंदु f दर्शाता है, कि यदि पूरे रु 100 कॉफी पर व्यय किये जाये तो 5 इकाई कॉफी क्रय की जा सकती है। अर्थात रु 100 खर्च करने पर एक सप्ताह में 10 इकाई बिस्किट अथवा 5 इकाई कॉफी क्रय की जा सकती है। बजट रेखा AF चाय एवं बिस्किट के उन समस्त संयोजनों को इंगित करती है, जो उपभोक्ता दिए गए मूल्यो एवं आय पर क्रय कर सकता है। उस दशा में जब एक उपभोक्ता अपनी बजट रेखा के अंतर्गत (भीतर) यथा G पर वस्तुओं के संयोजन को क्रय करना चाहता है, तब यह रू 100 (प्रति सप्ताह) से न्यून (अल्प / कम) व्यय (लागत/ परिव्यय/ खर्च) को सम्मिलित करती है। बजट रेखा के बाहर (परे/पार) के किसी बिंदु यथा h हेतु उपभोक्ता की साप्ताहिक आय रू100 से अधिक होना आवश्यक है।

बजट रेखा की ढाल इंगित करती है, कि कॉफी की एक और इकाई को क्रय करने हेतु उपभोक्ता को बिस्किट की कितनी इकाइयां त्यागनी होगी। उदाहरणार्थ बजट रेखा के बिंदु B पर ढाल (झुकाव/ढलान) पर $\Delta Y / \Delta x$

अथवा बिस्किट की 2 इकाई = काफी की 1 इकाई। यह संकेत करता है, कि B से C की ओर प्रचलन (बढ़ना) में कॉफी की 1 अतिरिक्त इकाई को प्राप्त करने हेतु बिस्किट की 2 इकाइयों का त्याग सम्मिलित है। क्योंकि (चूँकि) बजट रेखा सीधी है, तो बजट रेखा के साथ साथ बजट रेखा के एक ओर से दूसरी ओर ढाल सभी बिंदुओं पर स्थिर, बिस्किट की 2 इकाई = 1 प्रति इकाई कॉफी की मात्रा है।

बजट रेखा में स्थांतरण (परिवर्तन /खिसकना)

मूल्य रेखा का निर्धारण उपभोक्ता की आय तथा वस्तुओं के बाजार में मूल्य के द्वारा होता है। यदि उपभोक्ता की आय अथवा वस्तुओं के मूल्य में कोई परिवर्तन होता है, तो मूल्य रेखा इन दो साधनों (घटकों) के विनिमय की प्रतिक्रिया में परिवर्तित होता है।

1. **उपभोक्ता की आय में परिवर्तन**

जब उपभोक्ता की आय में परिवर्तन होता है, तो वस्तु के मूल्य वही (समान) रहते हैं, मूल्य रेखा मूल्य स्थिति से खिसकती (परिवर्तित) है। आय में वृद्धि के साथ यह ऊपर की ओर अथवा समाँतर स्थिति में दाएं हाथ की ओर खिसकता है। आय स्तर में गिरावट होने पर वस्तुओं का मूल्य अपरिवर्तित रहता है, मूल्य रेखा मूल स्थिति से बाएं ओर खिसकती है। अधिक आय के साथ उपभोक्ता पहले की अपेक्षा दोनों वस्तुओं की अधिक मात्रा क्रय कर सकता है, किंतु दूसरे वस्तु के पदों में एक वस्तु की लागत वही (समान) रहती है। चित्र 5.11 आय में वृद्धि के फलस्वरूप बजट रेखा के ऊपर की ओर परिवर्तन को दिखाता है। फलतः बजट रेखा L' M' से L_2 M_2 को खिसकती है। उपभोक्ता वस्तु A एवं B को और अधिक क्रय करने में सक्षम होता है।

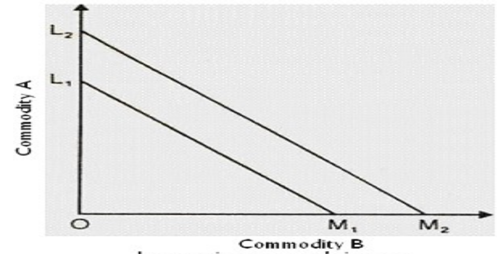

Commodity B
Increase in consumer's income prices remaining the same
Fig.5.11

2. **मूल्य में परिवर्तन**

आइए अब विचार करें की एक वस्तु के मूल्य में परिवर्तन होता है। इस दशा में उपभोक्ता की आय एवं अन्य (दूसरी) वस्तु का मूल्य स्थिर रहता है। जब वस्तु A (एक वस्तु) के मूल्य में गिरावट आती है, तो उपभोक्ता उसी वस्तु की, पूर्व की अपेक्षा, अधिक मात्रायें खरीदता है। मूल्य में परिवर्तन बजट रेखा के बिंदु L पर चक्रण (घूमने) का कारण होता है।

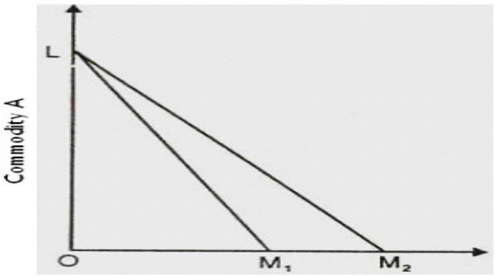

Change in Price of commodity A only with given income
Fig.5.12

यह और सपाट हो जाता है तथा एक नई बजट रेखा (Lm’ से Lm_2) देता है। सपाट बजट रेखा से आशय यह है, कि क्षैतिज अक्ष पर ˙ वस्तु का सापेक्षिक मूल्य कम होता है। यदि a वस्तु के क्रय पर अधिक राशि खर्च की जाती है तब उपभोक्ता a वस्तु की अधिक मात्रा om_2 खरीद सकता है।

5.8 उपभोक्ता साम्य (संतुलन)

एक उपभोक्ता साम्यावस्था (संतुलन) की अवस्था में तब होता है जब वह अपने सीमित मौद्रिक आय एवं वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्दिष्ट (दिए गए) मूल्य पर अपनी संतुष्टि को अधिकतम करता है।

जहाँ पर उदासीनता वक्र का ढाल तथा बजट व्यवरोध का ढाल बराबर होते है वहीं पर उपभोक्ता संतुलन (साम्य) होता (प्राप्त होता) है। गणितीय रूप से यह वहाँ होता है जहाँ $MRS=P_2/P_1$ । यह साम्य (संतुलन) बिंदु होता हैं क्योंकि इस बिंदु दूर (आगे) बढ़ने का कोई कारण नहीं होता है। प्रतिस्थापन की सीमांत दर को सीमांत लाभ अनुपात के रूप में भी माना (विचारित) किया जा सकता है, जो प्रत्येक वस्तु हमारे उपभोक्ता को प्रदान करती है। इसलिए इस निश्चय में साम्य (संतुलन) में दो वस्तुओं के लिए सीमांत– लाभ को उनके सीमांत–लागत के बराबर करना सम्मिलित होता है।

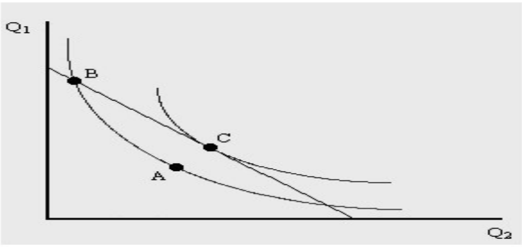

Fig.5.13

चित्र 5.13 द्वारा उपभोक्ता सामने संतुलन को दर्शाया गया है, यदि साम्यावस्था (संतुलन) है तो उसे जानने (प्राप्त करने हेतु) हेतु हम देखना चाहते है, कि यदि वहां कोई एक बिंदु है जो सदैव अन्य बिंदुओं पर वरीयता प्राप्त करता है। हम किसी एक विशिष्ट बिंदु से आरंभ कर सकते हैं। हम जो चुनते हैं वह महत्वपूर्ण नहीं है। बातों (चीजों) को सफल बनाने हेतु हम यह मान ले हैं, कि हमारा उपभोक्ता अपनी समस्या इन दो वस्तुओं पर खर्च (व्यय) करता है। B बिंदु से प्रारंभ करते हैं। जो बजट–व्यवराध के सबसे ऊपर (शिखर) पर है। हमारे उपरोक्त विमर्श पर आधारित हम जानते हैं, कि बिंदु A एवं बिंदु B उस उपभोक्ता को समान संतुष्टि स्तर प्रदान करते हैं। इस प्रकार उपभोक्ता A एवं

B बिन्दु के मध्य उदासीन है। उपभोक्ता संतुलन (साम्य) वस्तुओं एवं सेवाओं की उस मात्रा से संबंधित है जो कि उपभोक्ता बाजार में उस वस्तु के मूल्य पर अपने निर्धारित आय के द्वारा खरीद (क्रय) कर सकता है। उपभोक्ता का लक्ष्य (उद्देश्य) अपनी मौद्धिक आय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करना होता है। दिए हुए (दिये गये) मूल्य–रेखा एवं उदासीनता वक्र पर उपभोक्ता उस बिंदु पर संतुलन (साम्यावस्था) में कहा जा सकता है, जहां मूल्य–रेखा सर्वाधिक प्राप्त करने योग्य उदासीनता वक्र को नीचे से स्पर्श करती (स्पर्शज्या) है। इस प्रकार उदासीनता–वर्क विश्लेषण के अंतर्गत उपभोक्ता साम्य (संतुलन) हेतु निम्नलिखित शर्तें (दशाएं) अवश्य पूर्ण की जानी चाहिए।

1. दी गई (निर्दिष्ट) मूल्य–रेखा उदासीनता वक्र की र्स्पशज्या (स्पर्शी) होनी चाहिए अथवा y वस्तु हेतु x वस्तु की प्रतिस्थापन की सीमाँत दर, दो वस्तुओं के मूल्य अनुपात के बराबर होनी चाहिए,

$$MRS_{xy} = P_x / P_y$$

2.1 द्वितिय क्रम दशा (शर्तें) यह है, की उदासीनता वक्र स्पर्शी बिंदु पर आरंभ से (उत्पत्ति /प्रारंभ) उत्तल होना चाहिए ।

आय प्रभाव

उपभोक्ता संतुलन (साम्य) विश्लेषण पूर्व में विचारित (मान लेती) कर लेती है , कि x एवं y वस्तुओं के मूल्य तथा उपभोक्ता की आय स्थिर रहती है। अब हम परीक्षण करेंगे कि उपभोक्ता की क्रय करने का व्यवहार किस प्रकार का होता है जबकि उसकी आए परिवर्तित होती है। आय एक अति महत्वपूर्ण व प्रमुख घटक जो वस्तुओं की खरीद (क्रय) को प्रभावित करता है । यदि वस्तुओं के मूल्य उपभोक्ताओं की पसंद, रुचि, स्थिर रहती है (अपरिवर्तित) तथा उपभोक्ता की आय में परिवर्तन होता है यह उपभोक्ता की मांग को प्रत्यक्षता प्रभावित करेगा ।

उपभोक्ता की आय में वृद्धि मूल्य रेखा (बजट रेखा) को दाई ओर ऊपर की ओर खिसकाती है तथा उपभोक्ता सामान्यता (संतुलन) के उच्च बिंदु को प्राप्त करता है । इसी प्रकार आय में कमी (घटोत्तरी) मूल्य रेखा को नीचे की ओर बायें खिसकाती है तथा उपभोक्ता संतुलन के निम्न बिंदुओं को प्राप्त करता है । उपभोक्ता की आय में होने वाले इन परिवर्तनों को उपभोक्ता की बजट रेखा में समाँतर ऊपर की ओर अथवा नीचे की ओर खिसकाव द्वारा अभिव्यक्त (निश्चित/प्रदर्शित) किया गया है। जैसे–जैसे आय परिवर्तित होती है, एक नवीन साम्यतस्ता (संतुलन अवस्था) स्थापित होती है ,तथा उपभोक्ता एक साम्य बिंदु से दूसरे साम्य बिंदु की ओर अग्रसर (बढ़ता) होता है।ये हलचल उपभोग टोकरी में होने वाले उतार–चढ़ाव को दर्शाते है। इसे आय प्रभाव के नाम से जाना जाता है।

आय प्रभाव को निम्नलिखित रेखा चित्र के माध्यम से वर्णित किया जा सकता है,

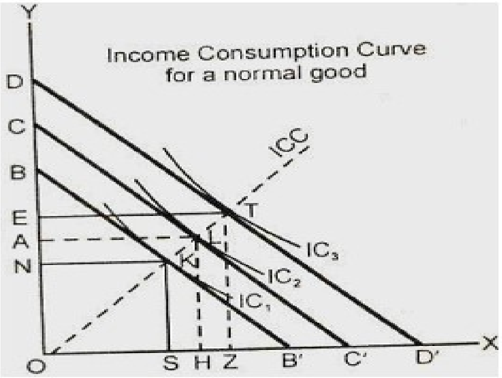

चित्र संख्या 5.14 आय उपभोग वक्र

चित्र 5.14 में x ox के साथ साथ (एक और से दूसरी ओर) तथा y oy के साथ साथ मापा गया है। जब मूल्य रेखा बजट रेखा bb होती है, उपभोक्ता k बिंदु पर संतुलन (साम्यावस्था) में होता है, जहां यह उदासीनता वक्र पब को स्पर्श करता है। उपभोक्ता x की os मात्रा तथा y की on मात्रा खरीदता है । अब हम मानते हैं, (कल्पना करते हैं)कि उपभोक्ता की आय बढ गयी है, तथा नवीन मूल्य रेखा cc है, जो दाएं ओर सामान रुचि (फैशन) में खिसकता है। उपभोक्ता L बिंदु के एक स्तर पर साम्यावस्था (संतुलन) में होता है, जो कि इसका संतुलन बिंदु होता है। यदि आय में आगे और वृद्धि होती है, तो नई मूल्य रेखा dd होगी तथा उपभोक्ता T बिंदु पर संतुलन अवस्था में होगा तथा अब वह x की oz मात्रा तथा y की oe मात्रा खरीदेगा।

यदि इन साम्य बिंदुओं (संतुलन बिंदुओं) K,L,T को एक साथ उत्पत्ति (आरंभ बिंदु) से गुजरने वाली बिंदुओं से अंकित रेखा द्वारा दर्शाया जाता है तो हम एक वक्र पाते हैं जिसे आए उपभोग वक्र (icc) कहते हैं। आय उपभोग वक्र वस्तु स्थल में बिंदु स्थान (बिंदु स्थान) है जो स्थिर मुद्दा मूल्यों के लिए विभिन्न मुद्दों स्तरों के साथ संयुक्त (संबंध) संतुलित वस्तु गठरी (बंडल) को दर्शाता है। सामान्य वस्तुओं की दशा में आए प्रभाव घनात्मक होती है।

आय उपभोग वक्र एवं वस्तु की प्रकृति

आय में परिवर्तन का प्रभाव विभिन्न प्रकार की वस्तुओं पर भिन्न भिन्न होता है। यह धनात्मक ऋणात्मक अथवा उदासीन (तटस्थ) हो सकता है । वास्तव में प्रभाव धनात्मक होगा अथवा ऋणात्मक यह वस्तु तय (निर्धारित) करता है। सामान्य (साधारण) वस्तुओं की दशा में आय प्रभाव धनात्मक तथा निम्न कोटि की वस्तुओं की दशा में आय प्रभाव ऋणात्मक होता है।

निम्न कोटि की वस्तुएं वह वस्तुएं होती हैं, जिनकी मांग आए के व्युत्क्रमानुपाती होती है, अर्थात आए में विभिन्न वृद्धि होने पर इन वस्तुओं की मांग घट जाती है तथा आय में कमी होने पर इन वस्तुओं की मांग बढ़ जाती है। चित्र 5.15 निम्न कोटि की वस्तुओं की दशा में आए प्रभाव को स्पष्टतः प्रदर्शित करता है। चित्र 5.15 (a) मे X एक निम्न कोटि की वस्तु है, इसका उपयोग उपभोक्ता की आय बढ़ने पर घट रहा है। इसी प्रकार चित्र 5.16 में y एक निम्न कोटि

की वस्तु है तथा उपभोक्ता की आय बढ़ने के साथ ही इसका उपयोग घटता है।

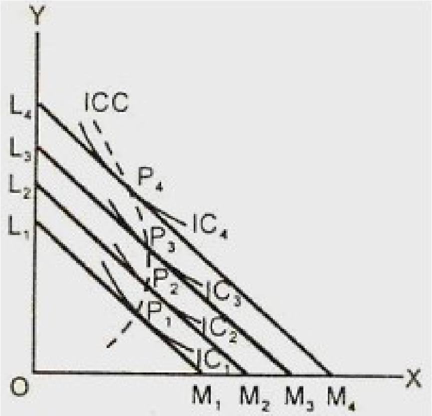

चित्र संख्या 5.15

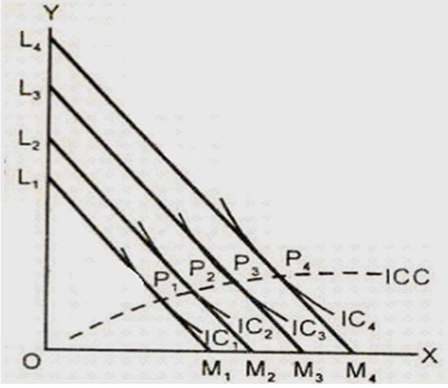

चित्र संख्या 5.16

इस प्रकार वस्तु के उपयोग पर धनात्मक अथवा ऋणात्मक प्रभाव यह निर्धारित करता है, कि वस्तु सामान्य कोटि की है अथवा निम्नकोटि कि यदि आय प्रभाव धनात्मक है तो वस्तु सामान्य कोटि की है तथा यदि यह नकारात्मक वर्णात्मक है तो वस्तु निम्न कोटि की मानी जाएगी। इस प्रकार आय उपभोग वक्र वस्तु की प्रकृति के आधार पर विभिन्न आकृति ले सकता है।

मूल्य प्रभाव

अब हम वस्तु के मूल्य में परिवर्तन पर उपभोक्ताओं की प्रतिक्रिया पर विमर्श करेंगे जबकि उनकी आय, पसंद, रुचि तथा अन्य वस्तुओं के मूल्य अपरिवर्तित रहते हैं। किसी वस्तुओं के मूल्य में परिवर्तन महज उपभोक्ताओं को वस्तु की अधिकाय अल्प मात्रा खरीदने को ही प्रेरित नहीं करते क्योंकि सापेक्षिक मूल्य परिवर्तित हो गए हैं, वरन् यह मूल्य में परिवर्तन के आय प्रभाव के द्वारा वस्तु की मांग को प्रभावित करते हैं। जब किसी वस्तु का मूल्य परिवर्तित होता है तो बजट रेखा का ढाल कर सकता कि सकता बढ़ता है। उपभोक्ता के संतुलन में भी व्यवधान होता है। एक विवेकपूर्ण उपभोक्ता अपनी संतुष्टि को अधिकतम करने के उद्देश्य से अपने उपभोग टोकरी (डलिया) को समायोजित करने का प्रयास करता है, जब एक वस्तु का मूल्य परिवर्तित होता है, उपभोक्ता अपने क्रयों के प्रति सावधान/सतर्क रहता है। वस्तु के मूल्य में

हुए परिवर्तनों के कारण वस्तु की मांग में आए परिवर्तन को मूल्य–प्रभाव कहा जाता है।

मूल्य–प्रभाव को किसी वस्तु के मूल्य में हुए परिवर्तन के कारण उसके उपयोग की मात्रा में आए परिवर्तन के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। वस्तुतः यह सापेक्षिक मूल्य सरचना होती है जो मांग को प्रभावित करती है। एक वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के प्रभाव के सर्वेक्षण के क्रम में (के लिए) हम अपने दो–वस्तु प्रतिमान को लेते हैं (साथ रखते) तथा उपभोक्ता की आए पसंद रुचि तथा अन्य वस्तु y के मूल्य को अपरिवर्तित (स्थिर) रखते हैं। चित्र संख्या 5.17 वस्तु के मूल्य के प्रति उपभोक्ता की प्रतिक्रिया (अनुक्रियाशीलता) को दर्शाता है। यह क्षैतिज अक्ष x पर दृश्यमान है तथा इसका परिणाम ही परिवर्तन दो वस्तुओं को पोटली के रूप में दृश्यमान है।

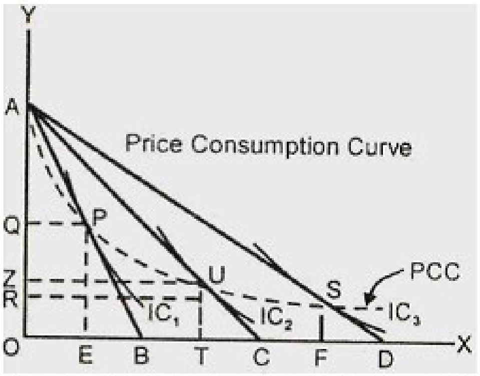

Fig.5.17 Price Consumption Curve

चित्र संख्या 5.17 में AB प्रारंभिक बजट रेखा है। यह माना कि लिया जाता है (कल्पना की गयी) है, कि X वस्तु के मूल्य गिर रहे हैं तथा उपभोक्ता की आय एवं y वस्तु के मूल्य अपरिवर्तित है। अब इस दशा में मूल्य रेखा नई स्थिति AC को प्राप्त करती है, तथा सम्मान बिंदु (संतुलन बिंदु) P से U को स्थांतरित परित्यक्ता होता है।

अब उपभोक्ता X वस्तु की OT मात्रा क्रय करता है। (मांगी गई मात्रा OE से OT तक बढ़ती है (तथा y वस्तु की OZ मात्रा क्रय करता है। X के मूल्य में उत्तर (और परिवर्तन /आगे परिवर्तन) गिरावट होने पर उपभोक्ता बिंदु S पर संतुलन समाज (साम्ययावस्था) में होता है जहां बजट रेखा AD उच्च उदासीनता वक्र ACB कि स्पर्शज्या है। अब वह X की OF मात्रा तथा ल की OR मात्रा–क्रय करता है।

X के मूल्य में परिवर्तन (गिरावट) के कारण X की खरीदी गई मात्रा में परिवर्तन (OE से OF) को मूल्य–प्रभाव कहा जाता है।

साधारण (सामान्य) वस्तु के उपभोग की दशा में मूल्य–प्रभाव ऋणात्मक होता है। यदि हम साम्य बिंदुओं PUSs को संयुग्मित करते हैं तो हम मूल्य – उपभोग वक्र (PCC),उपभोक्ता का X वस्तु के लिए, प्राप्त करते हैं। मूल्य उपभोग वक्र वस्तु क्षेत्र में बिंदुओं का स्थल (ठिकाना) है, जो मूल्य अनुपात में हुए विचलनों के फलस्वरुप प्राप्त साम्य (संतुलन) वस्तु पोटली तथा मौद्रिक आय की अपरिवर्तित स्थिति को दर्शाती है । इस प्रकार मूल्य उपभोग वक्र

(PCC) X वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के कारण उपभोग टोकरी में परिवर्तन को दर्शाता है। X की उपभोग मात्रा बढ़ती है, जिसके कारण y पहले घटता है तत्पश्चात बढ़ता है । मूल्य उपभोग वक्र उपभोक्ता द्वारा X के प्रत्येक मूल्य पर क्रय की गई मात्रा को इंगित करता है। इस प्रकार वक्र इन सूचनाओं को समाहित करता है जिनके द्वारा (जिनसे /जिनके द्वारा) उपभोक्ता के मांग वक्र को व्युत्पतित किया जा सकता है ।

X वस्तु के गिफॅन वस्तु होने की दशा में मूल्य प्रभाव

गिफॅन वस्तु निम्न कोटि की वस्तुओं का एक विशेष प्रकार है।जब किसी वस्तु के मूल्य गिरने पर उसकी मांग में गिरावट (कमी) होती है तो ऐसी वस्तुओं को गिफॅन वस्तु कहा जाता है। कभी कभार यह होता है, कि वस्तु के मूल्य में गिरावट के कारण उसकी मांग की मात्रा में गिरावट (कमी) लाती है। उपभोक्ता, अपनी मुद्रा, जो उनसे अन्य वस्तुओं की अधिक मात्रा को क्रय करने में की गयी कमी से बचायी है, को व्यय करता है। गिफॅन वस्तुओं के मूल्य में गिरावट, उपभोक्ता की आय में बढ़ोत्तरी (वृद्धि) के सामान प्रभाव रखती है। वस्तु के मूल्य में गिरावट होने पर उसकी कम मात्रा माँगने का उपभोक्ता का यह विशेष प्रकार का व्यवहार गिफॅन विरोधभास से (गिफॅन पैराडाक्स) कहलाता है।

चित्र 5.18 में गिफॅन गुड X के उपभोग पर मूल्य प्रभाव का वर्णन करता है।

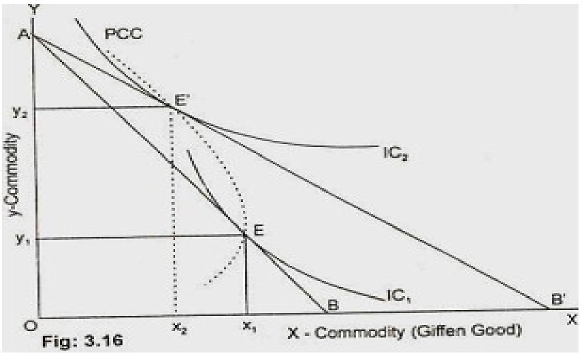

Fig.5.18

चित्र 5.18 में उपभोक्ता e बिंदु पर संतुलन (साम्य अवस्था) में है जहां बजट रेखा a ab उदासीनता वक्र ic_1 की स्पर्शज्या है। उपभोक्ता गिफॅन गुड X की वग$_1$ मात्रा तथा वस्तु y की oy_1 मात्रा क्रय करता है। जब X वस्तु के मूल्य में कमी होती है, तथा y वस्तु के मूल्य में कोई परिवर्तन नहीं होता है, तो बजट रेखा ab' उर्ध्व (ऊपर की) की ओर दिखती है। उपभोक्ता e' बिंदु पर संतुलन (साम्य) में होता है, जहां बजट रेखा b' उदासीनता वक्र ic_2 की र्स्पशी (र्स्पशज्या) है। नवीन संतुलन स्थिति में, उपभोक्ता गिफॅन गुड (वस्तु) की केवल OX_2 इकाइयों को तथा y वस्तु की oy_2 इकाइयों का क्रय करता है। हम पाते हैं, कि गिफॅन वस्तु x के मूल्य में गिरावट से इसकी क्रय की गयी मात्रा ox_1 से ox_2 को गिरती है, तथा y की माँगी गयी मात्रा oy_1 से बढ़कर oy_2 होती है। गिफॅन गुड़ (वस्तु) के उपभोग पर मूल्य प्रभाव धनात्मक होता है।
यदि वह PCC के पश्चगामी वंकन द्वारा इंगित है, x गिफॅन गुड़ है।

मूल्य प्रभाव का आय एवं प्रतिस्थापन प्रभावों में पृथवकरण हिक्स बनाम स्लॅस्की

जैसा कि पूर्व में विमर्शित है, वस्तु <u>x</u> के मूल्य में कमी इसकी माँग की मात्रा में वृद्धि करती है। हालाँकि माँगी गयी मात्रा में कुल वृद्धि मूल्यों में दिए गए परिवर्तन के प्रतिस्थापन एवं आय प्रभाव के संयुक्त क्रिया का परिणाम होती है।

इसलिए (अतः)

मूल्य प्रभाव = प्रतिस्थापन प्रभाव + आय प्रभाव

यहाँ यह जानना आवश्यक है, कि कुल आय प्रभाव कितना भाग (अंश) प्रतिस्थापन प्रभाव तथा कितना भाग आय प्रभाव योगदान किया जाता है। प्रतिस्थापन प्रभाव, उपभोक्ता की वास्तविक आय में हुए परिवर्तनों के क्षतिपूर्ति के रूप में हुये सापेक्षिक मूल्यों में परिवर्तनों के फलस्वरूप मांगी गयी (मांग की) मात्रा में परिवर्तन को कहा जाता है। प्रतिस्थापन प्रभाव, उपभोक्ता की महँगी वस्तुओं को सस्ती वस्तुओं से प्रतिस्थापित करने की छिपी (अंर्तनिहित) प्रवित्ति के कारण पैदा (उत्पन्न) होती है।

आय प्रभाव को एक वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के परिणाम स्वरुप माँगी गयी मात्रा में कमी, अनन्य रूप से वास्तविक आय में परिवर्तन के परिणाम स्वरुप प्राप्त, जबकि अन्य वस्तुओं के मूल्य तथा मैद्रिक आय स्थिर रहती है। यह वस्तुओं के मूल्य में हुए परिवर्तन के कारण वास्तविक आय में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होता है। प्रतिस्थापन प्रभाव मूल्य उपभोग वक्र को जो कि ऋणात्मक ढलान (ढाल/झुकाव) रखता है, साथ–साथ (एक ओर से दूसरी ओर) एक हलचल कारित करता है।

जबकि दूसरी ओर आय–प्रभाव आय–उपभोग वक्र के साथ–साथ (एक ओर से दूसरी ओर) हलचल कारित करता है, जिस की ढाल (ढलान) धनात्मक होती है।

यह खंड कुल–मूल्य प्रभाव के मापन की विधियां तथा आय प्रभाव एवं प्रतिस्थापन प्रभाव के पृथ्यवकरण को उद्घृत करेगा

इस संदर्भ में दो अधिगम विकसित किए गए हैं।

1. स्लस्की उपागम एवं .
2. हिक्सउपागम

   स्लॅस्की ने वर्णित किया है, कि उपभोक्ता की वास्तविक आय को स्थिर रखने के लिए उसकी मोद्रिक आय को उस स्तर (सीमा) तक – घटाना चाहिए जहां पर कि वह दो वस्तुओं के संयोजन को ही को कर पाने में सक्षम हो ऐसा ऐसा वाह वाह वस्तुओं के मूल्य संयोजक से गुजरने वाली नवीन मूल्य रेखा के समांतर एक रेखा रचित कर दिया जाता है इस उप गांव की इसी आधार पर आलोचना हुई जहां अवस्थी क्रिक प्रतीत लक्षण साफ वास्तविक आय इस पर रहती है ना कि उपभोक्ता की वास्तविक आय या काम हो सकता को उदासीन वक्र का लाभ प्राप्त करने में सक्षम करता है द्वितीय उप ग्राम बताता है कि उपभोक्ता की वास्तविक आय को स्थिर रखने हेतु हमें उपभोक्ता की मौद्रिक आय को उसी सीमांत आगम – करना चाहिए जिससे कि वह

मूल उदासीनता वक्र का लाभ पाने में सक्षम हो सके। इसे नये मूल्य रेखा के समांतर जिसके कुछ बिंदु मूल उदासीनता वक्र को स्पर्श करती है एक रेखा खीच कर प्राप्त किया जा सकती है।

उपरोक्त दोनों एक दूसरे से इस विषय में विभिन्न है कि जहां पूर्व का स्मृति उपवन उपवन दो वस्तुओं के मूल्य संयोजन को प्राप्त करने पर जोर (बल) देता है।

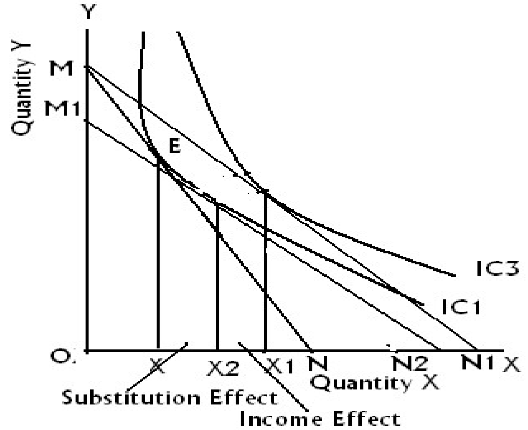

Fig.5.19 Slitting of Price Effect

चित्र संख्या 5.19 एक वस्तु के मूल्य में गिरावट (पतन) के प्रतिस्थापन प्रभाव एवं आय प्रभाव को दर्शाता है चित्र 5.19 MN मूल्य रेखा है जो E बिंदु पर IC की स्पर्शज्या स्पर्शी है। मूल्य संतुलन बिंदु इंगित करता है कि उपभोक्ता है उसकी X मात्रा क्रय करता है,

अब X की आपूर्ति गिरती है, इसलिए मूल्य रेखा दाये और MN की नवीन स्थिति को प्राप्त करती है। अब नवीन साम्य बिंदु (संतुलन बिंदु) E है, जहां उदासीनता वक्र IC3 मूल्य रेखा MN_1 को स्पर्श करता है। नये साम्य बिंदु E पर उपभोक्ता X वस्तु की व मात्रा खरीदता है। इस प्रकार X में वृद्धि की कुल मात्रा X X के बराबर होती है X X_1 की यह वृद्धि आय एवं प्रतिस्थापन प्रभाव के संयुक्त योगदान के कारण प्राप्त हुयी है। अब हमारी रुचि यह जानने में है, कि X की मांगी गई मात्रा में कुल वृद्धि में अकेले प्रतिस्थापन प्रभाव का कितना योगदान है। दोनों प्रभाव को पृथक करने के क्रम में (करने हेतु) हम तकनीकों को पृथकरूप से विमर्शित करेंगे।

स्लॅस्की के अनुसार इसलिए हम नवीन मूल्य रेखा $उद_1$ के समांतर m_1 n_2 रेखा खींचते हैं, जो मूल्य संतुलन बिंदु E गुजरता है। इसका अर्थ यह हुआ कि हमने उपभोक्ता की मौद्रिक आय ल अक्ष पर mm_1 दूरी तक तथा X अक्ष पर nn_1 दूरी तक घटा दी (कम करना) है। स्लॅस्की के विचार में रेखा m_1n_2 उपभोक्ता की वास्तविक आय को इस पर रखती है। आप मूल्य रेखा ,m_1n_2 पर उपभोक्ता की बिंदु पर X एवं y के मूल्य संयोजन को क्रय कर सकता है। एक विवेकपूर्ण उपभोक्ता की भांति, वह E बिंदु पर दो वस्तुओं के पुराने संयोजन का क्रय नहीं करेगा तथा IC2 पर स्थित बिंदु E_2 की ओर अग्रसर होगा जोकि मूल्य परिवर्तन का प्रत्यक्ष प्रभाव (प्रतिस्थापन प्रभाव) है। स्लॅस्की उपागम के

अंतर्गत प्रतिस्थापन प्रभाव $X X_2$ के बराबर है, यदि हम इस पर इस्थापन प्रभाव $X X_2$ को कुल प्रभाव $X X_1$ से घटाते हैं, तो हमें आय प्रभाव $X_2 X_1$ प्राप्त होता है।

हिक्स उपागम के अनुसार वास्तविक आय को स्थिर रखने हेतु उपभोक्ता की मौद्रिक आय को किस सीमा तक कम करना होगा जिससे कि वह मूल उदासीनता वक्र पर वापस जाने को बाध्य हो जाये। इस हेतु हम नवीन मूल्य रेखा mn1 के समांतर रेखा m2 n^3 इस प्रकार खींचते हैं, कि e बिंदु पर मूल उदासीनता वक्र पबप को स्पर्श करती है। E बिंदू पर उपभोक्ता की वास्तविक आय इस अर्थ में समान रहती है, कि वह मूल बिंदु E की भांति सामान्य स्तर की कुल संतुष्टि प्राप्त करता करती है क्योंकि दोनों बिंदु E व E_2 समान उदासीनता वक्र IC पर स्थित होते हैं। किंतु E बिंदू उपभोक्ता X वस्तु की OX मात्रा करे करता है जबकि बिंदु E_3 पर वह X वस्तु की व्3 मात्रा को क्रय करता है, इस प्रकार प्रतिस्थापन प्रभाव $X X_3$ के समान है। X के मूल्य $X X_1$ में गिरावट (कमी) के कारण ग की मांगी गई मात्रा में कुल वृद्धि में से प्रतिस्थापन प्रभाव $X X_3$ को घटाने पर प्राप्त हो जाएगा शेष भाग $X_3 X_1$ आय–प्रभाव है।

5.9 उपभोक्ता अधिक्य

अल्फ्रेड मार्शल ने उपभोक्ता आदिवासी का सिद्धांत प्रतिपादित किया था उनके अनुसार सामान्यता उपभोक्ता किसी बिंदु की दी गई मात्रा कार्य करने हेतु अधिक मूल्य देने की इच्छा रखता है जितना कि वह वास्तव में बाजार में मूल्य चुकाता है।

उदाहरणार्थ, यदि आप शर्ट (कमीज) क्रय करने बाजार में जाते हैं तथा आप उस कमीज हेतु रु 850/ देने के इच्छुक हैं, तथा दुकानदार उस कमीज को बेचने का रास्ता रुपए 600 में करता है तब शीघ्र ही आप उसे खरीद लेते हैं आप उस शर्ट कमीज हेतु रुपए 850 देने को इच्छुक (तत्पर/तैयार) थे लेकिन आप उसे मात्र रु 600/ में प्राप्त कर लिया था यह आपकी प्रसन्नता का कारण है उपभोक्ता अधिक व अधिकतम मूल्य जो आप वस्तुओं के क्रय हेतु देने का इच्छुक है, तथा वह मूल्य (रांाशी) जो वह वस्तु को प्राप्त करने हेतु चुका (देता) के बीच का अंतर है।

हमारे उदाहरण में उपभोक्ता अधिकार रु 250 (रू 850– रू 600) है। उपभोक्ता अधिक्य उपभोक्ता की मांग–वक्र वस्तु हेतु तथा प्रचलित वर्तमान बाजार मूल्य जो हम मानते हैं कि विक्रेता परिवर्तित नहीं कर सकता के द्वारा प्राप्त (ज्ञाता) किया जा सकता है।

अल्फ्रेड मार्शल के अन्य शब्दों में

''मूल्य का व अधिकारियों उपभोक्ता वस्तु से विरत रहने की अपेक्षा चुकाने का इच्छुक है क्या उस मूल्य के ऊपर जो एक बाजार में वास्तव में चुकाता है अंतरिश संस्कृति अधिकाय का आर्थिक मापक है।

A.Koutsoyannis: (रु कोटो सोया सोया निस) के शब्दों में,

''उपभोक्ता अधिक उपभोक्ता की किसी भी वस्तु में व्यस्त रहने की अपेक्षा प्राप्त करने हेतु चुकाने की एकता तथा मूल्य को उसे प्राप्त करने हेतु

चुका होता है के बीच का अंतर है उपभोक्ता अधिक्य दो प्रमुख (महत्वपूर्ण) सिद्धाँतों का परिणाम हैं,

1. उपभोक्ता – व्यवहार की चारित्रिक विशेषता,
2. बाजार की विशेषता!

उपभोक्ता–व्यवहार की विशेषता यह है, कि वह वस्तु–विशेष की अधिक इकाई खरीदना है जिससे उत्तर इकाई की सीमांत उपयोगिता घटती (गिरती) जाती है। एक विवेकपूर्ण क्रेता अपने किराए को उस इकाई तक निरंतर जारी रखता है जो उस वक्त की सीमांत उपयोगिता को उसके लिए चुकाए गए मूल्य के बराबर करती है।

द्वितीय सिद्धांत यह है कि बाजार में विक्रेताओं के मध्य पूर्ण प्रतियोगिता है तथा एक विशेष समय में वस्तु विशेष का बाजार में एक मूल ही अस्तित्व में है ग्राहक (क्रेता) वस्तु को प्रथम इकाई उसी मूल्य में प्राप्त करता है जो वह दूसरी यह पश्चात की अन्य किसी इकाई हेतु चुकाता है उपभोक्ता अधिकार को निम्न आ किस अनुसूची एवं मांग वक्र के द्वारा वर्णित किया गया है,

मात्रा	चुकाने का इच्छुक(रू)	मूल्य (रू)	उपभोक्ता आधक्य
1	250	100	150=(250–100)
2	200	100	100=(200–100)
3	150	100	50=(150–100)
4	100	100	0=(100–100)
कुल योग	700	100ग4त्र400	300

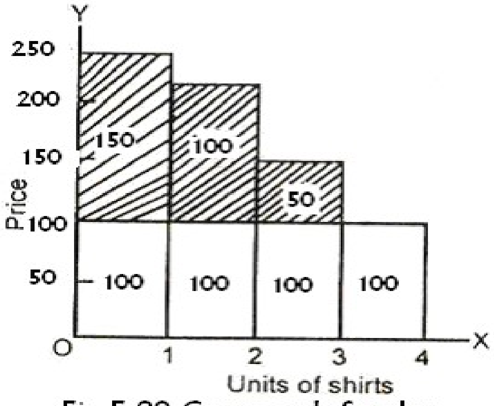

Fig.5.20 Consumer's Surplus

उपभोक्ता अधिकार आधुनिक अर्थ शक्तियों एवं हिक्स ने कई बार उपभोक्ता अधिक्य के मार्शल की संकल्पना (सिद्धांत) की आलोचना की है उनके अनुसार सिद्धांत प्रमाण रहित मान्यताओं पर आधारित है। इसके अनुसार उपयोगिता एक मनोवैज्ञानिक वस्तु है इसे प्रार्थना मुद्रा के रूप में नहीं मापा जा सकता है। मार्शल के विषय में यह माना गया है कि मुद्रा की सीमांत उपयोगिता पर रहती है सत्य यह है कि जब कोई ग्राहक उपभोक्ता दो वस्तुओं पर वह करता है तो उसकी आय कम होती है (घटती) है तथा उसकी मुद्रा की

सीमांत उपयोगिता बढ़ती है विश्लेषण एक मूलभूत सिद्धांत की अपेक्षा करता है।

उपभोक्ता अधिक्य को काल्पनिक कहा जा सकता है, क्योंकि यह अनुमति कल्पना करता है कि विभिन्न वस्तुओं से प्राप्त उपयोगिता परितंत्र होती है वास्तविक जीवन में यह सत्य नहीं है सत्य है कि विविध वस्तुओं से प्राप्त उपयोगिता स्वतंत्र होती है।

5.10 सारांश

हिक्स एवं ऍलन ने उदासीनता—वक्र का वास्तविक प्रतिपादन किया था । 1934 में जे. आर. हिक्स एवं आर. जी. डी. एलन ने अपने एक लेख अ रिकन्सअक्सन ऑफ द थोयोरी ऑफ वैल्यू इकोनामिका में लिखा जिसमें उदासीनता वक्र विश्लेषण को प्रस्तुत किया।

उदासीनता वक्र दो वस्तुओं स्थल उपभोक्ता व्यथा का परीक्षण करता है उदासीनता वक्र दो वस्तुओं के साथ उपभोक्ता के संतुलन स्तर को निरूपित करता है यह मान्यता से लिया गया है कि दोस्तों के समस्त संभव संयोजन हेतु कुल संतुष्टि समान रहती है। इस प्रकार उदासीनता—वक्र समस्त उदासीनता वक्र को प्रदर्शित करता है जो उपभोक्ता की व्यवस्थाओं की श्रेणी प्रदान करता (श्रेणी बद्ध) है।

उदासीनता वक्र विश्लेषण की मान्यता पर सम्मिलित करती है उपभोक्ता अपनी समस्त आय अपभोग पर व्यय करता है। उपभोक्ता इस स्थिति में होता है कि वह अपनी वरीयताओं को प्रदर्शित कर सकता है, ओ वह करता है।

उपभोक्ता बाजार का पूर्णज्ञान रखता है तथा वस्तुओं के संयोजन के प्रति अपनी वरीयता (पंसद) को प्रदर्शित करता है। उपभोक्ता विवेकी (विवेकपूर्ण) दर से एक वस्तु को दुसरी वस्तु से प्रति स्थापित करता है।

प्रतिस्थापन की सीमाँत दर अपभोक्ता द्वारा समान रूप से मूल्यित एवं पसंद की गयी दो वस्तुओं की लघु इकाइयों के मध्य विनिमय के अनुपात के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है।''

$$MRS_{xy} = \frac{\Delta Y}{\Delta X}$$

एक उदासीनता —वक्र में निम्नलिखित गुण होते है,

1. उदासीता—वक्र नीचे दायें ओर गिरता हैं,
2. उदासीनता —वक्र एक दूसरे को प्रतिच्छेदित नहीं करते हैं,
3. उदासीनता—वक्र आरंभ (उत्पत्ति) से (पर) उत्तल होता हैं,
4. उच्च—उदासीनता वक्र उच्च—स्तर की संतुष्टि को दर्शाता हैं,
5. उदासीनता—वक्र क्षैतिज अथवा उर्ध्व अक्ष का स्पर्श नही करता है।

एक बजट रेखा अथवा मूल्य —रेखा दो वस्तुओं के विभिन्न प्रयोजनों को निरूपित करता है जो कि दी गई आय एवं वस्तुओं की मानी गई आय पर (काल्पनिक आय) क्रय की जा सकती है। बजट रेखा उपभोक्ता की आय तथा एक अन्य दूसरी वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के साथ कह सकता (परिवर्तित) होती है।

एक उपभोक्ता तब संतुलन में (साम्यवस्था) में होता है, जब वह अपनी सीमित मौद्रिक आय एवं वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्देशक मूल्य पर अपनी संतुष्टि को अधिकतम करता है। उपभोक्ता की साम्यावस्था (जब) जहाँ उदासीनता वक्र की ढाल तथा बजट विवरण की दाल बराबर समान होती है आय प्रभाव सामान वस्तुओं की दशा में धनात्मक तथा निम्न कोटि की वस्तुओं की दिशा में ऋणात्मक होता है।

मूल्य–प्रभाव को वस्तु के मूल्य में हुए परिवर्तन के कारण उसकी उपभोक्ता की मात्रा में हुए कुल परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

तथापि (हालांकि) वस्तु की मांगी गई मात्रा में कुल वृद्धि मूल्य में दिए गए परिवर्तन के प्रतिस्थापन प्रभाव एवं आय प्रभाव की संयोजित (संयुग्मित / संयुक्त) प्रतिक्रिया को प्रमाणित होती है। इस प्रकार

मूल्य प्रभाव=प्रतिस्थापन प्रभाव +आय प्रभाव मूल्य का वह अधिक जो उपभोक्ता वस्तुओं के उपयोग से वीर्यरहने की अपेक्षा देने का इच्छुक होता है। तथा जो वह वास्तव में बाजार में उस वस्तु को प्राप्त करने में चुकाता है अधिक संतोष का आर्थिक मापक है उपभोक्ता अधिकार अंतर मूल्य के बराबर होता है जो उपभोक्ता वस्तुओं से पीड़ित रहने की अपेक्षा देना चाहता है तथा जो वह वास्तव में देता है ।

5.11 शब्दावली

<u>उदासीनता वक्र</u> उन बिंदुओं का अस्थल है जो समान संतुष्टि प्रदान करने वाले दो वस्तुओं के विविध संयोजन को दर्शाते हैं ।

<u>उदासीनता मानचित्र</u> उदासीनता मानचित्र उन समस्त उदासीनता वक्र को दर्शाते हैं जो उपभोक्ता की वरियता को श्रेणी बंद करते हैं ।

<u>प्रतिस्थापन की सीमांत दर</u> उपभोक्ता द्वारा समान रुप से मूल्य एवं पसंद दो वस्तुओं की छोटी इकाइयों के विनिमय के अनुपात को कहा जाता है

<u>बजट रेखा</u> बजट रेखा अथवा मूल्य रेखा दो वस्तुओं के विभिन्न संयोजन को निरूपित करता है जो दी गई आय एवं वस्तुओं के माने गए मूल्यपरक राय की जा सकती है ।

<u>उपभोक्ता – साम्य</u> एक उपभोक्ता तब संतुलन में होता है जब वह अपने सीमित मुद्रा आय एवं वस्तुओं एवं सेवाओं में निर्देशित मूल्य पर अपनी संस्कृति को अधिक करता है

<u>मूल्य प्रभाव</u> मूल्य प्रभाव वस्तु के मूल्य में हुए परिवर्तन के कारण उसके उपभोग की मात्रा में हुआ कुल परिवर्तन है।

<u>आय प्रभाव</u> आय–प्रभाव को किसी वस्तु के कुल उपभोग की मात्रा में उपभोक्ता की आय में हुए परिवर्तन के कारण हुए परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

<u>उपभोक्ता –आधिक्य</u> उपभोक्ता अधिक्य उस अंतर मूल्य के बराबर होता है जो उपभोक्ता वस्तुओं से वीर्य रहने की अपेक्षा देना चाहता है तथा जो वह वास्तव में देता है।

5.12 बोध प्रश्न

रिक्त स्थान भरें

(ए) .... दो वस्तुओं एक्स और वाई के विभिन्न संयोजनों को दर्शाता है जो समान उपयोगिता देते हैं।

(बी) .... ने प्रतिस्थापन की सीमांत दर की अवधारणा को प्रचलित किया।

(सी) तटस्थता वक्र उद्गम की तरफ .... होते हैं।

(डी) .... दो वस्तुओं के विभिन्न संयोजनों का प्रतिनिधित्व करता है जिसे दिए गए धन और आय व वस्तुओं की कल्पित कीमत पर खरीदा जा सकता है।

(ई) .... ने उपभोक्ता अधिशेष की अवधारणा को प्रचलित किया।

5.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए) तटस्थता वक्र, (बी) जे आर हिक्स,
(सी) उन्नतोदर, (डी) बजट रेखा, (ई) अल्फ्रेड मार्शल

5.14 स्वपरख प्रश्न

1. उदासीनता वक्र की विशेषताएं क्या है? आप उदासीनता—वक्रों की सहायता से उपभोक्ता — साम्य को किस प्रकार वर्णित करेगें?
2. उदासीनता —वक्र की सहायता से उपभोक्ता की माँग में आय में परिवर्तन एवं वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के प्रभावों को दिखाइये।
3. उदासीनता—वक्र से आप क्या समझते है? उदासीनता वक्रों के उपयोग को समझाइये।
4. ह्यसमान प्रतिस्थपन की सीमाँत दर का वर्णन कीजिये।
5. आय—प्रभाव एवं प्रतिस्थापन—प्रभाव के मध्य वस्तु के मुल्य में परिवर्तन के कारण होने वाले अंतर को स्पष्ट कीजिये।
6. गिफॅन विरोधाभास क्या है? इसे उदासीनता—वक्र की सहायता से वर्णित कीजिये।
7. आय—उपभोग वक्र एवं मूल्य—उपभोग वक्र से आप क्या समझते हैं।

5.15 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Deepashree & Vanita Agarwal,'Macroeconomics', Ane Book Pvt. Ltd. New Delhi.
2. S.P. Singh, 'Managerial Economics', AITBS, New Delhi.
3. H.S. Agarwal, 'Microeconomic Theory', (2008) Seventh Edition, Ane's Student Edition.
4. Hajela, T.N., (2009), 'Macroeconomic theory', 10th Edition, Ane Book Pvt. Ltd. New Delhi.
5. Errol D'Souza, 'Macroeconomics', (2008), Pearson Education, New Delhi.
6. Sampat Mukherjee, Principles of Macroeconomics, (2009), New Central Book Agency, New Delhi.
7. D.D.Tewari & Kartar Singh, 'Principles of Microeconomics, (1996), New age publishers, New Delhi.

इकाई 6 उत्पादन फलनः कुल, औसत एवँ सीमाँत उत्पाद वक्र

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उत्पादन के मूलभूत सिद्धाँत

6.3 उत्पादन फलन

6.4 साराँश

6.5 शब्दावली

6.6 बोध प्रश्न

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.8 स्वपरख प्रश्न

6.9 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- उत्पादन के मूलभूत संकल्पनाओँ (सिद्धाँतों) का वर्णन कर सकें।
- उत्पादन फलन की व्याख्या कर सकें।
- दीर्घकालिक एवँ अल्पकालिक उत्पादन फलन का वर्णन कर सकें।

6.1 प्रस्तावना

फर्मो के प्रबंधक अथवा निर्णयकर्ता अपने उद्देश्यों से निरपेक्ष प्रधान रूप से (मुख्य रूप) उत्पादन में कुशलता (दक्षता) प्राप्त करने अथवा किसी दिये गये उत्पादन की लागत को न्यूनतम करने के प्रति चिंतनशील/सम्बन्धित होते है। वस्तुतः तेजी से बढ़ते प्रतिस्पर्धा के वातावरण में फर्म का अस्तित्व (फर्म का टिके रहना) उसकी अर्तः प्रतिर्स्पधा मूल्य पर उत्पादन करने की अभियोग्यता (क्षमता) पर निर्भर करती है। उत्पादन लागत को न्यून करने के अपने प्रयासों में प्रबधक निम्नलिखत ऑधारभूत (मूलभूत) मुद्‌दों का सामना करते है,

क उत्पादन एवँ लागत का सम्बन्ध,

ख उत्पादन की लागत में तकनीक का प्रभाव ,

ग उत्पादन की प्रक्रिया में एक उत्पादन धारक को अन्य के साथ प्रतिस्थापित करने पर (करने) का उत्पादन की लागत पर प्रभाव

घ साधनों के अल्पतम लागत संयोजन की प्राप्ति

ड पैमाने की मित्वययिता एवं अमितव्ययिता को बढ़ाने वाले साधन

च उत्पादन पैमाने के परिवर्तित होने पर प्रतिफल की दर।

उत्पादन सिद्धाँत, उत्पादन दशाओँ के विश्लेषण हेतु उपकरण एवँ तकनीकि प्रदान करता है तथा व्यावहारिक मामलों (मुद्दों/विषयों) के समाधान में सहायता करता है। इस इकाई में ऑप उत्पादन के मूलभूत सिद्धाँतो तथा उत्पादन–फलन का विस्तृत अध्ययन करेगें।

6.2 उत्पादन के मूलभूत सिद्धाँत

प्रथमः उत्पादन सिद्धांत के कतिपय मूलभूत सिद्धाँतों पर विमर्श किया जायेगा,

<u>उत्पादन से ऑशय</u>

उत्पादन से ऑशय एक प्रक्रिया से है जिसके द्वारा ऑगतों को निर्गतों में रूपाँतरित किया जाता है। यह एक गतिविधि (कार्य) को समाहित करता है, जो उपयोगिता (तुष्टिकारकगुण) अथवा अधिमूल्य (विर्धित मूल्य/अतिरिक्तमूल्य) का सृजन करती है जो उपभोक्ता निर्गर्तो से प्राप्त कर सकता है। यह रूपाँतरण प्रतियत्रि – विमीय (तीन प्रकार से) हो समय में परिवर्तन विनर्माणी प्रक्रम में कच्चे माल को अंतिम उत्पाद में परिवर्तित होता (परिवर्तित किया जाता) परिवहन में एक उत्पादको उस स्थान पर उपलब्ध कराया जाता है जहाँ उसकी माँग होती है, भँडारण जो कि समय विमा को समाहित करता हे, जब वस्तु की ऑवश्यकता हो उस समय उपलब्ध करा के उत्पाद / वस्तु का मूल्य बढ़ता है।

<u>ऑगत एवँ निर्गत</u>

साधारण शब्दों में आँगत कोई वह वस्तु है जो फर्म अपने उत्पादन प्रयोग हेतु अथवा विक्रय – प्रक्रिया हेतु क्रय करती है। उत्पादन प्रक्रिया हेतु विविध आँगातो की ऑवश्यकता होती है जो उत्पादन की प्रकृति पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से ऑगतो को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता हे, a भूमि b श्रम c पूँजी d कच्चे माल एवँ e समय।

निर्गत एक वस्तु (उत्पाद) होती है जो फर्म उत्पादित करती है अथवा विक्रय हेतु प्रसंस्कृत करती है।

ऑगतों को a स्थिर आँगतों एवँ b परिवर्तनशील लागतों, दो वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है।

<u>स्थिर एवँ परिवर्तनशील ऑगत</u>

स्थिर ऑगत को ऐसे ऑगत के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसकी मात्रा में बाजार दशाऑं के निर्गत में व्यरित परिवर्तन के संकेत के अनुसार परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। अन्य शब्दों में स्थिर आगत वह आँगत है जिसकी ऑपूर्ति अल्पकाल में नही बढ़यी जा सकती है।

जब कि दूसरी ऑर परिवर्तनशील वह आँगत होते है, जिनकी मात्रा में, उत्पादन में ऐच्छिक परिवर्तन के अनुसार तीव्रता से (त्वरित) परिवर्तन किये जा सकते है। इसकी ऑपूर्ति अल्पकाल में लोचशील होती है।

<u>अल्प काल एवँ दीर्घकाल</u>

अल्पकाल से ऑशय उस समयावधि से है, जिसमें एक या अधिक उत्पादक प्रतिनिधियों के ऑगत स्थिर (निश्चित/अपरिवर्तनशील) होते हैं। अल्पकाल में किसी वस्तु के उत्पादन को महज (केवल) परिवर्तनशील ऑगतों यथाः श्रम, में ही परिवर्तन कर के बढ़ाया (प्रसरित) किया जा सकता है।

दीर्घकाल को ऐसे समयावधि के रूप में परिभषित किया गया है, जिसमें समस्त आँगत परिवर्तनशील होते है, कितु यह भी तकनीक में किन्ही बहुत बड़े परिवर्तनों को नहीं संस्तुतित (मानता/अनुमति प्रदानकरना) करता है। दीर्घकाल में परिवर्तनशील एवं स्थिर दोंनों वस्तु के उत्पादन में परिवर्तित किये जा सकते हैं। दीर्घकाल में समस्त ऑगत परिर्वनशील होते है।

6.3 उत्पादन – फलन

उत्पादन–फलन विशुद्ध रूप से एक तकनीकी सम्बन्ध है जो साधन ऑगतों एवं निर्गतों को जोड़ता (सम्बन्धधित) है। सामान्य पदों में, उत्पादन – फलन यह दर्शाता है, कि किसी उत्पाद/वस्तु का उत्पादन कतिपय विशिष्ट ऑगतों पर निर्भर करता है। विशिष्ट (विशेष) अर्थो में यह भौतिक ऑगतों एवँ भौतिक निर्गतों (उत्पादन) के मध्य संख्यात्मक समबन्ध को प्रदर्शित करता है। इस प्रकार उत्पादन फलन किसी विशेष समायधि पर साधन ऑगतों के उत्पाद में रूपॉतरण को वर्णित करता, है तथा यह बताता है, कि (विशिष्टी कृत) या तो किसी दिये गये ऑगत संयोजन से अधिक्रम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, अथवा एक निर्दिष्ट उत्पादन स्तर हेतु ऑवश्यक आँगतों की – न्यूनतम मात्रा को बताता है। उत्पादन – फलन समस्त तकनीकी रू‧ से कुशल उत्पादन पद्धतियों को समाहित करता है। विवेकी उद्यमी अकुशल पद्धतियों को प्रयोग नहीं करेगें।

ऑर्थिक सिद्धाँत, उत्पादन – फलनों में दो प्रकार के आँगत – निर्गत सम्बन्धों का अवलोकन करता है। एक सम्बन्ध में जहाँ कतिपय ऑगतों की मात्रा स्थिर तथा कुछ ऑगतों की मात्रा परिवर्तित होती है। द्वितीय सम्बन्ध में समस्त ऑगत परिवर्तनशील होते है। प्रत्येक उत्पादन–फलन रखती है जिसका रूप (प्रारूप) तकनीकी स्थितिऑ दशाऑ / अथवा द्वारा निर्धारित होता है जब तकनीक में परिवर्तन होता है, तो एक नवीन उत्पादन फलन अस्तित्व में ऑता है। नवीन फलन समान ऑगतों से अधिक उत्पादन – प्रवाह रखता है अथवा समान उत्पादन हेतु ऑगतों की न्यून (अल्प/लघु) मात्रा चाहता है। वास्तविक जीवन एक विमिमार्णी यह जानना चाहता है, कि किसी निर्दिष्त मात्रा में किसी वस्तु के उत्पादन हेतु ऑगतों अथवा विभित्र साधनों तथा भूमि श्रम, पूँजी, समय एवं स्थान की मात्रा की ऑवश्यकता होगी। उसके लिये यह ऑवश्यक है, कि वे न सिर्फ इन उत्पादक संवाऑ की ऑवश्यक मात्राऑ का निर्धारण करे वरन् कच्चे रूप में इनकी संभाव्य लागतों का भी ऑकलन करें। इस प्रकार यह उत्पादन उद्देश्यों के लिये उत्पादक संसाधनों के प्रकारों (किस्मों) का तथा उनके उन संयोजनों का भी संकेत करती है, जो परिवर्तनशील ऑगतों एवं निर्गतों के मध्य बनते (निर्मित/संयोजित) है।

ये समस्त ऑगत फर्म के वास्तविक (यर्थाथ) उत्पादन – फलन में प्रवेशित (सम्मिलित) होते है। सरलता पूर्वक समझने हेतु हम यह मान लेते हैं, कि समस्त ऑगतों अथवा उत्पान के घटकों को दो बड़े वर्गो a श्रम (L) एवं b पूँजी (K) में वर्गीकृत किया जा सकता है। व्यवहारतः कच्चेमाल , उत्पादन के सभी स्तरों पर निर्गत (उत्पादन) के साथ स्थिर सम्बन्ध रखते है। उदाहरणार्थ ईटो की संख्या सीमेण्ट की मात्रा तथा इस्पात इत्यादि निर्मित मकानों की संख्या के निरपेक्ष एक दिये हुये (निर्दिस्त) प्रकार के ऑवास हेतु स्थिर सम्बन्ध धारण करते है। एक ऑगत (उत्पादन घटक) के रूप में भूमि सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था हेतु समान रूप से स्थिर होती है, और इसीलिये कुल (समंक्रित) उत्पादन फलन में प्रवेशित नहीं (सम्मिलित) होती। हालाँकि क्षेत्र विशेष (व्यक्तिगत क्षेत्र) अथवा फर्म –विशेष हेतु भूमि स्थिर नहीं होती इन प्रकरणों (मामलों/विषयों) भूमि को पूँजी के साथ इकठ्ठा रखा जाता है। उत्पादन–फलन का सामान्य समीकरण निम्नलिखित हैं,

$Q = f(k,l)$

जहाँ

Q= उत्पादन की मात्रा,

K= पूँजी,

L= श्रम,

उत्पादन – फलन वर्णित करता है, कि उत्पादन (निर्गत) की मात्रा ऑगतों की मात्रा पर (पूँजी व श्रम पर) निभर्र करती है। बढ़ते (बढ़े /अधिक /बड़े) उत्पादन हेतु K एवँ L (पूँजी व श्रम) की अधिक (बढ़ी हुयी) मात्रा की ऑवश्यकता होगी। पुँजी एवँ श्रम का बढ़ना (बढ़ी मात्रा) उत्पादन बढ़ाने हेतु विचार (विचार/ध्यान में लिये गये) समयावधि पर निर्भर करता है। अल्प काल में केवल श्रम गतिशील (परिवर्तनशील) होते है, जबकि दीर्घकाल में दोनों श्रम एवं पूँजी ऑगत परिवर्तनशील होते है। इसलिये (अतः) फर्म दो प्रकार के उत्पादन – फलन अल्प – कालीन उत्पादन फलन , तथा दीर्घकालीन उत्पादन फलन रखती है।

अल्पकालीन उतपादन फलन समीकरण को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता हैं

$Q = f(L)$ दीर्घकालीन उत्पादन फलन समीकरण को

$Q = F(K,L)$ से व्यक्त किया जाता है। इसे एक अन्य प्रकार से $Q = F(K,L,V,Y)$ भी व्यक्त किया जा सकता है। जहाँ V पैमाने के प्रतिफल उत्पादन के नियमों के दीर्घ कालीन विश्लेषण से सम्बधित होता है,

Y, दक्षता मानक (पैमाने), उत्पादन के उद्यमिता – संगठनात्मक पक्षों (पहलुओं) से सम्बन्धित होता है।

समान (एक ही प्रकार के/समरूप) प्रकार के उत्पादन साधनों (ऑगतो) को धारण करने वाली दो फर्मे अपनी उद्यमिता – सम्बन्धी एवँ संगठनात्मक दक्षता में विभेद के कारण उत्पादन के विभिन्न स्तर रख सकती है ।

<u>अल्प कालीन उत्पादन –फलन</u>

अल्प काल में उत्पादन की तकनीकी दशाएं दृढ़ (कठोर /अलोचशील) होती है, अतः विभित्र ऑगतो को निदिष्ट उत्पादन हेतु स्थिर अनुपातों के प्रयुक्त किया जाता है। हालाँकि अल्प काल में यह संभव है कि मात्रा को बढ़ा दिया जाये जबकि अन्य ऑगतो की मात्रा को स्थिर रखा जाये। उत्पादन –फलन के इस पक्ष (पहलू) को परिवर्तनशील अनुपातों के नियम के नाम से जाना जाता है। दो ऑगतों श्रम व पूँजी जिसमें पूँजी स्थिर व श्रम गतिशील (परिवर्तनशील) ऑगत हो की दशा में अल्पकालीन उत्पादन – फलन को $Q = F(L,\underline{K})$ से प्रदर्शित किया जा सकता है, जहाँ <u>K</u> (पूँजी) स्थिर ऑगत है। चित्र सं. 6.1 में उत्पादन फलन को दर्शाया गया है जहाँ वक्र का झुकाव (ढाल) श्रम के सीमाँत उत्पाद को दर्शाता है। उत्पादन – फलन के साथ – साथ (बराबर/एक छोर से दूसरे छोर तक) गति (हलचल) दिये गये पूँजी की मात्रा पर श्रम की वृद्धि के साथ उत्पादन में वृद्धि को दर्शाती हैं। यदि एक समय

बिंदू पर पूँजी की मात्रा K_2 तक बढ़ायी जाती है, तो उत्पादन – फलन Q= F (L,K) ऊपर की ऑर (उर्ध्व दिशा में)
Q= F (L,K_2) स्थानांतरित होती है, (जैसा कि चित्र संख्या 6.1 में दर्शाया गया है)

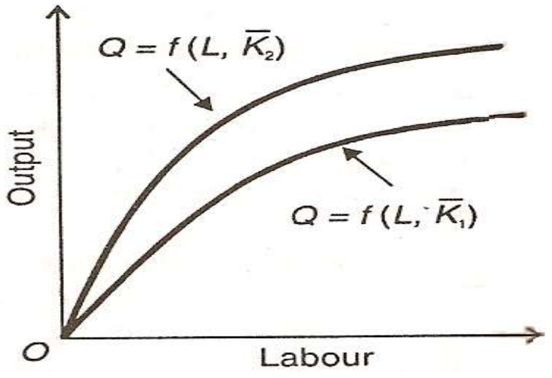

चित्र सं. 6.1

दूसरी ऑर यदि श्रम को स्थिर ऑगत एवं पूजी को परिवर्तनशील ऑगत माना जाये तो उत्पादन – फलन निम्नलिखित प्रकार का होगा

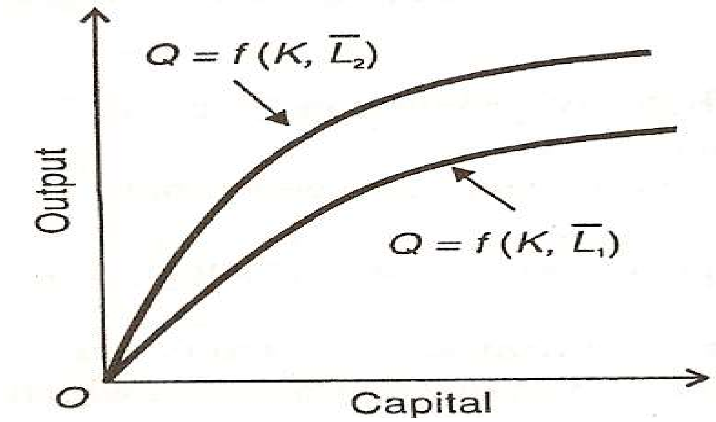

चित्र संख्या 6.2

ठस उत्पादन फलन को चित्र संख्या 6.2 में दर्शाया में दर्शाया गया है, जहाँ वक्र की ढाल (झुकाव) पूँजी के सीमांत उत्पाद को निरूपित करता है। उत्पादन–फलन दर्शाती है, कि नियोजित श्रम की दी गयी मात्रा L_1, पर जैसे – जैसे पूँजी की मात्रा बढ़ती है, उत्पादन की मात्रा बढ़ती है। यदि श्रम की मात्रा एक समय बिन्द ुपर L_2 तक बढ़ता है, तो उत्पादन फलन Q=F (K,L_1) उर्ध्वधि ऑर Q=F (K,L_2) बढ़ता (परिवर्तित) है।

<u>दीर्घ कालीन उत्पादन –फलन</u>

दीर्घकाल में समस्त ऑगत परिवर्तनशील होते है। एक या अधिक ऑगतों में परिवर्तन के द्वारा उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।
फर्म अपने संयत्र अथवा उत्पादन के पैमाने को परिवर्तित कर सकती है। तकनीक के दिये गये स्तर पर श्रम एवं पूजी की मात्राऑं का संयोजन एक विशिष्ट (विशेषीकृत) उत्पादन स्तर को उत्पादित करते है। चित्र संख्या –6.3

के द्वारा दीर्घकालीन उत्पादन –फलन को निरूपित (अभिव्यक्त /प्रदर्शित) करता है जहाँ पूँजी (OK) तथा श्रम (OL) का संयोजन 100Q, (100 मात्रा) का उत्पादन करता है। OK एवँ OL में वृद्धि (परिवर्तन) OK, तथा OL, के फलस्वरूप उत्पादन बढ़ के 200Q हो जाता है। दीर्घकालीन उत्पादन–फलन सम–उत्पाद के पदों में यथाः 100Q, (100 मात्रा) दिखाया गया है,

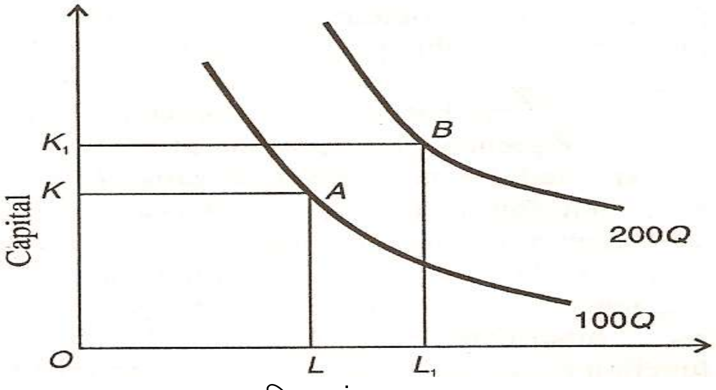

चित्र. संख्या –6.3

दीर्घकाल में फर्म के लिये यह संभव है, कि वह अपने पैमाने के अनुसार उत्पादन के समस्त बड़े ऑगतों में परिवर्तन, वृद्धि या कमी, कर सकती है। इसे पैमाने के प्रतिफल, के नाम से जाना जाता है। यदि उत्पादन में परिवर्तन ऑगतो में किये गये परिवर्तनो के अनुपात में ही होता है, तो पैमाने के स्थिर प्रतिफल प्राप्त होते है। पैमाने प्रतिफल वर्द्धमान (बढ़ते हुये) होते है, यदि उत्पादन में वृद्धि के उत्पादन के साधनों में किये गये परिवर्तनों (वृद्धि) के अनुपात में अधिक होती है। ह्रसमान पैमाने के प्रतिफल वब प्राप्त होते है, यदि ऑगतो में की गयी वृद्धि के अनुपात में उत्पादन कम (अल्प) प्राप्त होते है अर्थात अल्प – दर से बढ़ता (प्राप्त) है। ऑइये, उत्पादन –फलन की सहायता से प्रस्तुत करते है,

Q= (L,M,N,K,T) दिये गये समय पर, यदि समस्त ऑगतो L,M,N,K,T की मात्रा n बढ़ती है, तो उत्पादन (a) भी n गुना बढ़ता है, तब उत्पादन – फलन nq = (nL, nM,nN,nK) होता है।

इसे रेखीय एवँ समघतीय उत्पादन –फलन अथवा प्रथम घात का समघतीय फलन कहते है। यदि समधतीय फलन L वी घात (K^{th} डिग्री) का होगा तो उत्पादन – फलन nk.q=F (nL,nM,nN,nK) होता है।

यदि K 1 के समान है तो यह स्थिर पैमाने के प्रतिफल की दशा है, यदि K 1 से अधिक है, तो यह वर्द्धमान (बढ़ते हुये) पैमाने के प्रतिफल की तथा यदि K 1 से कम (अल्प /न्यून) है तो यह ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल दशा होगीं।

6.4 साराँश

उत्पादन सिद्धाँत उत्पादन दशाओं के विश्लेषण हेतु उपकरण एवं तकनीक प्रदान करता है, तथा वयवहारिक व्यवसायिक मामलो (मुद्दो) के समाधान में सहायता करता है। उत्पादन –फलन ऑगतो एवं निर्गतो की मात्रा

के मध्य कार्यत्मक (क्रियात्मक) सम्बन्ध को अभिव्यक्त करता है। उत्पादन–फलन यथा उत्पादन की तकनीकी दशाऑं द्वारा दृढ़ अथवा लोचशील, प्रकृति के होते है।

प्रथम प्रकार दीर्घकाल तथा द्वितीय प्रकार अल्पकाल से सम्बन्धित होता है । उत्पादन का नियम उत्पादन स्तर बढ़ाने के तकनीकी रूप से संभव ढंगों का वर्णन करता है। उत्पादन फलन उत्पादन साधनों के संदर्भ में वर्णित किया गया है। अल्पकाल में एक धरक को स्थिर जबकि दीर्घकाल में दोनों घटको को परिवर्तनशील माना जाता है पैमाने के प्रतिफल समस्त घटकों में परिवर्तन होने पर समान अनुपात में उत्पादन में परिवर्तन से सम्बन्धित है।

6.5 शब्दावली

उत्पादन – ऑगतो का निर्गतो में रूपाँतरण ।

ऑगत – वस्तु एवँ सेवाऑं के उत्पादन में प्रयुक्त संसाधन ।

दीर्घ–काल – वह समयवधि जिसमें समस्त ऑगत परिवर्तनशील होते है ।

अल्प–काल – वह समयावधि जिसमें कम से कम एक ऑंगत स्थिर होता है।

6.6 बोध प्रश्न

निम्नलिखित वाक्यों को पूर्ण करें।

(a) एक उत्पादन प्रक्रिया हेतु –––––––की किस्मों की ऑव्श्यकता होती है जो उत्पादन की प्रकृति पर निर्भर करता है,

(b) उत्पादन –फलन में ––––––– के समस्त तकनीकी रू॰ से कुशल –––सम्मिलित होते है।

(c) अल्पकाल में केवल श्रम ही –––– है।

(d) पैमाने के प्रतिफल ––––––– होते है जब उत्पादन में वृद्धि ऑगतो के वृद्धि ऑगतो के वृद्धि के ऑनुपतिक परिवर्तन से अधिक होता है।

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

(a) ऑगतों (b) उत्पादन (c) परिवर्तनशील (d) वृद्धिमान (वर्द्धमान)

6.8 स्वपरख प्रश्न

1- उत्पादन–फलन की प्रकृति एवं प्रबंधकीय उपयोगों का वर्णन कीजिये।

2- उत्पादन–फलन को परिभाषित कीजिये। अल्प–कालीन एवँ दीर्घ–कालीन उत्पादन–फलन के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिये।

6.9 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Yogesh Maheshwari, Managerial Economics, Prentice Hall of India, New Delhi.
2. D.N. Dwivedi, Managerial Economics, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.
3. T.R. Jain, O.P. Khanna and Virsen, Micro Economics and Indian Economy, V.K. Publishers, New Delhi.
4. H.L. Ahuja, Advanced Economic Theory, S. Chand & Co. Ltd., New Delhi.
5. Atmanand, Managerial Economics, Excel Books, Delhi.
6. R.L. Varshney and K.L. Maheshwari, Managerial Economics, Sultan Chand & Sons, New Delhi.

इकाई 7 परिवर्तनशील अनुपातों का नियम एवं पैमाने के प्रतिफल का नियम

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उत्पत्ति के नियम
7.3 अल्पकाल (अल्प–अवधि) में उत्पत्ति
7.3.1 तीन चरण (स्तर/अवस्था)
7.4 दीर्घकाल में उत्पत्ति (उत्पादन)
7.4.1 सम–उत्पाद वक्र
7.4.2 सम–उत्पाद की विशेषताएं
7.4.3 सम–उत्पाद के प्रकार
7.5 पैमाने के प्रतिफल के नियम
7.5.1 पैमाने के वृद्धिमान प्रतिफल अथवा वर्द्धमान प्रतिफल नियम;
7.5.2 स्थिर पैमाने का प्रतिफल
7.5.3 ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल
7.6 सारांश
7.7 शब्दावली
7.8 बोध प्रश्न
7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.10 स्वपरख प्रश्न
7.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- उत्पत्ति के नियम का वर्णन कर सकें।
- सम–उत्पाद वक्र की व्याख्या कर सकें।
- पैमाने के प्रतिफल के नियमों को समझ कर सकें।

7.1 प्रस्तावना

किसी फर्म का उत्पादन (उत्पत्ति फलन) फर्म द्वारा प्रयुक्त आंगतों एवं उत्पादित निर्गतों के बीच का (मध्य का) सम्बन्ध है। प्रयुक्त आगतों की विभिन्न मात्राओं हेतु यह उत्पादित की जा सकने वाले निर्गतों की अधिकतम मात्रा को देता (बताता) है। उत्पादन फलन एक निर्दिष्ट तकनीक के लिये परिभाषित होता है। यह तकनीकी ज्ञान होता है, जो आगतों के विभिन्न संयोजन के साथ उत्पादित किये जा सकने वाले निर्गतों की अधिकतम स्तर की मात्रा को निर्धारित करता है। यदि तकनीक (प्रौद्योगिकी) उन्नत होती है तो विभिन्न आगत संयोजनों के साथ प्राप्त किये जा सकने वाले निर्गतों का अधिकतम (उच्चतम) स्तर बढ़ता है। तब हम एक नया उत्पादन (उत्पत्ति) फलन प्राप्त करते है। एक सम–उत्पाद उन दो आगतों के सभी संभव संयोजनों का समुच्चय होता है जो अधिकतम सम्भव समान निर्गत उत्पादित करते हैं। प्रत्येक

सम–उत्पाद निर्गत के एक विशेष स्तर को निरूपित करता है, तथा निर्गत की मात्रा (राशि) से अंकित युक्त (लेबल लगाया हुआ) होता है।

दीर्घकाल में उत्पादन के समस्त घटक (साधन) परिवर्तनशील हो सकते है। दीर्घकाल में एक फर्म निर्गत के विभिन्न स्तरों के उत्पादन हेतु (उत्पादन के क्रम में) दोनों आंगतों को एक ही समय (एक साथ) में परिवर्तित कर सकती है। अतः दीर्घकाल में कोई स्थिर (निश्चित) आंगत नहीं होता है। इस इकाई में आप उत्पत्ति के नियम सम–उत्पाद वक्र तथा पैमाने के प्रतिफल के नियमों के विषय में अध्ययन करेंगे।

7.2 उत्पत्ति (उत्पादन) के नियम

उत्पत्ति के नियम उत्पादन स्तर को बढ़ाने के तकनीकी रूप से सम्भव विधि (ढ़ंग/तरीके) का वर्णन करते है। उत्पादन (निर्गत की मात्रा) कई प्रकार से बढ़ सकता है। उत्पादन के सभी साधनों में परिवर्तन निर्गत (उत्पादन) को बढ़ा सकता है। स्पष्ट रूप से यह केवल दीर्घकाल में ही सम्भव है। इस प्रकार पैमाने के प्रतिफल के नियम उत्पादन के दीर्घकाल विश्लेषण से सम्बन्धित है। इस प्रकार अल्प काल में उत्पादन को अधिक चलनशील (परिवर्तनशील) साधनों को प्रयुक्त कर, जबकि पूँजी एवं अन्य सम्भव साधन स्थिर होते है, बढ़ाया जा सकता है। परिवर्तनशील साधन (साधनों) का सीमांत अंततोगत्वा गिरेगा (कम होगा) जैसे ही इन घटकों का संयोजन अन्य स्थिर (निश्चित) घटकों (साधनों) के साथ किया जायेगा। एक घटक को स्थिर रखते हुये (कम से कम) उत्पादन (निर्गत) का प्रकार परिवर्तनशील घटकों के उत्पत्ति ह्रास नियम द्वारा समझाया गया है, जिसे प्रायः परिवर्तनशील अनुपातों का नियम भी कहते है। सर्व प्रथम हम अल्प–काल परिवर्तनशील अनुपातों के नियम का परीक्षण करेंगे।

7.3 अल्पकाल में उत्पादन (उत्पत्ति)

उत्पादन सिद्धांत (उत्पत्ति सिद्धांत) अल्पकाल एवं दीर्घकाल के अन्तर्गत आगत–निर्गत सम्बन्ध का अध्ययन करता है। अल्पकाल में उत्पादन–फलन का अध्ययन एक परिवर्तनशील घटक के साथ करते है, जबकि अन्य आंगत (पूँजी) स्थिर (निश्चित) ही रहती है।

दीर्घकाल में आगत–निर्गत सम्बन्ध का अध्ययन समस्त घटकों (साधनों) को परिवर्तनशील मानकर किया जाता है।

यदि अन्य सभी आगतों (उत्पादन के लिये प्रयुक्त साधन) को स्थिर (निश्चित) रखा जाता है तथा केवल श्रम में परिवर्तन (मात्रा घटायी या बढ़ायी जाती है) किया जाता है, तो उत्पादन (निर्गत) में जो भी परिवर्तन प्राप्त होता है वह इस श्रम की परिवर्तित मात्रा के कारण ही होता है। जब फर्म केवल श्रम की मात्रा को परिवर्तित करती है तब वह परिवर्तनशील एवं स्थायी (निश्चित) आगतों के मध्य के अनुपात को परिवर्तित करती है। जैसे–जैसे फर्म श्रम की मात्रा में परिवर्तन के साथ इस अनुपात को परिवर्तित करती है, चलनशील अनुपातों का नियम अस्तित्व में आता है, इसे उत्पत्ति **ह्रासमान नियम** भी कहते है।

चलनशील (परिवर्तनशील) अनुपात का नियम साधन के संयोजन की कुशलता को दर्शाता है जो हमें बताता है कि किस प्रकार प्रयुक्त साधनों के

अनुपात में कुल उत्पादन (निर्गत) अथवा सीमांत उत्पादन प्रभावित होता है। यह उस दशा में आगत–निर्गत सम्बन्ध को जब कि एक आगत की मात्रा को अन्य आगतों की मात्रा को स्थिर रखते हुये बढ़ायी जाती है, तो उत्पादन में जो वृद्धि होती है, अर्थात् उस परिवर्तनशील घटक के कारण कुल अथवा सीमांत उत्पादन में कितना परिवर्तन हुआ। जब एक साधन (घटक) की मात्रा बढ़ायी जाती है तथा अन्य साधनों की मात्रा स्थिर रखी जाती है, तो परिवर्तनशील एवं स्थिर साधनों के मध्य के अनुपात को परिवर्तित किया जाता है। इस प्रकार जैसे–जैसे परिवर्तनशील साधन की मात्रा को बढ़ाया जाता है वैसे–वैसे स्थिर साधनों एवं परिवर्तनशील साधनों के मध्य अनुपात में परिवर्तनशील साधन का अनुपात बढ़ता जाता है।

परिवर्तनशील अनुपातों के नियम को सारणी 7.1 एवं चित्र संख्या–7.1 के माध्यम से निरूपित किया गया है। यह परिकल्पना की गयी है कि भूमि की निश्चित मात्रा दी गयी है, साथ में अन्य परिवर्तनशील घटक यथाः भूमि है, जिनके साथ उत्पादन किया जा रहा है।

<u>सारणी–7.1</u>

श्रम की इकाई (1)	कुल उत्पादन (2)	सीमांत (3)	औसत उत्पादन (4)
1	**80**	**80**	**80**
2	170	90	85
3	270	100	95
4	368	98	92
5	430	60	86
6	480	50	80
7	504	24	72
8	504	0	63
9	495	−9	55
10	480	−15	48

अन्य साधनों को स्थिर रखते हुये जब श्रम की मात्रा को 01 इकाई से 07 इकाई तक बढ़ाया जाता है, कुल दत्पादन 80 इकाई से 504 इकाई तक बढ़ जाता है, 08 श्रम इकाई के आगे (परे/ज्यादा) कुल उत्पाद गिरता (घटता/ह्रास) है। यह महत्वपूर्ण है कि श्रम की 03 इकाई के उपयोग तक कुल उत्पाद बढ़ती हुई दर से बढ़ता है, तत्पश्चात स्थिर हो जता है।

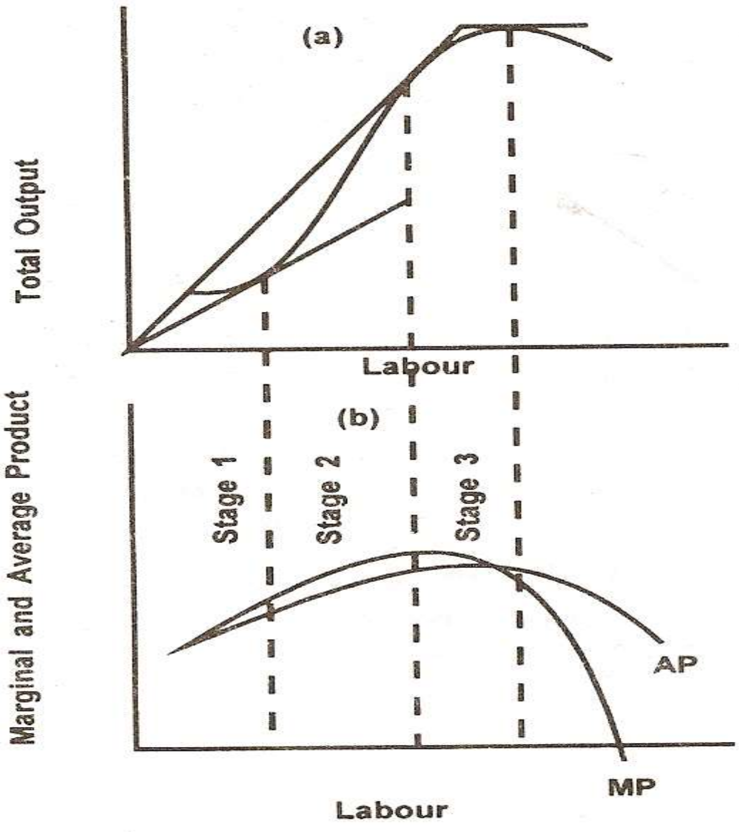

चित्र 7.1

चित्र 7.1 में पट्टिका a कुल उत्पादन वक्र को प्रदर्शित करती है। कुल उत्पाद वक्र पहले बढ़ता है, स्थिर रहता है, तथा अंततोगत्वा गिरता है।

पट्टिका b सीमांत उत्पाद (MP) एवं औसत उत्पाद (AP) को प्रदर्शित करता है। नियम वर्णित करता है, कि जैसे अधिक मात्रा में परिवर्तनशील आगत प्रयुक्त किये जायेंगे, अन्य संसाधन (साधन) स्थिर रहेंगे, एक बिन्दु ऐसा आयेगा जहां परिवर्तनशील आगत की अतिरिक्त मात्रा कुल उत्पाद में ह्रासमान (गिरती हुई) सीमांत योगदान करेगी। सामान्यतः यदि एक उत्पादन घटक (प्रायः पूँजी K) निश्चित रहेगा एक निश्चित सीमा के उत्पादन पश्चात परिवर्तनशील घटक का सीमांत उत्पाद गिरेगा।

7.3.1 तीन चरण (स्तर)

परिवर्तनशील अनुपातों के नियम का विकास तीन चरणों को समाहित करता है। प्रथम चरण में प्रति–श्रमिक औसत उत्पाद बढ़ता है। प्रथम स्तर (चरण) की सीमा वहां है, जहां सीमांत एवं औसत उत्पाद समान होते है, तथा औसत उत्पाद अधिकतम होता है।

द्वितीय स्तर में (चरण) कुल उत्पाद बढ़ता है, किन्तु गिरते (घटते हुये) दर से द्वितीय स्तर की अधिकतम उचित (यथार्थ/सटीक) सीमा वहां है जहां कुल उत्पाद अधिकतम तथा सीमांत उत्पाद शून्य होता है। इस चरण में औसत एवं सीमांत उत्पाद दोनों घटते (गिरते) है। औसत उत्पाद से नीचे (कम) होने के कारण सीमांत उत्पाद औसत उत्पाद को नीचे (कम) करता है।

तृतीय चरण में (अवस्था) परिवर्तनशील साधन, स्थिर साधनों से बहुत ज्यादा जुड़े (सम्बन्धित) होते है। यह ऋणात्मक प्रतिफल की अवस्था होती है, क्योंकि परिवर्तनशील साधनों का सीमांत उत्पाद ऋणात्मक होता है, तथा कुल उत्पाद घटता (गिरता) है।

विवेकी (विवेकपूर्ण) उत्पादक सदैव उत्पादन की मात्रा के द्वितीय चरण (अवस्था) को चुनते है तथा तृतीय चरण (अवस्था) में कभी परिचालन नहीं करते है, क्योंकि वह उत्पादन कम (अल्प) करेगा तथा परिवर्तनशील साधनों की अधिक इकाई प्रयुक्त करेगा। तृतीय अवस्था में अत्यधिक श्रम अपने पूर्ण अर्थ (निरपेक्ष अर्थ) में रहता है। अतएव (इसलिये/अतः) चरण (अवस्था) द्वितीय एवं तृतीय के मध्य की सीमा विवेकपूर्ण (तार्किक) उत्पादन निर्णयों की एक सीमा है। प्रथम अवस्था एवं द्वितीय अवस्था के मध्य की अन्य सीमा वह है जहां औसत उत्पाद अधिकतम होता है।

एक विवेकी उत्पादक उत्पादन की उस सीमा पर ध्यान केन्द्रित करता है, जिसके ऊपर साधन (घटक) का सीमांत उत्पाद धनात्मक होता है किन्तु गिरता रहता है। साधन के वृद्धि प्रतिफल की सीमा तथा ऋणात्मक उत्पादकता की सीमा उत्पादन की साम्य सीमा (संतुलन) नहीं है।

7.4 दीर्घ–काल में उत्पादन

पैमाने के प्रतिफल के नियमों को उत्पादन एवं स–उत्पाद वक्र तकनीकों की सहायता से वर्णित किया जा सकता है। इसलिये हम सर्व प्रथम सम–उत्पाद का परिचय प्राप्त करेंगे तथा इसकी व्याख्या करेंगे तत्पश्चात इस तकनीक की सहायता से पैमाने के प्रतिफल के नियमों का वर्णन करेंगे।

7.4.1 सम–उत्पाद अथवा सम–उत्पाद वक्र :–

आइसो–क्वैण्ट शब्द का अर्थ होता है, समान मात्रा। इसलिये इसे सम–उत्पाद वक्र के नाम से भी जाना जाता है। एक सम–उत्पाद वक्र श्रम व पूँजी के ऐसे समस्त संयोजनों का बिंदुपन होता है जो निर्गत के समान स्तर का उत्पादन करते है। एक सम–उत्पाद वास्तव में एक बड़े अन्तर के साथ उदासीनता वक्र के सादृश (समरूप) होता है। उदासीनता वक्र अभिकरण–संबधी (विषयी)/आत्मगत होते हैं। उपभोक्ता के मस्तिष्क में क्या चल रहा है, यह अनुमान अवश्य लगाया जाना चाहिये। (वस्तुनिष्ठ/पदार्थगत) होते है, यह व्यवहार में तथा सिद्धांत दोनो में मापे जा सकते है।

सम–उत्पाद वक्र के वर्णन के लिये निम्नलिखित मान्यताये धारण करते है;

1. उत्पादन के महज (केवल) दो साधन (घटक), श्रम व पूँजी, होते है, जो एक दूसरे के साथ प्रतिस्थापित हो सकते है, (प्रति–स्थापित किये जा सकते है)।
2. जैसे ही एक साधन दूसरे को प्रतिस्थापित करता है, प्रतिस्थापन की दर गिरती जाती है।
3. प्रोद्योगिकी स्थिर (समान रहती है।

उत्पादन की निर्दिष्ट मात्रा का स्तर विभिन्न आंगतों के विविध (व्यापक) संयोजनों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। संयोजन इस प्रकार संगठित होते है, कि एक घटक के (घटक के साथ) दूसरे के साथ प्रतिस्थापित होने पर भी

उत्पादन पर प्रभाव नहीं पड़ता। सम–उत्पाद के सिद्धांत (संकल्पना) को निम्नांकित सारणी से सरलता से समझाना सकता है;

सारणी–7.2, दो साधनों (श्रम व पूँजी) के संयोजनों को प्रदर्शित करती है, जो 50 इकाई निर्गत करते है;

सारणी–7.2

संयोजन	श्रम	पूँजी	निर्गत (उत्पादन)
A	1	12	50
B	2	8	50
C	3	5	50
D	4	3	50
E	5	2	10

इस तकनीकी सम्बन्ध को एक सम–उत्पाद वक्र (IQ, =50) के माध्यम से चित्र संख्या–7.2 में प्रदर्शित किया जाता है।

IQ, वक्र अपनी दिशा में एक छोर से दूसरे छोर तक (के समान्तर) निश्चित (स्थिर) निर्गत 50 इकाई की मात्रा को प्रदर्शित करती है, जो श्रम एवं पूँजी के कई (अनेक) संयोजनों द्वारा प्राप्त किये जा सकते है।

उदाहरणार्थ सम–उत्पाद प्फ आंगतों के पांच संयोजनों a, b, c, d, e को प्रदर्शित करता है। पूँजी एवं श्रम जैसा कि सारणी से स्पष्ट है, 50 इकाई निर्गत कर रहे है। सम–उत्पाद वक्र में a से e का वक्र पूँजी की घटती हुई मात्रा (K) तथा श्रम की बढ़ती हुई मात्र (L) को दर्शाता है जिसका तात्पर्य यह है कि, कि पूँजी के लिये श्रम का प्रतिस्थापन इस प्रकार है, कि सभी पाँच आंगत–संयोजन वस्तु की समान मात्रा ('50') उत्पादित करते है।

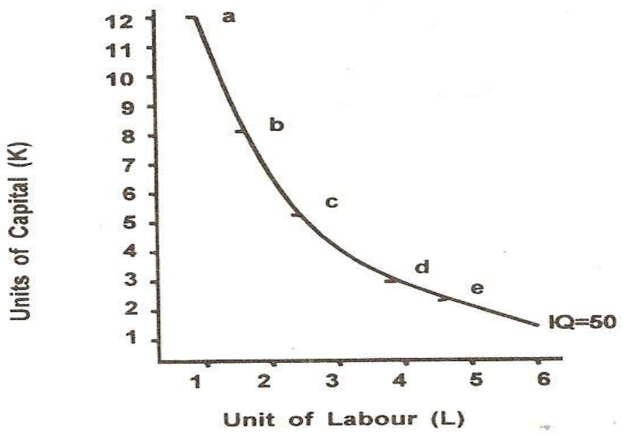

चित्र–7.2

7.4.2 सम–उत्पाद के गुण (विशेषतायें) :–

सम–उतपादकों की विशेषतायें उदासीनता वक्र की ही भांति है। सम–उत्पादकों के प्रमुख गुण निम्नलिखित है;

1. **एक सम–उत्पाद ऋणात्मक ढ़लान (नकारात्मक ढ़लाव/झुकाव) रखता है :–** सम–उत्पादक आर्थिक क्षेत्र में ऋणात्मक (नकारात्मक) ढ़लान (झुकाव) रखते है। सम–उत्पाद के नकारात्मक (ऋणात्मक) से यह तात्पर्य है, कि साधन (घटक) एक दूसरे को प्रतिस्थापित कर रहे है। यदि एक घटक को घटाया (कम) जाता है, तो दूसरे घटक (अन्य घटक) को इस प्रकार बढ़ाया जाना चाहिये (इस प्रकार बढ़ाया जाता है) जिससे कुल उत्पादन अपरिवर्तित रहे।
2. **सम–उत्पाद आरम्भ स्थान पर उत्तल होते है:–** उत्तलता (उत्तल आकार) का गुण महज आंगतों के मध्य प्रतिस्थापन को ही नहीं वरन आर्थिक क्षेत्र में आंगतों के मध्य तकनीकी प्रतिसथापन की गिरती सीमांत दर को भी समझाता (सूचित/बताता) है।
3. **सम–उत्पाद एक–दूसरे को प्रतिच्छेदित अथवा स्पर्श नहीं करते है :–** दो सम–उत्पाद एक–दूसरे को स्पर्श अथवा प्रतिच्छेदित नहीं करते है। यदि दो सम–उत्पाद एक–दूसरे को काटते (प्रतिच्छेदित) है, तो वहां प्रतिच्छेदन बिन्दु के अनुरूप (सदृश/समतुल्य) एक अभय घटक संयोजन होगा। अर्थात समान घटक संयोजन (वह घटक संयोजन) जो एक सम उत्पाद के अनुसार 50 इकाई का उत्पादन कर सकता है, दूसरे सम उत्पाद के अनुसार वह संयोजन 100 इकाई उत्पादन भी कर सकता है।
4. **उच्च (उर्ध्व/उच्चतर) सम–उत्पाद उच्च–उत्पादन स्तर को निरूपित करते है:–**
   उत्तर–पूर्व की ओर सम–उत्पाद उत्पादन के उच्च–स्तर को दर्शाता है एक उच्चतर (उर्ध्व/उच्च) सम–उत्पाद अधिक (बड़े/ज्यादा) आंगत संयोजन को निरूपित करता है, जो प्रायः (सामान्यतः) उत्पादन की अधिक मात्रा उत्पादित करता है। इसलिये उर्ध्व (उच्चतर/उच्च) सम–उत्पाद उच्च उत्पादन–स्तर को निरूपित करता है।

7.4.3 सम–उत्पाद के प्रकार :–

उत्पादन सम–उत्पाद कई आकृति के हो सकते है, यह साधनों (घटकों) की प्रतिस्थापनीयता पर निर्भर करता है।

(1) **रेखीय सम–उत्पाद :–** रेखीय सम–उत्पाद उत्पादन के साधनों की पूर्ण प्रतिस्थापनीयता को मानता है (अर्थात स्वीकार कारता/मान लेता है, कि उत्पादन के घटक पूर्ण प्रति स्थापनीय है)। एक निर्दिष्ट (दी गयी) उत्पाद केवल पूँजी, अथवा केवल श्रम अथवा पूँजी एवं श्रम के अनन्त संयोजनों के द्वारा उत्पादित की जा सकती है। रेखीय सम–उत्पाद को चित्र–संख्या–7.3 द्वारा वर्णित किया गया है;

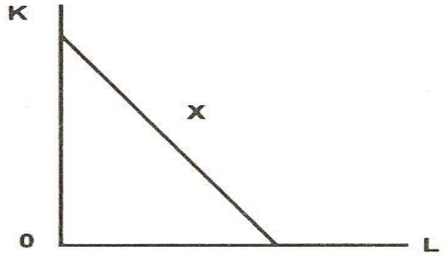

चित्र –7.3

(2) **आंगत–निर्गत सम–उत्पाद :–** आंगत–निर्गत सम–उत्पाद उत्पादन के साधनों की दृढ़ अनुपूरकता (अन्योन्याश्रियता) को मानते है। (जो कि शून्य प्रतिस्थापनीय है)। किसी एक उत्पाद (वस्तु) को उत्पादित करने की केवल एक विधि होती है। सम–उत्पाद एक समकोण की आकृति धारण करते है। (चित्र–7.4) सम–उत्पाद का यह प्रकार ''ल्योटाफ सम–उत्पाद'' के नाम से भी जाना जाता है, जिन्होंने आगत–निर्गत विश्लेषण आविष्कृत किया था।

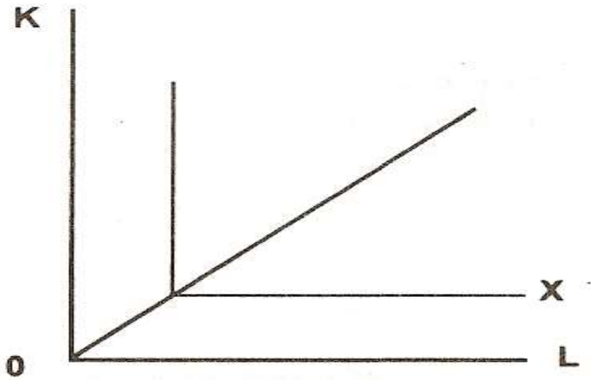

चित्र–7.4

(3) **विकंपित सम–उत्पाद :–** यह पूँजी व श्रम (K–L) की सीमित अनुपूरकता (अन्योन्याश्रियता) को स्वीकार करता है। किसी एक उत्पाद (वस्तु) को उत्पादित करने हेतु केवल कुछ प्रक्रियायें होती है। समस्त साधनों की प्रतिस्थापनीयता केवल विकंपन (किक्स) पर ही सम्भव है। इस प्रकार को गतिविधि (कार्य) विश्लेषण सम–उत्पाद अथ्वा रेखीय प्रोग्रामिंग (कार्यक्रमीक) सम–उत्पाद भी कहा जाता है क्योंकि यह मूलतः रेखीय प्रोग्रामिंग में प्रयुक्त होता है।

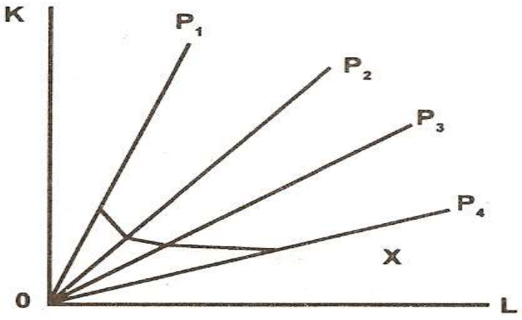

चित्र–7.5

(4) **समतल–उत्तर सम–उत्पाद :–** यह प्रकार पूँजी (K) एवं श्रम (L) की केवल एक निश्चित क्षेत्र (सीमा) के ऊपर सतत प्रतिसथापनीयता को मानता (स्वीकार) करता है, जिसके परे (ऊपर/बाहर) साधन एक–दूसरे को प्रतिस्थापित नहीं कर सकते। यह सम–उत्पाद उत्पत्ति से समतल उत्तल वक्र की भांति दिखाता है।

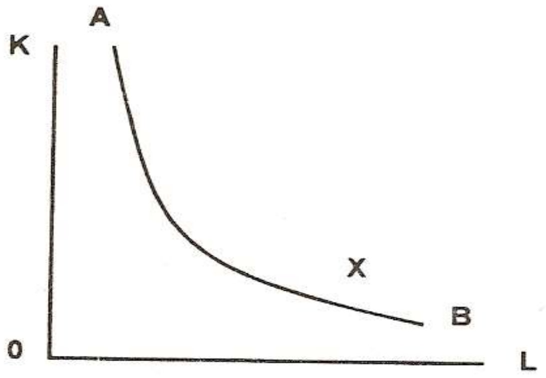

चित्र–7.6

(5) **सम–उत्पाद मानचित्र (खाका):–** उत्पादन फलन केवल एक सम–उत्पाद को नहीं वरन् सम–उत्पाद के एक सम्पूर्ण (पूरे) श्रृंखला– समूह (व्यूह रचना) को भी दर्शाता है, जिनमें से प्रत्येक उत्पादन के विभिन्न स्तर को दर्शाता है। जब सम–उत्पादकों के श्रृंखला–समूहों (व्यूह रचना) को रेखा–चित्र (आलेख) द्वारा निरूपित किया जाता है यह सम–उत्पाद मानचित्र (खाका) कहलाता है। सम–उत्पाद वक्र दर्शाता है, कि किस प्रकार साधन निर्गत के परिवर्तित होने से उत्पादन परिवर्तित होता है।

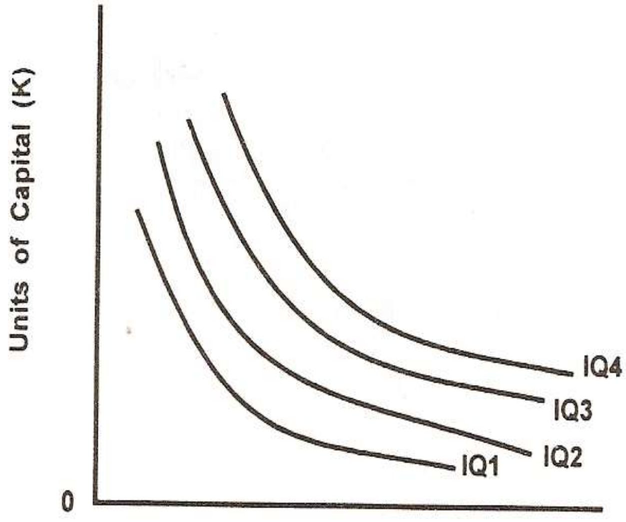

चित्र–7.7

7.5 पैमाने के प्रतिफल के नियम

दीर्घकाल में उत्पादन का प्रसार समस्त साधनों को परिवर्तित करके प्रापत किया जा सकता है। दीर्घकाल में समस्त साधन परिवर्तनशील होते है। पैमाने के प्रतिफल का नियम पैमाना सम्बन्ध के प्रभाव से सम्बन्धित है। दीर्घकाल में उत्पादन को साधनों को परिवर्तित करके, समान अनुपात में परिवर्तित अथवा भिन्न अनुपातों में परिवर्तित कर, बढ़ाया जा सकता है। पैमाने के प्रतिफल पर उत्पादन में परिवर्तन तथा समान अनुपात में परिवर्तित साधनों से सम्बन्धित है।

कल्पना करते है, कि एक फर्म प्रारम्भिक स्तर के आगतों एवं निर्गत से परिचालन आरम्भ करती तथा आनुपातिक रूप से समस्त आगतों को बढ़ाती है, यहाँ तीन तकनीकी सम्भावनायें है;

(1) यदि उत्पादन अनुपात से (साधनों में की गयी वृद्धि के अनुपात) अधिक बढ़ता है (प्राप्त) तो हम वृद्धिमान प्रतिफल (पैमाने के वृद्धिमान प्रतिफल को) प्राप्त करते है;

(2) यदि उत्पादन, साधनों में की गयी वृद्धि के अनुपात में ही प्राप्त होता है तो हम स्थिर प्रतिफल दर उत्पादन प्राप्त होता है।

(3) यदि उत्पादन परिवर्तनों के अनुपात से न्यून प्राप्त होता है (साधनों में की गयी वृद्धि के अनुपात के) तो हम ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल को प्राप्त करते है।

7.5.1 पैमाने के वृद्धिमान प्रतिफल (बढ़ती दर से प्रतिफल) :–

यदि फर्म दोनों आगतों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाती है, तथा प्राप्त उप्पादन (निर्गत) इस अनुपात से अधिक होता है तो यह वृद्धिमान पैमाने के प्रतिफल (बढ़ती दर से पैमाने का प्रतिफल) प्रदर्शित करता है। उदाहरणार्थ, यदि दोनों आगत पूँजी (K) एवं (L) क्रमागत रूप से दो गुने कर दिये जाते है, तथा उत्पादन (निर्गत) दो गुने से ज्यादा होता है, तो पैमाने के प्रतिफल को वर्द्धमान (वृद्धि, बढ़ती दर से प्राप्त) पैमाने का प्रतिफल कहेंगे। **चित्र संख्या 7.8** पैमाने के वृद्धिमान प्रतिफल को प्रदर्शित करती है;

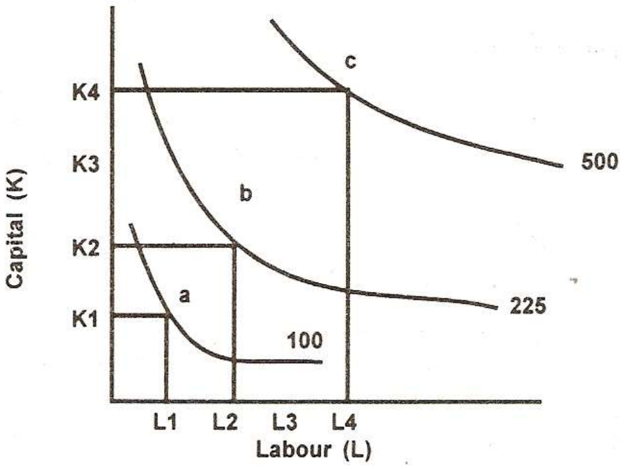

चित्र 7.8

जब आगतों के संयोजन को बिन्दु अ (a) (1K+1L) से दो गुना करके बिन्दु ब (b) पर करते है (2K+2L) तथा उत्पादन दो गुना 100 इकाई से बढ़कर 225 इकाई हो जाता है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर दो गुना करने पर (आगे भी) दो गुना से भी अधिक हो जाता है जैसा कि b से c तक की गतिशीलता से दर्शाया गया है अर्थात 2K+2L से 4K+4L किया जाता है तो उत्पादन 500 इकाई तक बढ़ जाता है। आगत एवं निर्गत के बीच इस प्रकार का सम्बन्ध वर्द्धमान (बढ़ती हुई दर से) पैमाने प्रतिफल को प्रदर्शित करता है।

7.5.2 स्थिर पैमाने का प्रतिफल :–

जब आगतों में एक आनुपातिक परिवर्तन उत्पादन में सुसंगत (सदृश) आनुपातिक परिवर्तन करता (लाता) है, तो यह स्थिर पैमाने के प्रतिफल (पैमाने के स्थिर प्रतिफल) को दर्शाता है। उदाहरर्णाथ, आगतों को दो गुना करने से दो गुना उत्पादन प्राप्त करना, आगतों को तिगुना करने से उत्पादन में तीन गुना वृद्धि। चित्र संख्याः 7.9 स्थिर पैमाने के प्रतिफल को दर्शाती है।

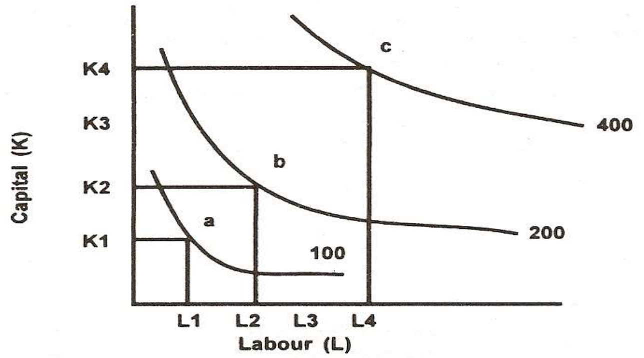

चित्र 7.9

जब आगतों को दो गुना (K1+L1 से (K2+L2 किया जाता है, तो उत्पादन भी 100 से बढ़कर 200 हो जाता है तथा जब आगतों को पुनः दो गुना K2 +L2 से बढ़ाकर ;k4 + L4 किया जाता है, तो उत्पादन भी 400 इकाई बढ़ जाता है।

7.5.3 ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल :–

जब आंगतों में किये गये आनुपातिक परिवर्तनों के द्वारा उत्पादन, उस अनुपातिक परिवर्तन से अल्प (कम) प्राप्त होता है, तो इसे ह्रासमान पैमाने का प्रतिफल कहा जाता हैं

उदाहरणार्थ जब दोनों आंगतों L,K को दो गुना किया जाता है तथा उत्पादन दो गुने से कम प्राप्त होता है तो यह कहा जाता है, कि यह ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल की अवस्था है।

चित्र संख्या 13 ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल को प्रदर्शित करती है। चित्र दर्शाता है, कि आगतों K1+L1 को दो गुना करने पर निर्गत 100 इकाई से 175 इकाई तक बढ़ जाता है।

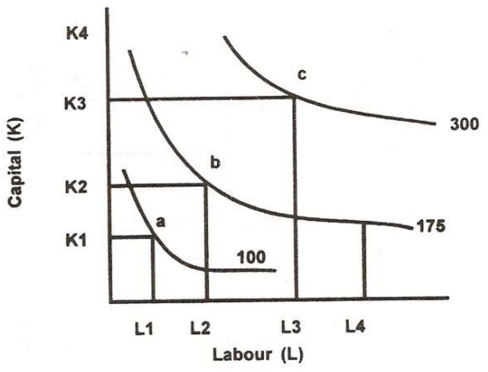

चित्र 10

<u>वर्द्धमान (बढ़ते हुये दर) पैमाने के प्रतिफल के कारण :–</u> पैमाने के प्रतिफल के वृद्धि निम्नलिखित कारण है :–

(1) **साधनों की अविभाज्यता (अविभाजनीयता) :–**

साधनों के अविभाज्य होने के कारण पैमाने के प्रतिफल बढ़ते है। अविभाज्यता अर्थात् मशीन, प्रबन्ध, श्रम, वित्त इत्यादि अति लघु आकार में नहीं उपलबध हो सकते। वे एक निश्चित न्यूनतम आकार में ही उपलब्ध होते है। जब एक व्यावसायिक इकाई विस्तारित होती (विस्तार प्राप्त करती है) है, तो पैमाने के प्रतिफल बढ़ते है, क्योंकि अविभाजनीय साधन अपनी पूर्ण (अधिकतम) क्षमता के साथ नियोजित होते है।

(2) **विशेषज्ञता (विशेषीकरण) एवं श्रम–विभाजन :–**

विशेषज्ञता एवं श्रम–विभाजन के कारण भी प्राप्त होता है। जब फर्म का पैमाना (आकार/परिचालन इत्यादि) बढ़ता (विस्तरित) है, तब विशेषज्ञता एवं श्रम–विभाजन का क्षेत्र (अवसार) व्यापक होता है। कार्य को लघु कार्यों में विभाजित किया जा सकता है तथा श्रमिक प्रक्रियाओं की संकुचित (छोटी लघु) सीमा (क्षेत्र) में सकेन्द्रित किये जा सकते है। इस हेतु विशेषीकृत (विशेष) उपकरण (अस्त्र) स्थापित किये जा सकते है। इस प्रकार विशेषज्ञता के कारण (के साथ) दक्षता बढ़ती है फलतः पैमाने के बढ़ते प्रतिफल (वर्द्धमान पैमाने के प्रतिफल) प्राप्त होते है।

(3) **आंतरिक मितव्ययिता :–**

जैसे–जैसे फर्म का विस्तार होता जाता है, वह आंतरिक मितव्ययिता का आनन्द उठाती (लाभ प्राप्त करना) है। फर्म नयी एवं श्रेष्ठतर मशीनों के स्थापन में सक्षम होती है, अपने उत्पाद को सरलता से विक्रय कर लेती है, सस्ते दर पर रूपया उधार ले सकती है, अति कुशल प्रबन्धकों एवं श्रमिकों की सेवाओं का प्रापण (प्राप्त करना) कर सकती है। ये समस्त मितव्ययितायें अनुपात से अधिक (साधनों में किये गये परिवर्तन के अनुपात) पैमाने के प्रतिफल को प्राप्त करने में सहायक होती है।

(4) **वाह्य मितव्ययिता :–**

एक फर्म वाह्य मितव्ययिताओं के भी कारण वृद्धिमान (बढ़ते हुये) पैमाने के प्रतिफल को प्राप्त करती है जब उद्योग दीर्घकाल की मांगों को पूर्ण करने हेतु अपना विस्तार करता है तो वाह्य मितव्ययिता दृश्यमान होती है, जो समस्त फर्मों द्वारा साझा की जाती है। जब एक ही स्थान पर कई कम्पनियाँ (अधिक संख्या में) सकेन्द्रित होती है, तो कुशल श्रम, साख एवं परिवहन सुविधायें, सरलता से उपलब्ध होती है। सहायक उद्योग, मुख्य (प्रमुख) उद्योग की सहायता हेतु आन पड़ती है। व्यापार जर्नल, शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्र उपस्थित (प्रकट) होते है, जो फर्म की उत्पादकता सम्बन्धी दक्षता को बढ़ाने में सहायता करते है। इस प्रकार ये वाह्य मितव्ययितायें भी वर्द्धमान (बढ़ते पैमाने के प्रतिफल) को प्राप्त करने का कारण होती है।

<u>स्थिर पैमाने के प्रतिफल के कारण :–</u> स्थिर पैमाने के प्रतिफल के कारण निम्नलिखित हैः–

(1) **आन्तरिक मितव्ययिता एवं अमितव्ययिता :–**

बढ़ते पैमाने के प्रतिफल अनन्त समय तक जारी नहीं रहते। जैसे ही फर्म अतिरिक्त विस्तार प्रापत करती है, आन्तरिक मितव्ययिता, आन्तरिक अमितव्ययिता से प्रति–संतुलित (प्रति भारित) हो जाती है। प्रतिफल समान अनुपात में (साधनों में कृत परिवर्तन के अनुपात में) बढ़ते है, अतः अधिक बड़े (सीमा/क्षेत्र) उत्पादन के ऊपर (की दशा में) स्थिर पैमाने के प्रतिफल प्राप्त होते है।

(2) वाह्य मितव्ययिता एवं अमितव्ययिता :–

जब वाह्य मितव्ययितायें एवं अमितव्ययितायें उदासीन (तटस्थ/प्रतिभारित) हो जाती है, तो स्थिर पैमाने के प्रतिफल प्राप्त होते है, तथा उत्पादन समान अनुपात में बढ़ता है।

(3) विभाजनीय साधन (घटक) :–

जब उत्पादन के साधन पूर्णतः विभाजनीय (विभाज्य), प्रतिस्थापनीय तथा दिये गये मूल्य पर पूर्ण प्रत्यास्थ (लोचशील) आपूर्तियों के साथ समघातीय होते है, पैमाने के प्रतिफल स्थिर होते है।

<u>ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल के कारण :–</u> ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल के निम्नलिखित कारण होते है :–

(1) प्रबन्ध के ह्रासमान प्रतिफल :–

ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल का सर्वाधिक प्रमुख (आम/सामान्य) कारण प्रबन्ध का ह्रासमान प्रतिफल है। फर्म के विभिन्न अनुभागों के कार्यों (गतिविधियों) के समन्वयन का दायित्व प्रबन्ध का होता है। यहां तक कि जब व्यक्तिगत प्रबन्धकों (उत्पादन प्रबन्धक, विक्रय–प्रबन्धक) को अधिकारों का प्रत्यायोजन किया जाता है, अन्तिम निर्णय उच्च–प्रबन्धन द्वारा लिये जाने चाहिये। जैसे–जैसे उत्पादन बढ़ता है, अन्ततोगत्वा उच्च प्रबन्धन कार्याधिक्य से प्रभावित होता है तथा अपने समन्वयक एवं अन्तिम निर्णय कर्ता की भूमिका में अल्प–दक्ष होते जाते है। इस दृष्टिकोण में वर्द्धमान पैमाने के प्रतिफल वास्तव में चलनशील (परिवर्तनशील) अनुपातों की एक विशेष दशा (प्रकरण) है।

(2) प्राकृतिक संसाधनों की हद (दूर) :–

जैसे–जैसे उत्पादन बढ़ता है, उत्पादन समान अनुपात में बढ़ता हुआ नहीं प्राप्त होता है ऐसा प्राकृतिक संसाधनों की हद (सीमा) के कारण होता है। उदाहरणार्थ मछली पकड़ने की नौका (पोतावली) को दो गुना करने से दो गुना मछली नहीं पकड़ी जा सकती, अथवा एक खान अथवा तेल उत्कर्षण क्षेत्र में संयत्रों को दो गुना करके दो गुना उत्पादन नहीं प्राप्त किया जा सकता है।

(3) संगठनात्मक समस्यायें :–

व्यापक (बड़े) पैमाने के उत्पादन में कतिपय संगठनात्मक समस्यायें सामने आती है। अत्यधिक श्रमिकों से युक्त एक संयत्र का प्रबन्ध एक लघु संयत्र के प्रबन्ध की तुलना में अधिक दुरूह है। कर्मचारियों (श्रमिकों) की अत्यधिक संख्या, अधिक संख्या में पर्यवेक्षकों एवं फोरमैनों की आवश्यकता को बढ़ता है जो मध्य प्रबन्धन कई स्तरों का निर्माण करता है, फलतः सम्प्रेषण की समस्या उत्पन्न होती है। परिणामतः प्रबन्धकों के लिये त्वरित तीव्र (तीखे) निर्णयों को लेना कठिन हो जाता है। सांगठनिक अमितव्ययिता जो कि बढ़ी संयत्र के साथ संयुग्मित होती है, फर्म तत्परतापूर्वक विविध संयत्र निर्मित करती

है। वाहन निमार्णी एकीकरण संयत्र अन्य घटकों को अन्यत्र निर्मित करके अपने संयत्र के आकार को लघु करते है।

7.6 सारांश

उत्पादन–फलन आगतों एवं निर्गतों की मात्राओं के मध्य क्रियात्मक सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है। उत्पादन–फलन, जोकि उत्पादन की तकनीकी दशाओं द्वारा निर्धारित होता है, दो प्रकार दृढ़ अथवा लोचशील, होता है। उत्पादन–फलन आंगतों के विभिन्न संयोजन के उत्पादित की जा सकने वाली अधिकतम मात्राओं को दर्शाता है। अल्पकाल में कुछ आगत परिवर्तनीय नहीं हो सकते। दीर्घकाल में समस्त आगत (घटक) परिवर्तित (परिवर्तनीय) हो सकते ळें। इसी प्रकार कुल उत्पादन परिवर्तनशील आगत एवं निर्गत, जबकि अन्य समस्त आगत स्थिर (अपरिवर्तित) रखे गये हों, के मध्यम का सम्बन्ध है।

किसी आगत के नियोजन के किसी स्तर के लिये, उस आगत की प्रत्येक इकाई के सीमांत उत्पाद का योग नियोजन स्तर पर उस आगत के कुल उत्पाद को प्रदान (देना) करता है। इस प्रकार सीमांत उत्पाद तथा औसत उत्पाद वक्र व्युत्क्रम श्न्श आकार के होते है। सीमांत उत्पाद वक्र, औसत उत्पाद वक्र को, औसत उत्पाद वक्र के उच्चतम बिन्दु के ऊपर से काटता है।

7.7 शब्दावली

वृद्धिमान पैमाने के प्रतिफल '– यदि उत्पादन के आगतों में किये गये परिवर्तनों के अनुपात की तुलना में अधिक अनुपात का उत्पादन प्राप्त होता है तो यह वृद्धिमान पैमाने का प्रतिफल कहा जाता है।

<u>सम–उत्पाद :–</u> उत्पादन–फलन का ज्यामितीय निरूपण।

7.8 बोध प्रश्न

1. सत्य या असत्य

अ– उत्पादन–सिद्धान्त केवल अल्पकाल में आगत–निर्गत सम्बन्ध का अध्ययन करता है।

ब– एक सम–उत्पाद आर्थिक क्षेत्र में ऋणात्मक ढ़लान रखता है।

स– आगतों में निश्चित अनुपात में परिवर्तन जब उसी क्रम में (सुसंगत अनुपता में) उत्पादन में अनुपातिक वृद्धि करता है तो यह ह्रासमान पैमाने के प्रतिफल को प्रदर्शित करता है।

द– पैमाने के प्रतिफल साधनों की अविभाजनीयता के कारण बढ़ते है।

2. वाक्यांश को पूरा कीजिये

अ– परिवर्तनशील अनुपतों के नियम के सम्पूर्ण विकास में .... अवस्थाये समाहित होती है।

ब– दो सम–उत्पाद एक दूसरे को प्रतिच्छेदित .... करते है।

स– जैसे–जैसे फर्म का आकार बढ़ता है, आन्तरिक मितव्ययिता, आन्तरिक अमितव्ययिता से .... होती है।

द– जब व्यावसायिक इकाई विस्तरित होती है, पैमाने के प्रतिफल . ...

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (अ) गलत, (ब) सत्य, (स) गलत, (द) सत्य
2. (अ) तीन, (ब) नहीं की जा सकती (स) प्रतिभारित (प्रति–संतुलित), (द) बढ़ती है।

7.10 स्वपरख प्रश्न

1. ह्रासमान सीमांत उत्पाद नियम क्या है?
2. परिवर्तनशील अनुपातों का नियमा क्या है?
3. उत्पादन–फलन स्थिर पैमाने के प्रतिफल को कब संतुष्ट करता है?
4. ह्रासमान सीमांत प्रतिफल नियम का वर्णन कीजिये तथा इस सिद्धांत का एक उदाहरण दीजिये।
5. ''पैमाने की मितव्ययिता आन्तरिक अथवा बाह्य हो सकती है, ये तकनीकी प्रबन्धकीय, वित्तीय अथवा जोखिम–वहन करने वाली हो सकती है।'' टिप्पणी कीजिये।
6. पैमाने के प्रतिफल के नियमों पर विस्तृत टिप्पणी लिखिये।

7.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Yogesh Maheshwari, Managerial Economics, Prentice Hall of India, New Delhi.
2. D.N. Dwivedi, Managerial Economics, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.
3. T.R. Jain, O.P. Khanna and Virsen, Micro Economics and Indian Economy, V.K. Publishers, New Delhi.
4. H.L. Ahuja, Advanced Economic Theory, S. Chand & Co. Ltd., New Delhi.
5. Atmanand, Managerial Economics, Excel Books, Delhi.
6. R.L. Varshney and K.L. Maheshwari, Managerial Economics, Sultan Chand & Sons, New Delhi.

इकाई 8 लागत के सिद्धाँत

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 लागत–संकल्पनाऐं
8.2.1 लेखाँकन लागत संकल्पनाएँ
8.2.1 विश्लेषणात्मक लागत संकल्पनायें
8.3 लागत सि़द्धाँत : लागत – उत्पादन सम्बन्ध
8.3.1 अल्पकाल में लागतें
8.3.2 दीर्घकालिक लागतें
8.4 दो संयत्रों के मध्य उत्पादन (निर्गत) का वितरण
8.5 पैमाने की मितव्ययितायें एवँ अमितव्ययितायें
8.5.1 पैमाने की अमितव्ययितायें
8.5.2 पैमाने की अमितव्ययितायें
8.6 सम–विच्छेद विश्लेषण
8.7 साराँश
8.8 शब्दावली
8.9 बोध प्रश्न
8.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
8.11 स्वपरख प्रश्न
8.12 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्‌देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- लेखाँकन उद्देश्यों (अभिप्रायों) के लिये उपयोगी लागत संकल्पनाओं (सिद्धाँतो) तथा आर्थिक विश्लेषण में प्रयुक्त विश्लेषणात्मक लागत–संकल्पनाओं को परिभाषित कर सकें।
- अल्पकालीन एवँ दीर्घकालीन ढाँचे में लागत – उत्पादन सम्बन्ध के विश्लेषण कर सकें।
- पैमाने की अमितव्ययिता एवँ अनमितव्ययिता का वर्णन कर सकें।
- सम – विच्छेद विश्लेषण का वर्णन कर सकें।

8.1 प्रस्तावना

पूर्ण प्रतिर्स्पधात्मक उधोगो मे फर्म (FIRM) तीन विशिष्ट निर्णयों को लेती है :–

क अपूर्ति हेतु कितना उत्पादन

ख कौन सी उत्पादन प्रौद्योगिकी प्रयोग की जाये ?

ग कितने ऑगत की माँग करें ?

ये समस्त निर्णय गैर–प्रतिर्स्पद्धात्मक उद्योगों में भी लिये जाते हैं। क्योकि पूर्ण प्रतियोगी (प्रतिर्स्पद्धी) बाजार में फर्म आगॅत एवँ निर्गत बाजार में मूल्य पर आधारित होते है। अधिकाँश निर्णय मूल्य पर आधारित होते है जिस पर फर्म का कोई नियॅत्रण नहीं होता है। लागत फलन व्युत्पत्तित फलन होते

हैं। ये उत्पादन फलन से व्युत्पत्रित होते है जो उत्पादन लागत पर केंद्रित होता है। लागत की गणना करने हेतु फर्म को दो बातें जानना आवश्यक है : ऑगतों की मात्रा एवँ संयोजन यह इनके ऑगतो की लागत जानने हेतु आवश्यक है । इस इकाई में आप लागत–संकल्पनाओं (सिद्धांतो) अल्पकाल एवँ दीर्घकाल में लागतो दो फर्मो के मध्य उत्पादन का नियत (आवँटन/निर्धारण) तथा पैमाने की मितव्ययिता एवँ अमितव्ययिता सम–विच्छेद विश्लेषण के बारे मे अध्ययन करेगें।

8.2 लागत सिद्धाँत (संकल्पनायें)

लागत के कई उपयोगी सिद्धाँत हैं। व्यावसयिक परिचालन तथा निर्णयों के लिये व्यवहारिक (उपयोगी) लागत सिद्धाँतो को उनकी प्रकृति एवँ अभिप्राय के आधार दो परच्छादित (अति आच्छादित) वर्गो के अंतर्गत समूहिक किया जा सकता हैं,

क लेखाँकन उद्देश्यों (अभिप्रयों) हेतु उपयोगी लागत संकल्पनायें (सिद्धाँत)
,

ख व्यावसायिक कार्यो (गतिविधियों) के आर्थिक विश्लेषण मे प्रयुक्त विश्लेषणात्मक लागत सिद्धाँत ।

8.2.1 लेखाँकन लागत सिद्धाँत (संकल्पनाएँ)

1. <u>अवसर लागत एवँ वास्तविक लागत –</u>

अवसर लागत उस अवसर के मूल्य का मापन करते है जो एक कार्य – योजना के चयन (पसंद) के फलस्वरूप वैकल्पिक कार्य – योजना का त्याग करना (छोड़ देने) आवश्यक होता है।

सामान्य रूप में एक कार्य – योजना का चयन जो अन्य सुविधाओं अथवा संसाधनों को छोड़ना जो अन्य प्रकार से अन्य उद्देश्यों हेतु उपयोग किये जासके अवसर लागत कहलाता है।

यह उस लाभ से मापा जाता है जो त्याग किये गये संसाधनों को अपनाने (प्रयुक्त करने) से प्राप्त होते है। उदाहरर्णथ कालेज की शिक्षा प्राप्त करने की अवसर लागत वह होती है, जो व्यक्ति पूर्णकालिक कार्य (सेवा रोजगार) कर के प्राप्त कर सकता, होती है।

फर्म द्वारा व्यय की गयी (वहन की गयी) वास्तविक लागतें वह हाती है , जो फर्म द्वारा श्रम सामग्री, संयत्र, भवन, मशीनरी, उपकरण, यात्रा, एवँ परिवहन, विज्ञापन इत्यादि हेतु भुगतान की जाती हैं। इन्हें वास्तविक लागते भी कहते है। लेखा पुस्तकों में समस्त व्यवहारिक अभिप्रायों हेतु अभिलेखित कुल मौखिक व्यय वास्तविक लागतें होती है।

2. <u>स्पष्ट (व्यक्त) लागतें, एवँ अप्रत्यक्ष (अस्पष्ट/अंतर्निहित) लागतें।</u>

आर्थिक लागतों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है। स्पष्ट व्यक्त/बहि) लागतें, एवँ अप्रत्यक्ष (अस्पष्ट/आँतरिक/अव्यक्त लागतें)

स्पष्ट लागतों वे लागते होती हैं, जो फर्म द्वारा वाह्य साधनो को लेने पर (किराये पर लागतें पर/खरीदने पर) खर्च/भुगतान की जाती है अर्थात फर्म जब फर्म के बाहर से घटकों (उत्पादन के साधनों) को खरीदने पर भुगतान के रूप में खर्च (व्यय) करती है तो इन लागतों को व्यक्त/स्पष्ट लागतें कहा जाता है।

अव्यक्त (अप्रत्यक्ष/अस्पष्ट) लागते वह होती है, जो उद्यमी के स्वयं के समय व पैसे (मुद्रा/पूँजी) के सर्वश्रेष्ठ वैकल्पिक प्रयोग के द्वारा उत्पादित की जा सकने वाली वस्तु विशेष (विशेष उत्पाद) के उत्पादन में लगने वाली राशियों के बराबर होती है। अर्थात उद्यमी की पूँजी एवँ समय द्वारा जो वस्तु उत्पादित होती उसको उत्पादित करने में लगी राशि ही बर्ति (अव्यय/अस्पष्ट लागत) लागत कहलाती है।

व्यक्त/स्पष्ट(प्रत्यक्ष) लागतों तथा अप्रत्यक्ष लागतों में मात्र एक अंतर किराये पर (बाहर से संसाधानों) संसाधनों को प्राप्त करने में व्यय तथा स्व स्वामित संसाधनों पर कृत व्यय है।

3. <u>व्यावसायिक लागतें एवँ सम्पूर्ण लागतें</u>

किसी फर्म की व्यावसायिक लागतें, साधारण लेखाँकन पद्धति द्वारा आगणित (गणना की गयी) कुल मौखिक व्ययों को ही कहा जाता है। इन व्ययों में संयत्र एवं मशीनरी की पुस्तक लागतों पर भारित हास के साथ फर्म द्वारा भुगतान किये गये समस्त भुगतान एवं सांविदिक दायित्वों (आनुबंधिक दायित्वों) को सम्मिलित किया जाता है।

सम्पूर्ण (पूर्ण) लागत में व्यावसायिक लागतें, अवसर लागतें तथा सामान्य लाभ सम्मिलित होते है। फर्म की अवसर लागत में फर्म के स्वामी द्वारा निवेशित निधि पर ब्याज तथा उद्यमी की श्रम– सेंवाओं के मूल्य, यदि फर्म में कार्य करता है और व्यावसायिक व्ययों के रूप में कोई वेतन न ले रहा हो, सम्मिलित होते है,।

4. <u>तुरंत देय लागत एवं पुस्तकीय लागत</u>

तुरंत देय लागत (खर्चे) वे लागतें होती है, जिनका वाह्य व्यक्तियों (जिनसे साधन प्राप्त किये गये तथा फर्म के बाहर के है) को शीघ्र (त्वरित) भुगतान किया जाना होता है, इसके विपरीत पुस्तक लागतें वे लागते है होती है, जिनके लिये चालू नकद व्यय की (खर्च की) आवश्यकता नहीं होती है। उदाहरणार्थ कर्मचारियों को दिये गये वेतन एवं मजदूरी तुरंत देय लागते (खर्चे) है, जबकि स्वामी – प्रबधक का स्वयँ को वेतन यदि नही भुगतान किया गया है, (स्वामी – प्रबंधक ने भुगतान प्राप्त नही किया है तो) पुस्तक लागत है। तुरंत देय लागतों को स्पष्ट (प्रत्यक्ष/व्यक्त) लागते तथा इसी प्रकार पुस्तक लागतों को अस्पष्ट (अप्रत्क्ष/अव्यत्त) लागत कहा जाता है। पुस्तक लागतों को तुरंत देय लागतों में, संपत्तियों के विक्रय तथा उन्हों क्रेताओं को पट्टे देकर परिवर्तित किया जा सकता है।

5. <u>आर्थिक लागत एवँ सामान्य लाभ</u>

वस्तु के उत्पादन में आर्थिक लागतें उन समस्त भुगतानों से संदर्भित (सम्बधित) है, जो फर्म द्वारा उस वस्तु के उत्पादन हेतु नियोजित समस्त साधनों के लिये किये जाते हैं। उत्पादन के साधनों (घटकों) में फर्म द्वारा स्वामित (फर्म के स्वंय के संसाधन) तथा बाहर से प्राप्त, दोनो संसाधन सम्मिलित होते हैं। सामान्य लाभ, लाभ नहीं वरन आर्थिक लागत की एक मद (प्रकार) हैं। विशेष रूप में यह उद्यमी के समय की अवसर लागत होती है। यह उतना ही लाभ होता है जो यह सुनिश्चित करने हेतु संतोषजनक होता है, कि फर्म व्यवसाय में रह सके।

8.2.2 विश्लेसणात्मक लागत संकल्पनायें (सिद्धाँत)

1. परिर्तनशील एवं स्थिर लागते

परिर्तनशील एवं स्थिर लागते, लागत की वे मदें है, जो मात्रा में परिवर्तनशील के अनुपात में, प्रत्यक्ष रूप से परिवर्तित होती है। स्थिर लागत, मात्रा में परिवर्तन के साथ बिल्कुल (कदापि) नहीं परिवर्तित होती है। भवन पर ह्रास, सम्पत्ति होती है।

भवन पर ह्रास, सम्पत्ति कर, पर्यवेक्षक का वेतन, इत्यादि स्थिर लागतें है। ये लागतें समय के साथ बढ़ती है, न कि इकाई (उत्पादन) की मात्रा में वृद्धि होने से।

2. कुल औसत एवँ सीमाँत लागतें

कुल लागतों में साधनो को प्राप्त करने हेतु किये गये भुगतान एवँ तथा किसी उत्पाद विशेष की उत्पत्ति करने अथवा प्राप्त करने में स्वामी के उत्पादन के साधनो की प्राप्ति में नकद प्रभार जो प्रयुक्त हुये हो को सम्मिलित किया जाता है।

औसत लागत प्रति इकाई लागत है, जो कुल लागत को, कुल – उत्पदित मात्रा से विभाजित कर के प्राप्त होती है

औसत लागात = कुल लागत /उत्पादन (कुल मात्रा)

सीमाँत लागत वह लगत होती है, जो एक अतिरिक्त इकाई के उत्पादन में आती है।

सीमाँत लागत = एक अतिरिक्त इकाई उत्पादन की लागत/एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन

3. अल्पकालीन एवँ दीर्घकालिक लागतें,

अल्पकाल से अभिप्राय उस अवधि से है, जिसमें कम से कम एक उत्पादन घटक की आपूर्ति स्थिर रखी जाती है। दो स्थिर घटक संयत्र एवँ उपकरण है। दीर्घकाल में उत्पादन के समस्त साधन (ऑगत) परिवर्तनशील होते है। अल्पकाल एवँ दीर्घकाल किसी कैलेंडर वर्ष की निश्चित इकाई से सम्बन्धित नही है, वरन समयावधि वर्गीकरण के अनुसार (सुसंगत क्रम/रूप में) दीर्घकाल एवँ अल्पकाल लागतें होती है। अल्पकालीन लागत वह लागत होती है जो उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन के साथ परिवर्तित होती रहती है, जबकि संयत्र एवँ पूँजी समान/स्थिर (अपरिवर्तित) रहती है, जबकि दीर्घकालीन लागत वह लागत होती है, जो उत्पादन के साथ तब परिवर्तित होती है जब उत्पादन के समस्त आगत (घटक), संयत्र एवँ उपकरण भी, परिवर्तित होते है। दीर्घकाल परिवर्तनशील संयत्र आकार मान्यता पर आधारित है, तथा यह वास्तव में विभित्र संयत्र आकारों के अल्पकालीन लागत व्ययों को समाहित करता है। ऐसा इसलिये क्योंकि दीर्घकाल में समस्त लागते परिवर्तनशील होती है। संयत्र वर्तमान में तो (स्थिर निश्चित) हो सकते है, कितु भविष्य में संभावित विकल्पों के अंतर्गत इसके आकार को किसी ऐच्छिक – स्तर तक लगाने का निर्णय लिया जा सकता है।

4. ऐतिहासिक एवँ प्रतिस्थापनीय लागतें

किसी सम्पति की ऐतिहासिक लागत किसी सम्पत्ति के अधिग्रहण में लगी (व्यय लागत) से सम्बन्धित है।

प्रति स्थापनीय लागते उन व्ययों से सम्बन्धित है, जो पुरानी सम्पत्ति को प्रतिस्थापित करने में होती हैं।

5. निजी (व्यक्तिगत) एवँ सामाजिक लागतें

निजी लागते उन मूल्यों को कहते है, जो उद्यमी को किसी उत्पाद की उत्पादन में प्रयुक्त सामग्री को प्राप्त करने हेतु अवश्य चुकानी पड़ती है। उदाहरणार्थ 'X' वस्तु (उत्पाद) को उत्पादित करने के क्रम में (करने हेतु) उ़द्यमी को संसाधनों को क्रय करने, उद्योग करने तथा वस्तु को बेचने में खर्च (व्यय) होती है।

उद्यमी विक्रय से प्राप्त आगम तथा संसाधनों की लागत की तुलना कर सकता है तथा यह निर्धारित कर सकता है, कि लेखॉकन लाभ हुआ है, कि नहीं। सामाजिक लागत वह लागत होती है जो किसी निर्दिष्ट उत्पाद के उत्पादन में प्रयुक्त्त संसाधनों के उपयोग के कारण समाज को अपने ऊपर लेनी पड़ती (उठानी पड़ती है) है।

8.3 लागत सिद्धाँत : लागत – उत्पादन (निर्गत) सम्बन्ध

लागत सिद्धाँत, उत्पादन में परिवर्तन के सम्बन्ध मे लागत व्यवहार से सम्बन्ध रखता है। लागत – सिद्धाँत यह विचार करता (मानता है) है, कि कुल लागत उत्पादन में परिवर्तन के साथ परिर्वतित होता है व्यासायिक निर्णयकारों के दृष्टिकोण से कुल लागत में पूर्ण परिर्वतन महत्वपूर्ण नही है किन्तु औसत एवँ सीमांत लागत के परिवर्तन की दिशा लागत –फलन, लागत एवँ उत्पादन के मध्य के तकनीकी सम्बन्ध का प्रतीकात्मक कथन है।

लागत–फलन का विशिष्ट रूप प्रकार) लागत – विश्लेषण हेतु चयनित समय– अल्पकाल अथवा दीर्घ काल, के लिये व्यवहारिक (उपयोगी) है।

अल्प काल में कुछ (कतिपय) लागत स्थिर (निश्चित) रहती है, जब कि दीर्घकाल में समस्त लागतें परिवर्तनशील होती है। इस प्रकार समय के आधार पर दो प्रकार के लागत – फलन, (a) अल्पकालीन लागत – फलन तथा (b) दीर्घकालीन लागत – फलन , होते हैं।

8.3.1 अल्पकाल में लागतें, कुल – लागतें

फर्म के सिद्धाँत में, कुल लागतों को दो वर्गो, कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत, में विभाजित किया गया है।

कुल लागत = कुल स्थिर लागत + कुल परिवर्तन शील लागत

कुल स्थिर लागत

स्थिर लागतों में प्रशाशनिक स्टाफ का वेतन, ह्रास (टूट –फूट) मशीनरी पर, भवन हेतु व्यय, भूमि अनुरक्षण एवँ मरम्मत पर व्यय, सामान्य लाभ (जो कि एक मुस्त सम्मिलित रहता है।) तथा जोखिमो के लिये भत्ते सम्मिलित होते है।

कुल परिवर्तनशील लागतें

परिवर्तनशील लागतों में कच्चेमाल, प्रत्यक्ष श्रम की लागत, स्थिर (निश्चित) पूँजी के क्रियाशील व्यय – ईधन , सामान्य मरम्मत, एवँ नैत्यिक अनुरक्षण आदि सम्मिलित होते है। फर्म की कुल परिवर्तनशील लागत व्यापकता एक व्युत्क्रम 'S' की आकृति की होती है जो परिवर्तनशील लागतों के नियम को प्रदर्शित करती है। इस नियम के अनुसार एक निर्दिष्ट संयत्र में उत्पादन

के प्रारम्भिक चरण (अवस्था) में जैसे – जैसे हम परिवर्तनशील घटकों की मात्रा बढ़ाते है, (इनको और आर्थिक नियोजित करते है) संयत्र की उत्पादकता बढ़ती है, किंतु औसत परिवर्तनशील लागत गिरती है। यह अनवरत स्थिर एवँ परिवर्तनशील ऑगतो (घटको) के अनुकूलतम संयोजन के प्राप्त होने तक चलता रहता है। इस बिंदु के आगे (परे) जैसे ही परिवर्तनशील आगतों की बढ़ी हुई मात्रा स्थिर घटको के साथ संयोजित होती है, परिवर्तन घटकों की उत्पादकता घटती है तथा औसत परिवर्तनशील लागत बढ़ती है।

कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत को जोड़ने पर फर्म की कुल लागत प्राप्त होती है।

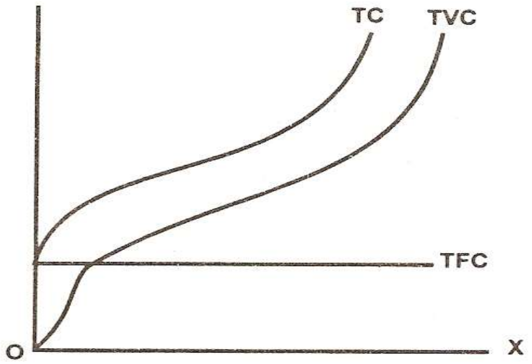

चित्र 8.1 – कुल लागत

<u>औसत लागत</u>

कुल लागत को उत्पादन के समतुल्य स्तर से विभाजित कर के औसत लागत प्राप्त की जाती है।

औसत लागत की आकृति औसत परिवर्तनशील लागत के समान ही (दोनों 'U' के होते हैं) होती है। आरम्भ में औसत लागत गिरती है, तथा यह न्यूनतम, संयत्र परिचालन के अनुकूलम स्तर पर, होती है, तथा पुनः बढ़ती है। औसत परिवर्तशील लागत तथा औसत लागत की 'U' आकृति परिवर्तनशील अनुपातों के नियम अथवा अंततोगत्वा (अंततः) ह्यसमान परिवर्तन घटकों के नियम को दर्शाता है। फर्म की औसत लागत अल्पकाल में सदैव न्यूनतम स्तर तक गिरती है (न्यूनतम होती है) तत्पश्चात यह बढती हैं यह कितना गिरेगी यह कुल लागत में स्थिर लागत के अनुपात पर निर्भर करती है। यदि स्थिर लागत का अनुपात कुललागत में उच्च (अधिक) है, तो औसत लागत में पतन (गिरावट) त्वरित होगी ।

<u>औसत स्थिर लागत</u>

औसत स्थिर लागत कुल स्थिर लागत को उत्पादित इकाइयों की संख्या से विभाजित करने पर प्राप्त होती है।

औसत स्थिर लागत =कुल स्थिर लागत/कुल उत्पादित इकाईयो की संख्या (मात्रा)

जैसे – जैसे उत्पादन बढ़ता है, औसत स्थिर लागत गिरती है क्योकि कुल योग को (स्थिर व्ययों/लागतो) अधिक मात्रा से विभाजित करते है, अथवा

अधिक संख्या पर फैलाते (विस्तरित) है। कभी – कभी इस सिद्धांत को उपरिव्यय प्रसार सिद्धाँत भी कहा जाता है।

औसत स्थिर लागत वक्र अक्षों पर समकोणीय (आयताकर) अतिपरवलय अनन्त स्पर्शी होते है। जिस के अनुसार वक्र प्रत्येक ओर से उर्ध्व एवँ क्षैतिज छोर तक पहुँचते है। प्रत्येक लघु उत्पादन के लिये औसत स्थिर लागत (प्रतिइकाई) अधिक होती है, तथा दीर्घ उत्पादन के लिये यह अल्प (कम) होती है औसत स्थिर लागत वक्र समकोणीय (आयताकार) अतिपर वलायकार होता है, क्योंकि उत्पादन से गुणित औसत स्थिर लागत सदैव समान राशि की ही रहती है है। इस प्रकार औसत स्थिर लागत निरंतर (स्थिरतापूर्वक) गिरती है जैसे – जैसे उत्पादन बढ़ता जाता है।

<u>औसत परिवर्तनशील</u>

औसत परिवर्तनशील लागत को कुल परिवर्तनशील लागत को समतुल्य उतपादन स्तर से विभाजित कर के प्राप्त की जाती है ।

औसत परिवर्तनशील लागत = कुल परिवर्तनशील लागत / उत्पादन की इकाइयाँ (निर्गत)

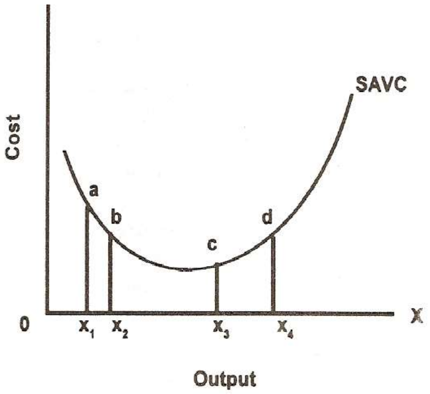

चित्रः 8.2 (अल्पकालीन औसत परिवर्तनशील लागत)

चित्र 8.2 दर्शाता है कि औसत परिवर्तनशील लागत उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर उत्पादन के विशेष स्तर के सुसंगत औसत परिवर्तनशील लागत के उत्पत्ति बिंदु (उद्‌भव/प्रांरम्भ) से क्लाँत ढलाव से व्युत्पत्तित होता है। औसत परिवर्तनशील लागत वक्र पहले जैसे – जैसे उत्पादन के परिवर्तनशील साधनों की उत्पादकता बढ़ती है, न्यूनर्टम स्तर पर पहुँचती है (जब कि) संयत्र अनुकूलतम स्थिति से परिचालित हो रहा हो तब तथा इस बिंदु के परे (बाद) बढ़ता है।

<u>सीमाँत लागत</u>

समस्त लागत सिद्धाँतों में सीमाँत लागत सर्वाधिक महात्वपूर्ण सिद्धाँत है। सीमाँत लागत को उत्पादन में इकाई परिवर्तन के फलस्वरूप कुल लागत में परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह कुल लागत में अतिरिक्त वृद्धि है जब कि एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन किया जाता है। सीमाँत लागत, स्थिर लागत से स्वतंत्र होती है क्योंकि एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन स्थिर लागत में कुछ जोड़ता नही है। सीमाँत लागत केवल परिवर्तनशील लागतों से सम्वन्धित होती है। सीमाँत लागत वक्र के अंतर्गत के क्षेत्र कुल परिवर्तनशील लागत के बराबर होते है।

सीमाँत लागत = ∂ कुल लागत / ∂ उत्पादित इकाई

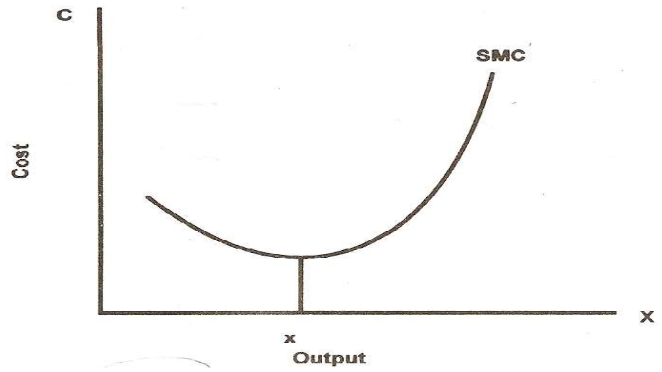

(चित्रः 8.3 अल्पकालीन सीमांत लागत)

अल्पकाल में सभी फर्म कुछ स्थिर आंगतों से विवश (व्यवरोधित) होती है, जो (a) परिवर्तनशील आंगतों के ह्यसमान प्रतिफल की ओर अग्रसर करती है, तथा (b) इसके उत्पादन की क्षमता को सीमित करती है। जैसे ही फर्म उस सीमितता को प्राप्त करती है (उस सीमितता तक पहुँचती है) उत्तरोत्तर उच्च उत्पादन को उत्पादित करना कठिन होता जाता है। अल्पकाल में सीमांत लागत अंततः बढ़ते उत्पादन के साथ बढ़ती है।

साराँशतः अल्पकाल में लागत वक्र (औसत परिवर्तशीत लागत औसत लागत तथा सीमाँत लागत) U आकृति के होते हैं, जो परिवर्तनशील अनुपातों के नियम को परवर्तित करते हैं। अल्पकाल में स्थिर (निश्चित) संयत्र के साथ बढ़ती हुई उत्पादकता का चरण (की अवस्था) तथा घटती हुई उत्पादकता का चरण (की अवस्था) परिवर्तनशील अनुपातों के लिये प्राप्त होता है। इन दो अवस्थाओं (चरणों) के मध्य (समंत्र परिचालन की अवस्था के मध्य) एक मात्र (अकेला) बिंदु होता है जहाँ इकाई लागतें न्यूनतम होती है। जब यह बिंदु AC (औसतलागत) पर पहुँचता है संयत्र अनुकूलतम रीति से परिचालित होता है।

औसल लागत एवँ औसत परिवर्तनशील लागत के मध्य सम्बन्ध,

चुँकि औसत लागत = औसत स्थिर लागत + औसत स्थिर लागत, अतः औसत परिवर्तनशील लागत औसत लागत का भाग होता है। औसत परिवर्तनशील लागत एवँ औसत लागत, दोनों, की U आकृति परिवर्तनशील अनुपातों के नियम को परावर्तित करती है। यह प्रमुख रूप से ध्यान देने योग्य है कि औसत आगत का निम्नतम बिंदु औसत परिवर्तन शील लागत के निम्न बिंदु के दायें होता (पड़ता है) है, क्योंकि औसत लागत औसत स्थिर लागत को समाहित करती है तथा औसत स्थिर लागत उत्पादन में प्रसार के साथ निरंतर गिरती जाती है। अपने निम्नतम बिंदु पर पहुँचने के बाद औसत परिवर्तनशील लागत बढ़ना प्रारम्भ करता है, यह औसत स्थिर लागत के गिरावट के समायोजन द्वारा एक निश्चित क्षेत्र के ऊपर बढ़ता है। इस प्रकार औसत परिवर्तनशील लागत में वृद्धि (बढ़ोतरी) के बावजुद औसत लागत परिवर्तनशील लागत में वृद्धि अंत्तोगत्वा (अंततः) औसत स्थिर लागत में गिरावट (कमी) से अधिक होती है इस प्रकार औसत लागत बढ़ना प्ररम्भ हो जाती है। औसत

परिवर्तनशील लागत औसत तक , जैसे – जैसे उत्पादन बढ़ता है अनन्तस्पर्शी रूप में पहुँचती है।

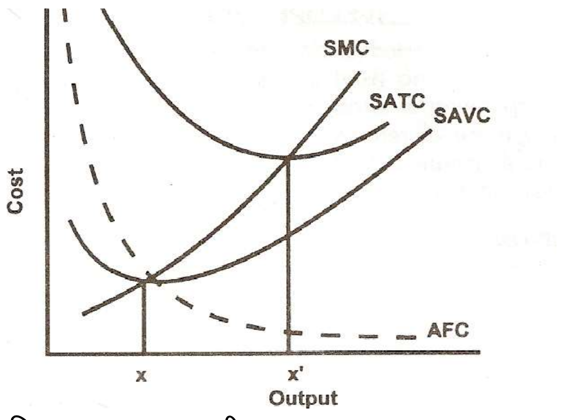

चित्र 8.4– अल्पकालीन लागत वक्र – सम्बन्ध

चित्रः 8.4 दर्शाता है कि औसत परिवर्तनशील लागत X बिंदु पर अपने निम्नतम बिंदु पर पहुँचती है जब कि औसत लागत X' पर न्यूनतम (निम्नतम) होता है। X एवँ X' के मध्य औसत स्थिर लागत में गिरावट औसत परिवर्तनशील लागत में वृद्धि के समायोजन से अधिक होती है, इसलिये (इस प्रकार) औसत लागत निरंतर रूप से गिरती रहती है। X' के पार (परे) औसत परिवर्तनशील लागत में वृद्धि औसत स्थिर लागता में गिरावट से समायोजित नही होती है अतः औसत लागत बढ़ना प्रारम्भ हो जाती है।

<u>सीमांत लागत एवं औसत लागता में सम्बन्ध</u>

औसत परिवर्तनशील लागत निरंतर तब तक गिरती रहती है जब तक सीमांत लागत इससे नीचे रहती है, किन्तु जैसे ही सीमांत लागत, औसत परिवर्तनशील लागत को जिस बिन्दु पर पार करती है यह बढ़ना आरम्भ हो जाता है। सीमांत लागत सदैव , औसत परिवर्तनशील लागत की अपेक्षा अधिक तीव्रता (तेज) से बढ़ती है। इसी प्रकार का सम्बन्ध सीमांत लागत एवं औसत लागत के मध्य भी होता है। चित्र संख्या 8.4 सीमांत लागत एवं औसत लागत के सम्बन्ध को रेखाचित्र द्वारा स्पस्ट करता है।

8.3.2 <u>दीर्घकालीन लागते –</u>

फर्म के उत्पादन फलन का कोई निश्चित आंगत नहीं होता, फर्म की कोई स्थिर (निश्चित) लागत नहीं होती यह अपने उत्पादन को पूर्णतः नवीन एवं विशाल संयत्र की स्थापना एवं परिचालन द्वारा विस्तरित करती है। उत्पादन फलन मे आंगत – निर्गत सम्बन्धनो जो होता है वह पैमाने के प्रतिफल होते है। दीर्घकालिक

का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू (पक्ष) यह है, कि दीर्घकाल एक, नियोजन क्षितिज (नियोजन आकाशवृत) होता है। इस प्रकार , दीर्घकालिक लागत वक्र उद्यमी को अपने उत्पादन के भावी विस्तार के नियोजन के उसके निर्णय हेतु मार्गदर्शक होता है।

<u>दीर्घकालिक औसत लागत वक्र</u>

दीर्घकालिक औसत लागत वक्र, अल्पकालीन लागत वक्र से व्युत्पत्ति होता है। दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का प्रत्येक बिंदु अल्पकालीन लागत वक्र के उस बिदु के सुसंगत होता है जो उसकी र्स्पशी होती है। अर्थात अल्पावधि वक्र दीर्घवधि वक्र को छूकर जाता है।

कल्पना करिये (मान लेते है, कि) कि तीन संयत्र जो क्रमशः औसत लागत SAC , SAC2 एवं SAC3 के साथ परिचालित हो रहे है।

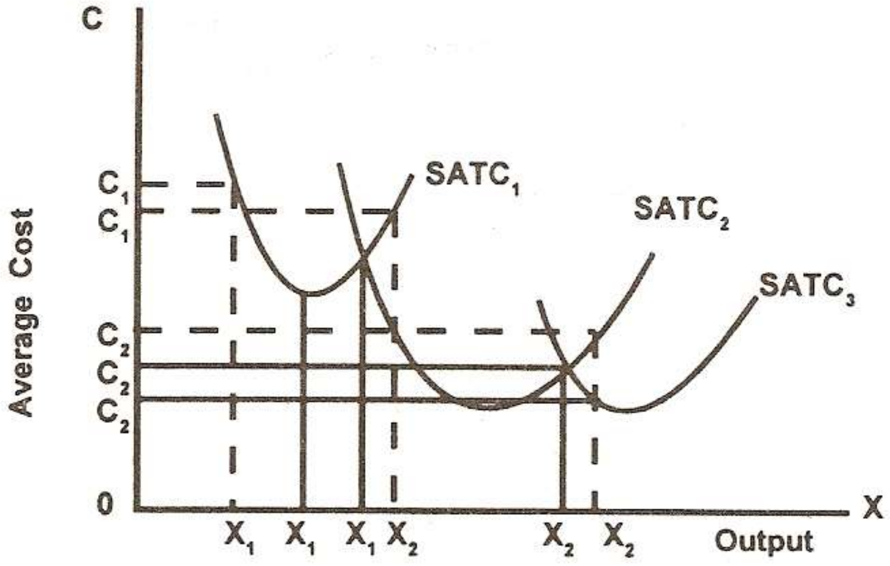

चित्र संख्या – 8.5 दीर्घकालिक औसत लागत वक्र की व्युत्पत्ति

यदि फर्म X_1 उत्पादन करना चाहती है तो वह लघु संयत्र का चुनाव करेगी। यदि फर्म X_2 उत्पादन करना चाहती है तो वह मध्यम आकार के संयत्र का तथा यदि वह X_3 उत्पादन करना चहती है, तो वह विशाल (दीर्घकार) संयत्र का चुनाव (चयन) करेगी। अब यदि फर्म लघु संयत्र के साथ उत्पादन प्रारम्भ करती है, तथा उत्रोतर बढ़ती मांग का सामना करती है, यह X_1, स्तर तक लघु संयत्र के साथ निम्न लागत पर उत्पादन करती रहेगी। X_1, फर्म का निम्नतम लागत उत्पादन स्तर है, जिसके पार (परे /पश्चात/आगे) औसत लागत बढ़ना प्रारम्भ हो जाती है। किंतु फर्म X_1 के पार (परे) भी लघु संयत्र से उत्पादन करना जारी रखेगी (चालू रखेगी), लघु संयत्रों पर उत्पादन के इन स्तरों के लिये (की) औसत लागत, मध्यम संयत्रों की लागत की अपेक्षा कम (निम्न /अल्प) ही रहती है। उस दशा में जब फर्म के उत्पाद की मॉग X_1 स्तर पर पहुँचती है तब फर्म यह चुनाव करती है, कि वह लघु संयत्रों के साथ उत्पादन जारी रखे अथवा मध्यम आकार के सयंत्र स्थापित करें। यदि फर्म यह पूर्वापेक्षा (पूर्वानुमान/पूर्वआकलन) करती है, कि उसकी मांग X_1 से अधिक उत्पादन जो कि लघु संयत्र की औसत से नीची (कम) औसत लागत पर होगा, करेगा।

फर्म समान निर्णय (प्रश्न) का सामाना करती है, जब वह X_2 पर पहुँचती है। यदि फर्म यह पूर्वापेक्षा करती है कि उसके उत्पाद की माँग X_2 से आगे नही जायेगी आर्थात X_2 पर स्थिर रहेगी तब वह नवीन (बड़े आकार) दीर्घ

संयत्र की स्थापना नहीं करेगी क्योंकि यह एक व्ययसाध्य (खर्चीला) कार्य है जिसमें बड़े निवेश की आवश्यकता होगी तथा यह उसी दशा में लाभदायक होगा जब उत्पाद की माँग X_2 से आगे विस्तरित होती है।

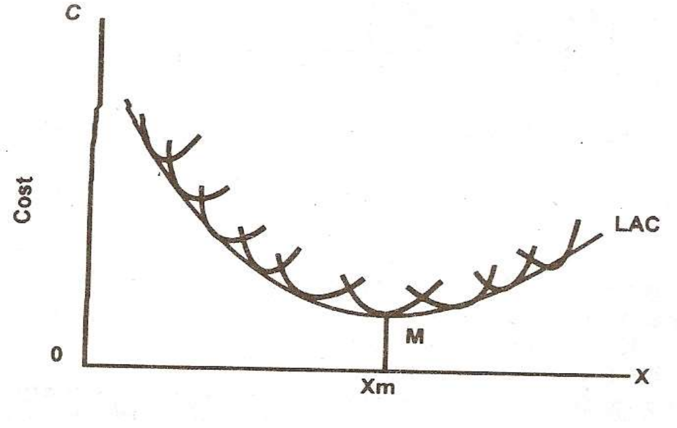

चित्र सं. – 8.6 दीर्घकालीन औसत लागत वक्र

आइये अब कल्पना करते है (मान लेते हैं) कि कई आकार के संयंत्र है, जिनमें से प्रत्येक एक निश्चित स्तर के उत्पादन हेतु उपयुक्त है, जैसा कि चित्र सं. 8.6 में दिखाया गया हमें कई प्रतिच्छेदन बिंदु प्राप्त होगें जो इस निर्णय के चुनाव हेतु कि, वर्तमान संयत्र के साथ ही उत्पादन अनवरत चालू रखा जाय अत्यंत निर्णायक (महत्वपूर्ण) है। अतः हम प्रायः सत्त वक्र (लगातार वक्र) प्राप्त करते है। इसे दीर्घकालीन औसत – लागता वक्र अथवा आवरण – वक्र' के नाम से जाना जाता है।

वक्र का प्रत्येक बिदु समतुल्य स्तर उत्पादन (उत्पादन के समतुल्य स्तर) के उत्पादन की निम्नतम (न्यूनतम) लागत को दर्शाता है। यह फर्म का नियोजन वक्र भी होता है, जिसके आधार पर फर्म यह निर्णय करती है, कि अनुकूलन या अपेक्षित उत्पादन प्राप्त करने हेतु किस प्रकार (क्या) का संयत्र स्थापित किया जाये। फर्म अल्पकालीन (लघु संयत्र) संयत्र का चुनाव करती है, जो इसे अपेक्षित उत्पाद की मात्रा को न्युनतम संभावित लागत पर उत्पादन करने का मार्ग दिखाती (अनुमति प्रदान) करती है। दीर्घकालिक (दीर्घकालिन) औसत लागत वक्र की U आकृति पैमाने की अभितव्यिता उसी दशा में दृष्य संयत्र का एक निश्चित आकार, जिसे अनुकूलतम संयत्र आकार कहा जाता है, हो जिसके साथ समस्त संभावित पैमाने की मितव्यधितायें पूर्ण रूप से संदोहित होती है। अनुकूलतम संयत्र के आकार के पश्चात (परे) प्रबांधकीय अकुशलता (अन्दक्षता) के फल स्वरूप पैमाने की अभितव्यिता बढ़ती है। इसके कारण दीर्घकालीन औसत लागत ऊपर की ओर बढ़ती है।

चित्र 8.6 में X_m बिंदु अनुकूलतम उत्पादन बिदु है तथा समतुल्य (सदृश, तदनरूप) संयत्र अनुकूलतम संयत्र आकार है।

दीर्घकालिक सीमांत लागत वक्र

दीर्घकालिक सीमांत लागत अल्पकालीन सीमांत वक्र से व्युत्पत्ति होती है, कितु उन्हें आवरण नही प्रदान करती अर्थात ढकती नहीं । दीर्घकालिक सीमांत वक्र दीर्घकालीन एवं अल्पकालीन सीमांत लागत वक्र के र्स्पशी बिंदु के

समतुल्य से बिंदु लिये गये उतपादन अक्ष के लम्बवत रेखाओ के साथ अल्पकालीन सीमांत लागत के प्रतिच्द्देदन बिंदु से निर्मित होता है।

चित्र संख्या 8.7 इस व्युत्पत्ति को दर्शाता है,

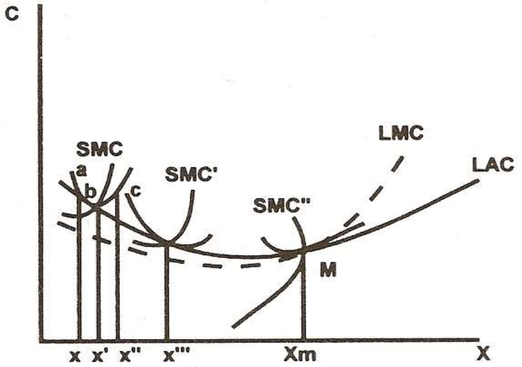

चित्र सं. – 8.7 दीर्घकालिक सीमांत लागत वक्र की व्युत्पत्ति

दीर्घकालीन सीमाँत लागत, उस उत्पादन के लिये जहाँ पर समतुल्य अल्पकालीन औसत लागत दीर्घकालीन औसत आगत की स्पर्शज्या (स्र्पशी) होनी चाहिऐ। स्र्पश बिंदु के बायें उत्पादन के स्त्रों के लिये अल्पकालीन औसत दीर्घकालीन औसत लागत से बड़ी (अधिक) होती है। स्र्पश बिंदु पर अल्पकालीन औसत लागत = दीर्घकालिक (दीर्घकालीन) औसत बिदु a से बिंदु b तक की गति (चलना/संचार) अल्प सीमा औसत लागत एवं दीर्घसीमा औसत लागत का असमानत से समानता की स्थिति तक का संचार (चलना) है। इसलिये (अतः) कुल लागत में परिवर्तन अल्पकालीन वक्र की सीमाँत लागत, दीर्घकालीन सीमाँत लागत से कम (छोटी) होनी चाहिये। a बिंदु के बायें को दीर्घकालीन सीमांत लागत अल्पकालीन सीमात लागत से अधिक (बड़ी) होती है। x' से x'' के पार (परे) उत्पादन में वृद्धि हेतु अल्पकालीन औसत लागत दीर्घकालीन औसत लागत से अधिक होती है। यह दो लागतों के समानता के स्थिति से c स्थिति की ओर संचरण है, जहाँ (जिस पर) अल्पकालीन औसत लागत दीर्घकालीन औसत लागत से अधिक (बड़ी) होती है। इसलिये कुल लागत में जुड़ाव (अधिक्य /जोड़) दीर्घकालीन वक्र के लिये बड़ा (विशाल) होना चाहिये। इस प्रकार दीर्घकालिक सीमाँत लागत < अल्पकालीन सीमाँत अर्थात बिंदु a के दायें को LMC < SMC लागत चूकिं a के स्र्पशी बिंदु के बाये LMC>SMC (दीर्घकालीन सीमाँत लागत > अल्पकालीन) तथा a बिंदु के दाये LMC < SMC (दीर्घकालीन सीमांत लागत < अल्पकालीन सीमांत लागत) अतः a बिंदु पर LMC = SMC (दीर्घकालीन सीमांत लागत = अल्पकालीन सीमांत लागत)

यदि हम a से x अक्ष तक रूक उर्ध्वरेखा खीचते है, तो जहाँ पर ये प्रतिच्द्देदित होते है (smt) वह दीर्घकालन सीमांत लागत का बिंदु होता है अल्प क्षेत्र (सीमा) औसत लागत एवं दीर्घकालिक औसत लागत वक्र के समस्त स्र्पशी बिदु दीर्घकालीन औसत लागत के न्यूनतम बिंदु के बायें हमें दीर्घकालीन सीमांत लागत के बिंदु प्रदान करते है, जो औसत लागत के नीचे स्थित रहता है।

न्यूनतम बिंदु m के दायें दीर्घकालीन सीमांत लागत दीर्घकालीन औसत लागत वक्र के ऊपर रहती है। m बिंदु पर

$$SAC = SMC = LAC = LMC$$

अर्थात m बिंदु वह स्थान है, जिस पर अल्पकालीन औसत लागत = अल्पकालीन सीमांत लागत = दीर्घकालिक औसत लागत = दीर्घकालिक सीमांत लागत।

वह दीर्घकाल में अनुकूलतम उत्पादन होता है।

8.4 दो संयत्रों के मध्य उत्पादन का वितरण (आवंटन)

मान लेते है, कि एक फर्म को पास दो संयत्र है, तो फर्म कोइ न दोनों संयत्रों के मध्य उत्पादन का बंटवारा (आवंटन) किस प्रकार करना चाहिये कि लागत न्युनतम हो परिवर्तन शील लागतों को ही कम किया जा सकता है। स्थिर लागतों को न्यून (कम) नहीं किया जा सकता क्योंकि यह अल्पकाल में स्थिर (अपरिवर्तित) रहती है। परिवर्तन शील लागतों को न्यून (कम) करने हेतु फर्म उत्पादन को दो संयत्रों के मध्य इस प्रकार आवंटित करती है, कि दो सीमाँत लागते समान हो।

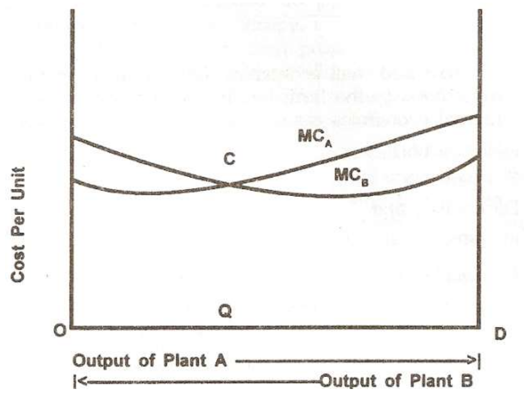

चिंत्र. 8.8 उत्पादन का दों संयत्रों में आवंटन

चित्र 8.8 दर्शाता है, कि OD वह कुल उत्पादन है जो आवंटित किया जाना है यह उत्पादन या तो फर्म के एक संयत्र अथवा दोनों संयत्रों द्वारा उत्पादित किया जा सकता है। संयत्र A की सीमाँत लागत MC_a वक्र द्वारा दी गयी है, जो बायें से दायें जाती है। संयत्र B की सीमाँत लागत MC_b दायें से बायें जाती है। दो वक्र बिंदु c पर प्रतिच्छेदित करते है। जब सयंत्र A OQ मात्रा उत्पदित करता हे तथा संयत्र B DQ मात्रा उत्पादित करता है तथा कुल परिवर्तनशील लागत न्यून (कम/अल्प /छोटी) है। यदि संयत्र A अधिक उत्पादन करता है, तथा संचत्र B अल्प उत्पादन, लागत अधिक होगी क्योकि MC_a वक्र बिंदु c के दायें MC_b वक्र से ऊपर रहता है। इसी प्रकार उस दशा में भी लागत अधिक होगी जब संयत्र B अधिक उत्पादन करेगा और संयत्र A अल्प उत्पादन करेगा। संयोजित उत्पादन का क्षेत्र न्युनतम (अल्प) होगा जब बिंदु C उत्पादन के आवंटन को परिभाषित करता है। वक्र इस प्रकार निर्मित (बनाये) किये गये है, कि संयत्र B किसी भी निर्दिष्ट उत्पादन हेतु निम्न सीमाँत लागत रखता हैं । तथापि कुछ उत्पादन संयत्र A से करना विवेकपूर्ण होगा ।

ध्यान देने की बात है, कि दोनों वक्र बिदु C पर बढ़ रहे है। यह दशा समाधान हेतु (हल) आवध्यक है।

8.5 पैमाने की मितव्ययितायें एवं अमितव्ययितायें

8.5.1 पैमाने की मितव्ययितायें

मितव्ययिताओं के फलस्वरूप लागत में बचत होती (कमी) है, तथा पैमाने की अमितव्ययिता से लागत में वृद्धि होती है। पैमाने की मित्व्ययितायें एवं पैमाने की अमितव्ययितायें पैमाने के प्रतिफल को निर्धारित करती है। वर्द्धमान (बढ़ते हुये) पैमाने के प्रतिफल तब तक परिचालित होते है जब तक कि पैमाने की मितव्ययिता, पैमाने की अमितव्ययिता से अधिक प्रतिफल होती (रहती) है, तथा समान पैमाने के प्रतिफल तल प्राप्त होते है, जब पैमाने की अमितव्ययितायें पैमाने की मितव्यतियताओं से अधिक होती है। जब पैमाने की मितव्ययिताओ एवं अमित्व्ययीताओं में संतुलन (दोनो समान) होता है तो पैमाने के प्रति फल स्थिर होते है। पैमाने की मित्वययितओं को दो भागों

a . आँतरिक अथवा वास्तविक मितव्ययिता तथा

b बाह्य अथवा आर्थिक (वित्तीय/धन संबध) में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(a) आँतरिक मितव्ययितायें

मितव्ययिता, जिसे वास्तविक मित्वययिता भी कहा जाता है, फर्म के संयत्र के आकार के प्रसार के कारण उतपत्र होती है, तथा फर्म की आँतरिक होती है। आँतरिक मितव्ययिताओं को निम्नलिखित वर्गो में विभक्त किया जा सकता है,

(1) उत्पादन में मितव्ययितायें

श्रम घटक (श्रम – मिव्ययिता), स्थिर पूँजी घटक (साधन) अथवा फर्म की सामान (स्कंध, स्टाक) आवश्यकता के कारण उत्पत्र होती है।

श्रम – मितव्ययितायें

श्रम – मितव्ययिता उत्पादन के बढ़ते पैमाने के साथ प्राप्त होती है जिसका कारण विशेषीकरण (विशेषज्ञता), समय की बचत, उत्पादन प्रक्रिया का स्वचालितीकरण, तथा संचयी मात्रा होती है। बड़े पैमाने का उत्पादन कार्य – विभाजन की अनुमति प्रदान करता है (स्वीकारता) तथा श्रम का विशेषीकरण (विशषज्ञता) कौशल में उन्नति होती है। श्रम – विभाजन केवल श्रम – बल शक्ति की कुशलता ही नही बढ़ाता वरन समय की बचत भी करता है।

तकनीकी मितव्ययिताये

तकनीकी मितव्ययितायें स्थिर पूँजी से सम्बन्धित होती है, जो सभी प्रकार की मशीनरी में तथा अन्य उपकरण को समाहित करती है। मुख्य तकनीकी मितव्ययिता निम्नलिखित से (कारणों से) उत्पत्र होती है,

(1) विशेषज्ञता (विशेषीकरण) एवं पूंजी की (2) स्थापना लागत, आरंभिक स्थिर लागतें (3) तकनीकी – उत्पादन मात्रा सम्बन्ध तथा (4) संचय क्षमता की आवश्यकता।

स्कंध (इन्वेंटरी) /सामान मितव्ययिता

इन्हे अनेक संभावनाओं चयनित मितव्ययिता (स्टाक सम्बन्ध मितव्ययिता) भी कहते है, क्योकि सामन (इन्वेंटरी) की भूमिका फर्म के परिचालन के आगंत एवं निर्गत (उतपादन) पक्षों में होने वाले त्वरित परिवर्तनों का सामाना करना है। कच्चे माल का स्कंध पैमाने के साथ बढ़ता है किन्तु अनुपालिक रूप में नहीं । इन आंगतों की आभर्ति में यदृच्छया (क्रम रहित, अनियमित/आकस्मिक) उच्चावचन को स्कंध से सुगम (सुचारू) बनाया जा सकता है जिसके आकार में फर्म के आकार की तुलना में अल्प (कम) परिवर्तन आवश्यक होता है।

(2) <u>विक्रय अथवा विपणन मितव्ययितायें</u>

विक्रय मितव्ययिताये फर्म के उत्पाद के वितरण से सम्बन्धित होती है। इस मितव्ययिता प्रमुख प्रकार निम्नलिखित है,

(1) विज्ञापन मितव्ययितायें, (2) अन्य बड़े –पैमाने की मितव्ययितायें (3) विशिष्ट वितरखों के साथ विशेष संयोजन (व्यवस्था) से प्राप्त मितव्ययिता (4) प्रतिमान (प्रतिदर्श) – परिवर्तन मितव्ययिता।

विज्ञापन मितव्ययिता उत्पादन के एक निश्चित स्तर वक रहती है। विज्ञापन स्थान (समाचारो पत्रों एवँ पत्रिकाओं में) एवं समय (रेडियो एवं दूरदर्शन पर पैमाने के अनुपात से न्यून (कम) बढ़ता है, अतः विज्ञापन लागत पैमाने के साथ प्रति उत्पादन इकाई गिरती है। इस प्रकार विशाल (बड़ा/दीर्घ) उत्मादन की दशा में प्रति इकाई विज्ञापन लागत कम होगी अन्य प्रकार की विक्रय गतिविधियों के लिये भी समान प्रतिफल प्राप्त होते है जैसे विक्रय, बल, नमूनो का वितरण इत्यादि ।

इस प्रकार दीर्घ पैमाने के सवंद्धिक व्यय एक निश्चित उत्पादक स्तर तक उत्पादन के साथ अपुपात से कम बढ़ते है।

(3) <u>प्रबंधकीय अर्थशास्त्र</u>

प्रबंधकीय लागत अंशत उत्पादन लागत वं अंशत विक्रय लागते होती है, चूकि फर्म में प्रबंधकीय दल फर्म की उत्पादन एवं वितरण दोनों कार्यो से सम्बन्धित होते है। प्रबंधकीय मितव्ययितायें विभित्र कारणों से उत्पत्र होती है की गिनमें से निम्नलिखित प्रमुख है,

(1) प्रबंधक विशेषीकरण (विशेषज्ञता) तथा (2) प्रबंधकीय कार्यो (गतिविधियों) का मशीनीकरण।

<u>प्रबंध का विशेषीकरण (विशेषज्ञता)</u>

विशाल फर्मे प्रबंधकीय कार्यो के विभाजन को संभव बनाती है, जैसे –उत्पादन प्रबंधक विक्रय प्रबंधक, वित – प्रबंधक तथा कार्मिक प्रबंधक इत्यादि, जबकि एक लघु फर्म में समस्त निर्णय एक प्रबंधक (यथासंभव स्वामी) द्वारा लिये जाते है। प्रबंघ का यह विशेषीकरण अपने उत्तर दायित्वो के क्षेत्र में प्रबधको के अनुभव को बढ़ाती है तथा फर्म को और आधिक उन्नत कार्य करने की ओर अग्रसर करती है।

<u>प्रबंधकीय कार्यो (गतिविधियों का मशीनीकरण)</u>

बड़ी (दीर्घ) फर्में मशीनीकरण की उच्च मात्रा के साथ प्रबंध की तकनीकों को लागू करते है, तथा दूरभाष–यंत्र टेलेक्स मशीनें दूरदर्शन के पर्दे एवं संगणक (कम्प्यूटर) ये तकनीके निर्णयन में लगने वाले समय को बचाती है

तथा सूचना के पृसंस्करण को गतिवान (गति प्रदान) बनाती है तथा इसकी मात्रा एवं अचूकता (सटीकता) को भी बढ़ती है।

(4) परिवहन एवँ भँडारण में मितव्ययिता

यातायात (परिवहन) एवँ भडारण लागतों में मितव्ययिता परिवहन एवं भंडारण क्षमता के पूर्ण संदोहण से प्राप्त होती है। परिवहन लागतें उत्पादन एवं विक्रय पक्षों , दोनों, में आती हैं। इसी प्रकार भंडारण लागतें कच्चे माल एवं निर्मित उत्पाद दोनों पर आती है। बड़े आकार की फर्मे अपना स्वयं का यातायात साधन प्राप्त कर सकती है, एवं वे करती है, फलस्वरूप बाजार की दर की तुलना में प्रति इकाई उत्पादन लागत गिरती (कम होती है) है, (कम से कम परिवहन कम्पनियों के लाभ–सीमा की मात्रा के बराबर)इसके अतिरिक्त स्वयं की यातायात सुविधा वस्तुओं के परिवहन में होने वाले विलम्ब को रोकता है। कुछ बड़ी (दीर्घ) फर्मे अपने कारखाने से नजदीकी (समीपस्थ) रेल स्टेशन (रेलबिड) तक स्वयं का रेल–पथ रखती है, तथा इस प्रकार वे सामान (उत्पाद) को ले आने व ले जाने मे लगने वाली लागत को न्यून (कम) करती है। उदाहरणर्थ : मुंबई पत्तन न्यास अपना स्वयं का रेल पथ ।

रखता है, तेल कम्पनियाँ अपने टैंकरों के दस्ते (टंकी के दस्ते) रखती है। इसी प्रकार दीर्घकार फर्मे अपने स्वयं के गोदाम विभित्र उत्पाद वितरण केद्रो पर रख सकती है, तथा भंडारण लागत को कम कर सकती है।

(2) पैमाने की आर्थिक (अर्थ–सम्बन्धी) मितव्ययितायें अथवा वाह्रय मितव्ययितायें

ये मितव्ययितायें फर्म को बड़े पैमाने के उत्पादन के कारण प्राप्त होने वाली छूटों से प्राप्त होती है। दीर्घाकार फर्म प्राप्त कर सकती है।

(a) इसके कच्चे माल की निम्न दरें – जो इसे इनके आपूर्ति कर्ताओं से प्राप्त विशेष छूटों के कारण प्राप्त होती है,

(b) बाह्रय – वाह्रय वित की निम्न लागत बैंक प्रायः बड़े फर्मो को निम्न दरों एवं अन्य अनुकूल शर्तों पर तरण की सुविधा प्रदान करते है,

(c) निम्न विज्ञापन मुल्य – जो बड़ी फर्मो को प्राप्त हो सकती हैं, यदि वे बड़े पैमाने पर विज्ञापन करती है तब,

(d) यदि परिवहन किया जाने वाला उत्पाद अधिक (बड़ा) है, तो परिवहन लागतें प्रायः निम्न (कम) होती हैं

(e) अंततः बड़ी फर्मे अपने कर्मचारियों को निम्न आय देने में सक्षम हो सकती है, यदि वे एक आकार को प्राप्त करती है, जो उन्हें एकाधिकारात्मक शक्ति (उदाहरणतः उत्कषण उद्योग कुछ क्षेत्रों में) अथवा बड़ी सुविख्यात फर्म में कार्य करने के साथ जुड़ी प्रतिष्ठा के कारण।

8.5.2 पैमाने की अमितव्ययितायें

पैमाने की अमितव्ययितायें हानियाँ है, जो उत्पादन पैमाने के प्रसार से साथ उत्पत्र होती है, तथा उत्पादन लागत में वृद्धि को नीत करती है। मितव्ययिताओं की भाँति पैमाने की अभितव्ययितायें भी आँतरिक एवँ वाह्रय हो सकती हैं

(a) आँतरिक अभितव्ययितायें:

आँतरिक अमितव्ययितायें फर्म के भीतर तथा वाह्‍य अमितव्ययितायें फर्म के बाहर, प्रमुख समाने (मुख्यताः) ऑगत बाजार में, उत्पत्र होती है। पैमाने की भितव्ययिता की अपनी सीमा होती है। एक बिंदू ऐंसा होता है जहाँ पर श्रम का विशेषी करण (विशेषज्ञता) एवं प्रबंधकीय स्टाफ की विशेषज्ञता पूर्णतः संदोहित किये जा चुके होते है। एक सीमा आती हे जब संयत्र की अधिक्य क्षमता मालखाना , यातायात (परिवहन) एवं संचार प्रणली इत्यादि पूर्णतः उपयोग में लाये जा चुके होते है, तथा विज्ञापन लागत धीरे–धीरे कम हो जाती है। अमितव्ययिता मितव्ययिता को ढकती (अकयारगीत) है तथा लागत बढ़ना प्रारम्भ हो जाती है, पैमाने की आँतरिक अमितव्ययिता मुख्यतः प्रबंधकीय अकुशलता तथा श्रम – अकुशलता के कारण उत्पत्र होती है।

<u>प्रबंधकीय अकुशलताः</u>

उत्पादन के पैमाने के तीश प्रसार के कारण प्रबंधकीय अक्षमता उत्पन्न होती है। स्वामी एवं प्रबंधकों तथा प्रबंधको एवं श्रमिकों के मध्य व्यक्तिगत सम्पर्क तथा समप्रेषण तीव्रता से घटता है, दूर – नियत्रित प्रबंधन निकट नियँत्रण एवं पर्यवेक्षण का स्थान ले लेते है। प्रबंध स्तरों में वृद्धि निर्णय में जटिलता एवं विलम्ब को नीत (अग्रसर) करते हैं। समन्बदन की समस्याओं के कारण निर्णयों के क्रियान्वयन में विलम्ब होता है। स्वामी का उद्देश्य लाभ को अधिकतम करना धीरे – धीरे गिरता जाता है, तथा प्रबंधक के उपयोगिता कार्य यथाः उच्च वेतन, व्यवहारिक लाभ लक्ष्य संतूलिकारक कार्य, तथा कार्य – सुरक्षा से प्रतिस्थानित हो जाता है। ये सभी प्रबंध में ढ़िलाई को नीत (अग्रसर) करते हैं तथा इस प्रकार अमितव्ययिता में वृद्धि करते है।

<u>श्रम – अकुशलता</u>

श्रमिकों के नियोजन में वृद्धि श्रम – संघ की गतिविधियों को प्रोत्साहित करती है, प्रति इकाई उत्पादन प्रति समय इकाई को घटाती है तथा इस प्रकार श्रम उत्पादकता पर नियंत्रण खो देते है।

<u>(**b**) वाह्‍य अमितव्ययितायें</u>

फर्म के बाहर उत्पत्र होने नुकसानों (हानियों को) को वाह्‍य मितव्ययितायें कहा जाता है ये आंगत बाजार में प्राक्रतिक बाधाओं (सीमाओं) के कारण उत्पन्न मुख्यतः कृषि एवं उत्कर्षण उद्योगों में, होती है। फर्म के प्रसार के साथ, विशेषकर जब उद्योग की अधिकाँश फर्मो प्रसार कर रही हो, बड़े क्रय पर प्राप्त छूट एवं वित्तीय रियायते समाप्त हो जाती है। आंगतों की बढ़ती माँग आंगत बाजारों पर दवाब आरोसित करता है तथा आंगतो का मूल्य बढ़ना आरम्भ हो जाता है तथा उत्पादन लागत में वृद्धि को अग्रसर करता है। ये आर्थिक (वित्तीय) अमितव्ययितायें होती है।

8.6 सम–विच्छेद विश्लेषण

सम – विच्छेद विश्लेषण अल्प काल में मूल्य – उत्पादन निर्णयन से व्युत्पत्ति है। सम – विच्छेद विश्लेषण कतिपय मान्यतायें रखता है,

(a) स्थिर एवं परिवर्तनशील लागतो को विभेदित किया जा सकता है,

(b) विश्लेषण के द्वारा रेखिकता को मानती है,

(c) पूर्ण प्रतियोगिता की कलपना करती है अतः मूल्य उत्पादन की मात्रा के निरपेक्ष समान रहती है।

(d) सीधी रेखा (प्रत्यक्ष रेखा) लागत वक्र बताता है, कि सीमाँत उत्पाद न तो बढ़ रहा है, नही छूट रहा है, तथा रेखाचित्र का सम्पूर्ण क्षेत्र स्थिर पैमाने के प्रतिफल को दर्शाता है। सम–विच्छेद विश्लेषण, उत्पादन के विभिन्न स्थानों पर कुल आगम, कुल लागत एवं कुल लाभो के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करता है। यह फर्म के सम–स्तरों पर कुल लाभ व हानियों का निर्धारण करने हेतु प्रयुक्त होती है। सम–विच्देद एक विधि है, जिसके द्वारा यह निर्धारित किया जाता है कि फर्म के कुल – लागत एवं कुल–आगम फलनों से फर्म के सम – विच्छेद अथवा लक्ष्यित लाभ (लक्षित लाभ) प्राप्त करने हेतु उत्पादन का स्तर क्या हो ? समविच्छेद बिंदु यह संकेत करता है, कि उत्पादन के किस स्तर पर लागत एवं आगम साम्य अवस्था (संतुलना) में होंगें सम–विच्छेद विश्लेषण में सम–विच्छेद बिंदु का विशेष व्यक्तिगत रूप से महत्व है। यह वह बिदु होता है जिस पर (जहाँ) हानि होना रूक
जती है तथा लाभ होना अभी तक प्रारम्भ नही हुआ होता है। यह शून्य लाभ का बिदू होता है।

सम–विच्छेद लेखाचित्र (चार्ट) विभित्र उत्पादन स्तरों पर फर्म की हानि व लाभ को दर्शाता है। एक समविच्छेद लेखाचित्र (चार्ट/मानचित्र) को लाभ हेतु उत्पादन एवं विक्रय के सम्बन्ध के रेखा – चित्रीय विश्लेषण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। सम–विच्छेद विश्लेषण में सम–विच्छेद लेखाचित्र (चार्ट/मानचित्र) का प्रयोग किया जाता है सिसमें कुल–आगम (TR) तथा कुल–लागत वक्रों को सीधी रेखाओं द्वारा निरूपित किया जाता है।

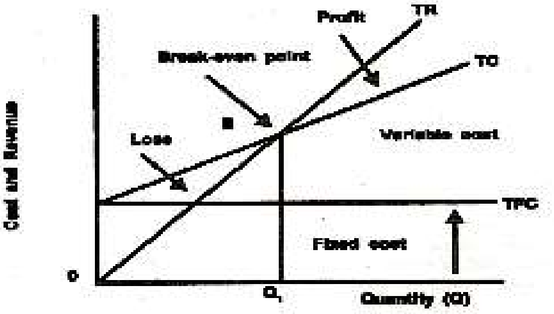

चित्र : 8.9 सम–विच्छेद चित्र

चित्र सं. 8.9 में कुल – आगम एवं कुल – लागत उध्र्वाधर अक्ष पर तथा उत्पादन को क्षैतिज अक्ष पर दिखाया गया है। TR वक्र का झुकाव (ढाल) स्थिर मूल्य कल्पना करता है, जिस पर फर्म अपना उत्पादन विक्रय कर सकती है।

कुल–लागत वक्र, कुल निश्चित (स्थिर लागतों) TFC तथा स्थिर औसत परिवर्तनशील लागत का संकेत करती है। यह प्रायः कई फर्मो के लिये उत्पादन अथवा विक्रय में फर्म **B** बिंदु पर सम – विच्छेद को प्राप्त करती है जहाँ कुल

– आगम तथा कुल – लागत बराबर होते है तथा Q_1, सम – विच्छेद उत्पादन है।

सम–विच्छेद लेखचित्र प्रायः (समान्यताः) सीधी रेखाओं से निरूपित किये जाते है, हालाँकि (तथामि) इसकी आवश्यकता नहीं होती है। सीधी रेखाओं से ऑशय यह है, कि कुल – लागत में परिवर्तन उत्पादन के परिवर्तन के आनुपतिक होता (रेखीय मान्यता के अनुसार) है। यह मान्यता प्रायः सत्य होती है अथवा वास्तविक (सत्य) सम्बन्ध की सत्यता के अति – निकट होती है जिसे न्यायोजित ठहराया जा सकता है। एक फर्म ऐसे लागत – उत्पादन सम्बन्ध के लिये रूचि नहीं रखती जो बहुत लघु (अति लघु) अथवा अति – दीर्घ हो, तथा अनुभव एव अपेक्षा के क्षेत्र के बाहर स्थित हों। जब नहीं है, तब सर्म्पूण क्षेत्र पर सीधी रेखाये खीची जानी चाहिये? जैसे – जैसे उत्पादन सम – विच्छेद स्तर के ऊपर बढ़ता है वैसे – वैसे लाभ – क्षेत्र बिना किसी सीमा के बढ़ता है, और बढ़ता ही जाता है,

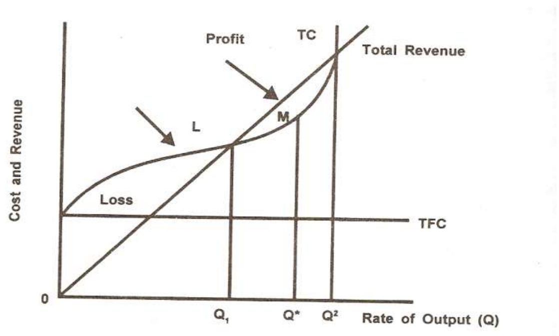

चित्र. 8.10 अन्रेखीय सम–विच्छेद विश्लेषण

चित्र 8.10 अन्रेखीय लागत एवं आगम – फलन के अंतर्गत सम–विच्छेद विश्लेषण को निरूपित करता हैं। TFC रेखा स्थिर लागत को प्रदर्शित करती है TC व TFC के मध्य की उर्ध्व दूरी (लखत) कुल परिवर्तनशील लागत का मापन करती है। TR वक्र, उत्पादन एवं मूल्य के विभिन्न स्तरों पर TR तथा TC उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर लाभ व हानि का मापन करता हैं।

TR व TC वक्र दो बिंदुओं पर दूसरे को प्रतिच्छेदित करती है वे बिंदु L एवं N है जहाँ TR = TC

(कुल आगम = कुल लागत) ये उच्च व निम्न सम–विच्छेद बिंदु है। Q_1 व Q_2 के सम्पूर्ण क्षेत्र के लिये TR > TC निहितार्थ ये है, कि OQ_1 से अधिक एवं OQ_2 से अल्प (कम) उत्पादन कर रत्ती फर्म लाभकर्त करेगी, उत्पादन का लाभदयक सीमा क्षेत्र OQ_1 एवं OQ_2 उत्पादन इकाई के मध्य स्थित रहता है। इस सीमा से अल्प (न्यून) अथवा अधिक उत्पादन करना हानि प्रदान करेगा।

8.7 साराँश

फर्म अपने कार्यो/व्यवहारों हेतु निर्णय लेती हैं, जो लाभ तथा अन्य कई निर्णय लेती हैं, जो लाभ तथा अन्य कई निर्णयों को समाहित करता है तथा, जिनके ऊपर फर्म का कोई नियंत्रण नहीं होता है। लागत की गणना करने हेतु फर्म के लिये यह जानना आवश्यक है, कि उत्पाद के उत्पादन हेतु

आंगतो की मात्रा एवं संयोजन क्या होगा, तथा इनकी लागत क्या होगी? व्यावसायिक परिचालको एवं निर्णयों के लिये व्यवहारिक (उपयोगी) लागत–संकल्पनाओं को दो वर्गो में, लेखांकन उद्देश्यों के लिये उपयोगी लागत सिद्धाँत तथा मानवीय गतिविधियों के आर्थिक विश्लेषण में प्रयुक्त लागत सिद्धाँत उत्पादन में परिवर्तन के सम्बन्ध में लागत व्यवहारों से सम्बन्धित है। लागत फलन का अतिविशिष्ट प्रकार (रूप) लागत विश्लेषण हेतु उपयोगी (व्यवहाररिक) लागत विश्लेषण हेतु चयनित समय अल्प –काल एवं दीर्घकाल, हेतु उपयोगी (व्यवहारिक) हैं। अल्पकाल में AVC, AC तथा MC (औसत परिवर्तनशील लागत, औसत लागत तथा सीमाँत लागत), U आकृति के होते है, जो परिवर्तनशील अनुपातों के नियम को परावर्तिनशील लागत की तुलना में तीव्रता (तेजी) के साथ बढ़ती है। सीमाँत लागत एवं औसत लागत के मध्य भी इसी प्रकार का सम्बन्ध होता है। दीर्घकाल में उत्पादन के समस्त साधन परिवर्तनशील होते है अंतः उस स्थिति में स्थिर एवं परिवर्तनशील लागतों के मध्य कोई विभेद नहीं है। दीर्घकाल औसत लागत वक्र, अल्प काल लागत वक्र से तथा दीर्घकाल सीमाँत लागत वक्र, अल्पकाल सीमाँत लागत वक्र से व्युतपत्ति होता है। पैमाने की मितव्ययिता के फल स्वरूप लागत में बचत होती है, पैमाने की अमितव्ययिता लागत में वृद्धि को प्रोत्साहित (लागत में वृद्धि / नीत) करती है। सम–विच्छेद विश्लेषण उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर फर्म के कुल आंगत कुल लागत एवं कुल लाभों के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करता है।

8.8 शब्दावली

स्पष्ट लागतें – फर्म द्वारा वास्तविक रूप से भुगतान किये गयें व्यय ।

अस्पष्ट (अप्रत्यक्ष) लागते – सैद्धाँतिक लागते जो लेखाँकत प्रणाली द्वारा नही पहचानी (मानी) जाती, ।

समाजिक लागत – किसी वस्तु (उत्पाद) के उत्पादन में समाज की कुल लागत ।

स्थिर लागतें – वे लागते उत्पादन से स्वतंत्र होती है, जो उत्पादन में परिवर्तन के साथ परिवर्तित नही होती है, ।

परिवर्तनशील लागते – वे लागते जो उत्पादन के परिवर्तनशील साधनों के नियोजन के , जिनकी मात्रा अल्पकाल में परिवर्तित की जा सकती है, फलस्वरूप व्यय होती है।

दीर्घ–काल – वह समयावधि जिसमें समस्त साधनों की मात्रा परिवर्तित हो सकती है।

उतपादन – फलन – वह फलन जो एक समय पर उपलब्ध उत्पादन के कुशल विधियों (पद्धतियों) का वर्णन करता हैं,

वर्द्धमान पैमाने के प्रतिफल – जब उत्पादन साघनों (आंगतों) में परिवर्तन में बढ़ता (अधिक) आनुमातिक परिवर्तन हो रहा हो।

पैमाने की मितव्ययितायें: – उत्पादन की मात्रा (आकार) में वृद्धि के अनुगमन (के अनुसरण क्रम में) प्राप्त लागत लाभ ।

8.9 बोध प्रश्न

(ए) रिक्त स्थान भरें

(ए) .... लागतें जो फर्म के बाहर से किराए पर लिए गए साधनों के लिए किए गए भुगतान को दर्शाती हैं।

(बी) लागत सिद्धांत .... में परिवर्तन के सन्दर्भ में लागत के व्यवहार से संबंधित है ।

(सी) लागत वक्र (ए वी सी, ए सी और एम सी) अल्पकाल में यू–आकार का होता है यह .... नियम को दर्शाता है।

(डी) सीमान्त लागत में सदैव औसत परिवर्तनीय लागत की तुलना में .... तेजी से वृद्धि होती है।

(ई) स्थायी लागत .... नहीं हो सकती है, क्योंकि यह अल्पकाल में स्थिर रहती हैं।

(च) तकनीकी मितव्ययताएँ .... के साथ जुड़ी होती हैं।

(छ) परिवहन लागत दोनों पक्षों उत्पादन और .... पर खर्च होती हैं।

(एच) उत्पादन के पैमाने के तेजी से विस्तार के साथ, प्रबंधकीय अक्षमताएं .... होती हैं।

(बी) सही या गलत

(ए) तुरंत देय लागत को अन्तर्निहित लागत भी कहा जाता है

(बी) ए सी का आकार ए वी सी से विपरीत होता है।

(सी) औसत परिवर्तनीय लागत में तब तक गिरावट जारी रहती है जब तक सीमांत लागत इससे कम नहीं हो जाती है।

(डी) लंबी अवधि वाली औसत लागत वक्र की यू–आकृति पैमाने के प्रतिफल का नियम को दर्शाती है।

(ई) पैमाने का बढ़ता प्रतिफल तब तक कार्य करता है जब तक पैमाने की मितव्ययताएँ पैमाने की अपमितव्ययताओं की तुलना में अधिक होती है।

(च) पैमाने की अपमितव्ययिताएँ वह हैं जो उत्पादन के पैमाने का विस्तार होने के कारण उत्पन्न होती हैं।

(जी) पैमाने की मितव्ययताओं की अपनी कोई सीमा नहीं होती है।

(एच) सम–विच्छेद बिन्दु वह बिंदु है जहां घाटे को होने से रोक दिया जाता है जबकि लाभ अभी तक शुरू नहीं हुआ होता है।

8.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए)

(ए) स्पष्ट, (बी) उत्पादन, (सी) परिवर्तनशील अनुपात,
(डी) अधिक, (ई) न्यूनतम, (च) निश्चित पूंजी,
(जी) बिक्री, (एच) उठना।

(बी)

(ए) असत्य, (बी) असत्य, (सी) सत्य, (डी) सत्य,
(ई) असत्य, (च) सत्य, (जी) असत्य, (एच) सत्य

8.11 स्वपरख प्रश्न

1. अन्तर स्पष्ट कीजिए (ए) स्थायी लागत और परिवर्तनीय लागत, (बी) अवसर लागत और वास्तविक लागत

2. अल्पकालिक गैर–रेखीय लागत कार्यों की कल्पना करते हुए सीमांत लागत, औसत लागत, और कुल लागत के मध्य पाए जाने वाले संबंधों की व्याख्या कीजिए ।
3. अवसर लागत क्या है? अवसर लागत के कुछ उदाहरणों की व्याख्या कीजिए । प्रबंधकीय निर्णयों में यह लागतें किस तरह से प्रासंगिक है?
4. व्याख्या कीजिए कि क्यों दीर्घकालिक औसत लागत पहले गिरती है और फिर बढ़ जाती है। क्यों अल्पकालिक औसत परिवर्तनशील लागत पहले गिरती है और फिर बढ़ जाती है?
5. सम–विच्छेद क्या है? इसकी मान्यताएँ कौन–कौन सी हैं?

8.12 संदर्भ पुस्तकें

1. Yogesh Maheshwari, Managerial Economics, Prentice Hall of India, New Delhi.
2. D.N. Dwivedi, Managerial Economics, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.
3. T.R. Jain, O.P. Khanna and Virsen, Micro Economics and Indian Economy, V.K. Publishers, New Delhi.
4. H.L. Ahuja, Advanced Economic Theory, S. Chand & Co. Ltd., New Delhi.
5. Atmanand, Managerial Economics, Excel Books, Delhi.
6. R.L. Varshney and K.L. Maheshwari, Managerial Economics, Sultan Chand & Sons, New Delhi.

इकाई 9 पूर्ति एवं पूर्ति की लोच

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 पूर्ति का अर्थ
9.3 पूर्ति का नियम
9.4 पूर्ति की लोच
9.5 पूर्ति की लोच का मापन
9.6 पूर्ति की लोच को प्रभावित करने वाले कारक
9.7 पूर्ति की लोच का महत्व
9.8 सारांश
9.9 शब्दावली
9.10. बोध प्रश्न
9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.12 स्वपरख प्रश्न
9.13 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई पढ़ने के बाद, आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- पूर्ति और पूर्ति प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कर सके।
- पूर्ति की लोच के विभिन्न अंशो की चर्चा कर सके।
- पूर्ति की लोच की माप के तरीकों की व्याख्या कर सके।
- पूर्ति की लोच को प्रभावित करने वाले कारकों और पूर्ति की लोच के महत्व की व्याख्या कर सके।

9.1 प्रस्तावना

कीमतों के विश्लेषण के लिए पूर्ति का सिद्धांत उतना जरूरी जितना की मांग का सिद्धांत । निश्चित अवधि के दौरान दिए गए मूल्य पर बिक्री के लिए दी गई राशि को पूर्ति कहा जाता है। पूर्ति वक्र कीमतों के निर्धारण और माल और सेवाओं के उत्पादन का अध्ययन करने के लिए विश्लेषणात्मक उपकरण है। इस इकाई में आप पूर्ति नियम और पूर्ति की लोच, पूर्ति पर निर्भर कारकों और पूर्ति के लोच के महत्व का अध्ययन करेंगे।

9.2 पूर्ति का अर्थ

पूर्ति से आशय एक वस्तु या सेवा की उस मात्रा से होता है, जो एक विक्रेता किसी निश्चित अवधि के दौरान विभिन्न मूल्यों पर बिक्री के लिए पेशकश करने में सक्षम होता है। इस प्रकार पूर्ति हमेशा कीमत पर होती है और समय की अवधि के संबंध में होती है। कीमत जितनी अधिक होगी, उतना ही एक वस्तु की मात्रा होगी जो एक निर्माता द्वारा पूर्ति की जाएगी, और ठीक इसके विपरीत। इसलिए, पूर्ति की गई मात्रा और कीमत के बीच का संबंध प्रत्यक्ष और सकारात्मक है।

पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक

किसी वस्तु की पूर्ति की मात्रा केवल उसकी कीमत पर निर्भर नहीं है बल्कि कई वस्तुओं जैसे अन्य वस्तुओं की कीमतों पर, इसके उत्पादन में उपयोग किए जाने वाले तत्वो की कीमत, उत्पादकों को लक्ष्य प्रौद्योकगिकी की स्थिती, आदि पर भी निर्भर करती है।

महत्वपूर्ण कारक जो एक वस्तु की पूर्ति का निर्धारण करते है, इस प्रकार हैं :

1. **वस्तु की कीमत** : किसी वस्तु की पूर्ति उस वस्तु की कीमत पर निर्भर करता है। अन्य बातो के सामान रहने पर, यदि वस्तुओ की कीमत ज्यादा होती है तो विक्रेता वस्तुओं को बेचने के लिये ज्यादा इच्छुक होते है, कीमतों के कम होने पर नहीं।
2. **संबंधित माल की कीमते** : एक वस्तु की पूर्ति भी संबंधित वस्तुओं की कीमतों पर निर्भर करता है। अगर एक विकल्प की कीमत बढ़ जाती है तो उत्पादक अपने संसाधनों को उस स्थान के उत्पादन के लिए हटाने का प्रयास करेंगे। उदाहरण के लिए, यदि चाय की कीमत के अपेक्षाकृत कॉफी की कीमत में बढ़ जाती है, तो कॉफी की जगह चाय की खेती में जमीन का उपयोग किया जाएगा। कॉफी की पूर्ति गिर जाएगी हम इस तरह से उम्मीद करते है कि अन्य चीजें एक समान रहने पर वस्तु की पूर्ति अन्य वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने पर गिरती है।
3. **उत्पादन की लागत या फैक्टर इनपुट की कीमत** : यदि उत्पादन के विभिन्न कारको जैसे कच्चा माल, श्रम आदि के कारण उत्पादन लागत में वृद्धि होती है तो इससे पूर्ति की मात्रा घट जायेगी। ठीक इसी प्रकार यदि उत्पादन लागत घटती है तो इससे उत्पादन अधिक मात्रा में होगा जिसका नतीजा यह होगा कि पूर्ति बढ़ जोयेगी।
4. **बेहतर प्रौद्योगिकी** : उत्पादन की तकनीक में सुधार, उत्पादन की लागत को कम करती है और बदले में पूर्ति अतिरिक्त समय तकनीकी जानकारी, खोजों और नवाचारों आदि कारकों की मदद से उत्पादकता बढ़ाने और इस प्रकार पूर्ति को उपर की ओर बढ़ाने में योगदान करती है।
5. **परिवहन एवं संचार के साधन** : परिवहन और संचार के माध्यमों में सुधार कर के किसी वस्तु विशेष की पूर्ति को बढ़ाया जा सकता है। इसके माध्यम से विदेशी आयात को भी प्रोत्साहन किया जा सकता है या कम पूर्ति वाले सामानो के मामले में अधिशेष क्षेत्रों से कम क्षेत्रों तक पहुंचाया जा सकता है। लेकिन अगर परिवहन के विकसित साधनों का इस्तेंमाल माल निर्यात करने लिए किया जाता है, तो यह घरेलू बाजार में माल की कमी पैदा करेगा।
6. **लक्ष्य या फर्मो के उद्देश्य** : एक वस्तु की पूर्ति लक्ष्य या उस वस्तु के उत्पादन कंपनियों के उद्देश्यों पर निर्भर करता हैं आमतौर पर, हर फर्म अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने की कोशिश करता है लेकिन, कभी–कभी व्यक्तिगत उत्पादकों को एक वस्तु की पूर्ति में वृद्धि करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है, इसलिए नहीं कि यह उनके लिए अधिक लाभ लाती है, लेकिन क्योंकि बाजार में इसकी पूर्ति समाज में उनके लिए सद्भावना का एक स्त्रोत है। यदि फर्म का उद्देश्य लाभ या बिक्री के बजाय राजस्व को अधिकतम करना है, तो बाजार में पूर्ति बड़ानी होगी।
7. **विक्रेताओं की संख्या** : पूर्ति भी विक्रेताओं की संख्या पर निर्भर करता है। अधिक विक्रताओं की प्रविष्टि से वृद्धि होगी और निकासी से पूर्ति में कमी आएगी।
8. **मूल्य उम्मीदें** : यदि विक्रेताओ मे यह भय होगा की भविष्य में भी वस्तु की कीमतों में गिरावट जारी रहेगा तो वह वस्तु की तुरंत बिक्री करना चाहेगें और इस प्रकार पूर्ति बढेगी। इसके विपरीत यदि भविष्य में दाम बढ़ने के आसार हो तो विक्रेता माल को रोककर रखेगा जिससे की पूर्ति में कमी आयेगी।
9. **कृषि उपज की पूर्ति** : कृषि वस्तुओं बेहतर वर्षा, बेहतर सिंचाई साधन, रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीज और खेती के बेहतर तरीकों का आपसी संबंध है, इनके होने से

स्वाभाविक रूप से पूर्ति में वृद्धि होगी। इसके विपरीत, मानसून, बाढ़, सूखा, आग, धूल की आंधी, कीट की विफलता पर, भूकंप आदि की पूर्ति कम हो जाएगी।

10. **राजनीतिक गड़बड़ी** : राजनीतिक गड़बड़ी या एक युद्ध हंगामा करना या व्यापार के माध्यमों को हटाना आदि माल के कुछ प्रकार, की कमी पैदा करते हैं जो कि पूर्ति में कमी का कारण बनता है।

11. **कराधान और सब्सिडी** : उत्पादन, बिक्री आयात कराधान आदि भी माल की पूर्ति को भी प्रभावित करती है उच्च आयात शुल्क लगाने के अनुसार सरकार घर पर इसके उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए एक विदेशी वस्तु की पूर्ति सीमित कर सकती हैं, सरकार स्वास्थ्य के कारणों जैसे अफीम इत्यादि के लिए कुछ वस्तुओ का उत्पादन भी कर सकती है, इसके विपरीत, सब्सिडी लागत को कम कर सकती है। और उत्पादको को पूर्ति बढ़ाने के लिए प्रेरित कर सकती है।

12. **सरकारी नीतियॉ** : सरकार की नीतियों को भी पूर्ति की महत्वपूर्ण निर्धारकों मे से एक माना जाता है। कोटा में कमी और विदेशी माल पर शुल्क की कमी से विदेशी उत्पादको को लिये बाजार खुल जाएगा और पूर्ति में वृद्धि होगा। इसके विपरीत, सुरक्षा की नीति पूर्ति को कम कर देगी, जबकि उदारीकरण की नीति पूर्ति में वृद्धि करेगी।

9.3 पूर्ति का नियम

पूर्ति के नियम के अनुसार अन्य बातो के समान होने पर, पूर्ति की मात्रा वस्तु की कीमत के साथ सीधे–सीधे बदलती है। जब कीमत बढ़ जाती है, मात्रा की पूर्ति बढ़ जाती है, और जब कीमत गिरती है, तो पूर्ति की मात्रा भी गिरती है। अन्य चीजें समान होने पर एक वस्तु की बाजार पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारको का संदर्भ देते है, जैसे अन्य वस्तुओं की कीमत, उत्पादन के कारको की कीमत, प्रौद्योगिकी राज्य और उत्पादकों के लक्ष्यों इन सभी कारकों को स्थिर होना माना जाता है। ये पूर्ति के नियमों की मान्यताओं में से एक है।

पूर्ति के नियम को एक अनुसूची और वक्र की सहायता से समझाया गया है। एक पूर्ति शेड्यूल समय के प्रति यूनिट के विभिन्न मूल्यों पर बिक्री के लिए दी गई किसी वस्तु की विभिन्न मात्रा का बयान है निम्न तालिका सेब के लिए एक काल्पनिक पूर्ति कार्यक्रम दिखाता है।

तालिका **1**

Price in Rs. Per kg.	Quantity Supplied in Kg.
50	400
40	300
30	200
20	100
10	50

यदि हम पूर्ति सूची को चित्र के माध्यम से दर्शाते है तो हम इसे पूर्ति वक्र S के माध्यम से दर्शाते है। पूर्ति वक्र एक सकारात्मक ढ़लान प्रदर्शित करता है। यह उपर दाहिनी ओर बढ़ता है। वक्र S_1 OP कीमत QQ_1 की बढ़ी हुई पूर्ति को दर्शाता है। यह मुख्य वक्र S के निचे दाहिनी ओर प्रदर्शित होता है जहा सभी कीमतो पर अधिक बिक्री होती है। S_2 वक्र OP कीमत पर OQZ की घटी हुई पूर्ति को दर्शाता है। यह वक्र मुख्य वक्र S के उपर बायी तरफ प्रदर्शित होता है और सभी कीमतो पर कम पूर्ति को दर्शाता है।

अपवाद

फिर भी, पूर्ति के नियम के कुछ अपवाद इस प्रकार है।

1. जब कीमतों में गिरावट आने की संभावना है, तो विक्रेताओ को अपने स्टॉक को खाली करने के लिए अधिक उत्साहित यह अल्पावधि में नही होता है।
2. लंबी अवधि के दौरान, पूर्ति लागत में बदलावों से प्रभावित होती है, जो बदले में, प्रौद्योगिकी में बदलावों से प्रभावित होती है।
3. आदतों, स्वाद, फैशन, मौसन और राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय गड़बड़ियॅा में परिवर्तन वस्तुओं की पूर्ति पर भी प्रभाव डालते है।

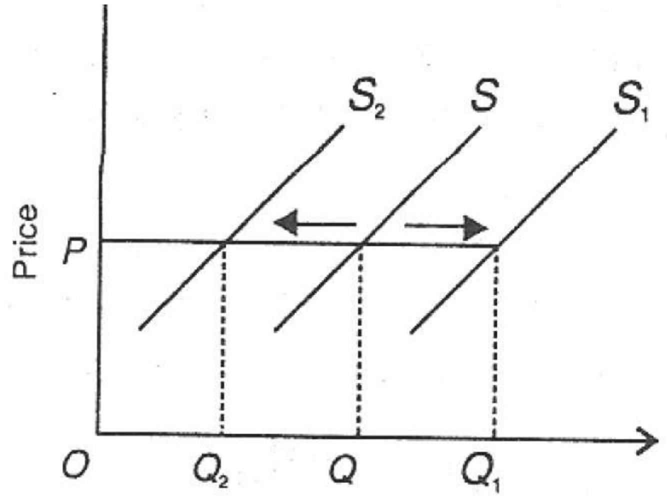

चित्र 9.1

अंत में, किसी वस्तु या सेवा की कीमत में बढ़ोतरी कभी कभी इसकी पूर्ति में गिरावट की ओर जाती है यह विशेष रूप से श्रम सेवा के मामले में होता है जब मजदूरी एक स्तर तक बढ़ जाती है जहां श्रमिक संतुष्ट होते है, तो वे अधिक अवकाश प्राप्त करने के लिए पहले से कम काम करेंगे। उन्हें अपने बच्चों को शिक्षित करने की बजाए उन्हें काम पर भेजने की प्रवृत्ति भी होगी। ऐसी स्थिति में पूर्ति वक्र, पिछडे झुका हुआ SS_1 वक्र है जैसे कि चित्र में दिखाया गया है। WN मजदूरी दर पर, श्रम की पूर्ति चालू है लेकिन जब मजदूरी बढ़ती जाती है, श्रम की पूर्ति कम हो जाती है। W_1M मजदूरी दर पर, श्रमिको की पूर्ति के लिए कम है।

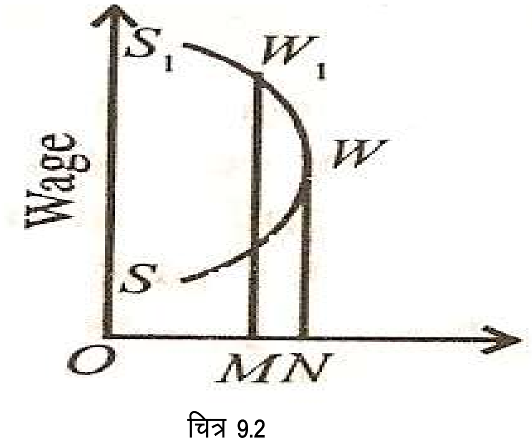

चित्र 9.2

9.4 पूर्ति की लोच

पूर्ति की लोच की अवधारणा मांग की लोच की अवधारणा के समानांतर अवधारणा है। यह वस्तु की कीमत में बदलने के लिए विक्रेताओं की प्रतिक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह वस्तु के मूल्य में किसी विशेष परिवर्तन के लिए विक्रेताओं की प्रतिक्रियाओं को इंगित करता है। किसी वस्तु की पूर्ति, मूल्य में होने वाले बदलाव के कारण वढ़ या घट सकती है। वस्तु की कीमत में बदलाव के परिमणामस्वरूप, पूर्ति की मात्रा जिस हद तक घटती या बढ़ती है, इसी बदलाव को पूर्ति की लोच कहा जाता है। पूर्ति की लोच, इस प्रकार, मूल्य में परिवर्तन के कारण पूर्ति में परिवर्तन का माप है।

पूर्ति की लोच की मात्रा

पूर्ति की लोच के पांच मात्राएं है :

1. **पूर्णतः लोचदार पूर्ति** : जब थोड़े परिवर्तन के साथ या मूल्य में किसी भी बदलाव के बिना, पूर्ति किसी भी हद तक बदल सकता है, तो पूर्ति पूरी तरह से लोचदार है। यहां पूर्ति वक्र क्षैतिज और अक्ष के समानांतर होगा। यह चित्र 9.3 में दिखाया गया है।

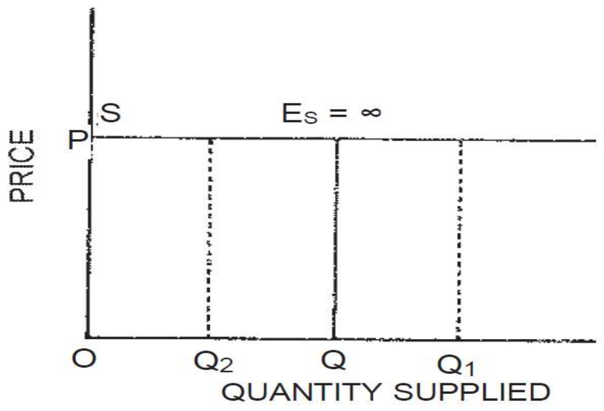

चित्र 9.3

इस आंकडें में S S पूरी तरह से लोचदार पूर्ति वक्र है। यह अक्ष के समानांतर है। OP कीमत पर पूर्ति OQ_1 या OQ_2 हो सकता है। प्रतीकात्मक यह कहा जा सकता है कि $Es= \infty$या पूर्ति की लोच अनंत है। यह विशुद्ध रूप से एक काल्पनिक अवधारणा है।

2. **पूर्णतः बेलोच पूर्ति** : पूर्ति पूरी तरह से स्थिर कहलायेगी जब कीमत में बदलाव की पूर्ति में कोई परिवर्तन नहीं होता है। दूसरे शब्दों में, पूर्ति का मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इधर, पूर्ति वक्र y- अक्ष के समानांतर है। यह इस बात को दर्शाता है कि कीमत के OP_1 और OP_2 तक परिवर्तित होने पर भी पूर्ति अपरिवर्तित रहती है। इस मामले में, पूर्ति की लोच शुन्य (या $E\ S = 0$) कहा जाता है दुर्लभ पुस्तकों, पेंटिंग, टिकटों और सिक्कों की पूर्ति इस प्रकार का है।

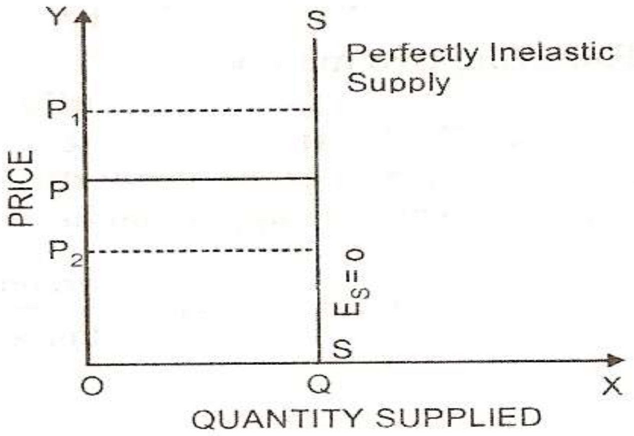

चित्र 9.4

3. **एकात्मक लोचदार पूर्ति** : पूर्ति की लोच एकात्मक है जब राशि मूल्य में परिवर्तन करने पर पूर्ति में भी सटीक अनुपात में परिवर्तन होता है। मूल के माध्यम से गुजरने वाली कोई सीधी रेखा एकात्मक लोचदार पूर्ति वक्र देगी। पूर्ति वक्र SS है जो चित्र 3.5 में 45^o लाइन है और एकात्मक लोचदार पूर्ति वक्र का प्रतिनिधित्व करता है। यहा कीमत में PP कोई भी परिवर्तन QQ_1 पूर्ति मात्रा में समान बदलाव लाता है।. (or ΔP = ΔQ). प्रतीकात्मक Es=1

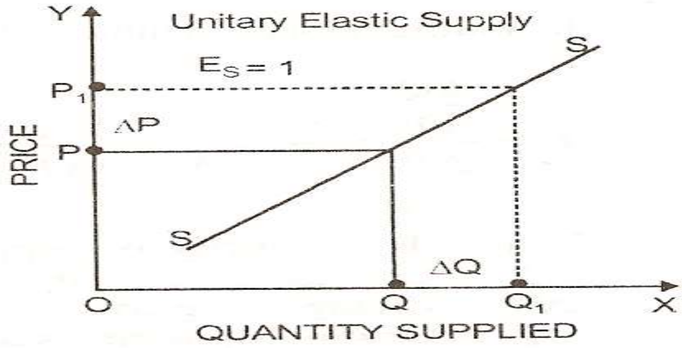

चित्र 9.5

4. **अधिक लोचदार पूर्ति** : जब कीमत में एक कीमत में कए छोटा सा परिवर्तन की पूर्ति की मात्रा में एक बड़ा परिवर्तन लाता है तो इसे अधिक लोचदार पूर्ति होना कहा जाता है। कीमत में एक छोटा सा बढ़त पूर्ति में काफी गिरावट की ओर जाता है और कीमतों में बढ़ोतरी से पूर्ति मे भारी बढ़ोतरी होती है। पूर्ति वक्र SS चित्र 9.6 में अधिक लोचदार पूर्ति वक्र है। यह y- अक्ष से निकलता है। इस मामले में ΔP < ΔQ है। गणितीय रूप में अधिक लोचदार पूर्ति के रूप में Es=1 दर्शाया जा सकता है।

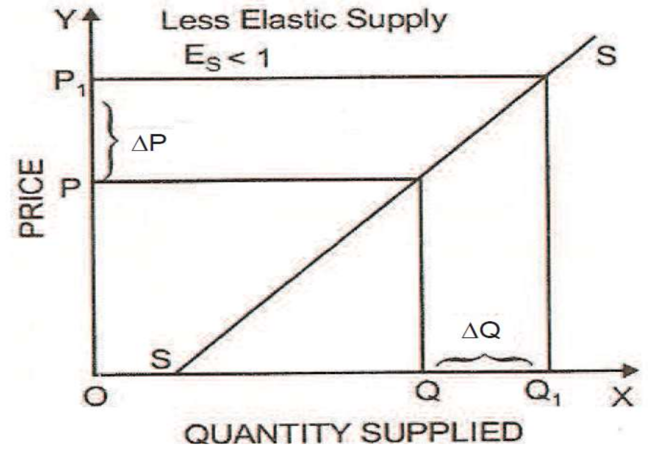

चित्र 9.6

5. **कम लोचदार पूर्ति** : जब कीमत में एक बड़ा परिवर्तन पूर्ति में एक छोटा सा परिवर्तन लाता है, तो पूर्ति का कम लोचदार होना कहा जाता है कीमतों में छोटी सी गिरावट पूर्ति में छोटी सी गिरावट दर्शाता है और कीमतो में थोड़ी बढ़त पूर्ति की मात्रा में थोड़ी बढ़त दर्शाता है। चित्र 9.7 में पूर्ति वक्र SS कम लोचदार पूर्ति वक्र यह X अक्ष से निकलता है इस स्थिति में $\Delta P > \Delta Q$ है। प्रतीकात्मक तौर पर कम लोचदार पूर्ति या स्थिर पूर्ति के रूप में $Es = 1$ प्रतिनिधित्व किया है।

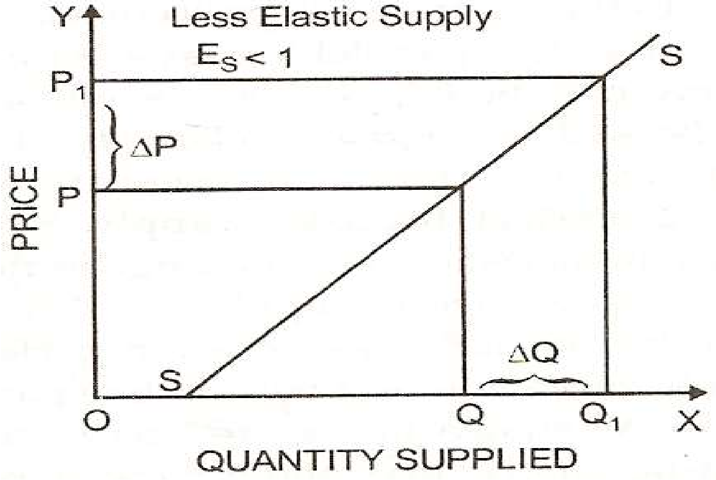

चित्र 9.7

9.5 पूर्ति की लोच का मापन

पूर्ति के लोच माप निम्न दो तरीकों पर चर्चा की गई है :

1. प्रतिशत या आपुपातिक विधि
2. आरेखी विधि

1. प्रतिशत या आनुपातिक विधि

पूर्ति की लोच को निम्न सूत्र की मदद से मापा जा सकता है :

पूर्ति की लोच = पूर्ति में प्रतिशत परिवर्तन/मूल्य में प्रतिशत परिवर्तन

या

पूर्ति की लोच = पूर्ति में आनुपातिक परिर्वन/ मूल्य में आनुपातिक परिवर्तन

गणितीय प्रतीकों में पूर्ति की लोच निम्न रूप में व्यक्त किया जा सकता है:

$$E_s = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}}{\frac{\Delta P}{P}} = \frac{\Delta Q}{Q} \times \frac{P}{\Delta P} = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

जहॉ

Es = पूर्ति की लोच

ΔQ = पूर्ति मात्रा में परिवर्तन

ΔP = मूल्य में परिर्वतन

Q = मूल मात्रा की पूर्ति

P = मूल कीमत

अब जबकि मूल्य और पूर्ति की मात्रा आम तौर पर एक ही दिशा में बढ़ते है, पूर्ति की लोच का गुणंक अर्थात Es एक सकारात्मक संकेत है।

यदि इस सूत्र का संख्यात्मक परिणाम एक के बराबर है, तो हम कहते है कि यह एकात्मक लोच है अगर यह एक से अधिक है, पूर्ति अधिक लोचदार माना जाता है औश्र अगर यह एक से कम है, तो पूर्ति कम लोचदार है।

उदाहरण : पूर्ति की लोच के माप की इस पद्धति को निम्नानुसार सचित्र किया जा सकता है : मान लीजिए एक निर्माता 510 रूपये प्रति क्विंटल कीमत पर 100 क्विंटल गेंहूँ की पूर्ति करने के इच्छुक है। यदि मूल्य में रू 520 प्रति क्विंटल की बढोतरी होती है तो गेहू की पूर्ति करने के लिए तैयार है। गेंहूँ की पूर्ति की लोच की गणना करें।

गेंहू की पूर्ति की लोच की गणना निम्नानुसार की जाएगी :

$$E_s = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q} = \frac{25}{10} \times \frac{510}{500} = 2.55$$

Es= 2.55 इसका आशय यह होगा कि यदि गेंहू की कीमत एक प्रतिशत से उपर जाता है तो गेंहूँ की पूर्ति में 2.55 प्रतिशत की वृद्धि होगी।

पूर्ति की लोच के गुणांक का मान शून्य और अनंत के बीच भिन्न होता है। विभिन्न परिणामों को नीचे सारणीबद्ध किया गया है:

पूर्ति की लोच की संख्यात्मक माप	शब्दावली	विवरण
E_s=0 E_s<1 E_s=1 E_s>1	पूरी तरह से स्थिर कम लोचदार एकात्मक लोचदार	मूल्य परिवर्तन होने पर पूर्ति की मात्रा परिवर्तित नहीं होती। कीमत के परिवर्तन पर पूर्ति की मात्रा बहुत कम परिवर्तन होती है। पूर्ति की और मात्रा कीमत में समान अनुमात

$E_s=0$ ∞	 अधिक लोचदार पूरी तरह से लोचदार	में बदलाव होता है। मूल्य की तुलना में पूर्ति की मात्रा में एक बड़ी प्रतिशत में परिवर्तन होता है। पूर्ति परिवर्तन अपरिमित है।

2. आरेखी विधि

निम्नलिखित चित्रात्मक विधि को पूर्ति की लोच के माप के लिए अपनाया जाता है:

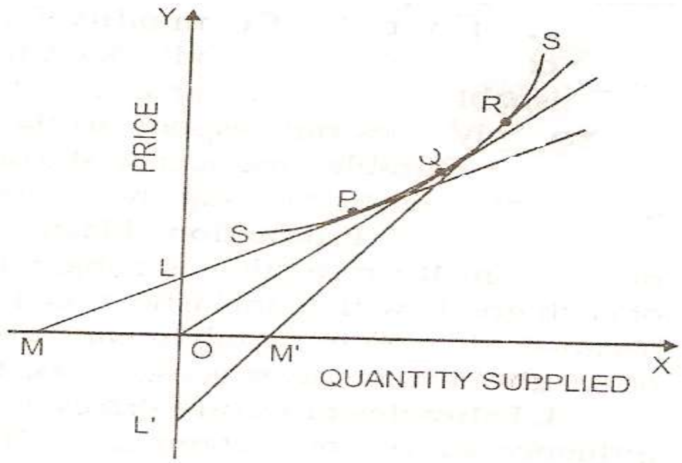

चित्र 9.8

चित्र 9.8 में SS पूर्ति वक्र है और तीन स्पर्शरेखा PQ और R पर इसे छूने वाले हैं और इन दोनों अक्ष को एक दूसरे को छेदने के लिए बढ़ाया गया है। उदाहरण के लिए P पर स्पर्शरेखा M पर क्षैतिज अक्ष और L पर उर्ध्वाधर अक्ष को कटौती करता है, Q पर स्पर्शरेखा O के उद्गम स्थान पर दोनो को काटती है। एक बिंदु पर पूर्ति की कीमत का लोच एक स्पर्शरेखा के साथ क्षैतिज अक्ष के साथ दूरी से उर्ध्वाधर के साथ दूरी से विभाजित किया जाता है।

आम तौर पर, अगर एक पूर्ति वक्र y अक्ष से उगता है, तो यह अधिक लोचदार पूर्ति दिखाएगा, यदि वक्र के x- अक्ष से निकले तो यह असंगत पूर्ति दिखाता है, और O उद्गम स्थान से उत्तपन्न होने वाला वक्र एकक लोच को दर्शाता है।

चित्र 9.9

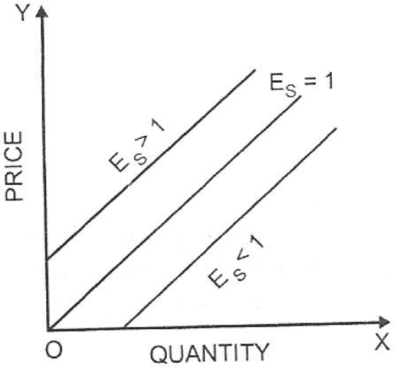

चित्र 9.10

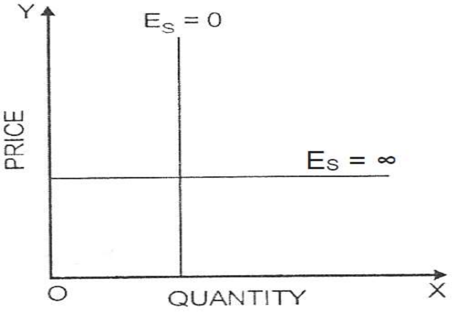

एक क्षैतिज वक्र पूरी तरह से लोचदार पूर्ति दिखाता है, जबकि एक उर्ध्वाधर वक्र पूरी तरह से स्थिर पूर्ति दिखाता है।

9.6 पूर्ति की लोच को प्रभावित करने वाले कारक

पूर्ति की लोच कई कारकों पर निर्भर करती है, जो निम्नानुसार हैः

1. **वस्तु की प्रकृति** : पूर्ति की लोच वस्तु की प्रकृति पर निर्भर करता है। उनके स्वभाव के आधार पर वस्तुओं पर वस्तुओ को वर्गीकृत किया जा सकता है। 1. विनाशकारी और 2. टिकाऊ। विनाशकारी उत्पादों को संग्रहित नहीं किया जा सकता है और इसलिए उनकी उनकी पूर्ति उनकी कीमत में परिवर्तन का जवाब नहीं देती। इसलिए इनकी पूर्ति वेलाच है। दूसरी ओर टिकाऊ उत्पादों को भंडारित किया जा सकता है। इसलिए उनकी आपूति आम तौर पर लोचदार है अर्थात कीमतों में बदलाव पूर्ति को प्रभावित करती है।
2. **उत्पादन की लागत** : पूर्ति की लोच भी उत्पादन की लागत से प्रभावित है। यदि उत्पादन बढ़ती लागत के नियम के अधीन है, तो ऐसे सामानों की पूर्ति असंगत होगी। कीमत में वृद्वि के कारण पूर्ति में सीमा तक मुश्किल हो सकती है, क्योंकि पूर्ति के अलावा लागत में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि उत्पादन ह्रासमान लागत नियम का अनुसरण करता है, तो इसकी पूर्ति लोचदार हो जाएगा।
3. **भविष्य की कीमतों के अनुमान** : भविष्य में परिवर्तन की उम्मीद भी एक वस्तु की पूर्ति को प्रभावित कर सकती है। यदि निर्माता भविष्य में कीमतों में वृद्धि की उम्मीद करते हैं तो वे वस्तुओ के स्टाक को पकड़ सकते है और बाजार में बिकी के लिए उपलब्ध उत्पाद नहीं बनाते है। ऐसी स्थिति में पूर्ति प्रकृति में बेलोच होगी। इसके विपरीत, यदि भविष्य में कीमतों में गिरावट आने की उम्मीद है। तो पूर्ति लोच प्राप्त कर सकती है।
4. **उत्पादन की तकनीक** : उत्पादन की सरल तकनीक, लागत के मामले में कम खर्चीला होता है। ऐसी वस्तुए, जिनकी उत्पादन तकनीक सरल होती है, सामान्यतः लोचदार होती है दूसरी तरफ, अगर किसी वस्तु के उत्पादन की तकनीक बोझिल, जटिल और प्रकृति में समय लेने वाली होती है, तो ऐसी वस्तुओं की पूर्ति आमतौर पर कम लोचदार होती है।
5. **समय** : समय के तत्व भी पूर्ति की लोच पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव रखता है। समय की अवधि जितना ज्यादा होगी पूर्ति की लोच उतनी ज्यादा होगी। दूसरी ओर, कम समय अवधि में पूर्ति की लोच होगी। पूर्ति के लोच पर समय के प्रभाव का विश्लेषण करने में, अर्थशास्त्रियों ने निम्न के बीच अंतर किया हैः
   I. **बहुत छोटी अवधि** : छोटी अवधि में पूर्ति तय होती है और पूर्ति को परिवर्तित करने के लिये समय कम होता है अतः पूर्ति पूरी तरह से बेलोच होती है।
   II. **लघु अवधि** : छोटी अवधि में संयंत्र की क्षमता तय होती है, लेकिन उत्पादन संयंत्रों की क्षमता का पूरा उपयोग करके पूर्ति को बदला जा सकता है इसलिए पूर्ति अपेक्षाकृत अधिक लोचदार होती है।
   III. **लम्बी अवधि** : लंबी अवधि में, पूर्ति के पूर्ण समायोजन के लिये प्रर्याप्त समय होता है। अतः पूर्ति पूर्णतः लोचदार होती है।
6. **इनपुट की प्रकृत्ति** : आपूत्ति की लोच उत्पाद के उत्पादन के लिए प्रयुक्त सामग्री की प्रकृति पर निर्भर करता है। यदि किसी वस्तु का उत्पादन आम तौर पर अन्य

सामानों के उत्पादन के लिए उपयोग किए जाने वाले इनपुट का उपयोग करता है, तो यह एक अधिक लोचदार पूर्ति प्रदान करेगा। अगर, दूसरी तरफ, यह विशेष रूप से अपने उत्पादन के लिए अपयुक्त इनपुट का उपयोग करता है, इसकी पूर्ति में अपेक्षाकृत स्थिरता होगी।

7. **जोखिम** : पूर्ति की लोच की मात्रा भी उद्यमियों की जोखिम लेने की क्षमता से प्रभावित होती है। यदि वे जोखिम लेने के लिए तैयार हैं, तो पूर्ति अधिक लोचदार होगी। दूसरी ओर, अगर उद्यमियों को जोखिम उठाने में दिक्कत है, तो पूर्ति बेलोच होगी। उनके जोखिम लेने की क्षमता आंशिक रूप से उत्पादन में प्रोत्साहन और कराधान की प्रणाली से प्रभावित होती है। कराधान की उच्च दर पूर्ति की लोच को कम करती है दूसरी तरफ सब्सिडी की उच्च दर के मामले में, पूर्ति अधिक लोचदार होगी।

9.7 पूर्ति की लोच का महत्व

पूर्ति के लोच के महत्व के मुख्य बिदुं निम्नलिखित हैं :

1. **मूल्य निर्धारण और पूर्ति की परिवर्तनशीलता** : मूल्य निर्धारण के रूप में डा. मार्शल द्वारा प्रतिपादित अवधारणा के संदर्भ में पूर्ति की लोच समय तत्व पर निर्भर करता है। पूर्ति के बाद से बाजार की अवधि (या बहुत ही कम अवधि में) असल में है, इसलिए मांग उत्पाद की कीमत के निर्धारण में एक सक्रिय भूमिका निभाती है। जबकि लंबे समय में, पूर्ति अधिक लोचदार है, यह मूल्य निर्धारण के लिए एक सक्रिय भूमिका निभाता है।
2. **फैक्टर मूल्य निर्धारण और पूर्ति की परिवर्तनशीलता** : किराए का आधुनिक सिद्धांत बताता है कि एक कारक केवल किराया कमाता है, अगर इसकी पूर्ति स्थिर या पूरी तरह से लोचदार है। चूंकि भूमि की पूर्ति बेलोच है, इसलिए जमीन की पूरी आय किराया है। जब श्रम या पूंजी आदि जैसे कारकों की पूर्ति अल्प अवधि में स्थिर हो जाती है तो इन कारकों द्वारा अर्जित अतिरिक्त आय, उनकी मांग में वृद्धि के कारण, किराए का प्रकार है इसे अर्द्ध किराया कहा जाता है जब कारक की पूर्ति पूरी तरह से लोचदार है तो यह किसी भी अतिरिक्त आय को किराए के रूप में नहीं कमाता है।
3. **कराधान और पूर्ति की परिवर्तनशीलता** : पूर्ति की लोच की अवधारणा भी वित्त मंत्री के लिए बहुत उपयोगी है। यह वित्त मंत्री को बताता है कि उच्च कर उन वस्तुओं जिसकी पूर्ति स्थिर है, ऐसे कर की उच्च मात्रा उन वस्तुओं की पूर्ति पर प्रभाव डालता है। इसके विपरीत जहां वस्तु की पूर्ति लोचदार है, वहां कम कर लगाया जाना चाहिये।

9.8 सारांश

पूर्ति का अर्थ है किसी निश्चित अवधि के दौरान दिए गए मूल्य पर बिक्री के लिए दी गई मात्रा से है। किसी वस्तु की पूर्ति की मात्रा केवल उसकी कीमत पर निर्भर नहीं है। बल्कि कई अन्य कारकों पर निर्भर करती है। पूर्ति का नियम एक वस्तु की कीमत और इसकी पूर्ति के बीच के संबंध को व्यक्त करते है। पूर्ति की लोच विक्रेताओं के हिस्से में कीमत में बदलाव के लिए पूर्ति में बदलाव की प्रतिक्रिया की मात्रा है। पूर्ति की लोच के पांच मात्राएं पर्याप्त रूप से लोचदार पूर्ति, पूर्ण निर्बाध पूर्ति, एकात्मक लोचदार पूर्ति, अधिक

लोचदार और कम लोचदार पूर्ति है। पूर्ति की लोच के माप की दो विधि, आरेख विधि और आनुपातिक या प्रतिशत विधि है।

9.9 शब्दावली

- **पूर्ति** – पूर्ति एक निश्चित अवधि के दौरान किसी निश्चित अवधि में बिक्री के लिए दी गई राशि है।
- **पूर्ति का नियम** – यह एक वस्तु और इसकी पूर्ति की कीमत के बीच संबंध व्यक्त करता है।
- **पूर्ति का लोच** – यह वस्तुओं की कीमत में बदलने पर विक्रेताओं की प्रतिक्रिया है।
- **एकात्मक पूर्ति लोच** – जब पूर्ति की गई राशि में परिवर्तन कीमत में परिवर्तन के सटीक अनुपात में है, तो पूर्ति की लोच एकात्मक है।
- **अर्द्ध किराया** – जब अल्पावधि में कारकों की पूर्ति स्थिर हो जाती है। तो इन मांगों में वृद्धि के कारण इन कारकों द्वारा अर्जित अतिरिक्त आय को अर्ध किराया कहा जाता है।

9.10 बोध प्रश्न

(1) रिक्त स्थान भरें

(1) वस्तुओं को उनके स्वभाव के आधार पर नष्ट होने वाली व .... में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

(2) यदि उत्पादन बढ़ती लागत के नियम के अधीन है, तो ऐसे वस्तुओं की पूर्ति .... होगी ।

(3) .... के संदर्भ में समय तत्व की अवधारणा पूर्ति की लोच पर निर्भर करती है ।

(4) पूर्ति की लोच.............................. मंत्री के लिए बहुत उपयोगी है।

(5) पूर्ति की गई मात्रा व कीमत के मध्य संबंध प्रत्यक्ष और........................ होता है ।

(6) पूर्ति की लोच .... में हुए परिवर्तन के कारण पूर्ति में हुए परिवर्तन का माप है ।

(7) पूर्ति को अधिक लोचदार तब माना जाता है यदि कीमत में छोटा सा परिवर्तन पूर्ति की .... में एक बड़ा परिवर्तन लाता है ।

(8) पूर्ति पूरी तरह से स्थिर है जब कीमत में हुए परिवर्तन के कारण .... में कोई परिवर्तन नहीं होता है ।

(2) सही या गलत

(1) समय की अवधि जितनी अधिक होती है पूर्ति भी उतनी अधिक लोचदार होती है ।

(2) भविष्य में मूल्य में परिवर्तन की प्रत्याशा वस्तु की पूर्ति को प्रभावित नहीं करती हैं ।

(3) उद्यमियों की जोखिम लेने की क्षमता से भी पूर्ति की लोच प्रभावित होती है ।

(4) जब किसी वस्तु की पूर्ति लोचदार होती है, तो उस समय अधिक कर लगाया जाना चाहिए।

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1)

(1) टिकाऊ, (2) बेलोचदार, (3) समय तत्व,

(4) वित्त,	(5) सकारात्मक,	(6) मूल्य,
(7) मात्रा,	(8) पूर्ति	

(2)

(1) सत्य,	(2) असत्य,
(3) सत्य,	(4) असत्य

9.12 स्वपरख प्रश्न

1. पूर्ति से क्या आशय है ? पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारकों को समझाओं ।
2. पूर्ति की लोच से क्या आशय है ?` पूर्ति की लोच कैस मापा जा सकता है ?
3. पूर्ति के लोच को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों पर चर्चा करें।
4. समझाएं कि पूर्ति की लोच कैसे मापा जाता है ? इसके महत्व पर भी चर्चा करें।

9.13 संदर्भ पुस्तकें

1. Yogesh Maheshwari, Managerial Economics, Prentice Hall of India, New Delhi.
2. D.N. Dwivedi, Managerial Economics, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.
3. T.R. Jain, O.P. Khanna and Virsen, Micro Economics and Indian Economy, V.K. Publishers, New Delhi.
4. H.L. Ahuja, Advanced Economic Theory, S. Chand & Co. Ltd., New Delhi.
5. Atmanand, Managerial Economics, Excel Books, Delhi.
6. R.L. Varshney and K.L. Maheshwari, Managerial Economics, Sultan Chand & Sons, New Delhi.

इकाई 10 सीमान्त उपयोगिता सिद्वांत (सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम)

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 सिद्वांत की विषय–वस्तु
10.3 अंतरावलोकन
10.4 गणनावाचक एंव कमवाचक पद्धति
10.5 नैतिक तटस्थता
10.6 शर्त
10.7 अनुप्रयोग
10.8 प्रतिपुष्टि
10.9 सारांश
10.10 शब्दावली
10.11 बोध प्रश्न
10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.13 स्वपरख प्रश्न
10.14 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद इस योग्य हो सकेगें किः

- सिद्वान्त की विषय वस्तु की व्याख्या कर सके।
- गणनावाचक एंव कमवाचक पद्धति का वर्णन कर सकें।
- सीमान्त उपयोगिता सिंद्वात के अनुप्रयोग की व्याख्या कर सके।

10.1 प्रस्तावना

सीमान्त उपयोगिता ह्रास के सिद्वांत ने अतीत में कई संस्करणों के माध्यम से खुद को विकसित किया है। अंतिम उपयोगिता का सिद्वांत प्रारंभिक चरण में मनोवैज्ञानिक विद्यालय की निष्ठा का केंन्द्र था। यह मूल्य प्रयोग में मूल्य के विचार के करीब था। विलफ्रेडो पारेटो एक उत्पाद के अंतिम उपयोगिता को समझाते हुए जेंवस के काफी करीब थे। अमेरिकी विशेषज्ञों ने इसे सीमांत उपयोगिता नाम दिया वालास द्वारा गढ़ने वाले शब्दों में अंतिम संतुष्ट इच्छा की तीव्रता शब्द था। उन्होनं कमी और अपर्याप्त आपूर्ति का उल्लेख किया। ड्यूपिट इन ने इसे अंतिम उपयोगिता कहा हालांकि निर्बाध खपत में उपयोगिता कम करने पर गॉसन बहुत स्पष्ट थे। जैवंस और कार्ल विलय ने कमी के कारण उपयोग मूल्य को कम करने की प्रवृत्ति का समर्थन किया। जेबी क्लार्क, बोहम बावरक इरविंग फिशर इत्यादि ने सीमान्त उपयोगिता ह्रास सिद्वांन्त के परिष्कार की दिशा में संतोष की आवश्यकता होती है। जबकि पहुचने तक जितनी राशि बढ़ती है उतनी ही बढ़ती है। प्रत्येक आवश्यकता स्वाभाविक रूप से सीमित होती है और शून्य अंक तक पहुचने तक जितनी राशि बढ़ती है उतनी ही बढ़ती है। यह पूर्ण तृप्ति का बिंदु है। उपयोगिता की पहली शर्त आपूर्ति की सीमा है।

उपभोक्ताओं द्वारा उपभोग के पैटर्न और बाधाओ की गहरी समझ से अर्थशास्त्रियों का उद्देश्य मानव संतुष्टि और कल्याण का अधिकतम लाभ उठाना रहा है। उपभोक्ता के

व्यवहार जिसे एक बार समझने के पश्चात उचित नीतियां बनाने और उचित निर्णय लेने में उत्पादको और साथ ही कल्याणकारी राज्य की सुविधा प्रदान करता है। यदि वस्तु की दृष्टि से देखा जाये तो उपयोगिता की अवधारणा को अक्सर संतोषजनक गुण्वत्ता प्राप्त करने के स्त्रोत और उपभोक्ता की खुशी और मनो–संतोष के रूप में उपयोग किया जाता है। उपयोगिता व्यक्तिपरक है, सापेक्ष भी है और नैतिक रूप से तटस्थ है। उपयोगिता सीमांत उप सीमांत या कुल हो सकती है। एक अतिरिक्त इकाई के उपयोग से प्राप्त उपयोगिता सीमांत है। इन सभी अतिरिक्त उपयोगिता को जोड कर कुल उपयोगिता प्राप्त की जा सकती है चूंकि घटती वस्तु की अतिरिक्त इकाइयां खपत होती हैं, इसलिए लगातार इकाई से अर्जित की जोन वाली उपयोगिता घटती रहती है यह उपभोग के अंतर्गत सभी प्रकार के वस्तुओ पर लागू होता है। इस प्रवृत्ति का ज्ञान उपभोक्ताओ उत्पादको वितरकों नीति निर्माताओ और यहां तक कि कल्याण उन्मुख संगठनो को व्यक्तिगत कॉर्पोरेट या सामाजिक लाभ के लिए अपना कार्यवाहक बनाने में मदद करता है। सीमान्त उपयोगिता ह्रास सिद्धांत, उपवादों को छोड़कर और मानदंडों को छोड़कर, अनुप्रयोग के मामले में सार्वभौमिक है।

सीमान्त उपयोगिता ह्रास के सिद्धांत पर यह सबक यह समझने के लिए एक बुनियादी उपकरण है कि उपभोक्ता के कार्य और किस बाधाओ के साथ दैनिक घरेलू से संबंधित खपत में भी सिद्धांत लागू होता है और उपयुक्तता या मनोवैज्ञानिक आनंद के संदर्भ में अत्यंत लाभ उठाने में मदद करता है। हम सीमान्त उपयोगिता ह्रास सिद्धांत के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेगें जिसमें उपयोगिता की मापन, योग्यता, विशेषता और सीमान्त उपयोगिता ह्रास सिद्धांत अंतर्निहित धारणाएं शामिल है। हम सीमान्त उपयोगिता ह्रास को आरेखी आंकडे और चार्ट या तालिकाओं के द्वारा वर्णन करने का प्रयास करेंगें। हम इस संदर्भ में समीक्षकों के विचार बिंदुओ ओर क्रमिक दृष्टिकोण के व्यवहार से सिद्धांत का भी मूल्यांकन करेंगे। सभी मांगे संतृप्त हैं, और वृद्धिशील उपयोगिता में जल्द ही या बाद में गिरावट आती है अगर उपभोक्ता लंबे समय तक एक ही वस्तु का उपयोग दोहराता रहता है। यहा अध्यन का मुख्य उद्देश्य मार्शली संस्करण में सीमान्त उपयोगिता ह्रास सिद्धांत का विश्लेषण करना है। यहां, हम यह जानने की कोशिश करेगें कि सीमान्त उपयोगिता ह्रास अर्थशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतो के आधार के रूप में कैसे काम करता है।

10.2 सिद्धांत की विषय वस्तु

सीमांत उपयोगिता विश्लेषण अतीत में कई हाथो में गया है। मेंजर (1840), गोस्सेन (1854), जैवंस (1871), वाल्रस (1874), अल्फ्रेड मार्शल (1890) और कई अन्य विशिष्ट विचारकों ने मुख्य उपयोगिता सिद्धांत की इस अवधारणा के विकास में योगदान दिया। मार्शल का संस्करण हालांकि सबसे लोकप्रिय व्याख्या है। इस सिद्धांत का इस आधार पर अर्थशास्त्रीयो ने आलोचना की थी कि गणनावाचक दृष्टिकोण अपूर्ण अयोग्य और आत्मनिर्भर है। बाद में जे.आर.हिक्स, सैमुअल्सन और एलन जैसे विशेषज्ञों के हाथों में यह सिद्धांत क्रमिक दृष्टिकोण पर केंद्रित था। सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम विभिन्न दशाओं में उपभोक्ता व्यवहार को रेखांकित करती हैं इस नियम के अनुसार वस्तुओं की इकाई में रूकरूपता होनी चाहिये और इनमें किसी प्रकार का परिवर्तन भी नही होना चाहिये। व्यावहारिक अनुभव के माध्यम प्रवृत्ति अधिक या कम साबित हुई है।

सीमांत उपयोगिता विश्लेषण भारी कीमत के निर्माता की मशीनों की बजाय उपभोक्ता वस्तुओं की खपत पर बेहतर तरीके से होता है। कुछ मान्यताओं या शर्तों के तहत यह प्रवृत्ति अच्छी तरह से चिन्हित हैं खरीद काफी बड़ा होना चाहिए या निर्णय लेने से पहले कुछ सोचने की आवश्यकता होती है। उपभोक्ता अज्ञानी के बजाय जानकार और सतर्क रहना

चाहिए और उसे तर्कसंगतता के साथ काम करना चाहिए। अल्वियन (1968) बूमोल (1980), सैमुएलसन (1964), मिशान (1968) और कई अन्य विद्वानो ने उपयोगिता विश्लेषण की उपयोगिता और कमियां पर चर्चा की। तपस मजूमदार (1966) ने भी उपयोगिता विश्लेषण के नए आयामो पर विस्तृत चर्चा की।

सीमांत उपयोगिता विश्लेषण द्वारा प्रमुख तौर पर दो प्रश्नो की व्याख्या की जाती है। पहला, क्या उपभेक्ताओं की मांग को निर्धारित करता है ? और दूसरा वह है जो कीमत के व्यवहार को निर्धारित करता है। पूर्व, उपभोक्ता द्वारा प्राप्त निर्धारित किया जाता है और दूसरा, एक वस्तु की आपूर्ति स्थिति द्वारा तय किया जाता है।

सीमांत उपयोगिता का आशय कुल उपयोगिता में परिवर्तन होता है जिसके परिणामस्वरूप एक इकाई में समय के प्रति इकाई का खपत होता है। यह अंतिम इकाई की खपत से कुल उपयोगिता के लिए एक अतिरिक्त है, जबकि सीमांत उपयोगिता मांग के जरिये तय होती है यह कीमत से तय नहीं होती है। इसके बजाय यह मूल्य के साथ बदलता है कीमत और उपयोगिता के निर्धारण के लिए वस्तु की आपूर्ति महत्वपूर्ण है। जहां असीमित आपूर्ति है, सीमांत उपयोगिता शून्य है। यह कमी है जो सीमांत उपयोगिता को सकारात्मक बनाता है यह आपूर्ति के हर संकुचन के द्वारा कमी आता है।

10.3 अतंरावलोकन

आफर्ड मार्शल ने मांग किया की जड़ निर्धारक की व्याख्या करने के लिए उपयोगिता परिकल्पना तैयार की। एक व्यक्ति उपभोक्ता किसी वस्तु या सेवा इकाई को खरीदने के लिए क्यों इच्छुक है और इसकी कितनी मात्रा इस खरीद से अपेक्षित उपयोगिता द्वारा निर्धारित की जाती है। उपयोगिता उपभोग या कब्जे से प्राप्त उपभोक्ता की संतुष्टि या मनो–आनंद की भावना का अनुभव है। उच्च उपयोगिता उच्च मांग है, जो उपभोक्ता की इच्छा को प्रभावित करने वाली अन्य चीजों को स्थिर रखती है। वस्तुओं, विकल्प फैशन और लोकप्रियता, आय स्तर कीमत आदि सहित कई प्रभावशाली कारक है। सीमांत उपयोगिता उपभोक्ता की मानसिक कल्पना से मिली खुशी का सार है। कैसे हम सभी को खुशी या उपयोगिता की मात्रा ठीक से जानते है? यह आत्मनिरीक्षण या अनुमान कार्य की एक मानसिक प्रकिया है, सटीक मूल्यांकन का एक आसान स्तर नहीं है और व्यक्ति दर व्यक्ति और स्थिति दर स्थिति में बदलता रहता है।

वास्तव में वस्तु के मांग की व्याख्या वस्तु केक मूल्य के बदलने पर उपभोक्ता के प्रतिक्रिया से की जाती है। क्या इस प्रतिक्रिया का कारण बनता है। और क्या प्रतिक्रिया के पैटर्न बनाता है, यह उपभोग क्रिया द्वारा तय होता है और सीमांत उपयोगिता द्वारा निर्धारित होता है। आम तौर पर, उपभोक्ता वस्तु के मूल्य के बीच और एक समय पर मांग की गई वस्तु की मात्रा में व्युत्क्रम संबध रखता है। मांग का पैटर्न वस्तु खरीदने से उपयोगिता के लाभ पर निर्भर करता है। उपभोक्ता हमेशा वस्तु की अगली इकाई से उपयोगिता के संभावित लाभ के साथ प्रचलित मूल्य तुलना करता है।

सीमांत उपयोगिता विश्लेषण वास्तव में मांग का एक पारंपरिक सिद्धांत है यह बताता है कि उपभोक्ता को अच्छा मांग करने के लिए क्या प्रेरित करता है। इस सिद्धांत में प्रश्न के अंतिम और निर्णायक उत्तर की पेशकश नहीं होती है। अर्थशास्त्री, हिक्स और सैमुअल्सन इत्यादि द्वारा विकसित कई अन्य स्पष्टीकरण है–तर्कसंगत कमजोर आदेश सिद्धांत और वरीयता सिद्धांत को तर्कसंगत ढंग से मांग व्यवहार को समझते है। मूल्य व्यवहार की प्रतिक्रिया में उपभोक्ता व्यवहार को समझने को समझने के लिए मार्शलियन

दृष्टिकोण अब भी अत्यधिक प्रासंगिक और सरल तरीका है। कल्याणकारी अर्थशास्त्र का अधिकांश भाग, मांग की उपयोगिता सिद्धांत पर आधारित है।

वस्तुओं की मांग क्यों की जा रहीं है ? स्पष्ट जवाब यह है कि उच्च तीव्रता इच्छा को पूरा करने की उनकी विशेषताओं के लिए वस्तुओं की मांग की जाती है। खपत से प्राप्त उपयोगिता उपभोक्ता के मन में खुशी का अनुभव है। यह एक व्यक्तिपरक तत्व है। उपभोक्ता की मानसिक प्रक्रिया में यह एक संतुष्टि है सभी उपभोक्ताओं को एक चीज का उपभोग करने की समान सुविधा नहीं है यह बड़े पैमाने पर भिन्न हो सकता है क्योकि व्यक्ति दर व्यक्ति आवश्यकता अलग–अलग होती है।

प्रत्येक उपभोक्ता की इच्छा में एक समान तीव्रता नहीं होती है। विभिन्न उपभोक्ताओ के लिए इच्छा की तीव्रता की मात्रा अलग है। यदि कोई खरीदार महसूस करता है कि एक वस्तु उसकी संतुष्टि के लिए बहुत अधिक उपयोगी है। तो उसकी इच्छा तीव्र हो जाती है और इसलिए वह इस वस्तु को वरीयता में मांगते है। इस उपयोगिता को प्राप्त करने के उपभोक्ता को मुद्रा की इकाईयो को व्यय करना पड़ता है।

नव–शास्त्रीय रूप में उपयोगिता को सटीक मापने योग्य और मात्रात्मक होने का दावा किया जाता है। मात्रा बारीकी से तुलना की जा सकती है। तुलना उपभोक्ता के निर्णय को बहुत आसान बनाता है निर्णय इस बाता पर होना चाहिए कि क्या उसे इस वस्तु की मांग करनी चाहिए यह उसके बाद की दूसरी खुराक या दूसरी चीजो को प्राथमिकता देना चाहिये। यदि अगले खुराक का उपभोग या कब्जा उपभोक्ता को बेहतर या बदतर स्थिति में बनाता है तो यह निर्णय उम्मीदवार अपने उपयोगिता लाभ के आधार पर लेता है। धन के माध्यम से अन्य वैकल्पिक वस्तुओं को भी कय किया जा सकता है जिनमें आवश्यकता को पूरा करने का गुण हो। यह किसी भी अन्य चीज पर खर्च किया जा सकता है जो अधिक उपयोगिता की आवश्यकता को पूरी करती है जो उच्च उपयोगिता प्रदान करती है। उपभोक्ता संभावित उपयोगिता प्राप्ति की सावधनीपूर्वक तुलना करके उसकी खरीद करता है। तुलना में यह एक एकल वस्तु या दो अलग–अलग वस्तुओं की अलग मात्रा भी हो सकती है। चूंकि उपयोगिता योगात्मक है और इसे कुल उपयोगिता जोड़ा जा सकता है, इसलिए अंतिम इकाई को खरीदने के द्वारा कुल उपयोगिता में अंतर दिखाया जा सकता है। यह सीमांत उपयोगिता है।

यह सिद्धांत धन या मौद्रिक इकाइयों को निरंतरता के रूप में इस्तेमाल करता है। उपभोक्ता को वस्तु द्वारा प्राप्त उपयोगिता हर अगले नंबर या खुराक में बदलती रहती है किन्तु मुद्रा अपनी उपयोगिता को अपरिवर्तित रखती है। इस सिद्धांत के लिए धन की उपयोगिता की यह स्थिरता बहुत महत्वपूर्ण है। उपयोगिता पैसे के मामले में औसत दर्जे का है यह इस विश्लेषण में एक स्थिर मूल्य माना जाता है क्योंकि माप पैमाने या मापक स्थिर होना चाहिए और बदलना नहीं है।

मुद्रा का वस्तुओं और सेवाओं पर एक कमांड होता है जब बाजार में कीमतो में कमी आती है तो पैसे की शक्ति बढ़ती जाती है और जब कीमतें कम हो जाती है। तो पैसे की शक्ति कम हो जाती है। लेकिन सीमांत उपयोगिता सिद्धांत धन के मूल्य में स्थिरता ग्रहण करता है। यह तभी संभव है जब उपभोक्ता द्वारा किसी भी चीज पर खर्च किए जाने वाले पैसे आय का व्यावहारिक रूप से नगण्य हिस्सा हो। यह धारणा अत्यधिक निर्गुण और अयोग्य है।

उपयोगिता की अवधारणा, स्वयं, मनमाना और काल्पनिक है ओर तार्किक रूप से अघोषित नहीं है उपयोगिता को आत्मनिरीक्षण विधि से जाना जाता है जो आत्मनिवेदन के

द्वारा एक आंतरिक अनुभव को तर्कसंगत बनाता है। यह एक सहज ज्ञान या अनुमान है – सामान्य प्रकृति का काम है कि किसी अन्य व्यक्ति को संतोष के संदर्भ में कैसे फायदा हो रहा है। यह धारणा है कि किसी व्यक्ति को किसी स्थिति की तरह महसूस होता है, अन्य व्यक्ति का अनुभव बेहद मनमानी है। ह्रसमान उपयोगिता का तर्क मानव मन में तार्किक अटकलें से लिया गया है और यह अनुभव से सत्यापित है। कोई वस्तु किसी व्यक्ति के लिये बेहद संतोषजनक हो किसी दूसरे व्यक्ति के लिये असंतोषजनक या अनुपयोगी हो सकती है।

दो अनुभवों के बीच कुछ मौजूद समानताएं हो सकती है। यह एक वास्तविक सच्चाई है कि अगर कोई उपभोक्ता अतिरिक्त खुराक या किसी चीज की इकाइयों का उपयोग करता है, तो उसकी निरंतर खपत से सीमांत संतुष्टि की उपज बढ़ती रहती है, लेकिन हर अगले चरण में उपयोगिता प्राप्ति दर धीमी हो जाती है हर अतिरिक्त खुराक के साथ घटती रहती है। प्रत्येक अगले खुराक के द्वारा कुल उपयोगिता बढ़ती है परन्तु शुद्ध अतिरिक्त उपयोगिता घटती रहती है और यदि उपभोक्ता यह क्रम जारी रखता है तो वह अपने वर्तमान तृप्ति के अतिरिक्त इकाइयां खपत होती है। जब वह किसी भी इकाई की मांग नहीं करता, तो उसकी इच्छा संतृप्त होती है कुछ इकाई की खपत के लिए आगे बढ़ने से उसे भी असहमति या नकारात्मक संतुष्टि मिल सकती है।

हर तर्कसंगत उपभोक्ता संतुष्टि या उपयोगिता की अपनी उपज को अधिकतम करने के इच्छुक है, वह समान–सीमांत उपयोगिता की नीति अपनाते है। सभी पैसा इकाइयों की समान खरीद क्षमता होती है और पैसा सभी खरीदने के लिए दुर्लभ होता है। उपभोक्ता अर्थव्यवस्था में सामान खरीदने के लिए पैसे का उपयोग करती है जो सबसे अधिक संतुष्टि देता है। इकाईयों का उपयोग करते रहने पर कुल उपयोगिता में वृद्धि होती है। यह ध्यान देने योग्य है कि लगातार उपयोग के दोहराव पर सीमांत उपयोगिता धीरे–धीरे घटती रहती है। यदि दोहराव जारी रहता है, तो सीमांत उपयोगिता नकारात्मक भी हो सकती है। सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम के तर्क को समझने के लिए, हम नीचे एक तालिका बना सकते है :

सारणी 10.1

निरंतर उपयोग में सीमांत उपयोगिता की गति में गिरावट

प्रति दिन कॉफी की खपत (कप)	सीमांत कॉफी कप से प्राप्त उपयोगिता	कुल प्राप्त उपयोगिता
1	10	10
2	9	19
3	8	27
4	6	33
5	4	37
6	1	38
7	(–) 3	35
8	(–) 4	31

यह ध्यान दिया जा सकता है कि कॉफी की प्रति यूनिट की संतुष्टि का प्राप्ति 10 है, जब सीमांत और कुल उपयोगिता एक समान होती है। शुरूआत में कॉफी की मांग की तीव्रता उच्च होती है। प्रति दिन लगातार अधिक कप खपत होने पर सीमांत उपयोगिता में

गिरावट होती है, जबकि कुल उपयोगिता बढ़ रही है लेकिन यह क्रमिक रूप से कम गति पर बढ़ती है। प्रति दिन छटवा कप केवल 1 उपयोगिता अर्जित करता है। अभी भी आगे बढ़ने से कॉफी की सीमांत उपयोगिता नकारात्मक हो जाती है। यहां तक कि एक शराबी लगातार कई बोतलों का सेवन करते हुए बेहोश हो जाएगा वह उपभोक्ता का एक तर्कहीन व्यवहार है, जैसे बाहर रखा गया है। यह सिद्धांत उपभोक्ता वस्तुओं में ठीक रखता है।

हम जानते है कि एक वस्तु के पास कोई उपयोगिता नहीं होगी, जब तक कि वह मांग को पूरा करने के योग्य नहीं हो। उपयोगिता आवश्यकता संतुष्टी की एक कला है जो कि वस्तु के गुणो के कारण उपयोग से प्राप्त होती है। यह मांग है जो अच्छी उपयोगिता प्रदान करती है। उपयोगिता एक व्यक्तिपरक आनंददायक अनुभव है जो मानव मन में स्थिर है। यह संतुष्टि का अनुभव है। इसलिए आत्मनिरीक्षण और एक भौतिक गिनती नहीं है जो संतोष स्तर को मापता है। उपयोगिता ह्रास सिद्धांत का यह मानना है कि इंसान हमेशा कम उपयोगिता की वस्तु को प्रतिस्थापित करते हुए अधिक से अधिक संतुष्टि और उपयोगिता को प्रदान करने वाली वस्तु को प्राप्त करने की कोशिश करता है।

इस सिद्धांत के अर्थशास्त्र के विज्ञान में कई उपयोग हैं उदाहरण के लिए, मूल्य निर्धारण के सिद्धांत में, पानी और हीरे की कीमत और उपयोगिता भिन्नता, मांग वक्र, उपभोक्ता व्यवहार और उपभोक्ता के अधिशेष गति के मानचित्रण के असत्यवत स्थितियों को समझाने में सममूल्य उपयोगिता का सिद्धांत सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत से व्युत्पत्ति है। उपभोक्ता की संतुलन अवधारणा को सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम के संदर्भ में समझा जाता है।

सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत को वक्र की मदद से सचित्र किया जा सकता है जिसे सीमांत उपयोगिता ह्रास की योजना बनाकर तैयार किया जा सकता है। उर्ध्वाधर अक्ष पर हम मूल्य और उपयोगिता और क्षैतिज अक्ष पर उपभोग मात्रा दिखाते है। जब मूल्य उपयोगिता के बराबर होता है तो उपभोक्ता की संतुष्टि ऊंचाइयों तक पहुंचती है। संबध यह दर्शाता है कि वस्तु की कीमत जितनी कम होगी वस्तु की मांग उतनी ज्यादा होगी और वस्तु की कीमत जितनी ज्यादा होगी वस्तु की मांग उतनी कम होगी। जब वस्तु की बाजार कीमत सीमांत उपयोगिता के बराबर होगी उपभोक्ता के लिये यह संतुलन की स्थिति होगी। संतुलन वह स्थिति है जहां से जरा सा भी विचलन उपभोक्ता को हानि पहुचां सकता है। अतः वह पुनः क्रय की प्रक्रिया को रोक देता है। इस स्थिति पर उपभोक्ता सतृंप्त हो जाता है। जब तक सीमांत उपयोगिता इकाई की क्रय कीमत के बराबर हो क्रय किया जा सकता है। जब उपयोगिता और कीमत समान होती है, तो आगे की खरीदारी रोक दी जाएगी। क्योंकि यह नकारात्मक उपयोगिता पैदा करेगा मांग का नियम सीमांत उपयोगिता ह्रास के इस सिद्धांत से व्युत्पन्न है।

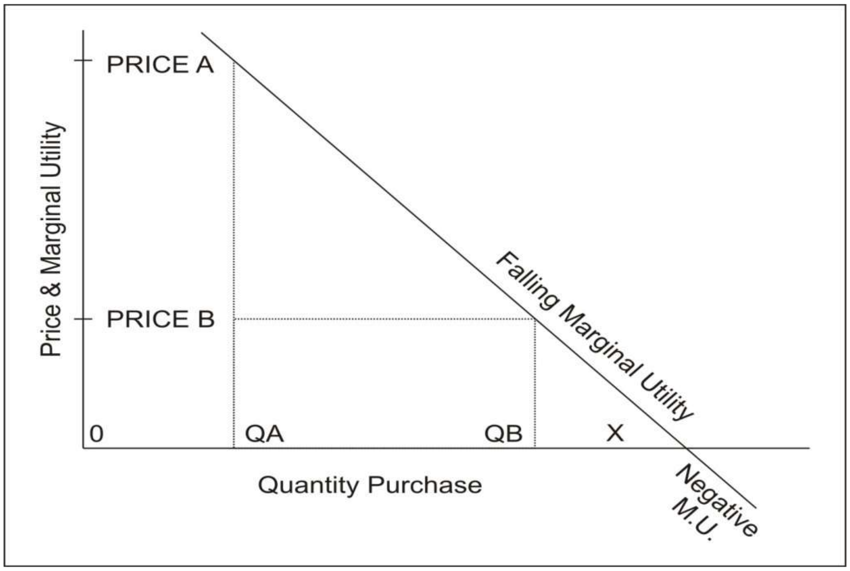

चित्र 10.1

10.4 गणना वाचक और क्रमवाचक पद्धति

विशेषज्ञों का मानना है कि अपने वास्तविक अनुप्रयोग में, सीमांत उपयोगिता ह्रास विश्लेषण में सीमांत उपयोगिता का उपभोग करने वाले या खरीदे गए सामान की उपयोगिता का आकलन करने की कोशिश की जाती है। उपयोगिता का कार्डिनल माप गलत और मनमानी है। एच आर हिक्स, एलेन, और कई अन्य सिद्धांतकारो ने क्रमिक दृष्टिकोण के उपयोग से गणनावाचक दृष्टिकोण को बदलने के लिए एक प्रयास किया उदासीनता वक्र विश्लेषण सीमांत उपयोगिता विश्लेषण कम करने के लिए सही विकल्प है। सैम्युल्सन और दूसरों ने वरीयता आदेश को स्पष्ट करने के लिए अभी भी बेहतर दृष्टिकोण पेश किए है।

कुछ माल की अविभाज्यता सीमांत उपयोगिता विश्लेषण के लिए एक गंभीर चुनौती है। दो चीजों की मात्रा हमेशा बराबर इकाइयों में विभाजित नहीं होती है यह एक समस्या है जैसा कि हम पैसे के संबध में रेफ्रिजरेटर के साथ संतरे की तुलना करते है। तुलना एक सिलाई मशीन और अंगूर की टोकरी के बीच हास्यास्पद होगी। कीमतें तुलनीय नहीं है और न ही हम सिलाई मशीन को छोटे टुकडों में तोड़ सकते है और इसे बिक्री योग्य रख सकते है। यहॉ अन्य ब्रांड सिलाई मशीन के साथ तुलना की जा सकती है। यह अच्छी तरह से विकल्प हो सकता है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि पैसे की सीमांत उपयोगिता भी बदल सकती है। यह उपभोक्ता के वास्तविक आय स्तर को बदल देगा। बढ़ते मूल्य का स्तर उपभोक्ता की वास्तविक आय में कमी लाता है। पैसे की सीमांत उपयोगिता अपरिवर्तित रह सकती है, केवल अगर मांग का मूल्य लोच, इकाई के बराबर है या जब मूल्य में परिवर्तन का महत्व केवल महत्वपूर्ण है सीमांत उपयोगिता ह्रास का सिद्धांत उपभोक्ता के व्यवहार के संबंध में भी देखा जा सकता है। हर उपभोक्ता बुद्धिमान व्यवहार से अपनी कुल उपयोगिता को अधिकतम करने की कोशिश करता है। यह उनके तर्कसंगत व्यवहार के कारण है, कि वह अपनी कुल उपयोगिता को अधिकतम करता है।

उपभोक्ता इतने कम संसाधनो को विभिन्न विकल्प के बीच इस तरह वितरित करता है कि उसकी कुल उपयोगिता सर्वोच्च हो। जैवंस (1871) लियोन वाल्रास (1874) मैंजर (1840) और मंसहॉल (1890) इस सैद्धांतिक चर्चा में बहुत बड़े पैमाने पर लगे हुए थे। ये सभी

भावनावाचक दृष्टिकोण से जुडे थे। उपभोक्ता अपनी आवश्यकताओ की तीव्रता में भिन्नता रखते है ताकि उपभोक्ता व्यवहार व्यक्ति दर व्यक्ति अलग–अलग हो सके।

10.5 नैतिक तटस्थता

उपयोगिता को नैतिक रूप से तटस्थ माना जाता है। उपभोग के मनोवैज्ञानिक सुख की छोटी इकाई की उपयोगिता इकाई के रूप में गिनी जाती है। क्रमवाचक उपयोगिता अवधारणा उपभोक्ता की वरीयता के संबंध में माल की उपयोगिता की अभिव्यक्ति है। प्राथमिकता का क्रम उपयोगिता स्तर को दर्शाता है। सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत चलाता है कि एक ही वस्तु के उपभोग की दोहराव से वस्तु के अगले एक यूनिट की खपत उपयोगिता को कम करता है। गणनावाचक दृष्टिकोण वस्तु की हर एक इकाई द्वारा कुल उपयोगिता के अलावा ह्रास की दर की प्रवृत्ति को भी रेखांकित करता है। यह सिद्धांत उपभोक्ता वस्तुओं में अधिक सटीक रूप से लागू होता है। यह समझना सरल और आसान है लेकिन इस कानून की मान्यताएँ बहुत पेचिदा और जटिल है। इनमें से कुछ नीचे हैं:

1. खपत की इकाइयों को अच्छी तरह से परिभाषित, मानक और एकात्मकता होनी चाहिए।
2. स्वाद, फैशन पसंद और नापसंद बदलना नहीं चाहिए।
3. वस्तु दुर्लभ पेंटिंग दुर्लभ ऐतिहासिक महत्व के सिक्के, धार्मिक प्रासंगिकता आदि की मूर्तिया या मूर्तिया की तरह दुर्लभ नहीं होनी चाहिए।
4. आय स्तर और जीवन स्तर और शैली अचानक नहीं बदलना चाहिए।
5. खरीदार या उपभोक्ता को विकल्प बनाने के दौरान आर्थिक रूप से तर्कसंगत स्वरूप में व्यवहार करना चाहिए और उन्हे रास्ते पर भावनाओं से दूर होने के बजाय कुल उपयोगिता को अधिकतम करने का प्रयास करना चाहिए।
6. पैसा इकाइयों में निरंतर उपयोगिता होनी चाहिए, भले ही पैसा का स्टॉक बदलता हो।

खरीददारी व्यवहार निश्चित रूप से आर्थिक तर्कसंगतता द्वारा निर्देशित किया जाता है जिसके कारण वस्तु को उपभोग करने के लिए वरीयता की आवश्यकता होती है अगर यह अधिक संतुष्टि या उपयोगिता लाती है एक वस्तु का मूल्य है क्योकि यह उपभोक्ता की उच्च आवश्यकता को पूरा करता है। इस प्रक्रिया में, उपयोगिता बनाई जाती है या संतुष्टि प्राप्त होती है। मानवीय जरूरतों में उनकी तीव्रता के अनुसार भिन्नता है इसलिए उपभोक्ता एक उच्च कीमत का भुगतान करने के लिए तैयार होता है। अधिक से अधिक तीव्रता की आवश्यकता को पूरा करने के लिए वह पर्याप्त मूल्य का भुगतान का भुगतान नही कर सकता है अगर उपभोग की गई चीज पर्याप्त संतुष्टि या आनंद नही देती है। क्या ग्राहक को अधिक भुगतान करने के लिए पर्याप्त सतर्क बनाता है क्या सीमित आय की बाध्यता है और कई अनियंत्रित जरूरतों को तर्कसंगत रूप से कार्य करने के लिए उपभोक्ता पर दबाव डालती है। अगर उपभोक्ता अपनी अल्प आय के द्वारा उच्चतम संतुष्टि प्राप्त करना चाहते है, तो उन्हें संतोष की प्राप्ति और उससे भी अधिक जिसमें उन्हें सेब से अधिक उपयोगिता के लिए भुगतान किये गये मूल्य की तुलना करना होगा। सीमांत उपयोगिता में कमी आती है क्योकि उपभोक्ता अधिक इकाइयां खरीदता है। इससे पहले कि उपभोक्ताओ की सीमांत उपयोगिता शुन्य से कम हो जाये, उपभोक्ता अलग–अलग इकाइयों को क्रय करना रोक देता है। वह तब तक क्रय करता रहता है जब तक कि नये क्रय की गयी इकाई की उपयोगिता मूल्य से ज्यादा है। यदि कीमत गिरती है सीमांत उपयोगिता की कीमत के बराबरी तक खरीदारियां जारी रह सकती है। मूल्य मांग रिश्ते में एक व्युत्क्रम संबंध है।

एक उपभोक्ता संतुलन की स्थिति में है, जब कीमत उसकी सीमांत उपयोगिता के बराबर होती है। यदि वह पहले एक इकाई खरीदना बंद कर देता है, तो वह अधिक उपयोगिता की कमाई की संभावना खो देता है और यदि वह शून्य अंक के बाद भी आगे निकलता है, तो कीमत कम होने के बाद उसे नुकसान होता है क्योकि यहां उपयोगिता कीमत से कम है। इसका आशय व्यर्थता है इसलिए उपभोक्ता कोई और बदलाव नहीं करना चाहता।

10.6 शर्त

सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत केवल संचालन के तहत स्वीकार्य है, जो कि पहले चर्चा की गई थी। यह माना जाता है कि उपयोगिता एक मापनीय और मात्रात्मक धारणा है, जहां तक उपयोगिता नंबरो में मापा जा सकता है। प्राप्त उपयोगिताओ में कोई गुणात्मक अंतर नहीं है। विभिन्न चीजों से प्राप्त उपयोगिता अलग–अलग है यह एक दूसरे से स्वतंत्र है एक अच्छे वस्तु से वर्जित संतोष दूसरे वस्तु के उपभोग से प्रभावित नहीं होता है। सभी सामानो से मिली उपयोगिताओं को आसानी से कुल, उपयोगिता में जोड़ा जा सकता है यह चित्र बनाने के लिए ग्राफ पर प्लॉट किया जा सकता है। कीमतें पैसे इकाइयों में व्यक्त की जाती है। माना जाता है कि पैसे की सीमांत उपयोगिता हमेशा स्थिर रहती है, भले ही धन की मात्रा उपभोक्ता के साथ कम हो जाती है क्योकि उनकी खरीदी क्रमिक रूप से चलती रहती है। यह तकनीकि रूप से गलत धारणा है क्योकि कीमत में परिवर्तन उपभोक्ताओं की आय की स्थिति में बदलाव का कारण हो सकता है। सीमांत उपयोगिता ह्रास विश्लेषण आत्मनिरीक्षण विधि पर आधारित है जिसका अर्थ है खरीदार के दिमाग मे अभर से अनुभव के आधार पर निर्णय यह फैसले विश्लेषक को एक सुराग देता है जैसा दूसरे व्यक्ति को इसी तरह की स्थिति में महसूस होता हैं यह भी दाव किया जाता है कि सीमांत उपयोगिता कम होती जाती है क्योंकि उपभोक्ता की हर इच्छा तृप्त होने योग्य होती है और माल एक दूसरे के अपूर्ण विकल्प होते है।

10.7 अनुप्रयोग

ह्रासमान सीमांत उपयोगिता का सिद्धांत मानव जाति के व्यावहारिक अनुभव पर आधारित हैं इसलिए यह सार्वभौमिक रूप से लागू होता है यह अक्सर कहा जाता है कि सीमांत उपयोगिता क्रमिक रूप से कम हो जाने पर भी सभी चीजें हमेशा शून्य तक नहीं पहुचती है। ऐसे सामान हो सकते है जो हमेशा आवश्यक हो और मांग में भी है। ये कभी शून्य उपयोगिता चरण तक नहीं पहुचतें हैं, पैसा ऐसी चीजों में से एक है पैसा सभी वस्तुओं पर कमांड है इसलिए इसकी मांग कभी भी शून्य तक नहीं पहुंचती। पैसा सभी वस्तुओं पर कमांड है यह एक बात नहीं है पैसे की सीमांत उपयोगिता गिरती नहीं है। राजकोषिय नीति भी अपना निर्माण सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम से करती है। सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम से वितरण नीति को भी फायदा होता है। सभी सरकारें है और नहीं है के बीच आय को पुनर्वितरित करने की कोशिश करती है उपयोग के लिए वरीयताओ में अंतर वास्तव में बताता है कि क्यों गरीबों को सीमांत उपयोगिता के बावजूद खरीदना चुनता है, जिसका अर्थ है कि एक तर्कहीन निर्णय सिद्धांत सुझाव देता है कि सीमांत उपयोगिता पर आधारित एक उचित चयन निश्चित रूप से कुल उपयोगिता को अधिकतम करेगा लेकिन वस्तु हमेशा समान नहीं होते हैं, जहां एक तुलना संभव है। यदि असमान वस्तु अभिाज्यता प्रश्न दिखाई देता है जो तुलना में एक मुख्य बाधा है घटती उपयोगिता का सिद्धांत कराधान, मूल्य निर्धारण, घरेलू,

खरीद मांग का नियम, लोच, उपभोक्ता के अधिशेष, समसामयिक उपयोगिता और प्रतिस्थापन आदि के नियम में बहुत उपयोगी है।

यह निश्चित रूप से सच है कि अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और इसके नियमो को भौतिक विज्ञान की तरह सटीक होने के बजाय परिकल्पित जटिल और सांकेतिक माना जाता है। लेकिन हमारे पास अर्थशास्त्रीय नियम बनाने के लिए औचित्य है क्योकि ये हमें एक घटना को समझने और घटनाओ के आगे की जानकारी की भविष्यवाणी करने की सुराग देते है। सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत जैसे अर्थशास्त्र के नियम उचित नीतियां बनाने और अर्थव्यवस्था को निर्देश देने, सामाजिक आवश्यकताओं को समझने और सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता करते है। यह तार्किक सोच को बढ़ावा देने में मदद करती है। कंपनियो, उपभोक्ताओ उद्यमियो और श्रमिको का तर्कसंगत व्यवहार इस नियम की समक्ष से विकसित हुआ है। तर्कसंगत व्यय के तरीके को सभी अर्थशास्त्री संस्थाओं द्वारा समझा जाना चाहिये।

उपभोक्ता के व्यवहार में एक मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति रेखांकित है उपभोग से कुल उपयोगिता को अधिकतम करने के लिए इस प्रवृत्ति की समझ आवश्यक है। इस सिद्धांत को नव–शास्त्रीय सीमांत उपयोगिता प्रमेय के रूप में भी कहा जाता है उपभोक्ताओ द्वारा उपयोगिता की प्रकृत्ति को समझने के लिए एक समय में केवल एक वस्तु मॉडल माना जाता है, लेकिन व्यवहार में, उन चीजों की बहुलता है जहां चुनाव का उपयोग किया जाना चाहिए। सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम उपभोग के प्रकृत्ति का व्यवहार है। मार्शल का मानना था कि अतिरिक्त लाभ जो कि उपभोक्ता को अपने सामान के किसी भी हिस्से में वृद्धि से प्राप्त होता है, बढ़ता जाता है, लेकिन यह हर नए जोड़े गए सीमांत खुराक के मुकाबले कम गति से बढ़ता है। सीमांत उपयोगिता शून्य हो जाती है। जब कुल उपयोगिता अपनी चरम पर पहुंचती है।

हम सहायता के आधार पर सार प्रस्तुत कर सकते है कि उपयोगिता की अवधारणा ने अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में सिद्धांतवादियों के बीच एक महान विवाद उठाया। इसे जेरेमी बेन्थम द्वारा अवधारणा के रूप में इस्तेमाल किया गया था। उनके समकालीन उपयोगितावादी जैसे जैवंस, वाल्रास, मेंजर, मार्शल आदि ने बाद के वर्षो में इस अवधारणा को विस्तारित किया। मार्शल और पिगू के बाद गणनावाचक दृष्टिकोण के नव–शास्त्रीय संस्करण में इस अवधारणा को और अधिक परिष्कृत किया गया। उन्होने उपयोगिता को मापने योग्य, मानक और निष्पक्ष मात्रात्मक अनुमान के रूप में व्यक्त किया यहां तक कि पैसे, एक मानक के रूप में, सटीक मात्रा में उपभोक्ता की खुशी की भावना को माप सकते है। पिगु और मार्शल के दावों के अनुसार जेआर हिक्स, स्लटस्की, पेरेटो, एरो, सैमुएलसन इत्यादि ने उपयोगिता की मापनीयता पर गंभीर संदेह व्यक्त किया। उनका मानना है कि उपभोक्ता उपयोगिता के पैमाने में अच्छे स्थान पा सकते है। एक उपभोक्ता वरीयता के पैमाने में चुने गए सामानो के विभिन्न संयोजनों को व्यवस्थित करने का प्रयास करता है। इस दृष्टिकोण को क्रमिक दृष्टिकोण कहा जाता है, जिसने नव–शास्त्रीय के गणनावाचक दृष्टिकोण को खारिज कर दिया था। क्रय सूचक सिद्धांतो को मानने वाले इस बात से सहमत नहीं थें कि लीटर और किलोमीटर के मानक माप में दूरी के रूप में उपयोगिता आसानी से मापने योग्य है। पारपरिक प्रणाली का अनुसरण करने वाले के अनुसार सीमांत उपयोगिता अतिरिक्त इकाई में उपयोग से प्राप्त उपयोगिता है। यह 3 चरण से गुजर सकता है। सकारात्मक चरण, शून्य चरण और यहां तक कि नकारात्मक चरण चूंकि उपयोगिता को जोड़युक्त माना जाता है। इसलिए इसे कुल उपयोगिता कहा जा सकता है जो एक कुल मिलाकर उपयोगिता

है। उपयोग में प्रत्येक नया जुड़ाव घटती हुयी दर पर उपयोगिता प्रदान करता है जब तक कि सीमांत उपयोगिता शून्य तक नही पहुच जाती है। शून्य स्तर पर उपभोक्ता तृप्ति के बिन्दु तक पहुच जाता है, जो कुल उपयोगिता को कम करती है। शून्य स्तर पर, उपभोक्ता तृप्ति के बिन्दु तक पहुच जाता है।

सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम एक अच्छी तरह से स्थापित सत्य है, जो उपभोक्ता व्यवहार के बारे में सामान्य अनुभव रखता है। यह सार्वभौमिक रूप से लागू होता है अगर इसकी धारणा शर्तो का ध्यान अच्छी तरह से लिया जाता है उपभोक्ता व्यवहार, हर जगह, यह सुझाव देता है कि यदि कोई उपभोक्ता किसी चीजों की अतिरिक्त इकाइयों का उपभोग करता रहता है। निरंतरता मैं, क्रमिक रूप से एक के बाद, अतिरिक्त इकाई से प्राप्त लाभ, संतोष या उपयोगिता में गिरावट (पहले इकाई की तुलना में) आता जाता है और आखिरकार तृप्ति के बिंदु के बाद शून्य या नकारात्मक भी पहुंच जाता है जो कि शून्य उपयोगिता द्वारा दिखाया जाता है।

इस नियम को एक ग्राफ पेपर पर आरेख के द्वारा सचित्र किया जा सकता है, उपयोगिता को सरल सलाखों या खंभे द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है, भले ही उपभोग की गयी वस्तु अविभाज्य प्रकृति की हो। इसका मतलब यह है कि वस्तु इसके मूल्य को खो देती है, अगर यह छोटे टुकडों में विभाजित हैं विभाज्य वस्तुएं वह है जो अपने मूल्य को खोए बिना, किसी भी छोटे टुकडें में बाटी की जा सकती है। यह एक किलोग्राम आलू 1 लीटर दूध 250 ग्राम मसूर की तरह है।

सारणी 10.2

अविभाज्य वस्तुओं के साथ सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम

रोटी की इकाइयों की संख्या	खपत की इकाई से सीमांत उपयोगिता प्राप्त की गई
1	100
2	80
3	60
4	40
5	20
6	10
7	5
8	0
9	(–)20
10	(–)40

उपरोक्त तालिका के आधार पर आरेख बनाने के लिए, रोटी एक्स–अक्ष और वाई–अक्ष पर सीमांत उपयोगिता दिखायी जाती है। बार अतिरिक्त इकाई द्वारा प्राप्त सीमांत उपयोगिता दर्शाता हैं पहली रोटी 100 इकाइयो की पैदावार है जो कि सबसे उंची बार है दूसरी रोटी से आठवां रोटी सीमांत उपयोगिता नीचे की ओर घर रही है और बार की उचाई भी क्रमशः घट जाती है। आठवें ब्रेड में शून्य सीमांत उपयोगिता है यह उपभोक्ता की तृप्ति का बिन्दु है उपभोक्ता को यहां खपत बंद करनी चाहिए लेकिन यदि वह अपनी सीमांत उपयोगिता जारी रखने का चुनाव करता है तो नकारात्मक उपयोगिता (–20) हो सकती है

और अगले इकाई से 40 उपयोगिता हानि का प्रावधान होगा। 0× अक्ष पर शून्य उपयोगिता दिखायी जाती है।

सीमांत उपयोगिता ह्रास दिखाता हुआ बार चित्र निम्न है।

उपयोग के तहत माल विभाज्य प्रकृति का हो सकता है जिसका मतलब है कि चीजों के मूल्य के नुकसान के बिना छोटे या उच्च इकाइयों में कम किया जा सकता है। एक उदाहरण जॉगर्स और मक्खन का हो सकता है ये बिना किसी नुकसान के छोटे या बड़े इकाइयों को तोड़ा जा सकता है निम्नलिखित मक्खन की सीमांत उपयोगिता कम होने वाले आरेख का आकार होगा।

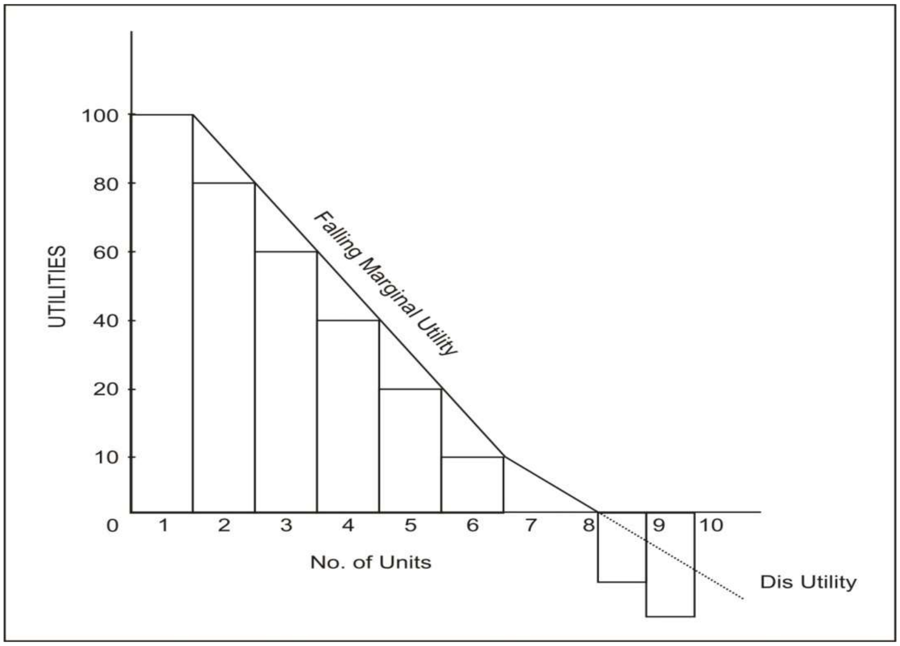

चित्र 10.2

आकृति में मक्खन की सीमांत उपयोगिता दिखती है (विभेदित)

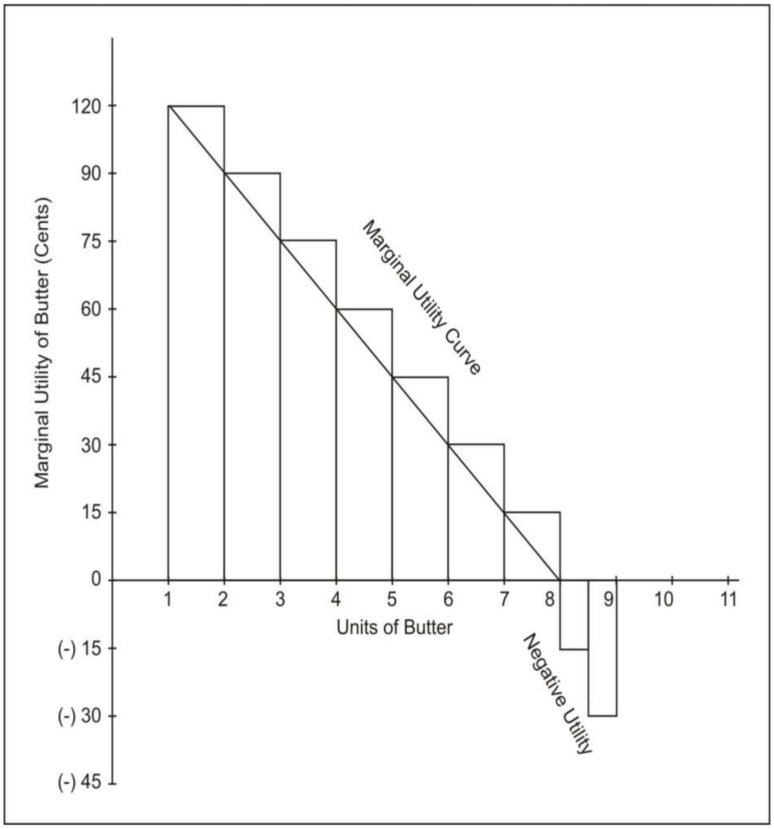

उपभोक्ता नमक पैक के दो या तीन इकाइयों को पहले ही खरीदा जा चुका है तो इससे अधिक नमक खरीदना बंद करने का इच्छुक है। तृप्ति के स्थान स्वीट्स के पैक की तुलना में बहुत तेजी से प्राप्त कर ली है। दिखावती वस्तुओ या विशिष्ट वस्तुओ की दशा में, मुख्य विशेषता की उपलब्धता पर अधिक इकाईया क्रय की जाती है। दोहराव पर सीमांत उपयोगिता नियम पहले जैसे ही लागू होता है। विभाज्य माल में सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम लागू होता जैसा कि तालिका 3 पर दिखाया गया है।

तालिका 10.3

उपभोग के विभाज्य मदों की सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम

मक्खन के पैक	सीमांत उपयोगिता
1	120
2	90
3	75
4	60
5	45
6	30
7	15
8	0
9	(–) 15
10	(–) 30

11	(–) 45

मांग का सिद्धांत और इसकी बाएं से दाएं नीचे झुकी हुई इसकी विशेषता उपभोक्ता के उपयोग व्यवहार पर आधारित है जो कि सीमांत उपयोगिता ह्रासमान नियम पर आधारित हैं। इस नियम को उत्पाद विविधीकरण और खपत विविधीकरण के व्यावहारिक प्रासंगिकता को बाहर लाने को श्रेय दिया जाता है। अपनी आधुनिक अर्थ में, सीमांत उपयोगिता ह्रासमान के नियम बताते है कि कि यह मूल्य है जो किसी भी उपभोक्ता को एक वस्तु की लगातार इकाइयों के रूप में कुल उपयोग बढ़ जाता है और यह तेजी से गिर जाता है यह तब लागू होता है जब क्रमबद्ध इकाईया एक ही हो और गुणो और लक्षण के मामले में एकसमान हों एक करोड़पति व्यक्ति अपने दिखावा और प्रतिष्ठा के लिये लगातार नई काटे क्रय करता रहता है और नई कारो के क्रय करने से उसकी सीमांत उपयोगिता में किसी तरह की कमी नहीं आती है। यह धारणा गलत है क्योकि वह नयी कार इसके नये इंजन कम ईधन उपयोग ज्यादा आरामदायता आदि मुख्य वजहो से खरीदता है यह एक अलग उत्पाद है न कि पिछले उत्पाद जैसा। अर्थशास्त्र में सिर्फ उन्ही तर्क संगत उपभोक्ताओ का अध्ययन किया जाता है जिनके उपयोग से सीमांत उपयोगिता प्रभावित होती है न कि ऐसे व्यक्तियो का जिनका क्रय का उद्‌देश्य भिन्न हो।

असीमित आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए संसाधनो की कमी अर्थशास्त्र के केन्द्र में है। अर्थशास्त्र समस्या का जन्म इस की कमी में है। प्रचुर मात्रा में संसाधनो के मामले में पूरा किया जाएगा। संसाधन की कमी उपभोक्ता के केवल उन आवश्यकताओ जो अधिक तीव्र है और जिनकी संतुष्टि से अधिक से अधिक उपयोगिता प्राप्त होती है को पूरा करने से है। प्राथमिकता अधिक से अधिक उपयोगिता को पूरा करने वाले उपयोगो को दिया जाता है। वास्तव में समसीमांत उपयोगिता का सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि संसाधनो के वैकल्पिक उपयोग भी हो सकते है और एक तर्कसंगत उपभोक्ता अपनी आवश्यकताओ के अनुसार संसाधनो को इस प्रकार उपयोग करता है कि समसीमांत उपयोगिता पूर्ण हो सके समानीकरण का प्रयोग कम उपयोगिता प्राप्ति का प्रतिस्थापन कर उच्च उपयोगिता प्राप्ति के लिये किया जाता है। इस प्रकार सिद्धांत उपभोक्ता व्यवहार के बारे में एक सच्चाई को बताता हे।

10.8 प्रतिपुष्टि

प्रश्न पर स्पष्टीकरण:

1. कुछ स्पष्ट सवाल इस अध्याय में इस्तेमाल किया गये अवधारणाओं के बारे में छात्रों के मन में उभरते है। गणनावाचक और क्रमसूचक दृष्टिकोणों के बीच सटीक अंतर क्या है ? हमने सीखा है कि गणनावाचक सूची के रूप मापने और गणना करने योग्य होता है जबकि क्रमवाचक संतुष्टि के आनंद को मापने योग्य नहीं होता है। यह उपभोक्ताओ को वास्तविकता के अपने आदेश के क्रम में माल रैंक, तर्कसंगत उपभोक्ताओ के व्यवहार के उद्‌देश्य को पूरा किया जा सकता है। गणनावाचक और क्रमवाचक का संबंध माप परिशुद्धता के बारे में है। यदि हम लंबाई, तापमान, उंचाई, मात्रा आदि का मात्रा आकलन कर सकते है, तो यह गणनावाचक है। जब हम उपयोगिता भिन्नता की जटिलता की तुलना करते है तब हम क्रमवाचकता की ओर बढ़ते है।
2. क्या आप जानना चाहते है कि क्यों उपभोक्ता की तृप्ति की बात सीमांत उपयोगिता के शुन्य मान पर है। हमें याद रखना चाहिए कि सीमांत उपयोगिता के हर अगली

खरीद के उपयोगिता पर गिरावट आती है और जब अगले इकाई के उपभोग पर उपयोगिता पैदावार शून्य हो जाएगा। यहॉ उपभोक्ता अपने अधिकतम कुल उपयोगिता तक पहुॅचता है। यह तृप्ति की अपनी विंदु है और यहां वह आगे खरीद बंद कर देता है। इसके अलावा किसी भी आगे की लेन–देन एक नुकसान या अनुपयोगिता वाला कदम होगा।

3. कौन सा मुख्य क्षेत्र हैं जहां सीमांत उपयोगिता ह्रासमान अर्थशास्त्र में एक उपयोगी पा सकते हैं ?

आप को पहले से ही पता चला है कि मांग को नियम सीमांत उपयोगिता ह्रासमान सिद्धांत से ली गई है। यह तर्कसंगत उपभोक्ता व्यवहार में मदद करता है। वह अपनी आवश्यकतानुसार विभिन्न उत्पादो को इस प्रकार उपयोग करता है कि वह अपनी उपयोगिता को उच्च सीमा तक संतुष्ट कर सके। विनिर्माण कंपनी नये उत्पादों, ब्रांड, डिजाइन, किस्मों, तकनीकि अविष्कारों आदि को अपनाकर के उत्पादन नवाचार को अपनाती है। जो कि उपभोक्ता द्वारा विनिर्दष्ट सीमांत उपयोगिता ह्रास सिद्धांत पर आधारित होता है।वे एक ही कीमत पर कुछ वस्तु की खरीद के अंधाधुंध पुनरावृत्ति से बचते है। सार्वजनिक वित्त के क्षेत्र में, सीमांत उपयोगिता ह्रासमान के सिद्धांत नीति निर्माताओं और योजना निर्माताओ की काफी मदद करता है। प्रोत्साहन बुनाई उपभोक्ता के व्यवहार और उसके तर्कसगंतता के साथ बुना हुआ है। मुद्रा की ह्रासमान उपयोगिता का सिद्धांत अर्थविभाग को यह निष्कर्ष निकालने में मदद करता है कि कर का भार समाज के सभी वर्गो पर एक समान नही हैं यह सिर्फ आनुपातिक है। यह आय भिन्नता के साथ प्रगतिशील हो गया है। गरीबों की मदद के लिये समाज में सब्सिडी का प्रावधान हो सकता है।

4. सीमान्त उपयोगिता ह्रास का नियम कई मान्यताओ पर आधारित है। क्यों इन धारणा में अन्य बातो ही शेष होने पर वाक्यांश प्रयोग किया जाता है?

नियम केवल कुछ शर्तो के तहत दिए गए अपने असली रूप में लागू होता है। सभी प्रयोगों प्रयोगशाला परिस्थितियों के अधीन है। इस प्रमेंय में भी दुर्लभ सामान, प्राचीन वस्तुऍ, दिखावा और स्थिति–सामान, पैसे की उपभोक्ता अस्थिर मूल्य के मन की तर्कहीन और अस्थिर अवस्था, आदि अपवाद की एक बड़ी संख्या है। सामान्य तौर पर यह नियम सार्वभौमिक है और सर्वत्र उपयोग में लाया जाता है। ह्रासमान सीमांत उपयोगिता उपभोक्ता के तर्कसंगत व्यवहार, उपयोगिता के गणनावाचक उपाय, पैसे की सीमांत उपयोगिता की एकरूपत, खपत, में निरंतरता, आय, वरीयताओं, अभिरूचि और लोकप्रिय फैशन के अपरिवर्तित स्थिति की मदों की एकरूपता की तरह विभिन्न मान्यताओं पर आधारित है।

5. खर्च के किस बिंदु पर आपको लगता है कि उपभोक्ता अपनी मांग संतृप्ति के बिन्दु को पा लेता है संतृप्ति जब सीमांत उपयोगिता कीमत के बराबर होती है तब इस वक्त उपभोक्ता की कुल उपयोगिता इसकी सबसे उंची चोटी पर होती है। इसके अलावा उपभोक्ता, अगर आगें खरीदना जारी रखने से नुकसान या नकारात्मक उपयोगिता प्राप्त होती है। सीमांत उपयोगिता तृप्ति के इस पर शून्य हो जाता है, और कुल उपयोगिता का गिरावट शुरू होता है।

10.9 सारांश

जेरेमी ने वर्तमान संदर्भ में उपयोगिता की अवधारण को प्रस्तुत किया जो उपभोग के माध्यम से तृप्ति को अधिकतम करने से संबधित है। उपयोगिता प्राथमिकता के क्रम को

दर्शाता है। सीमान्त उपयोगिता ह्रास जिसे आवश्यकता तृप्ति का नियम भी कहते है, उपभोग का एक महत्वपूर्ण नियम है। इस नियम का सर्वप्रथम उल्लेख आस्ट्रियन अर्थशास्त्री एच0 एच0 गौसन ने अपने लेखों में किया था जिस कारण इसे गौसन का प्रथम नियम भी कहते है। गौसन के बाद ब्रिटिश अर्थशास्त्री विलियन स्टेनले जेवन्स पहले व्यक्ति थे जिन्होने मूल्य निर्धारण के सम्बन्ध में इस नियम के प्रभाव को विधिवत् व्याख्या की। हॉ इस नियम की विस्तृत व्याख्या का श्रेय एलफ्रेड मार्शल को दिया जाता है।

यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि मनुष्य की आवश्यकता विशेष की पूर्ण सन्तुष्टि की जा सकती है। यह हमारा प्रतिदिन का अनुभव है कि प्रत्येक आवश्यकता शुरू–शुरू में काफी तीव्रता लिये होती है किन्तु जब हमें उस वस्तु की अधिकाधिक इकाइयॉ प्राप्त हो जाती है तो उनकी तीव्रता में कमी होती चली जाती है। अन्ततः एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब उस वस्तु की मांग घटकर शून्य रह जाती है क्योकि वस्तु की पूर्ण सन्तुष्टि हो जाने के कारण हम उस वस्तु का और अधिक उपभोग करना बन्द कर देते है अतः अनुभव से यह पता चलता है कि जैसे–जैसे किसी वस्तु की आवश्यकता की तीव्रता घटती जाती है वैसे–वैसे वस्तु को अगली इकाइयों से प्राप्त होने वाली उपयोगिता भी घट जाती है। वास्तव में, मनुष्य की इस अनुभूति के आधार पर ही क्रमागत उपयोगिता ह्रास नियम का प्रतिपादन किया जा सका है। सीमांत उपयोगिता ह्रासमान के सिद्धांत के मार्शलिया, हिक्सियन, सैयुअलसन, कार्ल मेंगर आदि सैमुअलसन कार्ल मेंगर के द्वारा दिया गया प्राथमिकता सिंद्धांत ज्यादा प्रचलित, सरल और स्पष्ट है। हम पैटर्न और उपभोक्ता व्यवहार की कमी को समझते है, यह हमारे उत्पादन की बिक्री और विपणन विविधीरण, और खपत, और तकनीकि नवाचार और खपत, और नए मॉडल और ब्रांडों को बाहर लाने के लिए तकनीकि नवाचार के लिए उपयुक्त नीति बनाने में मदद करता है।

10.10 शब्दावली

- **उपयोगिताः** एक वस्तु की आवश्यकता को संतुष्ट करने की क्षमता ।
- **घटती सीमांत उपयोगिता का नियमः** इस सिद्धांत के अनुसार निश्चित आवश्यकता को पूरी तरह से संतुष्ट किया जा सकता है और इसलिए, वस्तु का अधिक उपभोग करने से उस वस्तु की सीमांत उपयोगिता कम होती जाती है ।
- **सीमांत उपयोगिताः** वस्तु की अंतिम इकाई की उपयोगिता ।

10.11 बोध प्रश्न

रिक्त स्थान भरें

1. उपयोगिता को केवल .... शब्दों में मापा जा सकता है।
2. किसी उपभोक्ता का किसी वस्तु को खरीदने का निर्णय .... पर निर्भर करता है ।
3. यदि एक वस्तु की उपलब्धता दूसरे की उपयोगिता को कम करती है तो दो वस्तुएँ एक दूसरे के .... होती हैं।
4. संबंधित वस्तुओं के सम्बन्ध में, सम–सीमान्त उपयोगिता का नियम अपनी .... खो देता है।

10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1)	क्रमसूचक,	(2)	उपयोगिता,
(3)	प्रतिस्थापन,	(4)	परिशुद्धता

10.13 स्वपरख प्रश्न

1. कुल उपयोगिता, औसत उपयोगिता और सीमांत उपयोगिता के मध्य अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
2. घटती सीमांत उपयोगिता के नियम और इसकी सीमाओं की व्याख्या कीजिए।
3. उपभोक्ता अधिशेष की अवधारणा की व्याख्या कीजिए। इसकी सीमाएं कौन–कौन सी हैं?
4. सम–सीमान्त उपयोगिता के नियम की आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए ।

10.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Dewelt K.K. Modern Economic theory, Pp. 34-50
2. Joshi JM & R. Joshi, Micro Economic Theory, Wishwa, 1994, Pp. 63-74
3. Majumdar Tapas; Measurement of utility, 1966
4. Stonier AW & Hague DC; Text book of Economic theory, 1973
5. Ahuja H.L.; Analysis of Eco. System & Micro Economic Theory, 1992, Pp 32-45
6. Dwivedi D.N.; principles of Economics, vikas, 1991, Pp 90-99
7. Boulding K.E.; Economic Analysis (vol. I) Harper, N.Y, 1966 ch.12
8. Samuelson P.A.; Note on pure Theory of Consumer Behaviors, Economic Jrl. 1964 (February)
9. J. Hirshleifer & Amihai Glazer; Price Theory & Applications, ch. 3, Pp 56—59
10. Misra SK &V.K. puri; modern Micro Economics, Himalaya, 1996, Pp 185-214
11. Charles Gide & C. Rist; History of Economic Doctrines; George G. Harrap, London, Book-5, Pp. 492-96

इकाई 11 बाजार संरचना और मूल्य निर्धारण की रणनीतियाँ एवं कार्य प्रथाएँ

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 मूल्य निर्धारण रणनीति के उद्देश्य
11.3 मूल्यों में कमी
11.4 मूल्यों में वृद्धि
11.5 मूल्य सौदें
11.6 औद्योगिक एवं उपभोक्ता वस्तुएँ
11.7 मूल्य निर्धारण प्रणालियाँ
11.8 मूल्य निर्धारण प्रथाओं के लिए दिशा निर्देश
11.9 सारांश
11.10 शब्दावली
11.11 बोध प्रश्न
11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.13 स्वपरख प्रश्न
11.14 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- मूल्य निर्धारण नीति के उद्देश्य की व्याख्या कर सकें।
- मूल्य निर्धारण रणनीति की परिभाषा की व्याख्या कर सकें।
- विभिन्न मूल्य निर्धारण विधियों का वर्णन कर सकें।
- मूल्य निर्धारण प्रथाओं के दिशा–निर्देशों की व्याख्या कर सकें।

11.1 प्रस्तावना

मूल्य निर्धारण रणनीतियाँ और मूल्य निर्धारित करना, प्रबन्धकीय निर्णय का अति महत्वपूर्ण पहलू है। वास्तव में यह आय का स्त्रोत है जिसे फर्म बाजार के विस्तार हेतु प्रयोग करती है। यदि मूल्य बहुत अधिक निर्धारित है तो एक विक्रेता बाजार से बाहर मूल्य निर्धारित करता है। यदि मूल्य बहुत कम हो तो उसकी आय लागत की भरपाई नहीं कर पाती या अच्छे समय में कमी से गिरावट आ सकती है। हालाँकि कीमतों का निर्धारण एक जटिल समस्या है और ऐसा करने के लिए कोई पूर्व निर्मित सिद्धान्त नहीं है कि क्या कम मूल्य या अधिक मूल्य निर्धारित करे, यहविभिन्न कारकों एवं विविध परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इसके अलावा मूल्य निर्धारण निर्णय प्रारम्भिक समय में जोखिम पूर्ण है जिसकी समीक्षा एवं समय–समय पर पुनर्निमित करना भी महत्वपूर्ण है।

कुछ सामान्य बातें मूल्य निर्धारण रणनीति तैयार करते समय ध्यान रखना चाहिए जो नीचे दी गई है –

1. व्यवसाय का उद्देश्य :

मूल्य निर्धारण को अंतरिम रूप नहीं दे सकते और ना ही स्थापित कर सकते है जब तक इसके संस्था के नीतियों एवं प्रथाओं पर होने वाले प्रभाव का आकलन न हो जाए।

2. प्रतिस्पर्धी स्थितियाँ :

संस्था किस परिस्थिति में स्थित है। मूल्य निर्धारण समस्याओं के साथ प्रभावी समाधान हेतु प्रतिस्पर्धा पर्यावरण को समझना आवश्यक होता है। पूर्ण प्रतियोगिता में, विक्रेताओं को मूल्य निर्धारण की समस्या नहीं होती क्योंकि इसमें मूल्य निर्धारण विवेकशील नहीं होता है। वर्तमान प्रतिस्पर्धी स्थिति में फर्म को जरूरी है कि वह उपभोक्ता को ऐसे उत्पाद उपलब्ध करे जो इनकी आवश्यकता व इच्छा को संतुष्ट करें न कि ऐसा उत्पाद जिसे कम से कम मूल्य में बेच सके। परिणामस्वरूप यह कहा जा सकता है कि मूल्य निर्धारण नीतियां अधिक से अधिक संबंधित कारकों से नियंत्रित होनी चाहिए न कि मूल्यों के पूर्ण ऊँचाई द्वारा।

3. उत्पाद और प्रचार नीतियाँ :

मूल्य निर्धारण सिर्फ एक पहलू है। बाजार रणनीति हेतु इसके साथ फर्म को उत्पाद एवं प्रचार नीतियों का ध्यान रखना भी आवश्यक है। अतः मूल्य परिवर्तन के पूर्व यह जानकारी आवश्यक है कि मूल्य निर्धारण में त्रुटि है अथवा मूल्य निर्धारण बिक्री प्रचार योजना, उत्पाद की गुणवत्ता अथवा किसी अन्य तत्व की वजह से निर्धारित तो नहीं।

4. मूल्य संवेदनशीलता की प्रकृति :

व्यापारी अक्सर मूल्य संवेदनशीलता को अत्यधिक महत्व देते है जिस कारण अन्य ध्यान देने योग्य कारकों की उपेक्षा कर देते हैं। विभिन्न कारक है जो असंवेदनशीलता मूल्य परिवर्तन में लाने हेतु, जो उपभोक्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाता है, जैसे प्रभावशील विपणन प्रयास में भिन्नता, उत्पाद की प्रकृति, उत्पाद बिक्री के बाद सेवा का महत्व, अत्यधिक विभेदित उत्पाद की उपस्थिति से तुलना करने की मुश्किलें एवं उत्पाद की गुणवत्ता के विभिन्न आयाम।

5. निर्माताओं और मध्यस्थों का परस्पर विरोधी संबंध :

निर्माता एवं मध्यस्त के संबंध में विरोधी संबंध उत्पन्न हो जाते है, वे उत्पाद जिनके द्वारा उपभोक्ता तक बिक्री हेतु पहुँचाते हैं। उदाहरणार्थ निर्माता की इच्छा होती है कि मध्यस्थ उसके उत्पाद को न्यूनतम मूल्य वृद्धि किये बिना बिक्री करे, जबकि मध्यस्थ चाहते है कि उनकी लाभांश मात्रा अधिक हो जिससे वे उत्पाद को बाजार में प्रोत्साहित होकर अधिक बिक्री कर सके।

6. मूल्य निर्धारण समीकरण बनाना :

मूल्य निर्धारण का समीकरण बनाना प्रायः व्यावहारिक नही होता क्योंकि कम्पनी कम्पनी से एवं उत्पाद, उत्पाद से भिन्न होते है।

(अ) मूल्य निर्धारण निर्णयों की संख्या :

एक फर्म को मूल्य निर्धारण करने हेतु हजारों निर्णय लेने होते है, उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला हेतु कुछ भी ऐसा उपस्थित नही होता जो बिक्री को दृढ़ आधार प्रदान करे, यह भी पाया गया है कि अलग–अलग उत्पाद

में विश्लेषण लागत बहुत अधिक होती है। इसलिए फलतः मूल्य निर्धारण हेतु अपेक्षाकृत मितव्ययी यंत्रिका पद्धति को ही खोजा जाता है।

(ब) मूल्य निर्धारण में शीघ्रता आवश्यक है : यांत्रिकी सिद्धान्त जैसे पूर्ण लागत पर ही मूल्य वृद्धि द्वारा निर्धारण, शीघ्र निर्धारण, लचीलापन प्रदान करता है अन्यथा विशेष परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता नहीं मिलती है।

(स) उपलब्ध जानकारियों की गुणवत्ता : अगर मांग और लागत के तथ्य पूर्णतः अनुमान पर आधारित हो, उचित यही होगा कि फर्म सिर्फ यांत्रिकी सिद्धान्त जैसे पूर्ण लागत में लाभ जोड़ कर मूल्य निर्धारण करना।

(द) प्रतियोगिता बाजार : फर्म अगर अपना उत्पाद उच्च प्रतियोगिता बाजार में बेचता है तो विभेदीकरण मूल्य निर्धारण की संभावना बढ़ जाती है। यह तर्कसंगत मूल्य निर्धारण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

7. कीमतों के निर्धारण में गैर–व्यावसायिक समूहों की सक्रियता :

सरकार जनता का प्रतिनिधित्व करते हुए एकाधिकार का दुरुपयोग करने और व्यवसायों की सांठ–गांठ को रोकती है। यहाँ जटिल कानूनी निकाय और अत्यधिक भ्रामक न्यायिक निर्णयों की श्रृंखला है। बहुत कम ही सरकार मूल्यों को नियंत्रित करना चुनती है। मजदूरी बढ़ाने के लिए सामूहिक सौदेबाजी एवं श्रम संघों द्वारा प्रयत्न किया जाता है। सरकार मूल्य निर्धारण प्रक्रिया में किसान और श्रमिक हितों के साथ गठबंधन में प्रविष्टि होती है ताकि राजनीति का रूख मूल्य निर्धारण की ओर हो सके।

11.2 मूल्य निर्धारण रणनीति के उद्देश्य

मूल्य निर्धारण निर्णय सामान्यतः विस्तृत निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सामान्य रणनीति का एक हिस्सा माना जाता है। मूल्य समायोजन करते समय फर्म का लक्ष्य एक या एक से अधिक निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते है –

1. लाभ अनुपात अधिकतम करना, सम्पूर्ण उत्पाद पंक्ति हेतु इस संदर्भ में कोटलर द्वारा कहे बिन्दु है, फर्म ऐसा मूल्य निर्धारित करती है जो सम्पूर्ण उत्पाद पंक्ति की बिक्री को बढ़ा सके न कि सिर्फ एक उत्पाद से मिल रहे लाभ की प्राप्ति को।
2. फर्म के संवर्धन हेतु लम्बे समय तक देखभाल के लिए, उदाहरणार्थ – प्रतियोगियों के प्रवेश को हतोत्साहित करने।
3. मूल्यों को अनुसूचित किया जाता है क्योंकि विविध प्रतिस्पर्धा स्थितियों का सामना विभिन्न उत्पादों को करना पड़ता है।
4. आर्थिक परिस्थितियों विभिन्न उपभोक्ता उद्योगों को प्रभावित करता है। इन परिस्थितियों का सामना करने के लिए भी लचीलापन रखते हुए भिन्न मूल्य निर्धारित किये जाते है।

11.3 मूल्यों में कमी

उद्देश्यों और कीमतों में कमी के प्रभाव पर चर्चा करने के पश्चात् एक बिन्दु ध्यान देने योग्य है जैसे कोई भी व्यवसायी कीमतों में वृद्धि से अपने सभी उपभोक्ता नहीं खो सकता उसी प्रकार कीमतों में कमी करके सभी उपभोक्ताओं

को जीत भी नहीं सकता। कीमतों में कमी निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए की जाती है –

1. विज्ञापन बजट कम होने की वजह से हुई कम बिक्री से हुई हानि की भरपाई के लिए मूल्य में कमी की जा सकती है।
2. जब कोई फर्म अपने व्यवसाय की क्षमता का विस्तार तब अस्थाई मूल्यों में कमी से संयंत्र की पूर्ण संचालन क्षमता तक शीघ्र पहुँच सकते है।
3. कम मूल्य फर्म को उसके उत्पाद को बाजार में विस्तार के लिए मदद करता है।
4. मूल्यों में कमी प्रतियोगिता दबाव पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए भी किया जाता है जो घरेलू व विदेशी कम्पनियों के द्वारा समान व स्थानापन्न उत्पाद के कारण उत्पन्न होता है।
5. कीमतों में कमी संभावित प्रतियोगी के प्रवेश की उग्रता को रोकने के लिए भी किया जाता है।
6. तकनीकी उन्नति भी मूल्यों की कमी में अगवाई करता है और उत्पाद इससे हुए लाभ को उपभोक्ता तक पहुँचाने की कोशिश करता है।

अलग–अलग दवाओं की कीमतों में कटौती हमेशा भारत और विदेश के दवा उद्योग को संचालित करने की एक सामान्य विशेषता है। दवा निर्माताओं के बीच प्रतिस्पर्धा एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में वृद्धि कर रहा है, जहाँ पर कीमतों में कटौती अग्रणी हो रहा है जो लागत में कमी व उच्च दक्षता के कारण संभव हुआ है।

ये मूल्य में कमी फर्म को बिक्री में वृद्धि करने में मदद करता है, जो उपभोक्ता की मूल्य में कमी पर प्रतिक्रिया पर आधारित होता है। जैसा पहले बताया गया है, कि उपभोक्ता मूल्य को उत्पाद की गुणवत्ता सूचक के रूप में भरोसा करते है। कीमतों में कमी गुणवत्ता में कमी की आशंका को जन्म दे सकता है और कीमतों में कमी बिक्री में कमी ला सकती है, यदि विशेष कदम न उठाये जाए, गुणवत्ता बनाये रखने को साबित करने हेतु।

मूल्य निर्धारण बिक्री में वृद्धि की उम्मीद का नेतृत्व करेगा अगर उपभोक्ता को जल्द ही मूल्यों के वापस सामान्य होने के आसार हो। मूल्य में कमी बिक्री में कमी ला सकता है यदि यह विचार आ जाए कि मूल्य में कमी लाने की श्रृंखला का यह पहला कदम है तो मूल्यों में वृद्धि की जाएगी, बिक्री में वृद्धि लाने के लिए यदि मूल्य में कमी मुद्रास्फीति श्रृंखला की अगवाई करे। तो इसलिए कीमत में कमी को आवश्यक समझा जाता है। एक उपयुक्त व सोची समझी कमी का निर्णय उचित होगा।

यह ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बिन्दु है जब माल की प्रचुर मात्रा में आपूर्ति हो और माँग गिर रही है। कीमत में कमी परिस्थिति में परिवर्तन नहीं लाएगा और ना ही बिक्री में वृद्धि करेगा।

हालांकि एक कम मूल्य नीति प्रभावित होती है व्यापार के विस्तार और कम उत्पाद लागत जो लाभ की मात्रा बढ़ा देती है बिना मूल्य में वृद्धि के।

11.4 मूल्यों में वृद्धि

अक्सर कम्पनी में ऐसी स्थिति अनिवार्य होती है जहाँ लागत बढ़ सकती है और यह विचार कर सकते है, कि मूल्यों में वृद्धि की जाए या नहीं।

निर्णय इस बात पर आधारित होता है, कि मूल्य वृद्धि मांग को कैसे प्रभावित करेगी। वास्तव में मूल्य वृद्धि वहा ँहोती है जहाँ बाजार में माँग मजबूत और व्यवसाय में तेजी होती है।

मंदी व आय में गिरावट के समय मूल्य में वृद्धि नहीं होती। इस प्रकार यह सत्य है जब लागत में वृद्धि होती है, मूल्य में भी वृद्धि होती है। यह बढ़ती माँग है जो लागत में होने वाली वृद्धि उपभोक्ता के लिये की जाती है, बिक्री को बिना प्रभावित किए। निर्माताओं पर अक्सर अकारण ही मूल्य वृद्धि करने के आरोप लगते है। कुछ हद तक यह एक सत्य है कि वे उपभोक्ताओं के प्रति गैर जिम्मेदार व शोषण का व्यवहार करते है। एक निष्पक्ष विश्लेषण यह बताता है कि कई मामलों में पाया गया मूल्य वृद्धि उचित था।

11.5 मूल्य सौदे

मूल्य सौदों का मुख्य उद्देश्य है अधिक से अधिक उत्पाद की बिक्री जब बिकी संवर्धन व संवर्धन के बाद दोनों ही समय लाभ में वृद्धि करना होता है। उपभोक्ता और व्यवसाय दोनों ही सक्षम कर रहे है एक बिन्दु तक बिक्री को प्रभावित करने में।

उपभोक्ता सौदे में अतीत, वर्तमान और भावी उपयोगकर्ताओं को ध्यान में रखते हुए उत्पाद प्राप्त करने के अवसर के साथ कम मूल्य से चाहता है। वहीं दूसरे पक्ष में व्यापार प्रोत्साहन खुदरा विक्रेताओं की बिक्री बढ़ाने के लिए होती है। जो संभवतः एक बड़ी बिक्री का नेतृत्व विशेष प्रदर्शन व्यवस्था और अन्य अनुकूल स्थितियाँ जो उपभोक्ता द्वारा अधिक क्रय को प्रोत्साहित करता है। व्यापार व उपभोक्ता सौदे परिचित घटना के रूप में बढ़ रहे है जिसमें कम कीमत में बार–बार खरीदी, कम–टिकाऊ वस्तुओं के सौदे बाजार में हो रहे हैं। चार्ल्स हिन्कल ने खुलासा किया है बहुत से विशेष निष्कर्ष जो संबंधित है सौदों की ताकत और कमियों से। कुछ निष्कर्ष है –

1. गैर मौसमी आधार पर मूल्यों की कमी अधिक लाभप्रद है।
2. अधिक बार मूल्यों में कमी लाना उपभोक्ता को मूल्य संवेदनशील बना देता है। यहाँ तक उपभोक्ता वर्तमान में माल का संरक्षण करते है और अगले सौदे का इंतजार करते है पुनः क्रय से पहले। तो इसलिए खुदरा विक्रेता कम बिक्री के आधार पर झुक जाते न कि प्रचलित प्रत्याशा जो अगले सौदे में समान या अन्य ब्रान्ड को खरीदे में मिल सकती है को छोड़कर।
3. अन्य प्रतियोगी द्वारा नये ब्राण्ड के लिए लाए सौदों का विरोध करना सही प्रदर्शित नही होता और ये भी जरूरी नहीं की नया उत्पाद ज्यादा प्रभावी हो चाहे वो नवपरिवर्तित पैकेज में ही क्यों ना प्रस्तुत किया गया हो।
4. मूल्य सौदे नये ब्राण्डों उत्पादों के लिए अधिक उचित होते है न कि स्थापित पुराने उत्पाद हेतु, वे हमेशा अधिक प्रभावशील होते है अगर संतुलित विज्ञापन के साथ बाजार में लाया जाए।
5. कोई भी ब्राण्ड चाहे वो स्थापित ब्राण्ड हो, विशिष्ट ब्राण्ड, सौदा करने का विषय ही नहीं, मूल्य सौदा प्रतियोगिता के लिए अभेध है अगर

इसमें बुनियादी विपणन समस्याएँ है तो मूल्य सौदा संवर्धन विपणन समस्याओं का निराकरण नहीं है।

6. जब विशेष प्रचार अभियान उम्मीदों से कम होता है तो निर्माता अपनी योजना पर सवाल का उसे बेहतर करना होगा और नीति निर्धारण करना होगा न कि विफलता के लिए खुदरा विक्रेताओं को दोषी मानना।

11.6 औद्योगिक और उपभोक्ता वस्तुएँ

औद्योगिक वस्तुओं के खरीददारों की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है और उसमें भी कुछ एक ही अधिक मात्रा में उत्पादन करते हैं। ये उपभोक्ता वस्तुओं से अधिक तर्कसंगत व्यवहार करते हैं। अगर सही ज्ञान न हो, तो ये बाजार का ज्ञान अधिक व्यापक और सटीक रखते हैं। अक्सर औद्योगिक उत्पादन करने वाला उत्पादक औद्योगिक वस्तुएँ की जानकारी रखते हैं और कम से कम उत्पादन लागत का अनुमान भी लगा सकते हैं। अधिकांशतः औद्योगिक व्यवसायी ये अच्छे से जानता है कि जो मूल्य वो दे रहा है वस्तु उतने मूल्य की है, या नहीं किसी औसत उपभोक्ता की तुलना में।

मूल्य आधारित नेतृत्व, औद्योगिक बाजार का बहुत आम रूप है। औद्योगिक उत्पाद में उपभोक्ता उत्पाद की तुलना में अनुसंधान के आधार पर मूल्य निर्धारण अधिक मार्गदर्शक है। परन्तु परीक्षण विपणन न ही संभव है और न ही व्यापक रूप से औद्योगिक वस्तुओं के लिए उपयुक्त है, क्योंकि –

1. खरीदारों की संख्या कम होने से परीक्षक विपणन प्रणाली उचित निष्कर्ष प्रदान नहीं कर सकती।
2. यह सभी खरीददारों को सामान्य जानकारी प्रदान कर देता है। अगर कुछ खरीददारों को कम मूल्य में दिया जाए अन्य को न दिया जाए तो यह बाजार में शत्रुता का वातावरण बनाता है।

कई औद्योगिक उत्पाद बड़े और भारी होते हैं। इसलिए, परिवहन लागत अंतिम लागत निर्धारण में महत्वपूर्ण हो जाता हैं, जो उपभोक्ता वस्तुओं में नही होता। इसलिए, औद्योगिक व्यवसाय कारखाना कीमत निर्धारण करना पसंद करते है। लेकिन यह मूल्य उन्हें देश के कई क्षेत्रों में अप्रतिस्पर्धी बनाता है। इसलिए वे आम तौर पर वस्तुएँ के पहुँचने तक की लागत के आधार पर मूल्य निर्धारण करते हैं।

किसी औद्योगिक उत्पाद की कीमत लोच, उस उत्पाद को उपयोग करने वाले उद्योग की उपयोग करने के सामान्य लागत भी निर्धारित करती है। यह एक महत्वपूर्ण तत्व का प्रतिनिधित्व करता है कि मूल्य में परिवर्तन माँग में परिवर्तन नहीं लाता है। किसी उपकरण की माँग, मूल्य को अधिक लोच प्रदान नहीं करती क्योंकि, उपकरण उपरिव्यय लागत प्रकृति का होने से सरलता से निर्धारित नहीं किया जा सकता।

मूल्य रणनीतियाँ :

वैज्ञानिक या सैद्धांतिक तकनीक से मूल्य निर्धारण करने का महत्वपूर्ण आधार है। नियमित उपलब्धता बाजार संबंधित प्रामाणिक आँकड़े उत्पाद व उसके विकल्प उत्पाद से संबंधित तथा स्वदेशी व विदेशी बाजार की उचित

जानकारी/जानकारियों में भिन्नता पाई जा सकती है। सामान्यतः निम्नलिखित क्षेत्रों की जानकारी महत्वपूर्ण मानी जाती है। मूल्य निर्धारण निर्णय हेतु –

(अ) उत्पाद संबंधित जानकारी – (1) उत्पाद लागत वितरण (2) उत्पाद शुल्क, उपकर आदि, (3) आधार/निम्नतम मूल्य और उच्चतम मूल्य नीतियाँ (4) संवेष्टन (पैकिंग) आवश्यकताएँ (5) उत्पाद गारंटी और बिक्री के बाद की आवश्यकताएँ और अस्वीकृति/समर्थन का प्रतिशत।

(ब) बाजार संबंधित जानकारी – (1) शासन द्वारा निर्धारित उत्पाद व वैकल्पिक उत्पाद का मूल्य, (2) प्रमुख प्रतियोगी (3) भुगतान शर्ते, (4) उत्पादन आंकड़े, (5) उपभोग की प्रवृत्ति, मौसमी बदलाव अगर कोई हो तो (6) ब्राण्ड की छवि, ब्रांड के प्रति वफादारी और उपभोक्ता प्राथमिकता (7) विक्रय विज्ञापन प्रोत्साहन आवश्यकताएँ मीडियम व लागत सहित और (8) वितरण प्रणालियाँ और मध्यवर्ती संस्थाओं को दी जाने वाली लाभ मात्रा सीमा।

(स) सूक्ष्म स्तर की जानकारियाँ : (1) उत्पादन क्षमता फर्म की स्थापित मशीनरी व सही उपयोग और बाजार में फर्म का प्रतिशत, कुल व क्षेत्रीय प्रतिशत।

सूक्ष्म स्तर पर जानकारियों का संकलन अलग–अलग संस्था की आकृति/संरचना और जरूरतों पर आधारित होता है। प्रकाशित जानकारियाँ सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत होता है जैसे आर्थिक सलाहकार, आर्थिक दैनिक समाचार पत्र और पत्रिकाएँ जैसे इकानामिक टाइम्स, बिजनेस स्टैण्डर्ड, फाईनेंशियल एक्सप्रेस, बिजनेस लागत, कैपिटल बाम्बे मार्केट इत्यादि। प्रत्येक कम्पनी अपनी आवश्यकताओं के अनुसार संबंधित जानकारी प्राप्त करने का पूर्ण प्रयास करती है। फर्म के पुराने आँकड़े भी जानकारी प्रदान करते हैं कि लागत खर्च और अंतिम मूल्य क्या सोचा गया था। यह जानकारी लागत बनाम मूल्य की ऐसी जानकारी प्रदान करती है जो भविष्य में भी मार्गदर्शन प्रदान करती है।

अधिकतर, व्यक्तिगत निर्माता बाजार संबंधित जानकारी उपलब्ध करने के लिए खुद के एजेण्ट रखने का खर्च नहीं करते और ना ही खुद जानकारी जुटाते है। ऐसे मामलों में एक एजेन्सी उद्योग स्तर पर उदाहरणार्थ व्यापारिक संघ, मध्यस्त बनकर जानकारी प्रदान करते है। उनके सदस्यों को न्यूनतम लागत पर व्यापारिक संघ उनके अपने व्यापारिक प्रकाशन प्रकाशित करते है जिसके द्वारा उत्पादों और बाजार संबंधित जानकारी प्रदान करते हैं।

मूल्य सिद्धांतों का मूल्य निर्णय पर प्रभाव :

उपभोक्ता की स्थिति	• क्रेता के लिए उपयोगिता तुलना योग्य व स्थानापन्न उत्पाद वास्तविक और अनुमानित • कर और प्रचलित मूल्य • उत्पाद की प्रतिष्ठित स्थिति व ब्रांड • खरीदी की आदतें व अभिप्रेरणाएँ • मनोवैज्ञानिक आकर्षण, वास्तविक व

	प्रदान की जानकारी
लागत विवेचन	• उत्पादन लागत – परम्परागत व भविष्य लागत • प्रत्याशिक मात्रा – संयंत्र उपयोगिता की सीमा व अतिरिक्त योगदान • संयुक्त लागत बहु श्रृंखला उत्पादन में लाभ – अलाभ स्थिति • (ब्रेक इवन पाईन्ट) • क्षैतिज व उर्ध्व एकीकरण की परिसीमा
प्रतिस्पर्धा व बाजार विचारधारा	• बाजार में उत्पाद की स्थिति • बाजार में प्रतिस्पर्धी की स्थिति • बाजार में स्थानापन्न वस्तु • बाजार का प्रतिशत बाजार समागम निचले स्तर पर बाजार में विक्रय उच्चतर विक्रय बाजार • नेतृत्व व अनुयायी • प्रतिस्पर्धी की प्रतिक्रिया • मूल्य व संबंधित क्रियाएँ सेवा नीतियाँ प्रकृति और उत्पाद व विस्तार • उपयोग माध्यम व वितरक की लाभ सीमा आवश्यकता • ढूँढा गया भौगोलिक वितरण • विज्ञापन स्थिति व योजना • वितरण माध्यम की प्रकृति
बाजार संरचना व प्रवर्तन नीतियाँ	• पारम्परिक केन्द्रों का उपयोग • नए वितरण माध्यमों का विस्तार • प्रवर्तन कार्यक्रम • आधिक्य • वितरक संबंध विशेष वितरक पूर्ण श्रृंखला वितरक • अत्यधिक व्यापार सहयोग की संभावनाएँ • व्यावसायिक प्रथाएँ
अन्य विचारधाराएँ व्यक्तिक, फर्म व सामान्य आर्थिक	• मंदी की अवधि को हटाना

	• नये उत्पाद लाना • नये बाजार में उत्पाद को लाना व उपयोग करना • क्षेत्र का विस्तार • निरन्तर रोजगार प्रदान करनाँ, सामाजिक जरूरत की वस्तुएँ व उत्पाद प्रदान करना दवाईयाँ, दवाखाना, आवास • राष्ट्रीय आय में स्थिरता लाना • चक्रीय बदलाव को सुधारना
मूल्य निर्धारण रणनीति की सीमाएँ व रणनीति विकल्प :	
मूल्य प्रस्तुत करने की प्रणाली	• मूल्य सूचियों का उपयोग शुद्ध मूल्य पर छूट दर • तय मूल्य का उपयोग • मूल्य अनुबंध • उत्पादन मूल्य का अनुमान • पुनः बिक्री मूल्य प्रभावित करना पुनः बिक्री का विज्ञापन करना पुनः बिक्री मूल्य जानकारी देना पुनः विक्रय रखरखाव अनुबंध करना • मूल्य का संबंध : एक लाइन के विभिन्न उत्पाद एक परिवार के विभिन्न उत्पाद • मूल्य निर्धारण निष्कर्ष स्वतंत्र/भिन्न मूल्य मुख्य वस्तुओं के साथ जोड़ना • प्रतिस्थापन भाग व मरम्मत मूल्य निर्धारण स्वतंत्र मूल्य खरीदी के साथ जोड़ कर • अन्य उपयोगिता जोड़ कर सुपुर्दगी गारंटी अधिष्ठापन/लगाने का खर्च सेवाएँ विशेष सेवाएँ • छूट संरचना व आधार मात्रा

	नकद भुगतान व्यापारिक स्थिति सामयिक/मौसमी विशेष परिवहन पूणदत्त संचालन केन्द्र जहाज तक निःशुल्क (फ्री ऑन बोर्ड)
परिवर्तनशील मूल्य	• **प्रत्यक्ष/स्पष्ट तथ्य** समय के परिवर्तन से अधिसूचना या नियमों में परिवर्तन से आरक्षण में परिवर्तन से • **अप्रतयक्ष तथ्य** कटौती/छूट में परिवर्तन संयोजन प्रस्ताव मुक्त वस्तुएँ और सौदे अधिमूल्य कूपन प्रस्ताव विज्ञापन भत्ते सेवा भत्ते व्यवसायिक भत्ते
न्यायिक परिसीमा	• आवश्यक वस्तु अधिनियम • एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार • व्यवहार अधिनियम • वायदा अनुबंध नियमन अधिनियम • दवाईयों से (मूल्य नियंत्रण) नियम • प्रतिस्पर्धा अधिनियम

11.7 मूल्य निर्धारण प्रणालियाँ

मूल्य निर्धारण को प्रभावित करने वाले विभिन्न प्रकारों पर विचार करने के पश्चात, यह उपयोगी होगा की व्यवसायिओं द्वारा विभिन्न तरीकों पर चर्चा करना। ये विधियाँ है–

1. संविदा लागत या पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण
2. वापसी लागत मूल्य जिसे निर्धारित लागत मूल्य भी कहते हैं
3. सीमांत लागत मूल्य निर्धारण
4. प्रचलित मूल्य
5. प्रथागत मूल्य

1. संविदा लागत या पूर्ण लागत निर्धारण

यह सबसे सामान्य मूल्य निर्धारण प्रणाली है। इसके अंतर्गत मूल्य, लागत को पूर्ण करने के आधार पर (माल, मजदूरी और अन्य व्यय) और पूर्व निर्धारित लाभांश प्रतिशत के साथ। यह प्रतिशत असाधारण रूप से उद्योगों के लिए, सदस्यों के बीच और एक फर्म के ही विभिन्न उत्पादों के बीच भिन्न–भिन्न होते हैं। यह प्रतिस्पर्धा की तीव्रता को प्रदर्शित करता है जैसे, लागत में अंतर और कुल बिक्री और व्यापारिक जोखिम में अंतर। वास्तव में कुछ लाभ अर्जित करना कुछ अस्पष्ट धारणा भी है। क्या है, जो साधारण लाभ निर्धारित करे? आमतौर पर साधारण सीमांत जोड़ना भी बाजार की स्थिति के लिए अत्यधिक संवेदनशील है। ये हो सकता है कि निम्नलिखित मामलों में अटल किया जा सकता है – 1. वे सिर्फ आम अभ्यास की बात हो। 2. व्यापारिक संगठनों द्वारा या तो सलाहकार कीमत रूचियों के माध्यम से व्यापारिक संघ सदस्यों को मूल्य निश्चित कर सूचियों द्वारा जानकारी दी जाती है। 3. मूल्य नियंत्रण के अंतर्गत स्वीकृत मूल्य के बाद भी अधिकतम लाभ बीमा निश्चित प्राप्त होना चाहिए, मूल्य नियंत्रण में छूट भी प्रदान की जाए। यह सीमा नैतिक व जिम्मेदारी पूर्ण मानी जाती है।

आमतौर पर मूल्य नियंत्रण के अंतर्गत मूल्य ऐसे निर्धारित किये जाते है ताकि कोई भी फर्म न्यूनतम कुशलता से अस्तित्व बनाये रखे। इसीलिए लाभांश की प्रवृत्ति अधिकतम रखी जाती है प्रतिस्पर्धा को ध्यान में रखते हुए।

सीमाएँ

1. यह मांग को अनदेखा करता है। यहाँ कोई भी अनिवार्य संबंध लागत और उपभोगता कितना मूल्य देखता है के बीच नही है।
2. यह विफल है प्रतियोगिता के प्रभाव को प्रतिबिंबित करने में। लाभ में जोड़ी सीमा के लिए यह उदासीन पद्धति है, कोई भी लाभ प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक उत्पादित वस्तु वास्तविक बिक्रय न जाए।
3. आवंटन उपरिव्यय पद्धति अनियंत्रित है ओर उत्पाद की प्रवृत्ति के अनुसार यह जिस बाजार में इसे बेचा जाना है अवास्तविक है। जहाँ तक विभिन्न मूल्य, विभिन्न विक्रय मात्रा को बढ़ावा व इकाई लागत, कार्य मूल्य को, कीमतें तय करने हेतु एक उपयुक्त आधार प्रदान नहीं किया जा सकता। परिस्थिति और भी जटिल हो जाती है जिन फर्म में विभिन्न प्रकार के उत्पाद उत्पादित होते हैं।
4. यह प्रणाली पूर्णतः लागत पर आधारित है जो मूल्य निर्णय हेतु उचित नहीं है। पूर्ण लागत प्रणाली निर्धारण सीमांत या वृद्धि लागत पर ध्यान न देते हुए सिर्फ औसत लागत का उपयोग करती है।

उपयोगिता व लाभ

एक सुस्पष्ट व व्यापक उपयोग पूर्ण लागत पद्धति हेतु प्रदान नहीं की जा सकती क्योंकि फर्म भिन्न होती है उनके आकार में उत्पाद का स्वभाव में, उत्पाद प्रकार व घटते–बढ़ते प्रतिस्पर्धा की बाजार की स्थिति उनके उत्पाद के लिए। हालांकि, निम्नलिखित बिन्दु इसकी सर्वमान्यता को दर्शाती है।

1. पूर्ण लागत मूल्य का अर्थ है उचित स्वीकार्य मूल्य आसानी व शीघ्र प्रदान कराना, इस बात का फर्क नहीं पड़ता कि फर्म कितने उत्पाद संभालती हैं ।

2. पूर्ण लागत प्रणाली पर आधारित मूल्य स्टीक और तथ्यात्मकता को देखता है और अधिक समर्थनीय होता है। नैतिक आधार पर जो किसी भी अन्य आधार पर नहीं किया जा सकता।
3. एक अस्थिर बाजार की स्थितियों के कारण कोई भी फर्म स्थिरता बनाये रखने के लिए पूर्ण लागत का उपयोग करना पसंद करती है जहाँ बाजारी ज्ञान अधूरा होता है। इसी परिस्थतियों में जहाँ लागत और जानकारी उपलब्ध करना मंहगा हो और परीक्षण व भ्रम मंहगा पड़े, वहाँ व्यापारी इस लागत द्वारा मूल्य निर्धारण निर्णय लेना पसंद करते हैं।
4. व्यवहारिक तौर पर फर्म अपने मांग वक्र के आकार के लिए अनिश्चित होती है और साथ ही संभावित मूल्य परिवर्तन में प्रतिक्रिया के लिए भी। यही कारण पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण न अपना जोखिम पूर्ण बनाता है।
5. स्थिर लागत को लंबे समय में शामिल करना चाहिए। अगर फर्म को लगे कि अल्पकालीन समय में पूर्ण नहीं किया जा सके तो। वे दीर्धकाल में शामिल नहीं भी कर सकते हैं अगर फर्म को उचित नहीं लगे तो।
6. मूल्य निर्धारण की प्रमुख अनिश्चतता यह भी है कि निर्धारित मूल्य पर प्रतिद्वंद्वियों प्रतिस्पर्धा संस्था कैसी प्रतिक्रिया करेगी। जब उत्पाद और उत्पादन लागत समान है तो संविदा लागत मूल्य निर्धारण प्रतिस्पर्धा स्थिरता प्रदान करता है क्योंकि यह मूल्य अधिकांश सदस्य उद्योगों को भी स्वीकार्य होता है लाभ प्राप्ति संभावना बढ़ाने हेतु।
7. प्रबंधन उत्पाद लागत जानने में अधिक ध्यान देता है न कि अन्य मूल्य से जुड़े कारकों को जानने की तुलना में।
8. संविदा लागत निम्न स्थितियों में विशेष उपयोगी है–

(a) सार्वजनिक उपयोगिता मूल्य निर्धारण

(b) उत्पाद सिलाई, यानी जब उत्पाद का प्रारूप (डिजाइन) निश्चित किया जाता है तभी उत्पाद का मूल्य निर्धारित कर दिया जाता है। इस निर्धारित मूल्य को आधार मानते हुए उत्पाद प्रारूप और स्वीकार्य लागत भी निर्धारित होती है। यह पद्धति को महत्व दिया जाता है। बाजार की वास्तविक स्थिति को दृष्टिकोण में रख कर की उपभोक्ता क्या चाहता है और वह कितना मूल्य दे सकता है।

(c) एकल विक्रेता द्वारा विनिर्देशित प्रारूप (डिजाइन) में बने उत्पाद का मूल्य अपेक्षित लागत में सकल लाभ अनुपात और फर्म की सुविधाओं की लागत को जोड़ कर निर्धारित किया जा सकता है।

(d) क्रय अधिकार जहाँ क्रेता आपूर्तिकर्ता की लागत का संपूर्ण ज्ञान रखता है। वह उत्पाद स्वयं ही उत्पादित कर सकते हैं अगर उन्हें मूल्य उचित न लगे। यह अधिक प्रासंगिक लगता है कि क्रेता कंपनी वह उत्पाद लेना पसंद करती है जो ऑटोमोबाइल निर्माता स्वयं ही उत्पादित करता है।

यह कारण स्पष्टीकरण अवश्य प्रदान करते हैं किन्तु तार्किक दृष्टिकोण के रूप में मूल्य निर्धारण के लिए पद्धति प्रदान नहीं करते। यह लागत पहचानने व आवंटन की जटिल कठिनाइयों से बचने के उपाय नहीं देता। इसके अलावा अन्य कठिनाईयों जैसे कितना मूल्य बढ़ाया जा सकता है, जैसे अतिरिक्त लागत को पूर्ण कर सके (अज्ञात) बिना विक्रय की मात्रा जाने। पूर्ण लागत पद्धति के अनुसार व्यापार की एक गतिविधि को ध्यान न करे, तो इसलिए मूल्य वृद्धि करनी पड़ती है। आम धारणा यह भी सुझाव देती है कि मंदी में ये मूल्य नीति अविवेकपूर्ण हो जाती है।

भारत में, दो प्रकार की पूर्ण लागत विधि व्यापक रूप से प्रयोग होती है। इसके दो विशेष कारण जो इनके भारत में प्रयोग की व्याख्या करते है।

1. विक्रेता की भारत के बाजार में हाल ही में अपनी प्रधानता जताते हुए निर्माता को लागत में वृद्धि को उपभोक्ता से लेने के लिए पारित किया हो।
2. भारत में मूल्य नियंत्रित उद्योगों में मूल्य निर्धारण के लिए संविदा लागत के उचित लाभ मात्रा को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किये जाते है। इस प्रकार यह पद्धति भारत सरकार द्वारा मौन स्वीकृति से मानी गई है।

निष्कर्ष रूप में, संविदा लागत एक पारंपरिक विश्वास पूर्ण पद्धति है जो इच्छित लागत और इच्छित मूल्य वृद्धि के लिए उचित है। यह पद्धति अपनाई गई है क्योंकि यह लागू करने में सुविधापूर्ण है।

2. लागत–मूल्य निर्धारण मूल्य प्रतिफल हेतु

एक महत्वपूर्ण समस्या है कि फर्म को सामना करना होता है मूल्य नियंत्रित करना जब उत्पादन लागत बढ़ रही हो। इस प्रयोजन से लोकप्रिय नीतियाँ जो अक्सर अनुसरण की जाती है निम्नानुसार है–

1. मूल्यों में संशोधन अतिरिक्त लागत के साथ मूल्य वृद्धि कर लाभांश प्रतिशत बनाए रखने।
2. मूल्यों में संशोधन कुल विक्रय में एक स्थायी लाभांश प्रतिशत बनाए रखने।
3. मूल्यों में संशोधन विनियोजित पूंजी पर एक स्थाई प्रतिफल बनाए रखने।

इस पद्धति का उपयोग इस प्रकार है–

उदाहरण

एक फर्म 1,00,000 इकाई प्रतिवर्ष विक्रय करती है जिसका कारखाना मूल्य रूपये 12 प्रति इकाई है।

विभिन्न लागत इस प्रकार है–

परिवर्तनीय लागत	सामग्री	3,60,000
	मजदूरी	4,20,000
स्थायी लागत	अतिरिक्त व्यय	1,20,000
	विक्रय व प्रशासनिक	1,80,000
कुल निवेश माल व मशीनरी के तौर पर		8,00,000

मान लिया जाए कि अगर मजदूरी व सामग्री लागत 10 प्रतिशत बढ़ जाए तो इन तीन पद्धतियों से मूल्य संशोधन कैसे किया जाए।

यह विवरण जानकारी दे रहा है कि कुल लागत 10,80,000 कुल विक्रय 1,20,000 है। इन तीन पद्धतियों के अनुसार लाभांश प्रतिशत है–

1. लागत पर प्रतिशत	1,20,000	= 11.1
	10,80,000	
2. बिक्री पर प्रतिशत	1,20,000	= 10
	12,00,000	
3. लगाई पूंजी पर प्रतिशत	1,20,000	= 15
	8,00,000	

संशोधित लागत होगी 1158000 [1080000+36000+42000]

पहली विधि के अनुसार फर्म का लाभ प्रतिशत 11.1 प्रतिशत है लागत का। फर्म का संशोधित लाभ 1,28,667 और इस आधार पर बिक्री की मात्रा 12,86,6671 और विक्रय मूल्य प्रति इकाई रूपये 12.87 होगा।

दूसरी विधि के अनुसार लाभ का विक्रय पर प्रतिशत 10 है विक्रय (Sales) = S लाभ होगा S/10 और लागत हागी 9S/10 । यह जानकारी उपलब्ध है अब विक्रय जानना जरूरी है।

अगर (S/10 = 11,58,000S = 12,86,667 इस प्रकार प्रति इकाई मूल्य = 12.87

तीसरी विधि के अंतर्गत, यह कल्पना की जा रही है कि पूंजी निवेश वही है। अतएव अपेक्षित लाभ 1,20,000 (15 प्रतिशत, 8,00,000 का) तो विक्रय की मात्रा होगी 12,78,000 और प्रति इकाई विक्रय मूल्य 12.78 होगा।

एक फर्म वापसी मूल्य की पद्धति को ही ध्यान में रखकर मूल्य निर्धारित नहीं करती बल्कि एक उचित मूल्य वापसी बनाये रखना एक 'मानक दर' प्राप्त करने जैसे 80 प्रतिशत तक। अन्य शब्द में कहें तो मानक मात्रा पर मानक लागत और आवश्यक सीमांत मूल्य जोड़कर जिसके वापस मिलने की उम्मीद हो के साथ एक लक्ष्यित लाभ दीर्घकाल में प्राप्त करने हेतु निर्धारित किया जाता है।

वापसी लागत दर, पूर्ण लागत दर का मूल्य निर्धारण के लिए परिष्कृत संस्करण है। स्वाभाविक रूप से अनुपयुक्त होगा कि मांग पर ध्यान न दे, वह पर्याप्त रूप से प्रतियोगिता करने में विफल हो जाता है। यह लागत की अवधारणा पर आधारित है जो प्रासंगिक मूल्य निर्णय के लिए सहायक होगा और नाटकीय होगा स्थायी लागत और निवेशित पूंजी की सुस्पष्टता के लिए।

3. सीमांत लागत मूल्य निर्धारण

पूर्ण लागत मूल्य वह मूल्य वापसी निर्धारण पद्धति में मूल्य निर्धारण हेतु कुल लागत और चर लागत को आधार माना गया है। सीमांत लागत मूल्य निर्धारण के अंतर्गत स्थायी लागत को ध्यान में न रखते हुए सिर्फ सीमांत लागत पर ध्यान दिया जाता है। फर्म उन्हीं लागतों को ध्यान में रखती है जो सीधे उत्पाद के उत्पादन से संबंधित है। मूल्य निर्धारण में भविष्य की योजनाएँ भी सम्मिलित होती है, इस लिए यह केवल पूर्वानुमान से सरोकार रखती है

और अनुमानित आय, व्यय, व पूंजी लागत और सभी पुरानी लागत जो स्थायी लागत से जुड़ी हो, को ऐतिहासिक व छुपी हुई मानी जाती है।

सीमांत लागत के फायदे

1. सीमांत लागत अधिक सुनिश्चित भविष्य दर्शाती है, वर्तमान लागत स्तर और लागत संबंध से। जब मूल्य निर्णय में लागत में परिवर्तन के हित में है तो वह इस निर्णय का नतीजा होगा। सीमांत लागत इस परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है उस समय जब कुल लागत में स्थायी लागत भी जुड़ी हो जबकि मूल्य निर्णय में इसे खर्च जैसे नहीं लिखा जाता है।
2. सीमांत लागत निर्माता को आक्रमक मूल्य नीति बनाने की अनुमति देता हे पूर्ण लागत के स्थान पर। एक आक्रामक मूल्य नीति अधिक विक्रय का प्रतिनिधित्व करती है और जो संभवतः सीमांत लागत को कम करता है, वास्तविक सीमांत उत्पादन में वृद्धि और निवेश कारकों को कम करके हो सकता है। हालांकि अधिक विकेंद्रीकृत व लचीली मूल्य निर्धारण में प्रवेश से पहले, यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि अस्थिर कीमतों का उपभोक्ता साख पर क्या प्रभाव पड़ेगा।
3. सीमांत लागत मूल्य निर्धारत उपयोगी है उत्पाद के पूर्ण जीवन चक्र में, जो जरूरी होता है अल्पकाल सीमांत लागत और पृथक स्थायी लागत आंकड़े, जो उत्पाद के हर एक चक्र में अलग–अलग होते हैं न कि दीर्घकाल पूर्ण लागत आंकड़े।

   सीमांत लागत मूल्य निर्धारण अधिक प्रासंगिक है पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण की जगह, जिसके लिए आधुनिक व्यवसाय की दो विशेषताएँ सम्मिलित है–

   (a) बहु उत्पाद प्रक्रिया और बहु बाजार का प्रचलन की सोच, स्थायी लागत को उत्पाद लागत में असंगत कर देती है। पृथक उत्पाद की कुल लागत संतोषजनक अनुमानित नहीं की जा सकती, और ईष्टतम लागत और मूल्य के बीच संबंध काफी हद तक दो अलग–अलग उत्पादों के बीच व विभिन्न बाजारों के बीच। अगर बाजार का विभाजन उचित रूप से किया है, तो यह आवश्यक है कि चर लागत और निश्चित स्थायी लागत का ज्ञान हर एक विभाजन के लिए हो । इस प्राकर के व्यवसाय, एक स्थिरता से सिर्फ मूल्य परिवर्तन और विक्रय के भाग पर ध्यान रखता है वो इसलिए कि विभिन्न विभाजित बाजार में, विभिन्न उपभोक्ताओं की परतों की मांग का लाभ ले सके और उस व्यवसाय का चुनाव करे अगर क्षमता में कमी है। यह सब सामान्यतः अल्पकालीन समस्याएँ है क्योंकि परिस्थितियाँ हमेशा परिवर्तनशील है और सीमांत लागत मूल्य निर्धारण सबसे उचित पद्धति है अल्पकालीन अवधि के लिए।

   (b) विभिन्न व्यवसायों में प्रभावशाली शक्ति जैसे नई पद्धतियाँ अनवरत वैज्ञानिक विधियाँ और तकनीकी विकास और

दीर्धकालीन परिस्थितियाँ अत्यधिक अनुमानित नहीं की जा सकती है। यहाँ अल्पकालीन श्रेणियाँ है और सभी का उद्देश्य यही होता है कि अल्पकाल में ही आय को बढ़ाया जाए। जब विकास तुरंत प्रभाव में आते हे, स्थायी लागत और मांग स्थितियाँ परिवर्तित होती हैं एक अल्पकाल से दूसरे अल्पकाल में, और प्रत्येक अल्पकाल में आय की वृद्धि करके दीर्धकाल में लाभ को अधिक से अधिक कर सकते हैं।

सीमाएँ :

1. कुछ लेखापाल पूर्णतः सीमांत लागत पद्धति निपुण नहीं, इसलिए खुद को संतुष्ट नहीं कर पाते और इस वजह से वह संस्था के प्रबंधन को भी उचित जानकारी नहीं दे पाते।
2. व्यवसाय जो बहुत छोटे से योगदान से मजबूत प्रोत्साहन देता है जब एक अवसर आता है उच्च व्यवसाय के योगदान का ऐसे व्यवसाय को त्याग दिया जाता है, क्योंकि संस्था में विस्तार का अर्थ स्थायी लागत में वृद्धि करना।
3. मंदी के दौर में व्यवसाय सीमांत लागत का उपयोग करती है ताकि व्यवसाय को बनाए रखे और यह प्रतिनिधित्व करता है कि अन्य फर्म भी अपना मूल्य कम करें, गलाकाट प्रतियोगिता के कारण। एक नियम तक निष्क्रिय क्षमता और स्थायी लागत का दबाव, के चलते फर्म बारी–बारी से एक बिन्दु तक मूल्य कम करती है जिस जगह कोई भी पर्याप्त कुल योगदान, स्थायी लागत को पूरा करने और उचित प्रतिफल निवेशित पूंजी पर प्राप्त नहीं कर पाते।

फायदों के वावजूद इसकी अन्तर्निहित कमी जिससे यह स्थायी लागत पूर्ण करने को सुनिश्चित नहीं करता सीमांत लागत मूल्य निर्धारण आमतौर पर विशेष आदेश पर लिया जाता है। व्यवहारिक रूप में, पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण अभी भी सबसे अधिक उचित आधार है मूल्य निर्धारण निर्णय में। हालांकि, सीमांत लागत आंकड़े पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण निर्णय को अनुकूल बनाने के लिए उपयोग किए जाते हैं ।

4. चालू/प्रचलित दर मूल्य निर्धारण

लागत के बजाय यहाँ बाजार पर जोर दिया जाता है। फर्म अपनी मूल्यनीति उद्योग में सामान्य मूल्य निर्धारण ढांचे में समायोजित करता है। जहाँ विशेष लागत को मापना कठिन होता है, वहाँ यह एक तर्क संगत पहला कदम होता है मूल्य निर्धारण नीति में। यह उद्योग की सामूहिक वृद्धि को प्रदर्शित करता है। इस तरह के कई मामलों में जहाँ मूल्य नेतृत्व अच्छे से स्थापित है। वही मूल्य निर्धारित करना सुरक्षित नीति हैं यह बस एक तरीका है कंपनियों को खुद को सुरक्षित रखने का खतरों व मूल्य प्रतिद्वंद्विता से किसी अल्पाधिकार बाजार में। यह एक सस्ता और परेशानी रहित तरीका है व्यापार के लिए न कि सटीक लागत की गणना मांग का अनुमान लगाने से अच्छा यह अल्पज्ञात अत्यंत व्यक्तिपरक मूल्य निर्धारित करने का उचित तरीका है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों प्रतिद्वंद्वियों द्वारा लागू मूल्य को ही निर्धारित करती

है जो कि या तो बाजार ने निर्धारित किया है या नेतृत्व मूल्य कंपनियों द्वारा।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि चालू दर मूल्य निर्धारण निरपेक्ष रूप में स्वीकार किया गया मूल्य नहीं है जो किसी संतुलित बाजार द्वारा तय किया जाता है। बल्कि यह प्रतीत होता है कि किसी भी फर्म को मूल्य निर्धारित करने का समान अधिकार है और मूल्य निर्धारक भी बनने का चुनाव कर सकता है अगर वह आने वाले परिणामों का सामना कर सकता है। हालांकि यह एक उचित चुनाव का तरीका है सुरक्षित कार्यप्रणाली व दूसरों द्वारा निश्चित की गई पद्धति से मूल्य निर्धारण करना।

5. प्रथागत मूल्य निर्धारण

कुछ वस्तुओं की कीमतें अधिक या कम स्थायी होती है, यह विक्रेता द्वारा जानबूझकर नहीं किया जाता पर यह उसकी बाजार में प्रबलता के परिणामस्वरूप हो जाता है। ऐसी वस्तुओं में कुछ समय की, लागत में परिवर्तन अक्सर गुणवत्ता या मात्रा में हुए परिवर्तन के कारण प्रतिबिंबित होते है। जब सिर्फ लागत परिवर्तन अर्थपूर्ण रूप से होता है तभी प्रथागत मूल्य, ऐसे उत्पादों के बदले जाते हैं।

प्रथागत मूल्यों को भी बनाए रखा जा सकता है उस समय भी जब उत्पाद बदल चुका हो। उदाहरणार्थ– एक नये बिजली के पंखे का मूल्य समान मूल्य रखा जा सकता है। उसे एक रियायती रूप में देकर भी। यह आमतौर पर कम मूल्य के दौर में किया जाता है। कदाचित पुराने मूल्य के साथ ही रहना सबसे आसान तरीका है। जो भी कारण हो, मौजूदा कीमतों को अधिक से अधिक समय तक बनाए रखना एक कारण है कई उत्पादों में।

अगर प्रथागत मूल्यों में परिवर्तन निश्चित है तो मूल्य निर्धारण अधिकारी को अध्ययन करने की आवश्यकता है कि प्रतिस्पर्धा फर्म की मूल्य निर्धारण नीति व व्यवसाय का तरीका और उन सभी कंपनियों का व्यवसायिक व्यवहार विपरीत श्रृंखला की संख्या की जानकारी लेना एक और उचित विधि, जब बाजार में मूल्य वृद्धि की स्थिति हो तो कुछ चुने हुए बाजार में मूल्य परिवर्तित करके उपभोक्ता की प्रतिक्रिया को जानना।

11.8 मूल्य निर्धारण प्रथाओं के लिए दिशा निर्देश

यह निम्नलिखित दिशा–निर्देश हैं मूल्य निर्धारण अभ्यास हेतु–

1. सबसे पहले यह जानकारी का पता लगाना कि उत्पादन लागत के ऊपर कितना मूल्य प्रासंगिक है। खास अंतर जानना उत्कृष्ट लागत जो बदलता है उत्पादन लागत और ऊपरी लागत के बीच जो कि अपेक्षाकृत असंवेदनशील है उत्पादन में परिवर्तन आने पर।
2. उत्कृष्ट लागत को आपका शुरूआती बिन्दु माने और मूल्य क्या है, इस पर ध्यान रखते हुए कुछ और जोड़कर अगर ऊपरी लागत भी पूरी की

जा सके साथ ही साथ व्यवसाय भी बना रहे और एक लाभ का भाग भी मिले जिससे अंशधारियों को संतुष्ट किया जा सके।

3. यह पता लगाये कि कैसे आप अपनी लागत की तुलना अपने प्रतिस्पर्धी से कर सकते हैं। अगर वह आपके समान है और अधिक उचित हैं तो आपका प्रतिस्पर्धी आपके जैसा ही सोच सकते हैं। अगर उनका अनुमान सुस्पष्ट रूप से मूल्य बढ़ाने या घटाने का हो, तो इसका कारण आपका अनुमानित मूल्य बढ़ाने या घटाने का हो सकता है।
4. बाजार पर ध्यान रखे, अगर मांग उत्पन्न करना कठिन है तो परिस्थिति यह आ सकती है कि मूल्य अचानक कुछ कम हो जाए और प्रतिस्पर्धा खुद ऐसी स्थिति का अच्छा अनुमान लगा ले। अगर मांग ज्यादा है तो यह भी बहुत आसान होता है कि मूल्य कुछ बढ़ा दिये जाए ज्यादा जोखिम न लेते हुए अपनी पकड़ बाजार में बनाए हुए।
5. अगर आपके कच्चे माल व मजदूरी लागत बढ़ती है यह ये प्रदर्शित करता है कि आपके प्रतिद्वन्द्वी को भी मूल्य बढ़ाने होंगे क्योंकि वह भी समान परिस्थिति में है।
6. इसके साथ ये भी हो सकता है कि लागत उस समय बढ़ रही है जब विक्रय को बढ़ाना कठिन हो तब आपको अपना मूल्य बढ़ाने से परहेज करना चाहिए मूल्य संघर्ष से बचने के लिए।
7. यह ध्यान रखे कि आप अपने कारखाने का कैसे उपयोग कर रहे हैं कि लाभदायक श्रृंखला पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए, या कम लाभ वाली श्रृंखला को बढ़ाया जाए।
8. उपभोक्ताओं में ख्याति बनाए रखने के लिए विज्ञापन अभियान से विकसित किया जा सकता है न कि मूल्य कम रखने से।
9. यदि आपका मूल्य आपके प्रतिद्वन्द्वी के मूल्य से अधिक प्रतीत होता है चाहे प्रतिद्वन्द्वी मुश्किल से लागत को पूर्ण कर रहा हो यह इस बात को प्रकट करता है कि आपकी लागत बहुत ज्यादा है और उत्पादन पद्धति व कारखाना बनावट त्रृटिपूर्ण है।
10. अगर आप अपने पूर्ण उत्पादित उत्पाद को इतने मूल्य पर विक्रय कर पा रहे हो जिसे संतोषप्रद लाभ प्राप्त हो रहे है तो विस्तार पर विचार करना चाहिए।
11. अगर आपकी बिक्री मौसमी आधारित है तो यह ध्यान रखे कि मांग सुचारू कब होती है, और लाभ बढ़ा सकते है। मूल्य वृद्धि कर के जब मांग अधिक हो और कम मूल्य, जब मांग कम हो। यह विधि सबसे लाभप्रद है जब उत्कृष्ट लागत कम संबंधित है, कुल लागत से।
12. अगर आप ऐसे उद्योग का हिस्सा है जहाँ फर्मो की संख्या कम है तो आपका प्रतिद्वन्द्वी क्या कर रहा है यह बहुत महत्वपूर्ण है न कि लागत पर ज्यादा ध्यान देना मूल्य निर्धारण हेतु।

11.9 सारांश

मूल्य रणनीति और मूल्य निर्धारण प्रबंधकीय निर्णय निर्धारण के महत्वपूर्ण पहलू है। मूल्य निर्धारण निर्णय सामान्यतः सामान्य रणनीतियों का हिस्सा माना जाता है विस्तृत रूप के लक्ष्य को पाने के लिए। मूल्य सौदों का

उद्देश्य होता है, अधिक से अधिक उत्पाद बेचना, दोनों समय प्रचार के समय, और उसके बाद, लाभ के साथ। उपभोक्ता और व्यापारिक सौदे दोनों एक औजार है, बिक्री के एक बिन्दु को प्रभावित करने के लिए। मूल्य निर्धारण नीतियों को प्रभावित करने वाली विभिन्न कारकों पर विचार करने के बाद यह उचित होगा कि आमतौर पर व्यवसायियों द्वारा उपयोग की जाने वाली पद्धतियों पर चर्चा करना। यह पद्धतियाँ हैं– संविदा लागत और पूर्ण लागत मूल्य निर्धारण वापसी लागत मूल्य निर्धारण जिसे लक्ष्य मूल्य निर्धारण भी कहते हैं, सीमांत लागत मूल्य निर्धारण, चालू दर मूल्य निर्धारण और प्रथागत मूल्य निर्धारण।

11.10 शब्दावली

- **औद्योगिक वस्तुएँ** : ऐसे उत्पाद जो उपभोक्ता उत्पाद की मांग पर आधारित है यही मांग उत्पादन में सहायक होता है।
- **उपभोक्ता वस्तु** : उपभोक्ता माल वह है जो मूर्तरूप में होते है तथा उत्पादित किए जाते है जो उपभोक्ता की जरूरतों को पूर्ण करता है।
- **मूल्य निर्धारण रणनीति** : एक रणनीति अपनी नीति के अंतर्गत विभाजन की गणना, उपभोक्ता की कीमत देने की क्षमता, बाजार की स्थिति, प्रतियोगी प्रतिक्रिया, व्यापारिक सीमा व लगाई लागत को ध्यान में रख के बनाई जाती है।

11.11 बोध प्रश्न

(A) रिक्त स्थान भरें

1. .... विधि मूल्य निर्धारित करती है लागत पूर्ण करने और पूर्व निर्धारत लाभ प्रतिशत प्राप्त करने हेतु।
2. सीमांत मूल्य निर्धारण विधि के अंतर्गत .... लागत को ध्यान में न रखते हुए एवम् मूल्य निर्धारण सीमांत लागत के आधार पर निर्धारित होता है।
3. वर्तमान चलित मूल्य निर्धारण विधि में .... को ध्यान में रखा जाता है, लागत को नहीं।
4. नेतृत्व प्रधान मूल्य .... बाजार में बहुत सामान्य घटना है।

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.	संविदा लागत मूल्य निर्धारण	2.	स्थायी
3.	बाजार	4.	उद्योगिक

11.13 स्वपरख प्रश्न

1. मूल्य रणनीति से आप क्या समझते हैं, और इसके उद्देश्य क्या होते हैं?
2. मूल्य रणनीति के उद्देश्यों का विवेचन कीजिए।
3. संक्षिप्त रूप में मूल्य रणनीतियों की व्याख्या कीजिए।
4. मूल्य निर्धारण को प्रभावति करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
5. मूल्य निर्धारण की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए।
6. मूल्य निर्धारण अभ्यास करने हेतु क्या दिशा–निर्देश है?

11.14 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रिन्टेक हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली.
2. डी. एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., नई दिल्ली.
3. टी. आर. जैन, ओ. पी. खन्ना एवं वीरसेन, सूक्ष्म अर्थशास्त्र एवं भारतीय अर्थव्यवस्था, बी. के. पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
4. एच. एल. आहुजा, आधुनिक प्रबंधकीय सिद्धान्त, एस चन्द एवं सन्स क. लि., नई दिल्ली.
5. आत्मानन्द, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सैल बुक, दिल्ली.
6. आर. एल. वार्ष्णेय एवं के. एल. माहेश्वरी, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चन्द एवं सन्स, नई दिल्ली.

इकाई 12 बाजार संरचना एवं सन्तुलन

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 बाजार संरचना
12.3 बाजार का वर्गीकरण
12.4 बाजार के विभिन्न रूपों के मध्य तुलनाः संक्षिप्त अवलोकन
12.5 सारांश
12.6 शब्दावली
12.7 बोध प्रश्न
12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.9 स्वपरख प्रश्न
12.10 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- बाजार संरचना की व्याख्या कर सकें।
- बाजार का वर्गीकरण कर सकें।
- बाजार के विभिन्न रूपों के मध्य अन्तर कर सकें।

12.1 प्रस्तावना

सामान्यता "बाजार" शब्द का अर्थ उस स्थान विशेष से लगाया जाता है जहाँ पर वस्तुओं के क्रेता तथा विक्रेता एकत्रित होकर अपनी–अपनी वस्तुओं को क्रय तथा विक्रय करने का कार्य करते है। जैसे कि चाँदनी चौक व कनॉट प्लेस के बाजार दिल्ली में है, व कोलकाता में सब्जी व मछली बाजार है। तथापि, परिवहन एवं संचार साधनों में विकास और आधुनिक बैंकिंग प्रणाली की संकल्पना ने एक ही भौतिक स्थान के विचार से परे अच्छी तरह से बाजार की अवधारण को बढ़ावा दिया है।

इस प्रकार, गेहूँ अथवा सोने की तरह कई वस्तुओं के मामले में, दुनिया के किसी भी बाजार से यह वस्तुएँ क्रय की जा सकती है।

अर्थशास्त्र में बाजार शब्द का उल्लेख किसी विशेष स्थान से नही है, लेकिन बाजार वह व्यावसायिक तंत्र या व्यवस्था है, जहाँ क्रेता व विक्रेता एक दूसरे के सम्पर्क में आकर अपना सामान, वस्तुएँ खरीद अथवा बेच सकते हैं, यहाँ वस्तु की कीमत (मूल्य) व मात्रा का निर्धारण होता है। जिसे क्रय एवं विक्रय किया जाना है। बाजार में क्रेता व विक्रेता का सम्पर्क आर्थिक विनिमय के लिए होता है।

बाजार को निर्धारित करने की दो विशिष्ट विशेषताएँ निम्नलिखित है –

बाजार को एक विशेष स्थान की जरूरत नहीं होती है, बाजार का भौगोलिक क्षेत्र छोटा अथवा बड़ा हो सकता है। यह क्रेता व विक्रेता पर निर्भर करता है। यह स्थानीय छोटे बाजार की तरह भी हो सकता है, और विश्व बाजार के रूप में भी हो सकता है। जहाँ गेहूँ, कम्प्यूटर, हवाई जहाज का क्रय, विक्रय किया जाता है।

अर्थात् बाजार पर स्थान व भौगोलिक क्षेत्र का प्रभाव क्रेता व विक्रेता से सम्बन्धित रहता है।

बाजार की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि क्रेता एवं विक्रेता को किसी वस्तु का सौदा करने में सक्षम होना चाहिए, अर्थात् यह वस्तु की मूल्य एवं मात्रा से सम्बन्धित है जहाँ क्रेता व विक्रेता पर निर्भर करता है, कि किस वस्तु को कितनी मात्रा व मूल्य में क्रय अथवा विक्रय करना है।

यहाँ क्रेता व विक्रेता एक दूसरे से व्यक्तिगत संपर्क में नही रहते है अपितु पत्राचार, टेलीफोन आदि संचार प्रणालियों के माध्यम से एक दूसरे के सम्पर्क में रहते है। व इन्हीं संसाधनों का उपयोग कर वस्तुओं का मोल भाव किया जाता है।

12.2 बाजार संरचना

बाजार संरचना से तात्पर्य है कि वह बाजार जहाँ उत्पादक व फर्म अपना कारोबार संचालित करते है। इससे यह भी पता चलता है कि कैसे बाजार आयोजित किया जाता है। बाजार के विभिन्न प्रकारों को व्यापक तौर पर बाजार संरचना की प्रतिस्पर्धा के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। बाजार संरचना की प्रतिस्पर्धा से तात्पर्य यह है कि व्यक्तिगत फर्मो के द्वारा वस्तु के बाजार मूल्य को प्रभावित करने की क्षमता या शक्ति है। एक कम क्षमता या शक्ति वाली व्यक्तिगत फर्म वस्तु की कीमत को प्रभावित करती है, तब भी अधिक प्रतिस्पर्धी बाजार संरचना का गठन होता है।

बाजार संरचना के चरम रूपों में से एक है पूर्ण प्रतियोगिता जहाँ एक फर्म को किसी वस्तु की कीमत को प्रभावित करने की बिल्कुल कोई शक्ति नहीं होती, इस तरह के बाजार में जहाँ इतने अधिक फर्मे होती है उनमें से कोई भी कीमत पर नियंत्रण नहीं कर रहे होते है, उनमें से हर एक मूल्यग्रहिता होता है।

बाजार संरचना का अन्य रूप एकाधिकार है, जहाँ किसी एक ही फर्म उस वस्तु की उत्पादक होती है, व उसे उस वस्तु की कीमत को प्रभावित करने का पूर्ण अधिकार होता है। और इस चरम रूप में कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती है।

उदाहरण के लिए एक शहर की विद्युत बोर्ड को वहाँ की विद्युत की कीमत को प्रभावित करने का अधिकार/शक्ति है।

बाजार रूप को निर्धारित करने वाले विभिन्न कारक

बाजार रूपों की मुख्य विशेषताएँ क्या है? जिसके आधार पर हम विभिन्न बाजार संरचना के मध्य अन्तर ज्ञात कर सकते है।

एक वस्तु के विक्रेताओं की संख्या, उत्पाद की प्रकृति, उत्पाद के खरीदारों (क्रेता) की संख्या, उद्योग में प्रवेश पर प्रतिबन्ध की श्रेणी, बाजार के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान, विज्ञापनों की सीमा यह सभी महत्वपूर्ण विशेषताओं के आधार पर हम बाजार के विभिन्न रूपों के बीच भेद कर सकते हैं।

क्रेता–विक्रेता की संख्या

बाजार को प्रभावित करने के लिए एक विक्रेता की शक्ति उसकी बाजार में हिस्सेदारी वस्तु की आपूर्ति पर भी निर्भर करती है। यदि विक्रेताओं की संख्या कम है तो प्रत्येक फर्म की हिस्सेदारी कुल आपूर्ति में बढ़ जाएगी

और कुल आपूर्ति में प्रत्येक फर्म की हिस्सेदारी बढ़ जायेगी इसलिय फर्म की मूल्य को प्रभावित करने की शक्ति भी बढ़ जाएगी क्योंकि यह कुल आपूर्ति का बहुत बड़ा भाग उत्पन्न करता है। और यदि बाजार में विक्रेताओं की संख्या बढ़ी है, तो उसकी हिस्सेदारी कुल आपूति कम में है, क्योंकि इससे आपूर्ति कम होने के कारण बाजार को प्रभावित करने के लिए एक विक्रेता की शक्ति कम होगी।

बाजार का वर्गीकरण विभेद (भिन्नता) इस प्रकार होगी, 'एकाधिकार' बाजार जहाँ एक विक्रेता है, 'पूर्ण प्रतियोगिता' और 'एकाधिकार प्रतियोगिता' जहाँ विक्रेताओं की संख्या अधिक है। और अल्पाधिकार जहाँ विक्रेताओं की संख्या बहुत कम होती है।

बाजार का वर्गीकरण

1. एकाधिकार – जहाँ एक विक्रेता हो
2. पूर्ण प्रतियोगिता और एकाधिकार प्रतियोगिता – जहाँ विक्रेताओं की संख्या अधिक हो।
3. अल्पाधिकार – जहाँ विक्रेताओं की संख्या मात्र हो।

एक खरीदार बाजार पर नियंत्रण की श्रेणी, खरीदारों की संख्या ही निर्धारित करती है। यदि किसी वस्तु का एक ही क्रेता है तो वह 'monopsony' कहलाएगी। इससे अन्तर्गत उत्पादक का बड़े बाजार पर नियंत्रण होगा।

उत्पाद की प्रकृति

बाजार के विभिन्न रूप एक दूसरे से उत्पाद की प्रकृति के आधार पर विभेदित किए गए है। किसी भी बाजार में प्रतिस्पर्धा का माहौल तब होता है जब एक ही प्रकार का उत्पाद विभिन्न कंपनियों द्वारा उत्पादित किया जाता है।

एक पूर्ण प्रतिस्पर्धा बाजार में विभिन्न कंपनियों द्वारा सजातीय उत्पादों का उत्पादन किया जाता है। इसलिए ऐसी स्थिति में कोई भी एकल फर्म कीमत को प्रभावित करने में सक्षम है। लेकिन एकाधिकार प्रतिस्पर्धा बाजार में विभिन्न उत्पादकों द्वारा विभेदित उत्पादों का उत्पादन किया जाता है। परिणामस्वरूप समान वस्तुओं के विभिन्न उत्पादक, उस उत्पादित वस्तु के लिए भिन्न मूल्य लागू करने की स्थिति में रहते है।

बाजार के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान

बाजार के विभिन्न रूपों में अन्तर बाजार की स्थितियों के बारे में ज्ञान (अज्ञान) से ज्ञात कर सकते हे।

यदि क्रेता और विक्रेता को बाजार की परिस्थिति की पूर्ण जानकारी होगी, अन्य विक्रेताओं द्वारा बेचे जा रहे उत्पाद की प्रकृति व गुणवत्ता का ज्ञान, जो उत्पाद बेचा जा रहा है उसके मूल्य की पूरी जानकारी, तो उसके पश्चात् एकल मूल्य बाजार होने की प्रबलता होगी। बाजार की स्थितियों के बारे में सही ज्ञान एक समान कीमत बाजार को सुनिश्चित करता है। यह पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की विशेषता है। परन्तु एकाधिकार प्रतियोगी बाजार के तहत उपभोक्ता विभिन्न ब्रांडो की गुणवत्ता के बारे में अनभिज्ञ हो सकते है। इससे

यह परिणाम हो सकता हे कि एक ही उत्पाद के लिए विभिन्न मूल्य या कीमतें ली जा सकती है।

फर्मों के प्रवेश व वहिर्गमन की स्वतंत्रता

बाजार के विभिन्न रूपों में एक—दूसरे से भिन्नता उनके बाजार में प्रवेश (या बहिर्गमन) से किया जा सकता है। अर्थात् फर्मो/कम्पनियों का बाजार में प्रवेश करना प्रतिस्पर्धा में शामिल होना या बाजार से प्रतियोगिता से बाहर होना। फर्मो का प्रवेश या बहिर्गमन का तात्पर्य यह भी है कि यह मानवरचित है, या इसपर कोई बाधा या प्रतिबन्ध व्याप्त नहीं है। संभावित फर्मो के प्रवेश पर स्वतंत्रता है, और मौजूदा कंपनियों के बहिर्गमन पर भी पूर्ण स्वतंत्रता है। प्रवेश (या बहिगर्मन) की स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि निर्माताओं को अंत में कम से कम लाभ या साामान्य लाभ प्राप्त है। यदि मौजूदा उत्पादक असमान्य लाभ अर्जित कर रहे है तो नई फर्मो का उद्योग में प्रवेश होगा। यह उद्योग उत्पादन में वृद्धि कर बाजार को गिरावट से बचाएगा व मूल्य व असामन्य लाभ को मिटाने में मदद करते है। फर्मो का स्वतंत्र प्रवेश एवं बहिर्गमन पूर्ण प्रतियोगिता बाजार एवं एकाधिकार बाजार की विशेषता है। यदि नए उत्पादकों या फर्मों का बाजार प्रवेश पर प्रतिबन्ध है तो मौजूदा कंपनियाँ बिना किसी प्रतिद्वन्द्वी उत्पादकों के बिना भय के असामान्य मुनाफा कमाती रहेगी। और इसके परिणामस्वरूप मौजूदा कंपनियाँ एकाधिकार शक्ति का आनन्द लेना शुरू कर सकती है। एकाधिकार बाजार का स्वरूप है जहाँ बन्द प्रवेश या बहिर्गमन होता है।

मूल्य प्रभाव की मात्रा

बाजार के विभिन्न रूपों को 'मूल्य निर्धारण प्रभाव' एक दूसरे से भिन्नता प्रदान करता है। एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म को बाजार मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं हो सकता है वह मूल्य—ग्रहिता माना जाता है। वहीं दूसरी ओर एक एकाधिकारी के पास वस्तु की कीमत को प्रभावित करने की महान शक्ति है, एकाधिकारी फर्मे "मूल्य निर्माता" कहलाती है।

एकाधिकार प्रतियोगिता में किसी फर्म की दशा इन दोनों चरम सीमाओं के मध्य की होती है। एकाधिकर प्रतियोगिता के तहत एक फर्म अपने उत्पाद की कीमत को प्रभावित करने की शक्ति रखती है, लेकिन वह अपने उत्पाद के मूल्य निर्धारण नीति तय करते समय प्रतिद्वन्द्वी कंपनियों की मूल्य निर्धारतण नीति का भी ध्यान रखती है। यह मूल्य निर्माता होते है, परन्तु कुछ सीमाओं के अन्दर रहकर इसका निर्धारण करते है।

12.3 बाजार का वर्गीकरण

बाजार का वर्गीकरण मुख्यतः चार प्रकार से किया गया है।

1. पूर्ण प्रतियोगिता
2. एकाधिकार
3. एकाधिकार प्रतियोगिता
4. अल्पाधिकार

पूर्ण प्रतियोगिता

पूर्ण प्रतियोगिता का बाजार वह बाजार है जिसमें क्रेताओं और विक्रेताओं के मध्य वस्तु का क्रय—विक्रय प्रतियोगिता के आधार पर होता है।

इसके अतिरिक्त, व्यक्तिगत रूप से कोई भी व्यक्ति वस्तु के मूल्य को प्रभावित नहीं कर सकता है। पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की संरचना है जहाँ बड़ी संख्या में कंपनियाँ (फर्म) एक समान वस्तुओं का उत्पादन करती है, इससे वस्तु की कीमत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

इस प्रकार के बाजार में मूल्य निर्धारण उद्योगों द्वारा किया जाता है अर्थात् मूल्य माँग एवं आपूर्ति पर निर्भर रहता है जिसे उद्योग द्वारा पूर्ण किया जाता है।

एक पूर्ण प्रतिस्पर्धा फर्म, पूरे उद्योग का एक छोटा सा हिस्सा है, जो उत्पाद के मूल्य को प्रभावित नहीं कर सकते है। फर्म का उत्पाद की कीमत (मूल्य) पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है।

इस प्रतियोगिता में फर्म द्वारा यह निर्णय लिया जाता है कि उत्पाद को किस कीमत (मूल्य) पर बेचा जाना है व उत्पाद की मात्रा क्या होगी जिस मूल्य पर इसे बेचा जाना है।

इसका अर्थ यह है कि पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म को मूल्य निर्माता के बाजार मूल्य ग्रहिता (कीमत लेने वाला) माना जाता है। फर्म मूल्य ग्रहिता तब कही जाती है जब वह अपना उत्पाद बाजार मूल्य पर विक्रय करती है।

पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ

एक पूर्ण प्रतियोगिता बाजार के लिए निम्न विशेषताएँ निम्नलिखित है–

असंख्य क्रेता एवं विक्रेता

पूर्ण प्रतियोगिता की प्रमुख विशेषता यह है कि इस बाजार में क्रेता तथा विक्रेता असंख्य होते है। प्रत्येक क्रेता इतना कम क्रय करता है तथा प्रत्येक विक्रेता इतना क्रय विक्रय करता है कि न तो कोई क्रेता और न ही कोई विक्रेता बाजार कीमत को प्रभावित करने में सक्षम होता है।

किसी भी क्रेता या विक्रेता का कोई भी कार्य बाजार–कीमत को प्रभावित करने की स्थिति में नहीं होता है। क्रेताओं एवं विक्रेताओं की असंख्य संख्या होने के परिणामस्वरूप बाजार कीमत उनके पक्ष में प्रभावित नहीं हो पाती है। इस बाजार के अन्तर्गत वस्तु की बाजार कीमत सभी क्रेता एवं विक्रेताओं की संयुक्त क्रियाओं का परिणाम होती है। एक बार बाजार कीमत निर्धारित होने के पश्चात् क्रेता एवं विक्रेता दोनों इसे स्वीकार कर लेते है। दोनों पक्ष ही इस कीमत पर क्रय–विक्रय सम्बन्धी मात्रा का समायोजन कर लेते है।

वस्तु का समरूप होना

पूर्ण प्रतियोगिता के लिए वस्तुओं का समरूप होना आवश्यक है। समरूप का अभिप्राय वस्तु के गुणों का समान होने से भी है। ऐसी दशा में वस्तु का मूल्य समान रहता है। कोई भी क्रेता अथवा विक्रेता वस्तु के मूल्य को प्रभावित नहीं कर सकता है।

प्रवेश एवं बहिर्गमन की स्वतंत्रता

पूर्ण प्रतियोगिता की तीसरी विशेषता यह है कि प्रत्येक फर्म उद्योग में प्रवेश करने तथा इसका बहिर्गमन करने में पूर्णतया स्वतंत्र होती है। कोई भी फर्म जब चाहे उद्योग में आ सकती है तथा जब चाहे उद्योग को छोड़ कर जा सकती है।

प्रत्येक उद्योगपति अपने प्रारम्भिक उद्योग को छोड़ सकता है या वह किसी दूसरे उद्योग की स्थापना कर सकता है।

उत्पत्ति के साधनों में पूर्ण गतिशीलता

पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत उत्पत्ति के किसी साधन को बेरोक टोक एक उद्योग से दूसरे उद्योग में लाया और ले जाया जा सकता है। यदि किसी उद्योग में उत्पत्ति के अकुशल साधन कार्य कर रहे हो, तो उनके स्थान पर उत्पत्ति के कुशल साधनों को लगाया जा सकता है।

बाजार दशाओं का पूर्ण ज्ञान

पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत क्रेता तथा विक्रेताओं को बाजार दशाओं की पूर्ण जानकारी होती है। चूंकि वस्तु के बारे में क्रेतागण पूर्ण जानकारी रखते है, अतः विक्रेताओं अथवा फर्मो को वस्तु की बिक्री के लिए विभिन्न विक्रय उपायों का सहारा नहीं लेना पड़ता है अर्थात् प्रचार एवं विज्ञापन व्यय नहीं करना पड़ता है। इसी प्रकार विक्रेताओं को भी बाजार दशाओं की पूर्ण जानकारी होती है। विभिन्न कीमतों पर होने वाली बिक्री का पूर्ण ज्ञान उन्हें होता है।

परिवहन लागतों का न होना

पूर्ण प्रतियोगिता बाजार का विश्लेषण इस मान्यता पर आधारित है कि इसके अन्तर्गत परिवहन लागतें नहीं होती है, क्योंकि विभिन्न फर्मे एक दूसरे के बहुत समीप स्थित होती है। व्यवहार में दो वस्तुओं को तभी समरूप माना जाता है जब उनका उत्पादन एक ही स्थान पर किया जाता है। यदि उनका उत्पादन अलग–अलग स्थानों पर किया जाता तो कीमतें भी भिन्न–भिन्न होती। कीमत की एकरूपता की शर्त पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत तभी पूरी हो सकती है जबकि हम यह भी मानते है कि उत्पादन एक ही स्थान पर होता है तथा परिवहन लागते उत्पन्न नहीं होती है।

विशुद्ध बनाम पूर्ण प्रतियोगिता

कई बार पूर्ण प्रतियोगिता और विशुद्ध प्रतियोगिता में अन्तर स्पष्ट किया जाता है। विशुद्ध प्रतियोगिता के लिए केवल तीन बातों का होना आवश्यक है।

1. असंख्य क्रेता एवं विक्रेता होना, समरूप वस्तु का उत्पादन, उद्योग में फर्म के प्रवेश एवं बहिर्गमन की छूट – जिस बाजार में पायी जाती है वह बाजार विशुद्ध प्रतियोगी होता है। इस प्रकार के बाजार में एकाधिकारात्मक तत्व विद्यमान नहीं होता है।

   असंख्य क्रेता एवं विक्रेता अर्थात् पर्याप्त संख्या का होना जिससे स्वतन्त्रतापूर्वक वस्तुओं का क्रय–विक्रय कर सके, दोनों पक्षों (क्रेता एवं विक्रेता) के ऊपर किसी का हस्तक्षेप न हो।
2. समरूप वस्तु का उत्पादन होना, अर्थात् जिस वस्तु का क्रय–विक्रय किया जा रहा है वह वस्तु गुण व आकार–प्रकार में एक समान होनी चाहिए।
3. उद्योग में फर्म के प्रवेश एवं बहिर्गमन की पूर्ण स्वतन्त्रता होना आवश्यक है।

पूर्ण प्रतियोगी बाजार के लिए दशाओं का परिपूर्ण होना अनिवार्य है जो कि निम्नलिखित है। पूर्ण प्रतियोगी बाजार संरचना में क्रेताओं तथा विक्रेताओं

की बाजार में अधिक संख्या होना, समरूप वस्तु का उत्पादन होना, फर्मो का स्वतंत्र प्रवेश तथा बहिर्गमन, क्रेताओं एवं विक्रेताओं को बाजार की दशाओं का पूर्ण ज्ञान होना, उत्पादन के साधनों में पूर्ण गतिशीलता का होना तथा यातायात व्यय का न होना। इससे यह आशय प्रतीत होता है कि पूर्ण प्रतियोगिता बाजार, विशुद्ध प्रतियोगिता की तुलना में व्यापक है।

हम कीमत विश्लेषण में पूर्ण प्रतियोगिता को प्राथमिकता देते है क्योंकि यह विशुद्ध प्रतियोगिता से व्यापक अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

उपर्युक्त विशेषताओं से यह स्पष्ट होता है कि पूर्ण प्रतियोगिता में बाजार में एक ही कीमत का प्रचलन होता है। इसके अन्तर्गत कीमत का निर्धारण कुल मांग और कुल पूर्ति की आवश्यकता के माध्यम से किया जाता है। कोई भी क्रेता अथवा विक्रेता कीमत को प्रभावित करने में सक्षम नहीं होता है। व्यक्तिगत फर्म कीमत निर्धारक नहीं रहती अपितु कीमत स्वीकर्ता होती है।

पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ

1. क्रेता तथा विक्रेताओं का बड़ी संख्या में होना।
2. वस्तु का समरूप होना/एक समान वस्तु का उत्पादन होना।
3. फर्मो का उद्योग में स्वतंत्र प्रवेश तथा बहिर्गमन (बाहर जाना)
4. उत्पत्ति/उत्पादन के साधनों में पूर्ण गतिशीलता का होना।
5. बाजार का पूर्ण ज्ञान होना (क्रेता व विक्रेता के सन्दर्भ में)
6. परिवहन लागत/यातायात का व्यय न होना।

एकाधिकार

परिभाषा

एकाधिकार शब्द ग्रीक भाषा के अक्षरों से बना है– Mono और Poly यहाँ Mono से आशय एक से है, व poly का आशय बेचना है। अतः एकाधिकार वह बाजार संरचना है, जहाँ किसी वस्तु/उत्पाद का केवल एक ही विक्रेता होता है, अथवा कोई वस्तु/उत्पाद एक ही फर्म या उद्योग द्वारा निर्मित की जाती है। उदाहरण के तोर पर हमें विद्युत आपूर्ति एक संस्था द्वारा ही प्राप्त होती है वह है प्रदेश विद्युत मण्डल जैसे पंजाब विद्युत मण्डल जो कि पंजाब में विद्युत आपूर्ति प्रदान करता है। इसी प्रकार हम जिस रेल द्वारा यात्रा करते है उस परिवहन के साधन का परिचालन भारत सरकार की संस्था "भारतीय रेल" द्वारा ही किया जाता है। उपरोक्त दोनों एकाधिकार के उदाहरण है।

अन्य परिभाषा

"एकाधिकार वह उत्पादक होता है जो किसी एक वस्तु की पूर्ति पर पूर्ण अधिकर रखता है तथा उस वस्तु का कोई स्थानापन्न नहीं होता है।"

वैधानिक भाषा में एकाधिकार वह संस्था है जिसका वस्तु की पूर्ति पर पर्याप्त नियंत्रण होता हे और वह कीमत को प्रभावित करने की स्थिति में होता है।

प्रो. मार्शल के अनुसार–

"प्रथम दृष्टया एकाधिकारी का स्वार्थ उसे यह अधिप्रेरित करता हे कि वह पूर्ति की मांग के प्रति इस ढंग से समायोजित न करे कि जिस कीमत पर वह अपनी वस्तु को बेच सकता है वह केवल उसकी उत्पादन लागत को ही पूरा करती है। उसे तो पूर्ति को मांग के साथ इस प्रकार समायोजित करना चाहिए कि उसको अधिकतम कुल विशुद्ध आगम प्राप्त हो सके।"

एकाधिकार की विशेषताएँ

एकाधिकार की मुख्य विशेषताएँ निम्नानुसार है—

एकाकी विक्रेता

एकाधिकार बाजार की वह परिस्थिति जहाँ पर केवल एक ही विक्रेता या उत्पादक होता है जो वस्तु का निर्माण करता है। ऐसे मामलों में फर्म या उत्पादक वस्तु की आपूर्ति को नियंत्रित करते है। किसी भी एकाधिकार फर्म या उत्पादक द्वारा उत्पादित उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन, वस्तु के बाजार मूल्य को प्रभावित करता है। जहाँ एक ही फर्म में एकाधिकार होता है, वहाँ पर फर्म और उद्योग के मध्य अन्तर विलोपित हो जाता है। हालांकि, उत्पाद के खरीदारों की संख्या जहाँ अत्यधिक होती है, फलस्वरूप कोई खरीदार एकाधिकार के तहत उत्पाद की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकते है।

निकट के स्थापनापन्न (विकल्प) न होना

एकाधिकार की दूसरी मुख्य विशेषता यह है कि एकाधिकार फर्म या उद्योग द्वारा ऐसी वस्तु का उत्पादन किया जाता है जिसका कोई दूसरा निकटतम विकल्प बाजार में नहीं होता है। निकटतम विकल्प से आशय यह है कि जो वस्तु आसानी से एक—दूसरे विकल्प के तौर पर इस्तेमाल या उपयोग की जा सके और लगभग उसी मूल्य (कीमत) पर बाजार में उपलब्ध हो। एकाधिकार के अस्तित्व के लिए एक आवश्यक शर्त यह है, जो भी उत्पाद या सेवा जो कि एकाधिकारी फर्म या उद्योग द्वारा दी जाती है उसका बाजार में निकटतम स्थानापन्न (विकल्प) का उपलब्ध न होना।

एकाधिकार प्रतियोगिता रहित एक बाजार है, यदि वहाँ पर कुछ और उत्पादक है जो, एकाधिकार फर्म या उद्योग द्वारा उत्पादित उत्पाद के लिए निकटतम विकल्प का उत्पादन कर रहे है, तो उनके बीच प्रतिस्पर्धा हो जाएगी और ऐसे मामलों में उत्पादकों के मध्य प्रतियोगिता होगी एकाधिकार मौजूद नहीं रहेगा। याद रहे जहाँ निकटतम विकल्प का अभाव होगा वहाँ पर किसी भी प्रकार की प्रतिस्पर्धा का माहौल नहीं होगा, अतः फर्मो के बीच प्रतिस्पर्धा निकटतम विकल्प के माध्यम से उत्पन्न होती है। हालांकि उत्पाद का एक "दूर विकल्प" भी होता है जो कि मंहगा, असुविधाजनक और जिसकी कार्यक्षमता कमजोर होती है। उदाहरण के तौर किसी भी जगह पर विद्युत आपूर्ति की व्यवस्था विद्युत मंडल द्वारा ही की जाती है यह एकाधिकार के तहत होता है क्योंकि वहाँ पर उसका कोई निकटतम विकल्प मौजूद नहीं है। किन्तु "दूर विकल्प" उपलब्ध है जनरेटर सेट के रूप में।

बन्द प्रविष्टि

एकाधिकार बाजार को भावी उत्पादकों के लिए बन्द प्रविष्टि द्वारा वर्गीकृत किया जाता है। एकाधिकार बाजार में प्रवेश करना उच्च बाधाओं का कारण निर्मित होना है। एक नए उद्यमी को यदि एकाधिकार बाजार में प्रवेश

करना है, तो उसे बाधाओं को शामिल करते हुए लाभ की प्राप्ति का लक्ष्य निर्धारित करना होगां एकाधिकार उद्योग में नई फर्मो के प्रवेश पर कुछ बाधाएँ/प्रतिबंध मौजूद रहता है। बन्द प्रविष्टि/प्रवेश प्राकृतिक, कानूनी या मानव निर्मित प्रतिबंध को परिणाम हो सकता है। यह प्रतिबन्ध अनेकों प्रकार के होते है। उदाहरण पेटेन्ट राईट, कापी राइट, सरकारी कानून से संबंधित, अर्थव्यवस्था के पैमाने। अर्थात् एकाधिकार बाजार में किसी दूसरी फर्म अथवा उद्योग को प्रवेश करना है, तो उसे निम्न प्रतिबन्ध का सामना करना होगा जो कि बन्द प्रविष्टि कहलाता है। इन बातों को ध्यान रखते हुए, एकाधिकार बाजार में कोई प्रतियोगी नहीं रह पाता है। बाजार प्रवेश की बाधाएँ बाजार की शक्तियों को दर्शाती है।

मूल्य निर्माता

एकाधिकार फर्म "मूल्य निर्माता" या "मूल्य निर्धारण" का कार्य करती है। यह किसी उत्पाद की एकमात्र उत्पादक होती हे। इससे वस्तु का बाजार में आपूर्ति पर अत्यधिक प्रभाव उत्पन्न होता है। इस कारण वस्तु की कीमत पूरी तरह एकाधिकार फर्म द्वारा नियन्त्रित रहती है। अतएव एकाधिकार वस्तु बाजार में शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। व इसी शक्ति के कारण फर्म को "मूल्य निर्माता" कहा जाता है। यह एक प्रतिस्पर्धी फर्म है, जो "मूल्य लेने वाला है के विपरीत है।"

मूल्य–निर्धारण में भेदभाव की संभावना

एक एकाधिकार फर्म अपने उत्पाद को एकल मूल्य शुल्क के हिसाब से विक्रय करते है, परन्तु कुछ मामलों में वह उपभोक्ताओं के विभिन्न समूह से अपने उत्पाद के लिए पृथक मूल्य भी ले सकते है। इसे कीमत या मूल्य भेदभाव कहते है।

कीमत भेदभाव एकाधिकार बाजार की वह स्थिति है जब एक निर्माता या उत्पादक अपने उत्पाद को विभिन्न उपभोक्ताओं को दो या अधिक विभिन्न कीमतों पर बेचता है, यहाँ पर कारण भिन्न है जो कि मूल्य व उत्पाद को विभिन्न करता है।

उदाहरण के लिए कई अस्पताल गरीब मरीजों के लिए आपरेशन शुल्क कम लेते है व अमीर मरीजों से ज्यादा शुल्क लेते है। इसी प्रकार भारतीय रेल अनिवार्य उत्पादों जैसे खाद्य उत्पाद, कोयला आदि के लिए कम माल भाड़ा दर लेते है। अन्य परिवहन उत्पादों की तुलना में।

इसी प्रकार विद्युत मण्डल कृषि उपभोक्ताओं को अन्य उपभोक्ताओं की अपेक्षा कम दर पर विद्युत आपूर्ति प्रदान करती है।

यह सभी कीमत भेदभाव के उदाहरण है।

वास्तविक जगत में शुद्ध एकाधिकार दुर्लभ होता है। वास्तव में एकाधिकर, पूर्ण प्रतियोगिता का विपरीत किनारा है।

एकाधिकार की विशेषताएँ

1. एकाकी विक्रेता
2. निकट के स्थानापन्न (विकल्प) न होना
3. नये फर्मों के लिए बन्द प्रविष्टि
4. मूल्य निर्माता

5. मूल्य निर्धारण में भेदभाव

एकाधिकार प्रतियोगिता

अब तक हमने बाजार संरचना के दो संरचनों के बारे में चर्चा की पूर्ण प्रतियोगिता बाजार व एकाधिकार बाजार। बाजार संरचना के इन दोनों रूपों को शायद ही वास्तविक व्यवहार में उपयोग किया जाता है। वास्तविक दुनिया में अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार संरचना को विभक्त करती है। अपूर्ण प्रतियोगिता का मुख्य एकाधिकार प्रतियोगिता है। अपूर्ण प्रतियोगिता पूर्ण प्रतियोगिता तथा विशुद्व एकाधिकार दोनों की चरम स्थितियों के मध्य की स्थिति है।

परिभाषा

"एकाधिकार प्रतियोगिता बाजार का वह रूप है, जिसमें बहुत सी फर्मे कार्य करती है और प्रत्येक फर्म मिली–जुली वस्तुएँ बेचा भी करती है, परन्तु उनके द्वारा बेची जाने वाली वस्तुएँ समरूप नहीं होती है। उनमें थोड़ा बहुत भेद (अन्तर) पाया जाता है।"

एकाधिकार प्रतियोगिता में कुछ तत्व एकाधिकार के एवं कुछ तत्व प्रतियोगिता के पाये जाते है। अतः एकाधिकार और प्रतियोगिता तत्वों का सम्मिश्रण बाजार को एकाधिकार प्रतियोगी के रूप में दर्शाता है। एकाधिकार प्रतियोगिता को पूरी तरह समझने के लिए निम्न विशेषताओं को समझना जरूरी है, जो कि निम्नलिखित है।

एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताएँ

एकाधिकार प्रतियोगिता की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

क्रेता एवं विक्रेता का अधिक संख्या में होना

एकाधिकार प्रतियोगिता की प्रथम मुख्य विशेषता यह है कि इसमें, विक्रेता की संख्या अधिक रहती है, परन्तु यह संख्या असमान्य रूप से बड़ी भी नहीं रहती है। कंपनियों में बड़ी संख्या से आशय यह है कि प्रत्येक फर्म द्वारा बाजार का एक छोटा सा हिस्सा उत्पादन होता है। इसलिए, एकाधिकार प्रतियोगिता के अंतर्गत फर्म यथोचित ये मान सकते है, कि उन्हें द्वारा की गई कोई कार्यवाही प्रतिद्वन्दी फर्म को भी प्रभावित करेगी। अतः उन्हें प्रतिद्वन्दी फर्म की प्रतिक्रिया पर परेशान नहीं होना चाहिए, वह बाजार से प्रभाव जरूर उत्पन्न करेगा, प्रतिद्विन्दता को लेकर। इसका आशय यह है कि फर्मे स्वतंत्र–मूल्य नीति का पालन कर सकते हैं उदाहरण के लिए, कोई भी फर्मे बिना प्रतिद्वन्दी फर्मे की प्रतिक्रिया लिए बिना अपने उत्पाद का मूल्य कम कर सकते है। इस कारणवश आंशिक रूप से एकाधिकार प्रतियोगिता के अंतर्गत फर्मे मूल्य–ग्रहिता नही होते है। वे अपनी कीमत (मूल्य) निर्धारित करते है।

यह प्रशासित मूल्यों की स्थिति होती है अर्थात् एक स्थिति जहाँ कीमतें को व्यक्तिगत फर्मो के निर्णय के बजाए अवैयक्तिक बाजार की शक्तियों द्वारा निर्धारत किया जाता है। इसलिए एक एकाधिकात्मक प्रतिस्पर्धा फर्म की शक्ति कीमत (मूल्य) को मामूली तौर पर प्रभावित करने की होती है। एकाधिकार प्रतिस्पर्धा में, क्रेताओं (खरीदारों) की संख्या अधिक रहती है, बहुत बड़ी संख्या क्रेताओं की होने से, अलग–अलग खरीदार अपनी मांग को बदलने के द्वारा उत्पाद की कीमत (मूल्य) को प्रभावित कर सकते है।

वस्तु का विभेदीकरण

वस्तु का विभेदीकरण एकाधिकार प्रतियोगिता का मूल तत्व है। एकाधिकार प्रतियोगिता सभी फर्मे विभेद वस्तुओं का उत्पादन करते है। सभी वस्तुएँ एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा में एक सी नहीं होती, अपितु उनमें कुछ अन्तर पाया जाता है। ये वस्तुएँ एक–दूसरे की निकट–स्थानापन्न (Close substitute) होती है, लेकिन पूर्ण–स्थानापन्न कदापि नही होती है। वस्तु–विभेद की विशेषता ही इस प्रतियोगिता को पूर्ण प्रतियोगिता में अलग करती है। वस्तु–विभेद जितना अधिक होगा फर्मो में एकाधिकार का अंश उतना ही अधिक होगा।

एकाधिकार प्रतियोगिता में कोई भी उत्पाद दो मायनों में एक–दूसरे से अलग हो सकते हे। प्रथमतः कोई भी उत्पाद स्वयं भौतिक विशेषताओं से भिन्न हो सकता है। जैसे भौतिक और रासायनिक घटक जिसे उत्पाद का निर्माण हुआ है, उत्पाद की गुणवत्ता, आकार, डिजाइन, रंग, पैकिंग में भिन्नता आदि। उदाहरण के तौर पर किसी पेय पदार्थ की कैलोरी सामग्री भिन्न हो सकती है। विभिन्न ब्राँड के मुताबिक जो उसका निर्माण करते है एवं शर्ट के विभिन्न ब्राँड भी एक दूसरे से भिन्न होते है, कपास और पोलिएस्टर का मिश्रण उन्हें एक दूसरे से भिन्न दिखाता है जिससे मिलकर शर्ट का उत्पादन होता है। कभी–कभी ये भिन्नता केवल काल्पनिक या अनुमानित हो सकती है। उदाहरण के तौर पर विभिन्न तरह की पैकेजिंग, विभिन्न व्यापार चिन्ह (ट्रेडमार्क) विभिन्न ब्राँड।

दूसरे प्रकार से किसी उत्पाद को बिक्री के आसपास की स्थिति के आधार पर भिन्न किया जाता है। अर्थात् वह स्थान जहाँ उत्पाद की बिक्री की जा रही है, विक्रेता का स्थान जहाँ वस्तु बेची जाती है, विक्रेता की साख, शिष्ट व्यवहार क्षमता, विक्रेता की विश्वसनीयता, विक्रेता द्वारा प्रदान ऋण सुविधा आदि।

उदाहरण के लिए आपको यदि शर्ट खरीदना है तो आप पास की दूकान पर अधिक भुगतान को प्राथमिकता देंगे न कि दस किलोमीटर दूर स्थित दूकान पर जाना पसन्द करेंगे उसी उत्पाद (शर्ट) को खरीदने। जब इन शर्तों के संबंध में अन्त है, विभिन्न विक्रेताओं के उत्पादों में फर्क हो सकता हैं

इस भिन्नता को देखते हुए अलग–अलग फर्म अपने विभेदित उत्पाद का एकाधिकार रखते है। उत्पादों को विभेदित करने के लिए, विक्रेता अलग–अलग ब्रांड नाम से अपने उत्पादों के विक्रित करते है। यह अलग–अलग फर्म का एकाधिकार उन्हें अपना ब्रांड बताकर अपने विभेदित उत्पाद के जरिए किया जाता है। यह एकाधिकार प्रतियोगिता का एकाधिकार घटक है। लेकिन प्रत्येक फर्म भी अलग–अलग ब्रांड नाम के साथ समान उत्पाद का उत्पादन अन्य कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए करती है। इस प्रकार कि कोलगेट टूथपेस्ट उत्पादन करती है इस विशेष ब्रांड नामों के तहत टूथपेस्ट का उत्पादन होता है जो कि बाजार प्रतिस्पर्धा के लिए होता है। यह प्रतियोगिता, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता का हिस्सा कहलाता है।

इस प्रकार एकाधिकार प्रतियोगिता, के तहत ब्रांड का एकाधिकार है, परन्तु प्रतिद्वन्दी विक्रेताओं द्वारा उसे प्रतियोगिता दी जाती हे उसी ब्रांड का

निकटतम उत्पाद विक्रय के द्वारा, जिसे वह ब्रांड के नाम से बाजार में विक्रित करता है।

उद्योगों में फर्मो के प्रवेश एवं बहिर्गमन की स्वतन्त्रता

एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा के अन्तर्गत प्रत्येक फर्म का आकार छोटा होता है तथा निकट के स्थानापन्न की वस्तु का उत्पादन करती है। वे उत्पादन सम्बन्धी निर्णय स्वतन्त्र रूप से लेती है। ऐसी स्थिति में लाभ होने पर दीर्धकाल में नई फर्मे उद्योग में प्रवेश करने तथा हानि होने पर उद्योग का बहिर्गमन करने की पुरानी फर्मो को छूट होती है। जिसके परिणामस्वरूप अल्पकाल में चाहे फर्म लाभ, हानि एवं सामान्य लाभ में से किसी भी स्थिती हो सकती है लेकिन दीर्धकाल में इस विशेषता के कारण प्रत्येक फर्म को सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है।

एकाधिकार प्रतियोगिता, पूर्ण प्रतियोगिता की तरह है। जहाँ स्वतंत्र प्रवेश व स्वतन्त्र निकास की स्वतंत्रता फर्मे या कम्पनी को दी जाती है। नई फर्मो के प्रवेश पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नही है। यहाँ स्वतंत्र प्रवेश से यह आशय है, कि नई फर्म/कम्पनी किसी भी एकाधिकार प्रतियोगी फर्म का निकटतम उत्पाद विकल्प बना सकती है। जिसे close subsititue या निकट स्थानापन्न कहते है। वह निकट–स्थानापन्न का उत्पादन करने के लिए प्रतियोगी बाजार में स्वतंत्र है। इसी प्रकार किसी फर्म पर उद्योग को छोड़कर जाने का किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है।

विक्रय लागत

विक्रय लागत, एकाधिकार प्रतियोगिता की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जो फर्मे एकाधिकार प्रतियोगिता के अन्तर्गत एक दूसरे से प्रतियोगिता करती है वह विक्रय लागत व उत्पाद बिक्री विज्ञापन पर भी प्रतियोगी रहती है। अर्थात् उनमें विक्रय लागत व उत्पाद बिक्री संवर्धन व्यय में भी प्रतियोगिता का माहौल उत्पन्न होता है।

विक्रय लागत विभिन्न विक्रय संवर्धन उपायों के माध्यम से अपने उत्पाद की बिक्री को बढ़ावा देने के लिए कंपनी द्वारा किए गए व्यय है।"

बिक्री संवर्धन के उपायों में प्रतियोगी विज्ञापन, जैसे की समाचार पत्रों में प्रकाशित करवाना, टीवी में विज्ञापन प्रसारित करना आदि। वह घर–घर जाकर अभियान चलाना जो कि उत्पाद से सम्बन्धित हो उत्पाद पर छूट प्रदान करना आदि।

इन बिक्री संवर्धन उपायों के मूल उद्देश्य यह है कि उपभोक्ता को अन्य ब्रांड के बजाए अपने ब्रांड खरीदने के लिए उन्हें राजी करना, उपभोक्ताओं को लुभाने के लिए एक विशेष ब्रांड के निर्माता द्वारा इन उपायों का उपयोग किया जाता है।

पूर्ण प्रतियोगिता और एकाधिकार बाजार में बिक्री संवर्धन उपायों के लिए कोई स्थान नहीं है। पूर्ण प्रतियोगिता में उत्पाद पूरी तरह से सजातीय होते है अतः उन्हें विज्ञापित करने की कोई गुंजाईश नहीं रहती है। एकाधिकार में भी कोई विज्ञापन या बिक्री या बिक्री संवर्धन उपायों की आवश्यकता नहीं होती, इससे वहाँ कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती है।

गैर–मूल्य प्रतियोगिता

गैर–मूल्य प्रतियागिता भी एकाधिकारी प्रतियोगिता का मुख्य घटक है। एकाधिकारी प्रतियोगिता के अन्तर्गत उत्पादकों के बीच मूल्य सम्बन्धी प्रतियोगिता का उतना महत्व नहीं जितना कि वस्तु–विभेद में, कम्पनियों के एकाधिकार प्रतियोगिता तहत प्रतिस्पर्धा होती है, कीमतों में कमी लाकर नहीं। अर्थात् एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा के अन्तर्गत विक्रेताओं के मध्य मूल्य–स्पर्धा न होकर गैर–मूल्य प्रतिस्पर्धा रहती है। प्रत्येक प्रतिस्पर्धी फर्म द्वारा निकट की स्थानापन्न वस्तु का उत्पादन करने के कारण अपने ब्राड एवं ट्रेडमार्क की सहायता से वस्तु का प्रचार एवं विज्ञापन करके यह सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है कि अन्य वस्तुओं की तुलना में हमारी वस्तु उत्तम, टिकाऊ, सस्ती है। इसके लिए प्रत्येक फर्म द्वारा विज्ञापन एवं विक्रय–कर्ताओं का सहारा लिया जाता है। जिसका बिक्री पर बहुत प्रभाव पड़ता है। और ग्राहक उस ओर आकर्षित होकर किसी वस्तु के विशिष्ट ब्राण्ड एवं ट्रेडमार्क वाली वस्तु का ही उपयोग करना शुरू कर देते है। इसका प्रभाव सीधे प्रतिस्पर्धा पर पड़ता है व भविष्य में इस विशिष्ट वस्तु के ग्राहक दूसरे ब्राण्ड एवं ट्रेडमार्क वाली वस्तु से भिन्न होते है।

स्वतंत्र मूल्य नीति

एकाधिकार प्रतियागिता के अंतर्गत कोई भी फर्म स्वतंत्र मूल्य नीति का पालन कर सकते है। यह कुछ हद तक वस्तु की कीमत (मूल्य) को प्रभावित कर सकते है। इसका आशय है, कि एकाधिकार प्रतियोगिता में एक फर्म या कंपनी अपने उत्पाद की "मूल्य निर्माता" होती है। अर्थात् अपने उत्पाद का मूल्य स्वनिर्धारण कर सकती है।

एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताओं के विश्लेषण से, यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि एकाधिकार बाजार संरचना का एक यथार्थवादी मॉडल होना चाहिए।

अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं, वस्त्र, कपड़े, खाद्य उत्पादों, आम उपयोग के समान (जैसे टूथपेस्ट, साबुन, ब्लेड, पेन) इलेक्ट्रॉनिक्स आदि को अलग–अलग ब्राण्ड नाम के साथ उत्पादित किया जाता है। उदाहरण के लिए विभिन्न ब्राण्डों के साबुन जैसे पियर्स, लक्स, टूथपेस्ट जैसे कोलगेट, फोरहेन्स आदि, जूते जैसे बाटा, वूडलेण्ड, मेसकॉस आदि की तरह टेलीविजन जैसे सोनी, फिलिप्स। आप जिस उत्पाद का उपयोग करते है इसका नाम भी जानते है, व यह विभिन्न ब्राण्ड नामों के तहत उत्पादित किया जाता है।

इससे यह पता चलता है कि एकाधिकार प्रतियोगिता के लिए वास्तविक बाजार परिस्थितियाँ मेल खाती है।

एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताएँ

1. क्रेता एवं विक्रेता का अधिक संख्या
2. वस्तुओं का विभेदीकरण
3. फर्म का स्वतन्त्र प्रवेश एवं निर्गमन/बहिर्गमन
4. विक्रय लागत
5. गैर–मूल्य प्रतिस्पर्धा
6. स्वतंत्र मूल्य नीति

अल्पाधिकार

अल्पाधिकार अपूर्ण प्रतियोगिता का महत्वपूर्ण अंग है। यह उस प्रकार की बाजार संरचना है, जहाँ बाजार में थोड़े से विक्रेता हो और उनमें आपसी प्रतियोगिता भी कम हो।

'Oligopoly' शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के 'Oligoi' तथा 'Pollein' शब्दों से हुई है। इसमें Oligo से आशय थोड़ा–सा या कुछ (A few) तथा 'Pollein' शब्द से आशय बेचना (to sell) है अर्थात् oligoply शब्द से आशय थोड़े से विक्रेताओं से है जिनके द्वारा समरूप वस्तु अथवा भिन्न वस्तु का उत्पादन करते है। लेकिन भिन्न वस्तुएँ निकट की स्थानापन्न होती है। कम विक्रेताओं की संख्या अल्पाधिकार की स्थिति को थोड़ा मुश्किल बनाती है। अर्थात् अल्पाधिकार बाजार की एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें वस्तु अथवा सेवा के बहुत थोड़े अर्थात् अल्प उत्पादक सेवा प्रदाता होते है। पर समान्यतः हम कह सकते है जहाँ एक उत्पाद के विक्रेताओं की संख्या दो से दस है वह अल्पाधिकार बाजार स्थिति कहलाती है।

अल्पाधिकार ऐसी बाजार संरचना है जहाँ किसी उत्पाद का उत्पादन बड़ी संख्या में किया जाता है। जैसे ओटोमोबाइल, इलेक्ट्रानिक उत्पाद और उपभोक्ता उत्पादों जैसे बेबी खाद्य पदार्थ, वनस्पति तेल, शीतल पेय पदार्थ आदि।

अल्पाधिकार बाजार संरचना का वह रूप भी है जिसमें किसी वस्तु के कुछ ही विक्रेता होते है। ये विक्रेता समरूप वस्तु के उत्पादक भी हो सकते है जैसे सीमेन्ट, सोना, चाँदी एवं इस्पात आदि। इसके विपरीत ये विक्रेता भिन्न वस्तु जिसके निकट के स्थानापन्न होते है, के उत्पादक भी हो सकते है जैसे कार, मोटर, बाईक, ट्रेक्टर आदि।

अल्पाधिकार की विशेषताएँ

अल्पाधिकार बाजार संरचना की मूलभूत विशेषताएँ निम्नलिखित है।

तीव्र प्रतिस्पर्धा

जब किसी उद्योग में बहुत ही कम उत्पादक होते है, तो उनके बीच गहन प्रतिस्पर्धा मौजूद रहती है। इसके बाद जब केवल कुछ फर्म है, प्रत्येक फर्म बाजार का एक बड़ा हिस्सा उत्पादित करती है। केवल कुछ प्रतिद्वन्दी कंपनियाँ होने के कारण प्रत्येक फर्म जानती है कि बाजार मूल्य को प्रभावित करने के लिए उसके पास बाजार की महत्वपूर्ण शक्ति है। लेकिन वह यह भी जानते है कि उद्योग में अन्य कंपनियों को भी ऐसी शक्ति है।

फर्मो की संख्या कम या छोटी होने के कारण एक फर्म की किसी भी कार्यवाही से प्रतिद्वन्दी कंपनियों पर असर पड़ सकता है। इसलिए हर फर्म प्रतिद्वन्दी कंपनियों की गतिविधियों पर करीब नजर बनाए रखता है। व अपनी प्रतिद्वंदी कंपनियों से प्रतिस्पर्धा से निपटने के लिए एक उपयुक्त रणनीति तैयार करने में हमेशा व्यस्त रहते है। इस प्रकार से अपनी प्रतिद्वंदी कंपनियो से प्रतिस्पर्धा का सामान करने के लिए रक्षात्मक और आक्रामक रणनीति विकसित की जाती है यह फर्म द्वारा अपने को बाजार में समृद्ध व बाजार में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए किया जाता है। अल्पाधिक अंतर–फर्म (फर्मो के बीच) प्रतियोगिता का उच्चतम रूप है।

परस्पर निर्भरता

परस्पर निर्भरता अल्पाधिकार की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जो फर्मो के निर्णय लेने में सहायक है। अल्पाधिकार प्रतियोगिता में फर्मों की संख्या इतनी कम होती है कि प्रत्येक फर्मे को अपनी प्रतिद्वन्दियों के बारे कुछ भी प्रतिक्रया की चिंता रहती है। इसका कारण यह है कि जब प्रतियोगियों की संख्या कम है, तो एक फर्म द्वारा मूल्य, उत्पादन व उत्पाद आदि में कोई बदलाव प्रतिद्वंदी फर्मो को भी प्रभावित करेगा। और उन्हें अपने उत्पाद, उत्पादन व उसके मूल्य को लेकर जवाबी कार्यवाही के लिए मजबूर होना पड़ेगा। अर्थात् फर्म द्वारा की गई कार्यवाही या परिवर्तन दूसरी प्रतिद्वंदी फर्मो के लिए महत्वपूर्ण होगी व उन्हें उसके प्रति सचेत रहना होगा अगले प्रतियोगी–दिशा–निर्देश निर्धारित करने के लिए।

उदाहरण के लिए, यदि मारूती उद्योग, मारूती कारों के खरीदारों को कार का मुफ्त बीमा प्रदान करने का प्रस्ताव करता है, तो बाजार में उपस्थित दूसरे प्रतियोगी वाहन निर्माता जैसे सेन्ट्रो कार कंपनी भी अपनी कारों पर यही प्रस्ताव दे सकते है। इसलिए मारूती उद्योग के ऐसे किसी भी प्रस्ताव (offer) करने से पहले, अन्य कारों के विक्रेताओं का इस की प्रतिक्रिया करना होगी। यह परस्पर निर्भरता, क्रिया व प्रतिक्रिया जो कि प्रतिद्वंदी कंपनियों के बीच होती है वह मूल्य निर्धारण व मूल्य काटने से सम्बन्धित रहता है। यह हर दो फर्मो के बीच इन्ही दोनों को लेकर क्रिया व प्रतिक्रिया बनी रहती है। यही भारतीय बाजार में 'कोक' व 'पेप्सी' के मामले में हो रहा है।

उत्पाद की प्रकृति

अल्पाधिकार के तहत फर्मे सजातीय उत्पाद (एक समान) या विभेदित उत्पाद (अलग–अलग) का उत्पादन कर सकती है। तद्नुसार यह हो सकता है, "अल्पाधिकार बिना विभेदित उत्पाद के साथ" (विशुद्ध अल्पाधिकार) और "अल्पाधिकर विभेदित उत्पाद के साथ" अर्थात् विशुद्ध अल्पाधिकार–जब सभी फर्मे आपस में मिलकर समान वस्तु का उत्पादन तथा विक्रय करती हे। विभेद अल्पाधिकार–जब अलग–अलग फर्मे अलग–अलग वस्तुओं का उत्पादन करती है।

ऑटोमोबाइल उद्योग में "मारूती", "सेन्ट्रो", इण्डिका और प्रशीतन उद्योग में "एलजी", "नेशनल" और गोदरेज विभेदित अल्पाधिकार के उदाहरण है। दूसरी ओर "इण्डेन" और "भारत" रसाई गैस शुद्ध एकाधिकार के उदाहरण है।

विक्रय लागत का महत्व

अल्पाधिकार के तहत तीव्र प्रतिस्पर्धा और फर्मों में परस्पर निर्भरता को देखते हुए फर्मे मूल्य में कटौती, छूट, घर–पहुँच अभियान, विज्ञापन जैसे विभिन्न बिक्री को बढ़ावा देने वाले उपायों के माध्यम से एक–दूसरे को प्रतिस्पर्धा देते है। इसलिए अल्पाधिक बाजार संरचना में बिक्री लागत व विज्ञापन का बहुत महत्व है। विज्ञापन की महत्ता अल्पाधिकार प्रतियोगिता में पूरे जोरो पर रहती हे और कई बार विज्ञापन जीवन और मृत्यु का मामला बन सकता है (उत्पाद बिक्री के सन्दर्भ में)/कोक और पेप्सी के बीच टीवी विज्ञापनों में युद्ध इस तथ्य की गवाही है।

प्रवेश में बाधा

अल्पाधिकार के लम्बे समय तक के अस्तित्व में नए फर्मो के प्रवेश में बाधा उत्पन्न होती है। नई फर्मो के प्रवेश करने के लिए इन बाधाओं के अभाव में, अल्पाधिकार लम्बे समय में कुछ विक्रेताओं की अपनी विशेषता को बनाए रखने की दशा में नहीं रहता है। आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं में कुछ बड़ी कम्पनियों का प्रभुत्व रहता है, इसकी वजह है, बड़े पैमाने पर उत्पादन, पुराने फर्मो की लागत लाभ, कीमत में कटौती, महत्वपूर्ण निवेशों पर नियंत्रण, पेटेंट अधिकार आदि। ये सभी कारक उद्योग में नई फर्मो/कंपनियों के प्रवेश को रोकते है और अल्पाधिकारी की रक्षा करते है।

अल्पाधिकारी फर्म का मांग वक्र अनिश्चित होता है

अल्पाधिकार की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है, अल्पाधिकारी का मांग वक्र अनिश्चित रहता है। एक मांग वक्र यह दर्शाता है कि फर्म के उत्पाद की मात्रा को विभिन्न कीमतों पर बेच सकते है। एक फर्म जो कि पूर्ण प्रतियोगिता या अल्पाधिकार या अल्पाधिकार प्रतियोगिता के तहत कार्य करते है, तो वहाँ निश्चित माँग वक्र होगा, क्योंकि वहाँ पर प्रतिद्वंद्वी कंपनियों की प्रतिक्रिया पर ध्यान नहीं दिया जाता है। लेकिन अल्पाधिकार के तहत ऐसा नहीं होता है, एक अल्पाधिकारी अपने प्रतिद्वंदी फर्म की प्रतिक्रिया को नजरअंदाज नहीं करता है । यह कंपनियों की परस्पर निर्भरता को देखते हुए होता है। एक फर्म द्वारा कीमत में किसी भी प्रकार का परिवर्तन प्रतिद्वंद्वी कंपनियों के कीमतों में परिवर्तन का परिणाम हो सकता हे। इसके परिणामस्वरूप एक अल्पाधिकारी का मांग वक्र बदलता रहता है। इसलिए एक अल्पाधिकारी का मांग वक्र निश्चित न होकर अनिश्चित रहता है।

अल्पाधिकार की विशेषताएँ

1. तीव्र प्रतिस्पर्धा
2. परस्पर निर्भरता
3. उत्पाद की प्रकृति
4. विक्रय लागत का महत्व
5. फर्मो के प्रवेश में बाधा
6. अल्पाधिकारी फर्म का माँग वक्र अनिश्चित होता है।

12.4 बाजार के विभिन्न रूपों के मध्य तुलना : संक्षिप्त अवलोकन

क्र.		बाजार के प्रकार			
		पूर्ण प्रतियोगिता	एकाधिकार प्रतियोगिता	अल्पाधिकार	एकाधिकार
1.	विक्रेताओं की संख्या	विक्रेताओं की बड़ी संख्या	विक्रेताओं की पर्याप्त संख्या	कुछ विक्रेता	एकल विक्रेता
2.	क्रेताओं की	क्रेताओं की	क्रेताओं की	क्रेताओं की	क्रेताओं की

	संख्या	बड़ी संख्या	बड़ी संख्या	बड़ी संख्या	बड़ी संख्या
3.	उत्पाद की प्रकृति	सजातीय उत्पाद	विभेद उत्पाद	सजातिया या विभेद उत्पाद	सजातीय उत्पाद
4.	जानकारी की प्रकृति	पूर्ण ज्ञान	अल्प ज्ञान	अल्प ज्ञान	अल्प ज्ञान
5.	प्रवेश या निकास का स्वरूप	स्वतंत्र प्रवेश व निर्गम	स्वतंत्र प्रवेश व निर्गम	विकसित मांगचक्र	बन्द प्रवेश
6.	बाजार की ताकत/शक्ति	कोई शक्ति नहीं	मामूली अधिकार	महत्वपूर्ण शक्तियाँ	अधिक शक्तियाँ
7.	मूल्य पर प्रभाव का स्वरूप	मूल्य ग्रहिता	मूल्य निर्माता	मूल्य निर्माता	मूल्य निर्माता
8.	विक्रय लागत	अस्तित्व नहीं	मौजूद	मौजूद	अस्तित्व नहीं
9.	माँग वक्र का झुकाव	पूरी तरह से लोचदार	ऋणात्मक झुकाव लेकिन कम लोचदार	माँग वक्र	ऋणात्मक झुकाव लेकिन कम लोचदार
10.	AR एवं MR के साथ संबंध	AR = MR	AR > MR	AR > MR	AR > MR
11.	लाभ की प्रकृति (अंततोगत्वा/ लम्बे समय तक)	सामान्य	अधिक सामान्य	अधिक सामान्य	अधिक सामान्य

12.5 सारांश

बाजार की अवधारणा इस प्रकार है, एक स्थान जहाँ आम (दैनिक) उपयोग की वस्तु मिलती है, जिसे कुछ लोगों द्वारा खरीदा जाता है। उस स्थान को बाजार कहा जाता है।

हालांकि अर्थशास्त्र में बाजार शब्द का उल्लेख किसी विशेष स्थान से नहीं है, लेकिन यह ऐसा तंत्र या व्यवस्था है जहाँ किसी वस्तु के क्रेता एवं विक्रेता, एक–दूसरे से जूड़ते है व आर्थिक आदान–प्रदान करने के लिए सक्षम होते है, यहाँ पर किसी वस्तु को लेकर उसके मूल्य व मात्रा को ध्यान रखकर खरीदा व बेचा जाता है, जिसे 'सौदा' भी कहते है।

बाजार के विभिन्न प्रकार को बाजार की संरचना, प्रतिस्पर्धा के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। जैसे एक वस्तु (उत्पाद) के विक्रेताओं की संख्या, उत्पाद की प्रकृति, उत्पाद के खरीददारों की संख्या, उद्योग में प्रवेश पर प्रतिबंध का अंश, बाजार के बारे में ज्ञान और विज्ञापन की सीमा ऐसी कुछ

महत्वपूर्ण विशेषताएँ है जिनके आधार पर हम बाजार के विभिन्न रूपों के बीच अन्तर कर सकते है।

पूर्ण प्रतियोगिता एक बाजार संरचना है, जहाँ उत्पादकों (कंपनियों) द्वारा एक बड़ी संख्या में सजातीय उत्पाद के उत्पादन होता है, इससे किसी व्यक्तिगत फर्म, वस्तु की कीमत (मूल्य) को प्रभावित नहीं कर सकती है।

एकाधिकार एक बाजार संरचना है, जिसमें केवल एक विक्रेता होता है। किसी उत्पाद का, वह ही उसका उत्पादन करता है, जिसे 'एकल उत्पाद' भी कहा जाता है। यहाँ उत्पाद का कोई निकट स्थानापन्न नहीं होता है। एकाधिकार प्रतियोगिता में कुछ तत्व एकाधिकार के होते है व कुछ तत्व प्रतियोगिता के पाये जाते है। एकाधिकार और प्रतिस्पर्धा तत्वों का सम्मिश्रण, एक एकाधिकार प्रतियोगिता बाजार की संरचना को दर्शाता है। दूसरी ओर अल्पाधिकार, अपूर्ण प्रतियोगिता का एक महत्वपूर्ण रूप है। इस बाजार संरचना क्षेत्र में कुछ फर्में ही किसी उत्पाद को विक्रय करती है। अतः उनके बीच तीव्र प्रतिस्पर्धा विकसित होती है।

12.6 शब्दावली

बाजार : बाजार एक ऐसा स्थान है जहाँ क्रेता और विक्रेता इकट्ठा होते है, किसी वस्तु या उत्पाद को क्रय और विक्रय करने हेतु।

पूर्ण प्रतियोगिता : पूर्ण प्रतियोगिता कई फर्मों/कंपनियों की उपस्थिति को बाजार में दर्शाता है। वे सभी समान उत्पादों का विक्रय करती है। यहाँ विक्रेताओं 'मूल्य ग्रहिता' कहा जाता है।

एकाधिकार : एकाधिकार बाजार की वह स्थिति है जहाँ एकल विक्रेता मौजूद रहता है, उसका उत्पाद पर व पूरे बाजार पर उसका नियंत्रण रहता है।

अपूर्ण या एकाधिकार प्रतियोगिता : अपूर्ण प्रतियोगिता के तहत यहाँ पर क्रेताओं और विक्रेताओं की बड़ी संख्या बाजार में मौजूद रहती है। प्रत्येक विक्रेता अपनी स्वयं की मूल्य उत्पाद नीति का पालन कर सकते है।

12.7 बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति

1. .... एक भौतिक स्थान है, जहाँ पर वस्तुओं को खरीदा और बेचा जाता है।
2. एक .... बाजार संरचना में व्यक्तिगत फर्म, बाजार में वस्तु के मूल्य को प्रभावित करने की शक्ति को दर्शाता है।
3. .... बाजार में फर्म मूल्य–निर्माता के बाजार मूल्य–ग्रहिता होती है।
4. .... उस वस्तु का उत्पादन करते है जिनके निकट स्थानापन्न नहीं होते है।

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ) बाजार (ब) प्रतियोगितात्मकता (स) पूर्ण प्रतियोगिता (द) एकाधिकारी

12.9 स्वपरख प्रश्न

1. बाजार से क्या आशय है ?

2. बाजार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए ?
3. एकाधिकार किसे कहते है ?
4. एकाधिकार प्रतियोगिता किसे कहते है ?
5. अल्पाधिकार किसे कहते है ?
6. अपूर्ण प्रतियोगिता क्या होती है ?
7. विशुद्ध प्रतियोगिता से क्या आशय है ?
8. बाजार के विभिन्न प्रकारों की विशेषताओं की तुलना कीजिए ?
9. एकाधिकार और एकाधिकार प्रतियोगिता के मध्य अन्तर को स्पष्ट कीजिए ?

12.10 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रिन्टेक हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली.
2. डी. एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., नई दिल्ली.
3. टी. आर. जैन, ओ. पी. खन्ना एवं वीरसेन, सूक्ष्म अर्थशास्त्र एवं भारतीय अर्थव्यवस्था, बी. के. पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
4. एच. एल. आहुजा, आधुनिक प्रबंधकीय सिद्धान्त, एस चन्द एवं सन्स क. लि., नई दिल्ली.
5. आत्मानन्द, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सैल बुक, दिल्ली.
6. आर. एल. वार्ष्णेय एवं के. एल. माहेश्वरी, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चन्द एवं सन्स, नई दिल्ली.

इकाई 13 पूर्ण प्रतियोगिता एवं एकाधिकार

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 पूर्ण प्रतियोगिता से आशय
13.3 पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ
13.4 पूर्ण प्रतियोगिता फर्म का अल्पावधि विश्लेषण
13.5 पूर्ण प्रतियोगिता फर्म का दीर्घावधि विश्लेषण
13.6 एकाधिकार
13.7 एकाधिकार और पूर्ण प्रतियोगिता के मध्य तुलना
13.8 मूल्य निर्धारण/मूल्य विभेद
13.9 सारांश
13.10 शब्दावली
13.11 बोध प्रश्न
13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.13 स्वपरख प्रश्न
13.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- पूर्ण प्रतियोगिता की परिभाषा की व्याख्या कर सकें।
- पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताओं का वर्णन कर सकें।
- एकाधिकार की परिभाषा की व्याख्या कर सकें।
- मूल्य निर्धारण का वर्णन कर सकें।

13.1 प्रस्तावना

बाजार की संरचना अर्थव्यवस्था के परिपेक्ष में फर्मों के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला दृष्टिकोण है। इस प्रकार, बाजार संरचना जिसके अन्तर्गत एक फर्म संचालित करने के लिए है, फर्म के लक्षण और गतिशीलता, किसी उत्पाद के मूल्य व मात्रा को तय करने में बहुत उपयोगी है।

13.2 पूर्ण प्रतियोगिता का अभिप्राय/आशय

बाजार संरचना को मुख्यतः दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है – पूर्ण प्रतियोगिता एवं अपूर्ण प्रतियोगिता। अपूर्ण प्रतियोगिता को एकाधिकार, एकाधिकार प्रतियोगिता और अल्पाधिकार के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। प्रतियोगिता बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं की संख्या अधिक होती है, व सजातीय उत्पादों की बिक्री बाजार में होती है, यहाँ पर एकल क्रेता या विक्रेता उत्पाद की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता है। एकाधिकार प्रतियोगिता बाजार में केवल एक ही विक्रेता समस्त बाजार को नियंत्रित करता है। अल्पाधिकार बाजार संरचना का वह रूप है, जहाँ बाजार में कुछ ही विक्रेता मौजूद रहते है। एकाधिकार प्रतिस्पर्धा बाजार में, क्रेता एवं विक्रेता की संख्या

यह सुनिश्चित करती है कि जो उत्पाद है वह भिन्न है व उसका मूल्य भी भिन्न है। इस इकाई में, हम पूर्ण प्रतिस्पर्धा एवं एकाधिकार पर चर्चा करेंगे।

पूर्ण प्रतियोगिता साधारणतः वहाँ होती है जहाँ बड़ी संख्या में फर्मे/कंपनिया एक सजातीय उत्पाद का उत्पादन करती है। प्रतियोगिता पूर्ण तभी कहलाएगी, जब हर कम्पनी समझती है कि यह उत्पादन में यह प्रचलित बाजार मूल्य है, जो अलग–अलग निर्माता बाजार में है द्वारा प्रभावित नहीं किया जा सकता है जिनका बाजार में हिस्सा भी बहुत कम रहता है। कई फर्मे और सजातीय उत्पाद के साथ पूर्ण प्रतियोगिता में, कोई एक फर्म इस स्थिति में उत्पाद की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती है, इसलिए मांग वस्तु, प्रचलित मूल्य के इस स्तर पर एक क्षैतिज सीधी रेखा हो जाएगा। हालांकि पूर्ण प्रतियोगिता वास्तविक अर्थव्यवस्था में मौजूद नहीं है, यह प्रबन्धकों और व्यापारियों को उत्पादन के बारे में निर्णय लेने के लिए उपयोगी है– एक उद्योग या एक फर्म के लिए मूल्य निर्धारण में भी उपयोगिता दर्शाता है। यह मांग और मूल्य निर्धारण में आपूर्ति की भूमिका का विश्लेषण करने में मदद करता है।

13.3 पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ

पूर्ण प्रतिस्पर्धी बाजार की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

क्रेताओं और विक्रेताओं की अधिक संख्या होना

यहाँ क्रेताओं और विक्रेताओं की संख्या अधिक होती है, इसलिए एक व्यक्ति क्रेता या विक्रेता नहीं होता है। हालांकि बड़ी संख्या, मूल्य को प्रभावित कर सकती है, उत्पादन या खरीद को लेकर। इस तात्पर्य यह है कि व्यक्तिगत खरीदार या विक्रेता बाजार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

सजातीय/समरूप उत्पाद (वस्तुएँ)

उद्योग में सभी कंपनियाँ एक समान उत्पादों का उत्पादन करती है। यह उत्पाद गुणवत्ता, विविधता, रंग, डिजाइन, पैकिंग और विक्रय की स्थिति के सन्दर्भ में एक समान होते हैं।

फर्म का स्वतंत्र प्रवेश एवं बहिर्गमन

यहाँ फर्मों के बाजार प्रवेश व बाजार से बाहर जाने (बहिगर्मन) की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है, किसी प्रकार की बाधा या अवरोध, पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में नहीं रहता है। प्रवेश या निकास में समय लग सकता है, लेकिन फर्मो को बाहर जाने की स्वतंत्रता रहती है या उद्योग को बाहर स्थनांतरित करने की भी स्वतंत्रता रहती है।

बाजार का पूर्ण ज्ञान

बाजार की स्थितियों के बारे में क्रेताओं ओर विक्रेताओं को पूर्ण ज्ञान होना चाहिए क्रेताओं और विक्रेताओं को परिस्थितियों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, जिसमें फर्म काम कर रही है। उन्हें बाजार में वस्तुओं के लिए उद्घृत कीमत के बारे में भी जानकारी होना चाहिए।

पूर्ण गतिशीलता

चूंकि संसाधनों को चलित (गतिशल) माना जाता है, उन्हें आसानी से बाजार में और बाहर स्थानांतरित किया जा सकता है। सामान (वस्तुएँ) एवं सेवाएँ तथा अन्य संसाधन पूरी तरह से फर्मो के मध्य गतिशील रहते हैं।

परिवहन लागत का अभाव

पूर्ण प्रतिस्पर्धा में, उत्पाद को बाजार के एक हिस्से से दूसरे में ले जाने के लिए परिवहन लागत शून्य रहती है। अर्थात् परिवहन लागतें नहीं होती हे, क्योंकि विभिन्न फर्मे एक दूसरे के बहुत समीप स्थित होती है। विक्रेताओं की बड़ी संख्या और उत्पाद एकरूपता की यह मान्यता है कि पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में सभी व्यक्तिगत (एकल) फर्मे मूल्य लेने का काम करते हैं तथा उन्हें मूल्य ग्रहिता भी कहा जाता है। (फर्म दिए जाने वाले उत्पाद (विक्रेता उत्पाद) पर बाजार मूल्य लेता है, और अपने स्वयं के व्यवहार के माध्यम से मूल्य को प्रभावित करने में सक्षम नहीं है।)

पूर्ण प्रतियोगिता में मांग वक्र बहुत ज्यादा लोचदार रहता है जिसका अर्थ यह है कि फर्म किसी भी वस्तु को प्रचलित बाजार मूल्य पर बेच सकती है। पूर्ण प्रतिस्पर्धी बाजार में फर्म का मांग वक्र बाजार मूल्य P पर क्षैतिज है। (आकृति 13.1) बाजार मूल्य को आपूर्ति एवं मांग बलो द्वारा निर्धारित किया जाता है। एक फर्म के लिए P = AR = ,R जहाँ AR औसत आय होती है और AR सीमान्त आय होती है।

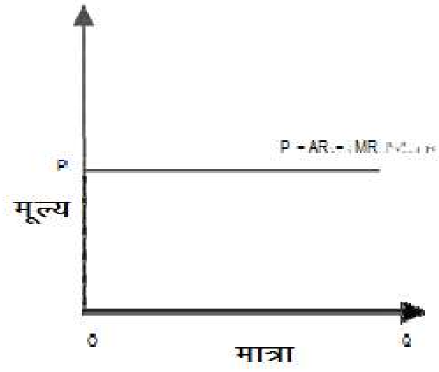

13.4 पूर्ण प्रतियोगिता फर्म का अल्पावधि विश्लेषण

पूर्ण प्रतियोगिता में एक फर्म की अल्पावधि सन्तुलन को कुल आय, कुल लागत, सीमान्त आय और सीमान्त लागत के आधार पर प्राप्त किया जा सकता है। जैसा की फर्मे यहाँ मूल्य–ग्रहिता है, एक उद्योग में एक फर्म एक स्तर पर जहाँ MC = MR के लिए उत्पादन का समायोजन करके अपने लाभ को अधिकतम करने की कोशिश करती है। यहाँ लाभ से आशय है है कि बिक्री द्वारा प्राप्त कुल आय और फर्मे द्वारा की गई कुल लागत के बीच का अन्तर है। एक फर्म का लाभ अधिकतम दो तरीकों से मापा जा सकता हे कुल आय और कुल लागत पद्धति और सीमान्त लागत एवं सीमान्त आय पद्धति के द्वारा। तालिका 13.1 यह दर्शाती है कि कैसे कुल आय और कुल लागत पद्धति के साथ लाभ को अधिकतम किया जा सकता है। लाभ उत्पादन की 5वीं इकाई से सकारात्मक हो जाता है। लाभ में यह सकारात्मक बदलाव जारी है और 8वीं इकाई द्वारा अधिकतम तक पहुंच जाता है, और धीरे–धीरे 9वीं इकाई द्वारा

गिरावट शुरू होती है। और अंत में फर्म का लाभ उत्पाद की 10वीं इकाई के द्वारा नकारात्मक हो जाता है।

जब हम पूर्ण प्रतियोगिता में अधिकतम लाभ को विश्लेषित करते हैं, कुल आय एवं कुल लागत पद्धति की मदद से जैसा की तालिका 13.1 में दर्शाया गया है। फर्म का लाभ एक विशेष अवधि के लिए नकारात्मक होगा जैसा की 4वीं इकाई में होता है उत्पादन के सन्दर्भ में, और 5वीं इकाई में यह सकारात्मक हो जाता है।

तालिका क्रमांक 13.1
कुल लागत कुल आय

बाजार मूल्य	उत्पादन व बिक्री की दर	कुल आय	कुल तय लागत	कुल चर लागत	कुल लागत	लाभ
100	1	100	300	40	340	-240
100	2	200	300	70	370	-170
100	3	300	300	90	390	-90
100	4	400	300	115	415	-15
100	5	500	300	145	445	55
100	6	600	300	185	485	115
100	7	700	300	250	550	150
100	8	800	300	350	650	150
100	9	900	300	510	810	90
100	10	1000	300	750	1050	-50

पूर्ण प्रतियोगिता में, चुंकि फर्म एकल मूल्य लेने वाला होता है, अतः कुल आय वक्र एक सीधी रेखा होती है। तय लागत स्थिर रहती है और इसे बदला नहीं जा सकता। फर्म एक निर्धारित मूल्य स्वीकार करते है, और इसे संतुलित बनाने के लिए उत्पादन में समायोजन किया जाता है। और फर्म एक अधिकतम लाभदायक बिन्दु तक पहुँचने की कोशिश करते है जहाँ कुल आय, कुल कीमत (मूल्य) के बराबर होती है। (आकृति 13.2)

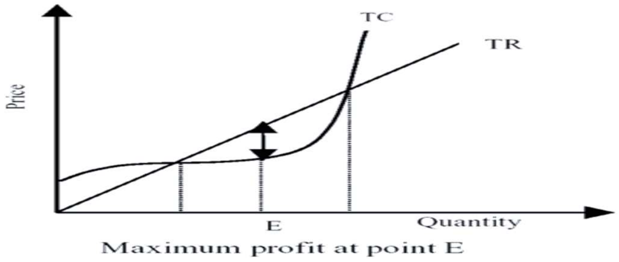

(आकृति 13.2)

तालिका क्रमांक 13.2
सीमांत लागत, सीमांत आय पद्धति (दृष्टिकोण)

उत्पादन एवं बिक्री	सीमांत आय/मूल्य	सीमांत लागत	औसत कुल	इकाई लाभ	कुल लाभ

			लागत		
1	100	40	340	-240	-240
2	100	30	185	-85	-170
3	100	20	130	-30	-90
4	100	25	1038	-38	-15
5	100	30	89	11	55
6	100	40	88	192	115
7	100	65	786	214	150
8	100	100	812	188	150
9	100	160	90	10	90
10	100	245	105	-5	-50

सीमान्त दृष्टिकोण (पद्धति) को तालिका 13.2 की मदद से समझाया गया है।

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि फर्म अपना अधिकतम लाभ अर्जित करता है जब सीमांत लागत मूल्य और सीमांत आय बराबर होती है।

फर्म अपने लाभ को अधिकतम 8वीं उत्पादन के साथ करता है जब सीमान्त लागत और सीमान्त आय बराबर होते है या मूल्य 100 होता है। जबकि सीमांत आय को परिभाषित किया जा सकता है, कुल आय को जोड़, उसमें एक और इकाई की बिक्री, जबकि सीमान्त लागत उत्पादन की एक और इकाई की वजह से कुल लागत का परिणाम, इस प्रकार, एक फर्म का लाभ बढ़ जाता है जब सीमान्त आय, सीमांत लागत से अधिक है और लाभ घटने लगता, तब सीमांत लागत, सीमांत आय से अधिक हो जाती है। इस प्रकार जब सीमांत आय और सीमांत लागत बराबर होती है, लाभ अधिकतम होता है। (आकृति 13.3)

आकृति 13.3 में, फर्म अपने अधिकतम उत्पादन स्तर पर बिन्दु E पर पहुंचता है जहाँ MC = MR और इसके लाभ अधिकतम है। लाभ का अधिकतम विश्लेषण फर्म की सम विच्छेद बिन्दु और कामबन्दी (शट डाउन प्वाइंट) का विश्लेषण करने में मदद करता है।

यदि फर्म अपने औसत परिवर्तनीय लागत मूल्य के नीचे काम कर रहा है, तो यह फर्म अपने परिचालन को बंद करने के लिए बेहतर है। अर्थात् वह फर्म को बन्द कर सकते है।

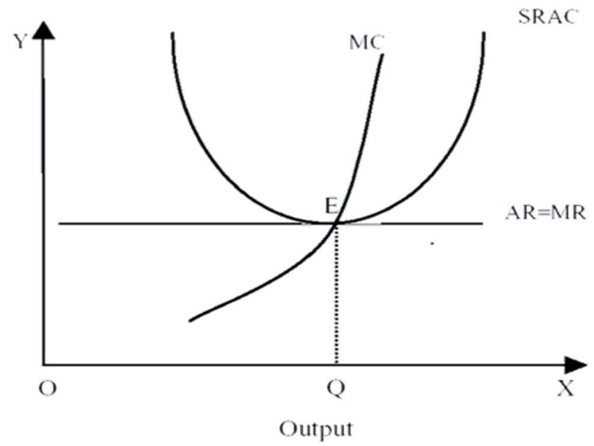

(आकृति 13.3)

13.5 पूर्ण प्रतियोगिता फर्म का दीर्घावधि विश्लेषण

पूर्ण प्रतिस्पर्धा में, लम्बे समय तक चलने वाले संतुलन किसी फर्म के अस्तित्व को लेकर निर्णायक भूमिका निभाता है। इस लम्बी अवधि में, पर्याप्त समय अवधि के कारण, फर्म अपने नुकसान (हानि) की भारपाई कर सकता है और सामान्य लाभ कमा सकता है। हम जानते है, लंबी अवधि में, सभी निवेश परिवर्तनशील रहते है और अपने उत्पादन को लेकर लाभदायक स्थिति में रहते है, यानी यह उत्पादन का सबसे अधिक लाभदायक स्तर हो सकता है।

फर्म मुनाफा (लाभ) कमाते हुए दूसरों को उद्योग में प्रवेश करने के लिए आकर्षित करती है। नई फर्मो के प्रवेश के साथ कुल उत्पादन का विस्तार होता है। इससे अल्पकालीन उद्योग की आपूर्ति वक्र में बदलाव आएगा और कीमत पर जिस पर सभी कंपनियाँ लम्बे समय से शून्य लाभ कमाती है। इससे उद्योग में संतुलन होगा। आकृति 13.4 में, जहाँ उद्योग और फर्म दीर्घकालीन सन्तुलन में रहते है बिन्दु E जहाँ अल्पावधि सीमांत लागत (SMC) = लम्बी अवधि सीमांत लागत (LMC) = लम्बे समय औसत लागत (LAC) = अल्पावधि औसत लागत (SAC) = मूल्य (P) = सीमांत आय (MR) फर्म अपने LAC वक्र पर सबसे कम बिन्दु दर्शाता है और शून्य लाभ कमाता है। इस प्रकार न्यूनतम लागत पर, संसाधनो का सबसे अधिक कुशलता से उपयोग, सामान और सेवाओं का उत्पादन करने के लिए किया जाता है।

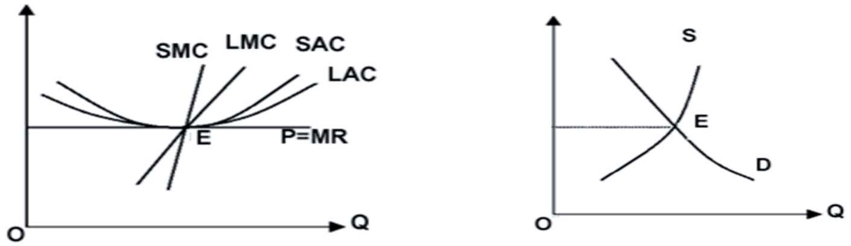

आकृति 13.4 **(a) & (b): Long run Equilibrium Point of a Firm, Long run Equilibrium Point of an Industry**

13.6 एकाधिकार

एकाधिकार बाजार संरचना का एक प्रकार है, जिसमें बाजार में किसी उत्पाद का केवल एक विक्रेता होता है, वहाँ उत्पाद का कोई निकट स्थानापन्न (Closed substitute) उपलब्ध नहीं होता है, यहाँ नई फर्मों के प्रवेश पर अवरोध उत्पन्न होता है। इस प्रकार एकाधिकार बाजार, प्रचलित पूर्ण प्रतियोगिता बाजार स्थिति के बिल्कुल विपरित स्थिति है।

एकाधिकार के अस्तित्व के लिए एक फर्म को एकमात्र निर्माता या एक उत्पाद का एक मात्र विक्रेता होना आवश्यक है एवं उस वस्तु (उत्पाद) जिसका वह उत्पादक है कोई करीबी विकल्प नहीं होना चाहिए। जब बहुत से उत्पादक विभिन्न उत्पाद का उत्पादन करते है, या तो पूर्ण प्रतियोगिता या एकाधिकार प्रतियोगिता में निर्भर करता है कि प्रचलित उत्पाद सजातीय है या विभेदित है। दूसरी ओर जहाँ सिर्फ कुछ उत्पादक है वहाँ अल्पाधिकार का अस्तित्व उत्पन्न होता है एक फर्म के एकाधिकारवादी होने के लिए आवश्यक दूसरी शर्त यह है

कि उस फर्म के द्वारा उत्पादित उत्पाद का बाजार में कोई निकट स्थानापन्न (निकट विकल्प) नहीं होना चाहिए।

एकाधिकार की विशेषताएँ

इसके पश्चात् एकाधिकार के अस्तित्व के लिए, निम्नलिखित बातें आवश्यक है।

1. एक और केवल एक फर्म एक विशेष वस्तु को बेचता है या सेवा प्रदान करता है।
2. फर्म का कोई सीधा प्रतिस्पर्धी बाजार में मौजूद न हो।
3. कोई अन्य विक्रेता जो भी कानूनी, तकनीकी या आर्थिक कारणो के लिए बाजार में प्रवेश नहीं कर सकता है।
4. एकाधिकारवादी मूल्य–निर्माता रहता है, ना कि मूल्य ग्रहीता। वह मांग और लागत की दशाओं की उपस्थिति में जो भी सबसे अच्छा हो उस प्राप्त करने की कोशिश करता है, नई फर्मो के प्रवेश के बिना डर के लाभ की प्रतिस्पर्धा को बनाए रखता है।

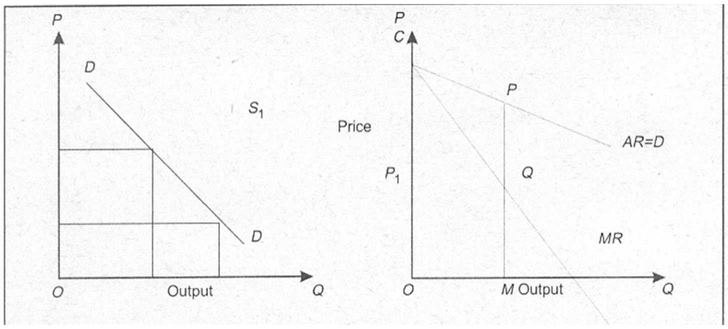

आकृति 13.5

एकाधिकार के मामले में एक फर्म पूरे उद्योग का गठन करता है। इसलिए एकाधिकारवादी फर्म एक उत्पाद के लिए उपभोक्ताओं की पूरी मांग का समाना करता है, एवं झुकाव नीचे की ओर रहता है।

एकाधिकारवादी अपने उत्पाद का मूल्य कम कर सकता है, चुंकि वह अपनी बिक्री व उत्पादन को बढ़ाकर ऐसा कर सकता है। और वह बिक्री के बारे में उनके स्तर को कम करके कीमत बढ़ा सकता है। एक एकाधिकारवादी का मांग वक्र उसका औसत आय वक्र होता है, जिसका झुकाव नीचे की ओर होता है। चूंकि औसत आय वक्र नीचे झुकाव पर होगा, अतः उसके नीचे सीमांत आय वक्र होगा।

अल्पावधि संतुलन

अल्पावधि में, एक एकाधिकारवादी फर्म अपने अल्प अवधि लाभ को अधिकतम व अल्प अवधि हानि को न्यूनतम करने की कोशिश करते है, अगर वह दो निम्नलिखित शर्तों को पूरा कर रहे हैं।

MC = MR एवं

MC का ढलान, MR के ढलान से अधिक होगा उनके प्रतिच्छेदन बिन्दु पर (अर्थात् MC काटेगा, MR वक्र को नीचे की ओर से)

अल्पावधि मांग में मुनाफे के अधिकतमकरण एक स्तर पर जो सीमांत लागत के साथ एक दिए गए मौजूदा संयंत्र में उत्पादन के निर्धारण के लिए सीमांत आय के बराबर है। आकृति 13.6 में SAC और SMC दोनों औसत

अल्पावधि एवं सीमान्त लागत वक्र है। एकाधिकार संतुलन में E जहाँ सीमांत आय बराबर है सीमांत लागत के। जहाँ निर्धारित मूल्य SQ या P है, मुनाफा कमाने के लिए TRQP बराबर है।

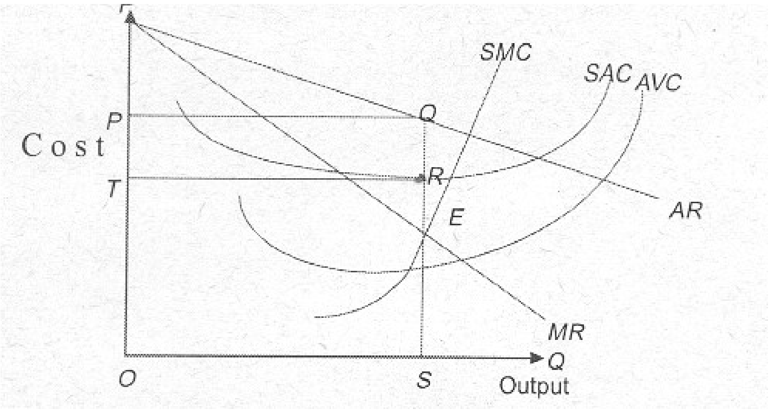

आकृति 13.6

अल्पावधि यह निरन्तर चलता रहेगा जब तक कि मूल्य (कीमत) औसत पर (परिवर्ती राशि) लागत से ऊपर है। यदि कीमत (मूल्य) औसत चर लागत से कम आती है तो एकाधिकार फर्म भी अल्पावधि में बन्द होगा। हानि के मामले में, एकाधिकार सन्तुलन आंकड़ा 13.7 में दिखाया गया है, एकाधिकार फर्म मूल्य OP के साथ उत्पादन (आउटपुट) के OS के स्तर पर संतुलन में है। चूंकि मूल्य (या AR) औसत लागत से छोटी है, यह जो आयत PQGH के क्षेत्र के लिए बराबर है, हानि वसूल करते है।

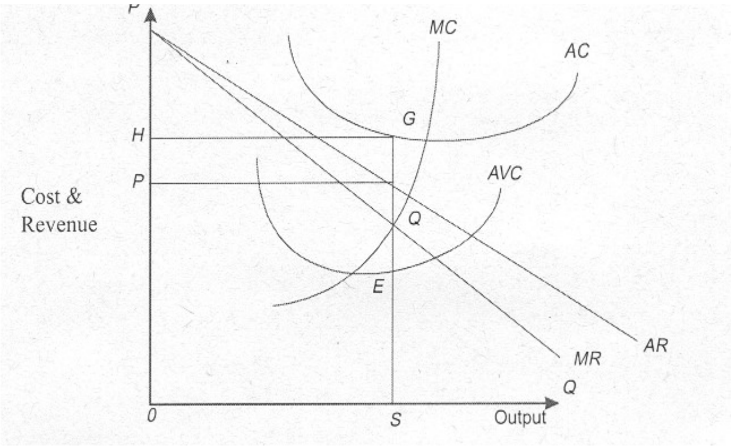

आकृति 13.7

दीर्घ अवधि संतुलन

दीर्घ अवधि में, एक एकाधिकारी फर्म के पास पर्याप्त समय रहता है अपने संयंत्र विस्तार करने के लिये या अपने मौजूदा संयंत्र का पूरी तरह से उपयोग करने के लिये, जो कि लाभ (मुनाफे) को अपने अधिकतम स्तर पर ले जा सकता है। परन्तु यहाँ एकाधिकार के लिए यह आवश्यक नहीं है प्रविष्टि रूप में एक ईष्टतम स्तर तक पहुंचे। इसका आशय है कि एकाधिकार व्यापार में नही रह जाएगा यदि वह दीर्घ अवधि में हानि उठा रहा है। उसके संयंत्र का आकार और किसी भी दिए गए संयंत्र का आकार का उपयोग पूरी तरह से

बाजार की मांग पर निर्भर करते हैं यह LAC के न्यूनतम बिन्दु तक पहुंच सकते है या गिरने पर अपने LAC का हिस्सा रहते है, और कम से कम LAC से परे का विस्तार है, बाजार के परिस्थितियों के आधार पर, एकाधिकार बाजार का आकार की अनुमति नहीं देता कि LAC न्यूनतम बिन्दु करने के लिए विस्तार करे।

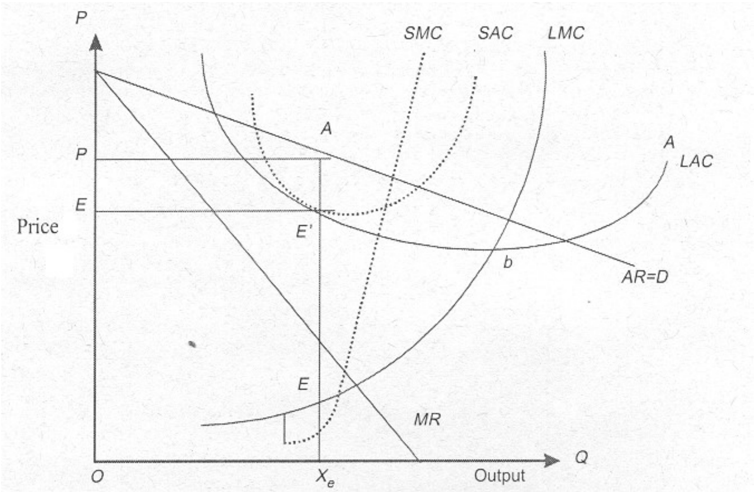

(आकृति 13.8)

ऐसा इसलिए क्योंकि LAC के न्यूनतम बिन्दु के बाई और स्पर्शतया LAC करने क लिए SRAC है। क्योंकि गिरने पर अल्पावधि MC बराबर होना चाहिए। (RMC के भाग के लिए/यह स्तर E पर होगा जब न्यूनतम LAC) b और मौजूदा संयंत्र का दृष्टतम उपयोग a पर होगा, E स्तर पर उपयोग होगा। वहाँ अतिरिक्त क्षमता होगी।

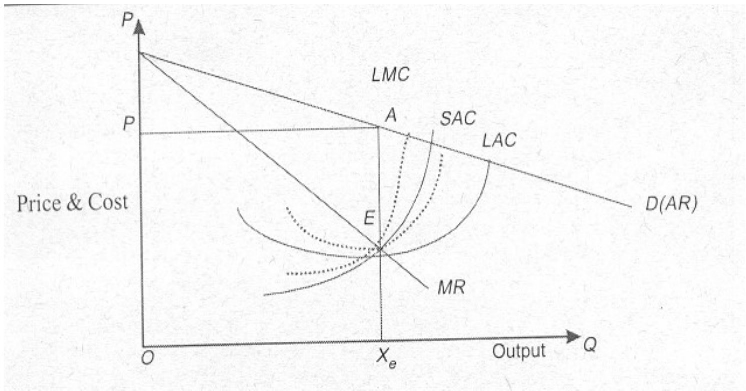

(आकृति 13.9)

जब बाजार का आकार बड़ा होता है तब एक एकाधिकारवादी अपने उत्पाद को अधिकतम करने के लिए अपने संयंत्र का विस्तार करता है और उसका ईष्टतम उपयोग करके उत्पादन को विस्तारित करता है। (आकृति 13.9 में दर्शाया गया है।)

इसका कारण यह है LAC की न्यूनतम बिन्दू के दाई और SRAC और LAC उनके सकारात्मक ढलान के एक बिन्दु पर स्पर्श कर रहे है और

इसलिए भी क्योंकि SRMC व LAC को बराबर होना चाहिए। इस प्रकार एकाधिकारी वो कारणों से मुनाफे को देखते हुए और उच्च लागत की ओर जाता है। क्योंकि वह ईष्टतम आकार से बढ़ा है (संयंत्र) व उसका उपयोग भी किया गया है।

इस प्रकार बड़ा बाजार आकार एक एकाधिकारवादी को ईष्टतम संयंत्र निर्माण और उसे पूर्ण क्षमता के साथ उपयोग करने की क्षमता को दिखाता है।

उपरोक्त स्थितियों को ध्यान में रखते हुए बाजार के आकार (एकाधिकारवादी की तकनीक को देखते हुए) स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी विशेष मामले में उभरने पर बाजार का आकार निर्भर करता है।

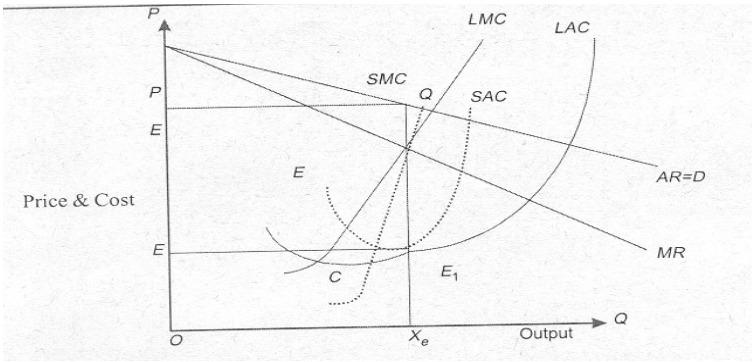

(आकृति 13.10)

13.7 एकाधिकार एवं पूर्ण प्रतियोगिता की तुलना

एकाधिकार और पूर्ण प्रतियोगिता परस्पर विरोधी–स्तम्भ है और वे निम्नलिखित तरीकों से भिन्न होते है–

1. प्रतिस्पर्धा के तहत, उत्पादन में भिन्नता से मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और इस प्रकार सीमांत आय, मूल्य के बराबर होती है। परन्तु अगर एकाधिकारी वस्तु को अधिक बेचना चाहता है, तो उसे कीमत (मूल्य) कम करना चाहिए और इसलिए, $MR<P$ प्रत्येक उत्पादन (आउटपुट) स्तर के लिए होना चाहिए।
2. एकाधिकार मूल्य, प्रतिस्पर्धी मूल्य से अधिक होता है।
3. एकाधिकार उत्पादन प्रतिस्पर्धी उत्पादन से कम है।
4. प्रतियोगिता के तहत एक फर्म किसी उत्पाद को उतना बेच सकता है जितना उसे वर्तमान कीमत (मूल्य) पर पसन्द है। इसलिए फर्म के औसत आय वक्र क्षैतिज अक्ष के लिए एक सीधी रेखा समानांतर है ओर यह पूरी तरह से लोचदार है। लेकिन एकाधिकार के तहत ओसत आय या मांग वक्र नीचे झुका हुआ है, और हमारे पास लोचदार मांग ($ep>I$) है, सन्तुलन $ep = I$ के साथ हो सकता है जब कुल लागत स्थिर है और $MC = O$
5. प्रतिस्पर्धी सन्तुलन के लिए सीमान्त लागत वक्र बिलकुल उपर की ओर झुका हुआ होना चाहिए। लेकिन एकाधिकार संतुलन, MC वक्र के किसी भी आकार के साथ सम्भव है तबसे मांग वक्र क्षैतिज नही है। हालांकि सन्तुलन नहीं हो सकता जब, MC वक्र अधिक तेजी से MR वक्र के सापेक्ष गिर जाता है।

6. पूर्ण प्रतियोगिता के तहत लम्बे समय में कम्पनी केवल सामान्य लाभ अर्जित कर सकती है, लेकिन एकाधिकार के तहत फर्म (कम्पनी) भी लम्बे समय में अधि सामान्य लाभ अर्जित कर सकते है।
7. दीर्घ अवधि में, एकाधिकारवादी का मांग वक्र नीचे की और झुका हुआ रहता है, यह औसत लागत वक्र को स्पर्श नहीं कर सकता है जहाँ AC न्यूनतम है। इससे यह संकेत मिलता है कि फर्म लम्बे समय में अधिकतम उत्पादन स्तर की तुलना में कम उत्पादन करेगा।
8. एकाधिकार प्रौद्योगिकीय परिवर्तन लागू करने के लिए धीमे व अक्षम होने की संभावना को दर्शाते है। शुद्ध प्रतियोगिता में प्रत्येक फर्म पर बल लगाया जाता है या तो वे कुशलता से कार्य करे या नष्ट (समाप्त) हो जावे। इस प्रकार एकाधिकारवाद उपभोक्ता के बिन्दु से देखने पर संसाधनों के अकुशल आवंटन को बढ़ावा देता है। एकाधिकारवादी कीमत को प्रतिबंधित करता है, उसके लाभ को अधिकतम करने के लिए और सीमांत लागत के ऊपर कीमत (मूल्य) स्थित रखती है।

13.8 मूल्य विभेद (अन्तर)

कीमत भेदभाव वहाँ उत्पन्न होता है जहाँ कुल वस्तुएँ या सेवा को एक से अधिक मूल्य पर बेचा जाता है, यहाँ लागत में आनुपातिक अन्तर नहीं दिखाई देता है। उदाहरण के तौर पर एयरलाइन कंपनियाँ इकानामी वर्ग की तुलना में व्यवासायिक वर्ग के लिए एक उच्च कीमत पर उड़ान के लिए टिकट बेचने का कार्य करते है। कंपनियाँ अपने लाभ को बताने के लिए इस तरह के व्यवहार में संलग्न रहती है।

एक फर्म मूल्य–विभेद में संलग्न हो सकता है, जब वह निम्नलिखित शर्तों को पूर्ण करता है।

1. फर्म का उत्पाद या सेवा की आपूर्ति पर कुछ नियंत्रण होना चाहिए, एक पूर्ण प्रतिस्पर्धी फर्म खरीदारों के विभिन्न वर्गों के बीच भेद नहीं कर सकती न ही अलग–अलग कीमत वसूल सकती है, अर्थात् यहाँ कीमत (मूल्य) पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है।
2. यहाँ खरीदारों के विभिन्न खण्डों को मध्यम कीमत पर विभाजित करा जाता है, और एक से दूसरे वर्ग से आसानी से उत्पादों को हस्तांतरण करने में सक्षम नहीं है।
3. यहाँ बाजारों/खरीदारों के पास मांग की अलग–अलग कीमत की लोच होती है। ऐसा विभिन्न आय के स्तर, उत्पाद के स्वाद या उत्पादों की उपलब्धता में अंतर के कारण हो सकता है। उपभोक्तओं के दृष्टिकोण से कम कीमत बाजार, एकाधिकार स्थितियों की तुलना में लाभदायक हो सकता है, जहाँ एक समान कीमत वसूल किया जाता है। हालांकि, उच्च मूल्य वाले बाजारों में उपभोक्ताओं को नुकसान का सामना कर पड़ सकता है। इस प्रकार एक विक्रेता बाजार को अलग और विभिन्न खरीदारों के मध्य विभेदित कर सकते है, कीमत विभेद के तीन प्रकार उत्पन्न होते है।

प्रथम श्रेणी (डिग्री) विभेद

ऐसा माना जाता है कि फर्म को प्रत्येक उपभोक्ता के मांग वक्र के बारे में पता है, वस्तु के सन्दर्भ में, तथा उसी के अनुसार कीमत तय की जाती है किसी वस्तु की, किसी उत्पाद का अधिकतम मूल्य प्राप्त करने के लिए उत्पादन की सीमांत लागत का बराबर होना जरूरी है। किसी भी प्रयास में अधिक की पेशकश करने से लाभ कम हो जाएगा, क्योंकि कीमत, सीमांत लागत के मुकाबले कम हो जाएगी। उदाहरण के तौर पर एक वकील या डॉक्टर क्रमशः ग्राहकों और रोगियों की आय के आधार पर अलग–अलग शुल्क ले सकते है। इसी प्रकार औद्योगिक उपयोग और आवासीय (घरेलू) मांग के लिए विद्युत सेवाओं के लिए पृथक दरे ली जाती है।

द्वितीय श्रेणी (डिग्री) विभेद

यह मूल्य विभेद का अधिक व्यवहारिक रूप है, यहां कंपनियाँ बेचे जाने वाले प्रत्येक इकाई के लिए एक पृथक मूल्य का भुगतान करती है। पृथक खण्ड समूह (ब्लाकों) या उपभोग के अंश के लिए पृथक कीमतों का शुल्क लिया जाता है। यह मूल्य विभेद का एक असंगत रूप है। इसके बजाए प्रत्येक इकाई के लिए पृथक मूल्य की स्थापना या कीमतें पृथक उपभोक्तओं द्वारा खरीदे उत्पादन की मात्रा पर आधारित होती है।

ज्यादातर मामलों में द्वितीय श्रेणी के मूल्य विभेद विद्युत और दूरसंचार जैसे उपयोगिताओं में देखा जाता है।

तृतीय श्रेणी (डिग्री) विभेद

इस प्रकार का विभेद बहुत उत्तम प्रकार का है। इस प्रकार में एकाधिकारवादी विभिन्न बाजारों में ग्राहकों को पृथक करते है और प्रत्येक खण्ड से पृथक मूल्य लेते है। यहाँ बाजार विभाजन स्थान, उम्र, उत्पाद उपयोग या आय पर आधारित हो सकता है। पृथक स्थानों पर कीमत भी पृथक है, हालांकि प्रत्येक स्थान की लागत प्रस्ताव (पेशकश) समान है।

एक फिल्म थियेटर विभिन्न स्थानों के लिए दर्शकों की प्राथमिकताओं के अनुसार अपनी सीट की कीमत पृथक रखता है। इसी तरह रेल्वे और बसों में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से आधा टिकट वसूला जाता है।

13.9 सारांश

बाजार संरचना अर्थव्यवस्था में फर्मों के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला दृष्टिकोण है। बाजार को वृहद तौर पर दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है – पूर्ण प्रतियोगिता एवं अपूर्ण प्रतियोगिता। पूर्ण प्रतियोगिता से आशय यह है कि यहाँ एक प्रचलित उत्पाद के उत्पादन वाली कम्पनियाँ अधिक संख्या में होती है। विक्रेताओं की बड़ी संख्या और उत्पाद की एकरूपता की मान्यता से यह मतलब है कि पूर्ण प्रतियोगितामें कोई व्यक्तिगत फर्म मूल्य ग्रहिता होता है (फर्म दिए गए रूप में ही बाजार मूल्य (कीमत) लेता है, और अपने स्वयं के व्यवहार के माध्यम से मूल्य को प्रभावित करने में सक्षम नहीं है)।

एकाधिकार से यह तात्पर्य है कि जब एक फर्म एक उत्पाद का एकमात्र उत्पादक या विक्रेता है, और उस उत्पाद का कोई निकट स्थानापन्न (करीबी विकल्प) नहीं है। एकाधिकारवादी मूल्य निर्माता होता है न कि मूल्य

ग्रहिता उत्पाद के सन्दर्भ में, मांग व लागत की दशाओं की उपस्थिति मे वह सबसे अच्छा प्राप्त करने की कोशिश करता है। नई फर्मो के बाजार प्रवेश से दूर लाभ प्रतिस्पर्धा में बिना किसी डर के, एक एकाधिकारवादी अपने को बाजार में बनाए रखता है।

दीर्घ अवधि में, एक एकाधिकारवादी फर्म के पास अपने संयंत्र का विस्तार करने या पूरी तरह से अपने मौजूदा संयंत्र का उपयोग करने का पर्याप्त समय रहता है इस प्रकार वह अपने लाभ को अधिकतम प्राप्त कर सकता है। यदि बाजार में एकाधिकारवादी अपनी बिक्री को अधिक करना चाहता है तो उसे मूल्य को कम करना होगा। यहाँ मूल्य विभेद होता है अर्थात् जब एक ही उत्पादक या सेवा एक से अधिक पृथक मूल्य पर बेचा जाता है व यहाँ लागत में अनुपाति अन्तर नही दिखाई देता है।

13.10 शब्दावली

सन्तुलन मूल्य

वह मूल्य जिस पर एक उत्पाद के उपभोक्ताओं द्वारा मांग की मात्रा, एक उत्पादक के विक्रेता द्वारा आपूर्ति की मात्रा के बराबर हो उसे मूल्य संतुलन कहा जावेगा।

स्वतंत्र प्रवेश

एक बाजार में नई फर्मे के प्रवेश में अवरोध का अभाव।

बाजार संरचना

एक विशेष संरचना जिसमें खरीदारों की संख्या व विक्रेताओं की संख्या के सापेक्ष रहती है। उनका आकार, उत्पाद और बाजार में कंपनियों (फर्मो) के प्रवेश की सरलता की श्रेणी की प्रकृति का निर्धारण ही बाजार संरचना कहलाता है।

सामान्य लाभ

स्वतंत्र प्रवेश की शर्तो के तहत सामान्य लाभ की दर, जो कंपनियों उद्योग छोड़ने के लम्बे समय से रखने के लिए होता है।

मूल्य (कीमत) विभेद (अन्तर)

यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब एक ही उत्पाद की कीमत में एक अनुपाति अन्तर को प्रतिबिंबित नहीं करता है, और उसे एक से अधिक (पृथक) मूल्य पर बेचा जाता है।

मूल्य विभेद की पहली श्रेणी (डिग्री)

एक फर्म को वस्तु (उत्पाद) के लिए प्रत्यके उपभोक्ता के मांग वक्र के बारे में पता है और तदनुसार कीमत तय की जाती है।

मूल्य विभेद का द्वितीय श्रेणी (डिग्री)

विभेद के इस प्रकार के तहत, विभेदित कीमतों को वस्तुओं और सेवाओं की पृथक राशि के रूप में वसूला जाता है।

मूल्य विभेद का तृतीय श्रेणी (डिग्री)

यहाँ एक एकाधिकारी फर्मे उपभोक्ताओं को पृथक बाजार के अनुसार विभिन्न भागों में विभाजित कर देते है और विभिन्न भागों के अनुसार उत्पाद का मूल्य वसूलते हैं।

13.11 बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति

अ. पूर्ण प्रतियोगिता जहाँ पर बड़ी संख्या में फर्मे .... उत्पादों का उत्पादन करती है।

ब. पूर्ण प्रतियोगिता में परिवहन व्यय किसी उत्पाद को बाजार के एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने हेतु.............. होते है, ।

स. एक फर्मे क लिए एकाधिकारी होने के लिए आवश्यक शर्त यह है कि बाजार में उस फर्म द्वारा उत्पादित उत्पाद का कोई .... न मौजूद हो।

द. .... मूल्य में वहाँ उपस्थिाति होता है, जहाँ पर एक ही उत्पाद या सेवाओं के लिए पृथक शुल्क वसूला जाता है। (एक से अधिक मूल्य पर बेचा जाता है।)

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

अ. सजातीय / समरूप **ब.** शून्य

स. निकटतम स्थानापन्न (निकटतम विकल्प) **द.** विभेद (भेदभाव)

13.13 स्वपरख प्रश्न

1. पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. प्रतियोगी फर्म के सन्तुलन के हानि की दशा की व्याख्या कीजिए।
3. अल्पावधि में पूर्ण प्रतियोगिता के तहत फर्म की कीमत ओर उत्पादन निर्धारण पर चर्चा करें।
4. प्रतिस्पर्धी फर्मे के लम्बे समय तक चलने वाले संतुलन को दिखाएँ।
5. एकाधिकार और प्रतिस्पर्धा की दक्षता को समझाइये। मूल्य, उत्पादक और लागत के मामलों में एकाधिकार कैसे नियंत्रित किया जाए?
6. मूल्य विभेद (भेदभाव) क्या है? इसके क्या उद्देश्य हैं?

13.14 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रिन्टेक हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली.
2. डी. एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., नई दिल्ली.
3. टी. आर. जैन, ओ. पी. खन्ना एवं वीरसेन, सूक्ष्म अर्थशास्त्र एवं भारतीय अर्थव्यवस्था, बी. के. पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
4. एच. एल. आहुजा, आधुनिक प्रबंधकीय सिद्धान्त, एस चन्द एवं सन्स क. लि., नई दिल्ली.
5. आत्मानन्द, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सैल बुक, दिल्ली.
6. आर. एल. वार्ष्णेय एवं के. एल. माहेश्वरी, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चन्द एवं सन्स, नई दिल्ली.

इकाई 14 एकाधिकार प्रतियोगिता

इकाई की रुपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताएँ
14.3 अल्पावधि में फर्म का संतुलन
14.4 दीर्घअवधि में फर्म का संतुलन
14.5 अल्पाधिकार
14.6 सारांश
14.7 शब्दावली
14.8 बोध परक प्रश्न
14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.10 स्वपरख प्रश्न
14.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताओं का वर्णन कर सकें।
- अल्पावधि एवं दीर्घअवधि में किसी फर्म के सन्तुलन की व्याख्या कर सकें।
- अल्पाधिकार का वर्णन कर सकें।

14.1 प्रस्तावना

एकाधिकार प्रतियोगिता बाजार की वह स्थिति है, जहां बड़ी संख्या में स्वतंत्र फर्मे मौजूद रहती है, जो खरीदारों को दृष्टिगत रखते हुए विभेदित उत्पादों की आपूर्ति करते हैं, प्रतिस्पर्धी कंपनियों के उत्पाद बन्द विकल्प होते हैं न सही विकल्प क्योंकि खरीदारों द्वारा उन्हें एक समान रूप से नहीं माना जाता है। इस प्रकार की बाजार संरचना में विक्रेता तो कई होते है, लेकिन सामान्य वस्तु की आपूर्ति के एक बड़े हिस्से पर नियंत्रण करने की स्थिति में नहीं होता है, जो सभी को अपने उत्पाद की बिक्री की पेशकश कर रहे होते है। उत्पाद की बिक्री विभिन्न ब्रांड नामों के साथ की जाती, प्रत्येक ब्रांड अन्य ब्रांडों से आंशिक अलग रहता है। इसलिए प्रत्येक फर्म एक विशेष ब्राण्ड या 'उत्पाद' का एकमात्र उत्पादक होता है। यह विशेष ब्रांड एकाधिकार सम्बन्ध को दर्शाता है। चूंकि विभिन्न ब्राण्डस् एक दूसरे के निकट स्थानापन्न है, तथापि इस ब्रांडों के 'एकाधिकारी' उत्पादकों की एक बड़ी संख्या एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा में शामिल है। इस प्रकार की बाजार संरचना जहां प्रतिस्पर्धा बड़ी संख्या में एकाधिकारियों के मध्य उत्पन्न होती है उसे ' एकाधिकार प्रतियोगिता' कहा जाता है।

14.2 एकाधिकार प्रतियोगिता की विशेषताएँ

एकाधिकार प्रतिस्पर्धा स्थिति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित है।

विक्रेताओं की बड़ी संख्या

एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा के अन्तर्गत विक्रेताओं या फर्मो की संख्या अधिक होती है। प्रत्येक विक्रेता का वस्तु की कुल पूर्ति में महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसके परिणामस्वरूप अकेला विक्रेता वस्तु की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता। प्रत्येक फर्म एक–दूसरे से स्वतंत्र होती है तथा उसे अपनी प्रतियोगी फर्म का भय नहीं रहता है।

वस्तु विभेद

एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा की दूसरी विशेषता वस्तु विभेद होती है। सभी वस्तुएँ एक सी नहीं होती है। उनमें अन्तर पाया जाता है। ये वस्तुएँ एक दूसरे की निकट स्थानापन्न होती है, लेकिन पूर्ण स्थानापन्न नही होती है। वस्तु विभेद कई रूपों में देखने को मिलता है, जैसे– ट्रेडमार्क, पैकिंग में भिन्नता रंग तथा रूप में अन्तर, डिजाइन में अन्तर, विक्रेता की ख्याति, विक्रय स्थल का निकट होना, ग्राहक की खास सुविधाएँ, वस्तु की मरम्मत, खराब होने पर वस्तु की वापसी वस्तु को क्रेता के घर पहुंचाना, विज्ञापन व अन्य बिक्री कलाओं का उपयोग आदि। इन अन्तरों के कारण ग्राहक वस्तु में भेद करने लगता है तथा एक अमुक वस्तु के उपभोग से उसका लगाव हो जाता हे जिससे संबंधित वस्तु के विक्रेता की स्थिति एकाधिकारी जैसे हो जाती है।

उद्योग में नई फर्मो के प्रवेश एवं पुरानी फर्मो के बहिर्गमन की स्वतन्त्रता

एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा के अन्तर्गत प्रत्येक फर्म का आकार छोटा होता है, तथा निकट के स्थानापन्न की वस्तु का उत्पादन करती है। वे उत्पादन सम्बन्धी निर्णय लेने में स्वतन्त्र होती है। ऐसी स्थिति में लाभ होने पर दीर्घकाल में नई फर्मे उद्योग में प्रवेश करने तथा हानि होने पर उद्योग का बहिर्गमन करने की पुरानी फर्मो को छूट होती है। जिसके फलस्वरूप अल्पकाल में चाहे फर्म लाभ, हानि एवं सामान्य लाभ में से किसी भी स्थिति में हो सकती है, लेकिन दीर्घकाल में इस विशेषता के कारण प्रत्येक फर्म को सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है।

मांग की उच्च लोच

जब उत्पाद भिन्न–भिन्न होते है, तब प्रत्येक प्रतिस्पर्धी ब्राण्ड के निर्माता (उत्पादक) का उसके उत्पाद की कीमत पर कुछ नियंत्रण रहता है और मूल्य नियंत्रण के लिए अपनी शक्ति का उपयोग करते है जो कि किस हद तक खरीदार किस दृढ़ता के साथ उसके ब्राण्ड के साथ जुड़े होते है। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिगत (एकल) फर्म अपनी एकाधिकार फर्म शक्ति को दर्शाती है, अतः उनका मांग वस्तु अधिक लोचदार होता है एक एकाधिकार फर्म की तुलना में। इसका तात्पर्य यह है कि उत्पाद की कीमत में एक छोटी सी कमी से उत्पाद की मांग में बड़ी वृद्धि हो सकती है। नतीजतन, एकाधिकार प्रतियोगिता के अंतर्गत, एक सफल फर्म मांग या औसत आय वक्र एक उत्तरोत्तर (धीरे–धीरे) गिरने की अवस्था को दर्शाता है। यह अत्यधिक लोचदार, पूर्णत न होकर। अतएव फर्म के सीमान्त आय वक्र भी गिरता है और उत्पादन के सभी स्तरों पर औसत आय वक्र के नीचे स्थित रहता है। यह सम्बन्ध दर्शाता है कि एकाधिकार प्रतिस्पर्धा, पूर्ण प्रतिस्पर्धा से भिन्न है।

फर्मे विभेदित उत्पादों की बिक्री विभिन्न ब्राण्ड नामों के तहत करती है, यहां प्रतिस्पर्धा बिक्री मूल्य के बदलाव को न करते हुए उत्पाद की गुणवत्ता

(उत्पाद मिलता) और विज्ञापन में परिवर्तन या लागत की बिक्री में बदलाव के माध्यम से बाजार में प्रतिस्पर्धा की जाती है।

इस प्रकार, एकाधिकार प्रतियोगिता के अन्तर्गत, एक एकल फर्म अपने लाभ को अधिकतम स्थिति में लाने हेतु तीन नीतियों का निष्पादित करती है, ये तीन परिवर्ती राशि है, मूल्य, उत्पाद की गुणवत्ता ओर बिक्री लागत (इसके विपरित, पूर्ण प्रतियोगिता में प्रतियोगिता केवल मूल्य भिन्नता के माध्यम से होती है।)

14.3 अल्पावधि में फर्मे का सन्तुलन

अल्पावधि में, फर्मे का संतुलन की अतिरिक्त अवधारणा यह है कि यहाँ फर्मो का प्रवेश व निर्गमन सम्भव नही है। एकाधिकार प्रतिस्पर्धा में, प्रत्येक फर्मे का ध्यान वस्तु के मूल्य पर व उत्पादन पर जो अपने मुनाफे से बढ़ता हे पर केन्द्रित रहता है। सन्तुलन में सीमान्त लागत (MC) सीमान्त आय (MR) के बराबर होती है।

आकृति 14.1 (अ) आकृति 14.1 (ब) आकृति 14.3 (स)

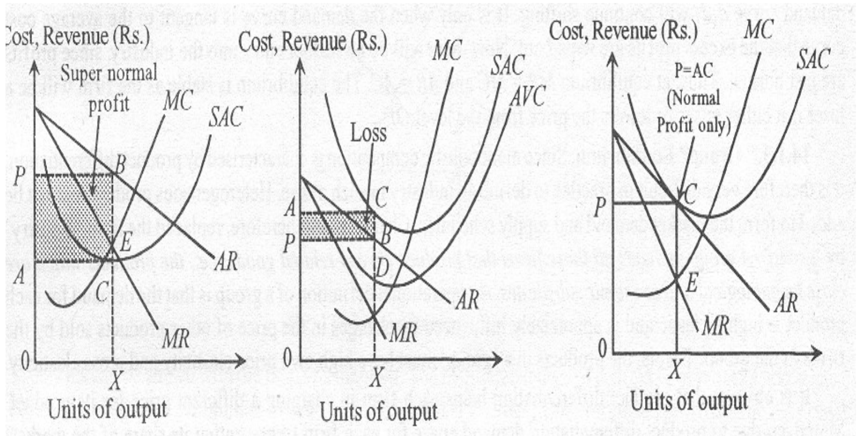

आकृति 14.1 (अ) में E सन्तुलन बिन्दु है जहां फर्म OX उत्पादन को उत्पादित करता है और OP मूल्य पर बेचता है। यहां औसत लाभ AP के बराबर होता है, और कुल ACBP होता है। यह फर्म द्वारा अर्जित अति सामान्य लाभ है।

सभी फर्मे अति सामान्य लाभ अर्जित नहीं कर सकती है, कुछ फर्मे को हानि भी उठानी पड़ती है क्योंकि उच्च लागत होने कारण यह होना स्वाभाविक है।

आकृति 14.1 (ब) में फर्मे का सन्तुलन OA औसत मूल्य पर OX उत्पादन को उत्पादित करता है और OP मूल्य पर बेचता है, इसलिए AP पर औसत हानि उठाना पड़ती है इस प्रकार APCB पर कुल हानि वसूल हो जाती है। कुछ अन्य फर्मे केवल सामान्य लाभ ही प्राप्त कर सकती है, फर्म के सन्तुलन स्तर पर उत्पादन AR = AC होगा। आकृति 14.3 (स)

चूंकि यहां उत्पाद विभेदित (भिन्न) है, सभी फर्मे समान मात्रा में उत्पादन एवं समान मूल्य वसूलती है। हालांकि जब उत्पाद निकट के स्थानापन्न होते हैं तब प्रत्येक फर्मो द्वारा वसूला गया मूल्य (उत्पाद) लगभग

समान रहता है, जब दूसरी फर्मो द्वारा इसी तरह के उत्पादों का उत्पादन होता है।

14.4 दीर्घअवधि में फर्म का संतुलन

एकाधिकार प्रतियोगिता के तहत किसी फर्म के दीर्घकालिक सन्तुलन को लेकर शर्ते व प्रक्रिया इस अवधारणा पर आधारित रहते है कि फर्मो के बीच प्रतिस्पर्धा केवल बिक्री लागत और उत्पाद की गुणवत्ता को स्थिर रखने के लिए होती है। एवं प्रतिस्पर्धी के माध्यम केवल मूल्य भिन्नता पर आधारित होते हें इस प्रकार हम मान ले कि–

(अ) सभी फर्मो के मांग वक्र एक समान होंगे। यह भी धारणा रखे कि सभी कम्पनियों के बाजार अंश भी समान होंगे व कुल बाजार की मांग के एक स्थिर अनुपात के बराबर होंगे। इसका तातपर्य यह है कि अलग कुल बाजार मांग Q है तो एक एकल फर्म की मांग q होगी तब $q = KQ$, जहां K सभी फर्मो के लिए एक स्थिराक है।

(ब) दोनों औसत और सीमान्त लागत वक्र सभी फर्मो के लिए एक समान है।

यह दोनों अवधारणाएँ यथार्थवादी नही हो सकती है, लेकिन हम उन्हें तार्कित सुविधा के लिए एकाधिकार प्रतियोगिता के तहत एक फर्म के दीर्धावधि संतुलन विश्लेषण करने के लिए उपयोग कर सकते है।

चेम्बरलिन ने तीन अलग–अलग मॉडल समरूपता का विकास किया एकाधिकार प्रतियोगिता के सन्दर्भ में ।

- जब प्रतियोगता केवल नई फर्मो के प्रवेश के माध्यम से जगह ले लेती हें
- जब प्रतियोगिता केवल मूल्य भिन्नता (मूल्य काटना) के माध्यम से जगह ले लेती है।
- जब प्रतियोगिता मूल्य परिवर्तन और नई प्रविष्टि के माध्यम से उत्पन्न होती है।

दीर्धावधि सन्तुलन नई प्रविष्टि प्रतियोगिता के माध्यम द्वारा

एकाधिकार प्रतियोगिता के तहत, फर्मो द्वारा बेचे जा रहे विभेदित उत्पादो की संख्या बढ़ी है और प्रत्येक फर्म की संबंधित बाजार में हिस्सेदारी नगण्य है। इसलिए, बाजार में एक नई फर्म की प्रविष्टि किसी मौजूदा कंपनियों की बिक्री (या मांग) पर कोई प्रतिकूल असर उत्पन्न नहीं होगा। स्थापित फर्मो के पास प्रतिक्रिया करने का कोई कारण नही होता है, नई फर्मो के प्रवेश को लेकर अपनाने या हतोत्साहित करने को लेकर भी। नई फर्मो के प्रवेश को लेकर कोई कानूनी या आर्थिक बाँधा नही होती है, मौजूदा दूसरी फर्मो द्वारा लिया जा रहा उच्च लाभ, नई कमपनियों को बाजार मे प्रवेश करने के लिए आकर्षित करता है।

आकृति 14.2

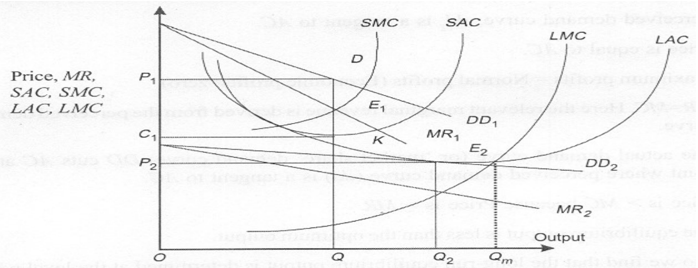

नई फर्मो के प्रवेश से निर्मित प्रतिस्पर्धा व एक फर्म के दीर्धावधि चलने वाले संतुलन की प्रक्रिया को आकृति 14.2 की मदद से समझाया गया हे।

फर्म का मांग वक्र प्रारंभिक अवस्था में नीचे की और झुका हुआ है DD1 और MRI सीमान्त आय वक्र है। SMC और SAC अल्पावधि सीमान्त लागत, है एवं अल्पावधि औसत लागत वक्र है। हम देखते है कि SMC वक्र बिन्दु E1 पर नीचे से ME को काटता है। फर्म का अधिकतम लाभ उत्पादन Q1 पर होना और कीमत OP और QID पर लेता है। Q1 उत्पादन SAC = OCI पर होगा। यह अति सामान्य लाभ = क्षेत्र PIDKCI बनाता है।

मौजूदा फर्मो के अति सामान्य लाभ, नई फर्मो को इस बाजार में प्रवेश के लिए प्रेरित करते है। इससे फर्मे एवं ब्राण्डों की संख्या में इजाफा होता है, प्रत्येक फर्म में बाजार की हिस्सेदारी को लेकर गिरावट आती है और प्रत्येक फर्म सामान (एक ही) मूल्य पर कम बिक्री करती है। इसलिए प्रत्येक एकल फर्म का मांग वक्र नीचे की तरफ, व शेष स्वयं के समानतर रहता है। नई फर्म की प्रविष्टि से प्रतिस्पर्धा करने की यह प्रक्रिया के रूप में लाभ सामान्य फर्म द्वारा अर्जितम सामान्य से अधिक कर रहे है व लम्बे समय तक जारी रहता है। इसलिए मांग वक्र लम्बे समय तक AC वक्र के ऊपर रहता है। जब नई फर्मे की प्रविष्टि से प्रतिस्पर्धा करना बन्द हो जाएगा व हर फर्मे अपने दिर्धावधि उत्पादन संतुलन तक पहुंच जाएगा जब मुनाफा सामान्य ही होगा, और कीमत (मूल्य) बराबर होगा दीर्धावधि औसत लागत के। यह तब होता है जब एकल फर्म का मांग वक्र DD2 है जो बिन्दु E2 पर LAC वक्र की स्पर्श रेखा हो जाता है। सीमान्त आय वक्र MR2 वक्र DDZ व मांग वक्र के समान है। यहां LMC, MRZ को बिन्दु G पर नीचे की ओर से काटता है व उत्पादन Q2 होगा। इस प्रकार, प्रत्येक फर्म अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकते है केवल सामान्य लाभ जो LAC में शामिल किया गया हैं स्पर्शत्या E2 बिन्दु हे जहां उत्पादन Q2 है और मूल्य P2 है, इसलिए एक फर्म दिर्धावधि चलने की संतुलन स्थिति में है।

जब केवल नई फर्मे के प्रवेश से प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होती है, तब एकाधिकार प्रतियोगिता के अन्तर्गत फर्मे का दिर्धावधि तक चलने वाला सन्तुलन निम्नलिखित परिस्थितियों में पहुंच जाता है।

1. मूल्य = AR = LAC = OP2
2. MR = LMC = GQ2
3. अधिकतम लाभ = सामान्य लाभ

हालांकि फर्म की मांग या औसत आय वक्र गिरता है, तब मूल्य सीमान्त आय से अधिक है। इसलिए, एकाधिकार प्रतियोगिता के तहत, दिर्धावधि सन्तुलन मूल्य LAC, यह LMC से बड़ा है। यह इसलिए है क्यों कि सन्तुलन पर MR = LMC किन्तु मूल्य >MR (पूर्ण प्रतियोगिता में मूल्य = न्यून्तम LAC = LMC) इसके अलावा जब किसी फर्म का मांग या औसत आय DD2 उत्पाद विभेद के कारण गिर रहा है, यह U आकार के LAC वक्र की स्पर्श रेखा होगा LAC भी गिर रहा होता है। जैसा की आकृति 14.2 में दर्शाया गया है। दिर्धावधि संतुलन की कि स्थित E2 जो कि बिन्दु न्यूनतम LAC के बाई ओर है। इस प्रकार, दिर्धावधि चलने वाले सन्तुलन उत्पादन Q2 ईष्टतम उत्पादन से कम है, Qm (जहां LAC न्यूनतम है)

Qm और Q_2 = (OQm - PQ2) के मध्य का अन्तर अधिक या कम उपयोग की गई क्षमता की सीमा को दर्शाता है। अतिरिक्त क्षमता के साथ सन्तुलन उत्पाद विभेद और एकाधिकार प्रतिस्पर्धा का आवश्यक परिणाम है।

दीर्घ अवधि के सन्तुलन जब प्रतियोगिता मूल्य विविधता के माध्यम से होती है

मूल्य परिवर्तन के माध्यम से प्रतिस्पर्धा करने की प्रक्रिया समझाने के उद्देश्य से, हर एकल फर्म द्वारा दो मांग वक्रो का उपयोग किया जाता हैं

मांग में परिवर्तन बुनियादी धारणा है कि अपने प्रतियोगियों का पालन नही करेगे जब तक कि किए गए मूल्य में परिवर्तन से उत्पन्न कीमत कम कर दे सकते हैं फर्म को उम्मीद है कि उसकी मांग में वृद्धि इसकी कीमत में कमी के अनुपात में अधिक होगी कथित मांग वक्र बेहद लोचदार है हालांकि पूरी तरह से लोचदार नही है। यह गिरता है, लेकिन बहुत धीरे–धीरे, यह दर्शाता है कि फर्म को इसके मूल्य में कटौती करने के लिए प्रेरित क्यों किया जाता है।

यह निर्णय लेने वाला मांग वक्र है। क्योंकि फर्म वस्तु की मांग के आधार पर ही मूल्य में कटौती करते है। इसे मूल्य में परिवर्तन के परिणाम के रूप में मान लेना चाहिएं हालांकि प्रत्येक फर्म का बाजार में हिस्सा उतना ही कम है, प्रत्येक फर्म इस धारणा पर कार्य करता है कि जब वह मूल्य कम देते है तो उसकी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की कीमते भी स्थिर रहती है इसलिए प्रत्येक फर्म उसी धारणा के आधार पर वस्तु की कीमत कम कर देता है और इसके परिणामस्वरूप बाजार में सभी फर्म एक साथ लेकिन स्वतंत्र रूप से (यानी प्रतिशोध में नही) कीमतें लगातार कम कर देते है। प्रत्येक फर्म उसके कथित मांग वक्र के आधार पर कार्य करता है। नतीजतन मांग में वास्तविक वृद्धि, कीमत से कमी के परिणाम को दर्शाता है जो कि प्रत्येक फर्म द्वारा की गई 'कल्पना' के मुकाबले बहुत कम है।

सभी कंपनियों द्वारा कीमत में इस तरह की एक साथ में कमी से उत्पन्न मांग में वास्तविक परिवर्तन, एक व्यक्तिगत फर्म की वास्तवक मांग को कहा जाता हे जो कि आगे दर्शाया गया है।

आकृति 14.3

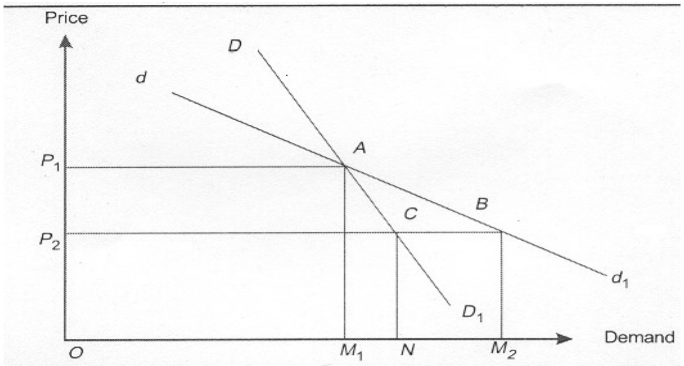

आकृति 14.3 में dd1 कथित मांग वक्र दिखाई देता है। और DD1 वास्तविक मांग वक्र को दर्शाता है।

जब मूल्य P1 से P2 की ओर कम होता है तब फर्म या मानती है कि मांग में वृद्धि हुई है M1 से M2 तक, लेकिन जैसा की DD1 द्वारा दिखाया गया है, यह वास्तव में केवल M1 M तक बढ़ती हैं अनुमानित मांग वक्र 'वास्तविक' मांग वक्र से अधिक लोचदार हैं इस कारण यह है कि पूर्व में 'कथित' मांग इस अवधारणा पर चलती है कि एक केवल एक फर्म ही अपना मूल्य परिवर्तन करती है, व प्रतिद्वन्द्वी अपनी कीमतों को स्थिर ही रखते है। हालांकि वास्तविक मांग वक्र, मांग के वास्तविक परिवर्तन को दर्शाता है, जब सभी फर्मे लगातार परन्तु स्वतंत्र रूप से अपनी कीमतों में परिवर्तन करती है जो कि एक अवधारणा पर आधारित होते है।

मूल्य विभेदता (भिन्नता) और नई प्रविष्टि के माध्यम से प्रतियोगिता

हमने देखा है कि वास्तविक मांग वक्र DD एक व्यक्तिगत फर्म के पूर्ण बाजार हिस्से का दर्शाता हैं क्योंकि हम ऐसा मानते है कि स्थिति और मांग वक्र का आकार प्रत्येक फर्म के लिए सममित (एक समान) है, सभी फर्मो की बाजार में हिस्सेदारी पूर्ण मात्रा या उत्पादन के आकार की दृष्टि से बराबर मानी जाती हैं यह फर्मो की संख्या से विभाजित कुल बाजार की मांग के अनुपात के द्वारा दिया जाता है। बाजार में बड़ी कम्पनियों की संख्या, प्रत्येक फर्म के छोटे पूर्ण बाजार में हिस्सेदारी। DD की स्थिति अर्थात् Y अक्ष से इसकी दूरी, बाजार में फर्मो की संख्या पर निर्भर करता हैं वास्तविक मांग वक्र DD जब Y अक्ष के नजदीक आता है तो फर्मो की संख्या बढ़ जाती हैं और Y अक्ष से दूर जाने पर फर्मो की संख्या कम हो जाती हैं इसका तात्पर्य यह है कि DD जब बाई और होगा तो कुछ परिवर्तन होगा नई फर्मो का उद्योग में प्रवेश होगा। और यह दाई और दिशा में परिवर्तित होगा तब मौजूदा कम्पनियाँ फर्म/उद्योग छोड़ देगी।

जैसा की आकृति 14.4 में दर्शाया गया है, प्रारम्भिक, वास्तविक मांग वक्र DD1 द्वारा दिखाया गया है। यह बिन्दु J पर AC वक्र को काटता है। DD1 प्रारम्भिक कथित मांग वक्र बिन्दु B1 पर DD1 को काटता है। जैसा कि केस–2 में बताया गया है, फर्मो में प्रतिस्पर्धा मूल्य भिन्नता को लेकर होती है जब तक कि कथित मांग वक्र dd1, dd2 नही हो जाता हैं जो कि बिन्दु E

पर AC की स्पर्श रेखा हो जाता हैं बिन्दु E से मूल्य का पता चलता है जो कि = OP2, हालांकि बिन्दु E वास्तविक मांग वक्र DD1 पर नही होता है। इसलिए फर्म के अनुरूप बिन्दु E पर वास्तविक मांग DD1 पर P2R है। अब बिन्दु R जो कि DD1 पर है AC वक्र के ऊपर स्थित है।

इसलिए उत्पादन PR2 दर्शाता है अति सामान्य लाभ P2RGC2 क्षेत्र के द्वारा। यह अति सामान्य लाभ उद्योग में नई फर्मो को प्रवेश के लिए प्रेरित करता है। जब उद्योग में फर्मो की संख्या में वृद्धि हो जाती है, तब फर्मो की बाजार में पूर्ण हिस्सेदारी कम हो जाती है व वास्तविक मांग वक्र DD1 बाई और विस्थापित हो जाता हैं यह प्रक्रिया जब तक चलती है जब DD1, DD2 की स्थिति में आ जाता है जो कि AC वक्र को बिन्दु E पर प्रतिछेद करता है, जहां कथित मांग वक्र DD2, AC की स्पर्श रेखा है। इस बिन्दु पर लाभ सामान्य होता है। कथित DD2 मांग वक्र के आधार पर और साथ ही वास्तविक मांग वक्र DD2 के आधार पर सामान्य है। यह कि, वास्तविक मांग वक्र और कथित मांग जब बराबर होंगे जब लाभ सामान्य होगा। dd2 व AC के बीच स्पर्शजयात्व, बिन्दु E जहां DD2, AC को प्रतिच्छेद करता है। यहां दिर्घावधि सन्तुलन उत्पादन Q2 है और मूल्य P2 है।

आकृति 14.4

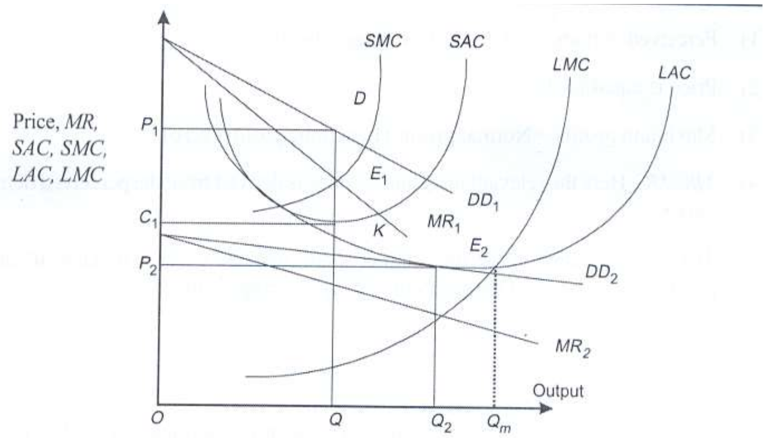

यहां प्रतिस्पर्धा मूल्य विभेद के कारण वास्तविक मांग वक्र के साथ कथित मांग वक्र में नीचे की ओर बदलाव के माध्यम से दिखाया गया है। (स्थिति dd1 से लेकर स्थिति dd2, जो कि बिन्दु E पर AC के स्पर्श रेखा है) और नई फर्म की प्रविष्टि के माध्यम से प्रतिस्पर्धा को वास्तविक मांग वक्र की स्थिति में बदलाव के द्वारा दर्शाया गया है। (DD1, DD2 की स्थिति में बदलाव करता है, जो कि AC को प्रतिच्छेद करता है dd2 के स्पर्शज्यात्व पर AC को अर्थात् बिन्दु E पर) एकाधिकार प्रतियोगिता के अंतर्गत, जब प्रतियोगिता मूल्य विभेद व नई फर्मे की प्रविष्टि को लेकर होती हैं किसी फर्म को दिर्घावधि सन्तुलन प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित शर्तो के परिपूर्ण करना होगा।

1. अनुमानित मांग वक्र, dd2, AC की एक स्पर्श रेखा है।
2. मूल्य बराबर (समान) हो AC के।
3. अधिकतम लाभ = सामान्य लाभ
4. MR = MC, यहां प्रासंगिक सीमान्त आय को कथित मांग वक्र से प्राप्त किया गया है।
5. वास्तविक मांग वक्र (या 'बाजार में अंश' मांग वक्र) DD जो कि AC को प्रतिच्छेद करता है जाहं कथित मांग वक्र (dd) AC की स्पर्श रेखा है।
6. मूल्य है >MC क्योंकि मूल्य >MR से
7. सन्तुलन उत्पादन ईष्टतम उत्पादन से कम है।

दीर्घअवधि सन्तुलन उत्पादन स्तर जहां AC गिर रहा है पर निर्धारित किया जाता है और इसलिए सन्तुलन उत्पादन, ईष्टतम उत्पादन से भी कम है। Qm यहां दीर्घ अवधि सन्तुलन उत्पादन में अतिरिक्त क्षमता मौजूद है।

14.5 अल्पाधिकार

अल्पाधिकार बाजार की वह स्थिति जहाँ कुछ विक्रेता मौजूद रहते है, उनमें से प्रत्येक मूल्य पर या आपूर्ति के परिणाम के प्रति जागरूक रहते है।

दूसरे शब्दों में यह वह बाजार संरचना है जहाँ कुछ विक्रेता अपना उत्पाद बेचते है व विक्रेताओं के मध्य तीव्र प्रतिस्पर्धा देखने को मिलती हैं **'ओलिगोपॉली'** शब्द को दो ग्रीक शब्दों से लिया गया है **'ओलिगो'** जिसका अर्थ 'कुछ' है और **'पोलीइन'** का अर्थ है 'बेचना'। ऐसा तब होता हे जब कोई उद्योग किसी समान उत्पाद या विभेदित उत्पाद का उत्पादन करने वाली कुछ कंपनियों से बना होता है। सरल शब्दों में, अल्पाधिकार एक स्थिति है जिसे कुछ विक्रेता देखते है, और व्यक्तिगत रूप से आपूर्ति के मूल्य के परिणाम के प्रति सचेत रहते है। जो कि बाजार के ऊपर असर डालने में कारगर साबित होता हैं।

अल्पाधिकार को निम्नानुसार परिभाषित किया जा सकता है–

जे. स्टींगर के अनुसार–

अल्पाधिकार बाजार की वह स्थिति है जहां एक फर्म की नीतियां अपने निकटतम प्रतिद्वन्द्वी के व्यवहार (बाजार से सम्बन्धित) पर निर्भर करती है। इस प्रकार बाजार नीति का निर्धारण होता है, जो कि करीबी प्रतिद्वन्द्वीयों के अपेक्षित व्यवहार पर निर्भर करता हैं

पी.सी. डोले के अनुसार–

अल्पाधिकार एक बाजार है जहां कुछ विक्रेता होते है, व सजातीय या विभेदित उत्पादों का उत्पादन करते है। यहां कुछ विक्रेताओं के होने के कारण परस्पर निर्भरता से एक दूसरे को पहचानते है।

प्रो. डोले के अनुसार–

अल्पाधिकार विक्रेताओं का ऐसा बाजार है, जहां सजातीय या विभेदित उत्पादों का उत्पाद किया जाता है।

अल्पाधिकार की विशेषताएँ

कुछ विक्रेता एवं अधिक क्रेताओं की संख्या का होना

अल्पाधिकार की सबसे पहली और सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यहां एक वस्तु के लिए खरीदारो की बड़ी संख्या व केवल कुछ संख्या में विक्रेताओं की मौजूदगी रहती है। प्रत्येक कम्पनी (फर्म) बाजार में कुल आपूर्ति के काफी हिस्से को नियंत्रित करती है और कीमत (मूल्य) व उत्पाद को प्रभावित कर सकती है।

विभिन्न फर्मो के मध्य परस्पर निर्भरता

निर्णय लेने के सम्बन्ध में कंपनियों के मध्य परस्पर निर्भरता, अल्पाधिकार की एक महत्वपूर्ण विशेषता हैं यह स्थिति प्रतियोगियों की कम संख्या होने के कारण होती है। यदि किसी फर्म के उत्पाद व कीमत आदि को लेकर कोई परिवर्तन होता है तो प्रतिद्वन्द्वी कम्पनियों को भी प्रभावित करेगा और उसे लागू करने पर मजबूर करेगां इसलिए, किसी भी फैसले को लेते समय फर्म को अन्य कम्पनियों के कार्यों को ध्यान में रखना होता हैं।

तीव्र प्रतिस्पर्धा

अल्पाधिकार के तहत सिर्फ कुछ विक्रेता ही बाजर में मौजूद हरते है, इसलिए कड़ी प्रतिस्पर्धा का माहोल उत्पन्न होता है बाजार में अपनी मौजूदगी दर्शाने के लिए। प्रत्येक विक्रेता हमेशा सजग एवं अपने प्रतिद्वन्द्वीयों की गतिविधियों पर कड़ी नजर रखता है, एवं जवाबी कार्यवाही (व्यवसाय से सम्बन्धित) के लिए सदैव तत्पर रहता हैं।

उत्पाद की प्रकृति

अल्पाधिकार के तहत एक फर्म सजातीय (समरूप) और साथ ही विभेदित (अलग–अलग) उत्पादों का उत्पादन कर सकता है। विभेदित उत्पाद के बिना अल्पाधिकार को शुद्ध अल्पाधिकार जैसा माना जाता है। अर्थात् जब अल्पाधिकारी फर्मो द्वारा समरूप उत्पादन किया जाता है तो उसे पूर्ण अथवा विशुद्ध अल्पाधिकार कहते है। उदाहरण के लिए इण्डेन, भारत पेट्रोलियम एच. पी. गैस जैसे रसोई गैस के सजातीय (समरूप) उत्पादों की श्रेणी में आते है। दूसरी ओर अन्य अल्पाधिकारी फर्मो के द्वारा भेदात्मक उत्पादन किया जता है जो कि निकट के स्थानापन्न होते है तो उसे भेदात्मक अल्पाधिकार कहा जाता है। उहाहरण के तौर पर ऑटोमोबाइल उद्योग में मारूति, सैंट्रो, फिएट इत्यादि विभेदित उत्पाद का उत्पादन करते है, इसे भेदात्मक अल्पाधिकार की श्रेणी में रखा जाता है।

विक्रय लागत का महत्व

अल्पाधिकार बाजार संरचना के तहत विकय लागत और विज्ञापन का बहुत महत्व रहता है ंतीव्र प्रतिस्पर्धा और फर्मो की परस्पर निर्भरता को देखते हुए फर्मे एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा करती है, विभिन्न बिक्री को बढ़ावा देने वाले उपायों के माध्यम से जैसे मूल्य कटौती, उत्पाद में छूट प्रदान करना, घर–घर जाकर बिक्री को बढ़ावा देना आदि।

प्रवेश के लिए बाधा

अल्पाधिकार उद्योग में फर्मो में गहरी प्रतिस्पर्धा होती है। यहां फर्मो के उद्योग में प्रवेश या निर्गमन पर कोई प्रतिबन्ध नही है, लेकिन लम्बे समय में जो उद्योग में प्रवेश करने से नई कंपनी को नियंत्रित करते हैं वे प्रवेश में (नई फर्मे के) अवरोध उत्पन्न कर सकते है। बाजार की इस दशा में नई फर्म के बाजार

में प्रवेश लेने से पेटेन्ट राइट्स, ट्रेड मार्क्स (चिन्ह) आदि के कारण बहुत परेशानी आती है। उन्हें उच्च पूंजी की भी आवश्यकता होती है क्योंकि विद्यमान फर्मों द्वारा स्थाई सम्पत्तियों में अत्यधिक विनियोग के कारण वे बाजार से बाहर जाने में कठिनाई का अनुभव करती है।

इस अल्पाधिकार उद्योग के कारण लम्बे समय तक (अति सामान्य मुनाफा) कमा सकते है।

एक अल्पाधिकारी के मांग वक्र के परस्पर निर्भरता या अनिश्चित मांग वक्र अल्पाधिकार में फर्मो की परस्पर निर्भरता के कारणवश एवं अन्य कंपनियों के व्यवहार की भविष्यवाणी करने के लिए फर्मे की असमर्थता के कारण अल्पाधिकारी का मांग वक्र एक दम अनिश्चित रहता है। क्योंकि बाजार की इस स्थिति में प्रत्येक फर्म का व्यवहार न तो स्वतंत्र ही रह पाता है तथा न ही निश्चित होता है। क्योंकि उसका व्यवहार अन्य फर्म के आचरण पर निर्भर करता है। अतः हम फर्म के सही–सही मांग वक्र का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकते है।

अल्पाधिकार का वर्गीकरण

अल्पाधिकार बाजार अपूर्ण प्रतियोगिता का एक प्रकार है। इसका वर्गीकरण कई आधार पर किया जा सकता है जो कि निम्नलिखित है।

वस्तु विभेद का आधार

अल्पाधिकारी के द्वारा किस प्रकार की वस्तु का उत्पादन किया जाता है, उसके अनुसार इसे दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है। पूर्ण अथवा विशुद्ध अल्पाधिकार व अपूर्ण तथा भेदात्मक अल्पाधिकार।

पूर्ण अथवा विशुद्ध अल्पाधिकार से तात्पर्य यह है कि जब अल्पाधिकारी फर्मो के द्वारा समरूप उत्पादन किया जाता है तो उसे पूर्ण/विशुद्ध अल्पाधिकार कहते है। अपूर्ण अथवा भेदात्मक अल्पाधिकार में अल्पाधिकारी फर्मो के द्वारा भेदात्मक उत्पादन किया जाता है जो कि निकट के स्थानापन्न होते है तो उसे भेदात्मक अल्पाधिकार कहा जाता है।

उद्योग में प्रवेश के आधार पर

उद्योग में अल्पाधिकारी फर्मो को प्रवेश के आधार पर दो वर्गो में विभिाजित किया जाता है– खुला अल्पाधिकार एवं बन्द अल्पाधिकार। खुला अल्पाधिकार वह बाजार है जिसके अन्तर्गत नई फर्मो के उद्योग में प्रवेश की स्वतंत्रता रहती है, खुला अल्पाधिकार कहा जाता है।

बन्द अल्पाधिकार, जब उद्योग में अल्पाधिकारी फर्मे प्रवेश नही कर सकती है तो बन्द अल्पाधिकार कहलाता है। अर्थात बन्द अल्पाधिकार में यह कहा जा सकता है यह बाजार की वह स्थिति है जहां कुछ फर्मो का पूरे बाजार पर नियन्त्रण व्याप्त रहता है, नई फर्मो के प्रवेश पर बाध की स्थित बनती है।

कीमत नेतृत्व के आधार पर

कीमत नेतृत्व के आधार पर अल्पाधिकार को दो वर्गो में बांटा जा सकता है। आंशिक अल्पाधिकार एवं पूर्ण अल्पाधिकार।

आंशिक अल्पाधिकार, वह बाजार संरचना जिसके अन्तर्गत समूचे उद्योग पर एक बड़ी फर्म का आधिपत्य होता और उस फर्म को 'कीमत नेता' (Price

leader) मान लिया जाता है। दूसरी छोटी फर्मे इन फर्मो की अनुयायी रहती है। अपनी वस्तुएँ (उत्पाद) की कीमतें निर्धारित करते समय अन्य छोटी फर्मे इन फर्म से प्रेरणा प्राप्त करती है।

पूर्ण अल्पाधिकार, वह स्थित जिसके अन्तर्गत कीमत नेतृत्व का पूर्ण अभाव पाया जाता है, अर्थात बाजार की वह स्थिति जहां कोई नेतृत्व नही है और न ही कोई अनुयायी है।

गठबन्धन के आधार पर

गठबन्धन के आधार पर अल्पाधिकार को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। गठबन्धन अल्पाधिकार एवं गैर गठबंधन अल्पाधिकार। गठबंधन अल्पाधिकार जब फर्मे आपस में प्रतिस्पर्धा करने के स्थान पर उद्योग के उत्पादन तथा उसकी कीमत को निश्चित करते हुए आपस में गठबन्धन स्थापित कर लेती है तो उसे गठबन्धन अल्पाधिकार कहते हैं । गैर–गठबन्धन अल्पाधिकार, बाजार का वह प्रकार जिसके अन्तर्गत फर्मो के बीच कीमत एवं उत्पादन निर्धारण हेतु कोई गठबन्धन नहीं होता है। अर्थात् गैर गठबन्धन अल्पाधिकार में फर्मे स्वतंत्र रूप से कार्य करती है।

अल्पाधिकार की विशेषताएँ

अल्पाधिकार बाजार संरचना का वह रूप है जो दूसरे बाजार रूपो से भिन्न है। इसकी मुख्य विशेषताएँ निम्नानुसार है।

परस्पर निर्भरता

अधिकार की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है एक दूसरे के ऊपर परस्पर निर्भरता (फर्मो की) विभिन्न फर्मे व्यापारिक निर्णय (मूल्य, उत्पाद, विज्ञापन, बिक्री, छूट) आदि को लेकर एक–दूसरे पर निर्भर रहती हैं ।

विज्ञापन

अल्पाधिकार के तहत एक फर्म यदि अपनी उद्योग (व्यापार) नितियों को बदलती हे इसका प्रभाव तत्काल अन्य फर्मो पर भी होने की संभावना रहती हैं इसलिए, प्रतिद्वन्द्वी फर्मे हमेशा सतर्क रहती है, वह अल्पाधिकारी फर्मे के नीति परिवर्तन व इसकी पहल पर नजर बनाए रखती है।

समूह व्यवहार

अल्पाधिकार में, समूह का व्यवहार सबसे प्रासंगिक पहलू है। वहां दो कम्पनियों का समूह या तीन अथवा पांच यहां तक कि पंद्रह या कुछ सौ हो सकते है। यहां कम्पनियां की संख्या कुछ भी हो, परन्तु प्रत्येक कम्पनी जानती है कि अपने कार्यो का समूह में अन्य कंपनियों पर कुछ असर होगा।
अल्पाधिकार में व्यवहार विभिन्न कारणों की वजह से जानना सम्भव नहीं है।

1. फर्मो के समूह के गठन का एक आम लक्ष्य नही हो सकता हैं ।
2. समूह या तो एक औपचारिक या अनौपचारिक संगठन हो सकता है या नही भी हो सकता है। आचरण के स्वीकृत नियमों के साथ।
3. समूह द्वारा एक नेता का प्रभुत्व हो सकता है, लेकिन अन्य कंपनियों के समूह में उसमें एक समान तरीके से पालन नहीं हो सकता है।

प्रतियोगिता

अल्पाधिकार के अंतर्गत, जहां कुछ विक्रेता बाजार में मौजूद रहते है एक विक्रेता द्वारा उद्योग से बाहर जाना (बहिर्गमन) तुरन्त प्रतिद्वन्द्वीयों को

प्रभावित करता है। इस प्रकार यहां प्रत्येक विक्रेता हमेशा सतर्क रहता है और हमेशा अपने प्रतिद्वन्द्वीयों की चाल (व्यवसाय गतिविधियों) पर नजर रखता है, और विपरीत गतिविधियों के लिए अपने को तैयार रखता है। जो कि व्यवसायिक प्रतियोगिता के अन्तर्गत होती है।

फर्मो के प्रवेश पर बाधा या अवरोध

अल्पाधिकार उद्योग में तीव्र प्रतिस्पर्धा का माहौल रहता है, यहां उद्योग में प्रवेश व निर्गमन पर बाधा नही रहती है।

एकरूपता की कमी

अल्पाधिकार बाजार की एक अन्य विशेषता यह है कि कंपनियों के आकार में एकरूपता की कमी होती है ˙यहां कम्पनियों के आकार में भिन्नता रहती है।

मूल्य जड़ता का अस्तित्व

अल्पाधिकार स्थिति में, प्रत्येक फर्म अपने उत्पादन के मूल्य को लेकर कठोर (जड़) रहती है।

मूल्य निर्धारण व्यवहार का कोई अद्वितीय तरीका न होना

अल्पाधिकारीयों के मध्य परस्पर निर्भरता से उत्पन्न होने वाली प्रतिद्वन्द्वीता दो परस्पर विरोधी उद्देश्यों के लिए होती है। प्रत्येक स्वतंत्र रहना चाहता है एवं अधिकतम लाभ प्राप्त करना चाहता है।

मांग वक्र का अनिश्चित होना

अल्पाधिकार के अन्तर्गत एक फर्म तीन अलग–अलग प्रतक्रियाओं की उम्मीद अन्य विक्रेताओं से कर सकती है, जब वह कीमतों को कम करती है। यह निम्न कारणों के द्वारा होता है।

यह संभव हो कि दूसरे से पहले उन्होंने कीमतों को बनाए रखा है। इस स्थिति में एक अल्पाधिकारी अपने उत्पाद की मांग को बढ़ाना चाहता है, काफी हद तक अपने उत्पाद का मूल्य कम करके।

जब एक अल्पाधिकारी अपने उत्पादन का मूल्य कम कर देता है, तो अन्य विक्रेताओं भी उनके कीमतें एक बराबर राशि से कम कर सकते है। इस स्थिति में अल्पाधिकारी की मांग में वृद्धि होगी, हालांकि इस स्थिति में ही वृद्धि पहले के मामले में बहुत छोटी हो जाएगी।

जब एक फर्म अपने मूल्य (कीमत) कम कर देती है, उनकी कीमत की अपेक्षा अन्य विक्रेताओं को भी कही अधिक अपने मूल्य कम करना पड़ते है।

अल्पाधिकार के तहत मूल्य निर्धारण

विशिष्ट बाजार स्थितियों की एक विविधता की एक एकल, सामान्यीकृत स्पष्टीकरण के विकास के विरुद्ध काम करता है कैसे एक अल्पाधिकार मूल्य और उत्पादन को निर्धारित करता है। शुद्ध एकाधिकार एकाधिकार प्रतियोगिता और पूर्ण प्रतियोगिता सभी स्पष्ट तौर पर बाजार व्यवस्था के बारे में बताते है, अल्पाधिकार ऐसा नहीं करता है। यह एक 'ठोस' अल्पाधिकार स्थिति है जिसमें दो या तीन कम्पनियां पूरे बाजार और 'खुला' अल्पाधिकार स्थिति जहां छः या सात कम्पनियों पर बाजार का अधिकतम हिस्सा रहता है। अन्य फर्म शेष राशि साझा करते है। इसमें विभेद और मानकीकरण दोनों शामिल है। इसमें वह मामले शामिल है जिसमें फर्म काम कर रहे है और जिसमें वे स्वतंत्र रूप से

काम कर रहे है। इसलिए, अल्पाधिकार के विभिन्न रूपों के अस्तित्व मूल्य और उत्पादन की एक सामान्य सिद्धान्त के विकास को रोकता है। अल्पाधिकार बाजार में पारस्परिक निर्भरता का तत्व मूल्य और उत्पादन के निर्धारण को भी जटिल बनाता है।

इन कठिनाइयों के बावजूद, अल्पाधिकार मूल्य निर्धारण की दो सम्बन्धित विशेषताएँ नीचे दी गई हैं

अल्पाधिकारी का मूल्य से आशय कठोर (अनम्य) या अनुदार (चिपचिपा) व कम परिवर्तनशील रहता है। औरो की तुलना में जैसे पूर्ण प्रतियोगिता एकाधिकार और एकाधिकर प्रतियोगिता से भिन्न रहता है।

जब अल्पाधिकार कीमतों पर परिवर्तन होगा, तब अन्य कम्पनियां भी एक साथ कीमत बदलने की संभावना में होती है वे मिलजुल कर अैर कीमतों को बदलने में मिलकर काम करते है।

इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, अल्पाधिकार के तहत मूल्य व उत्पादन निर्धारण निम्न स्थितियों में होता है।

गैर सम्पूर्ण अल्पाधिकार में मूल्य निर्धारण

इस मामले में, प्रत्येक फर्म अपने प्रतिद्वन्द्वीयों की प्रतिक्रियाओं के बारे में अपने फैसले के आधार पर एक स्वतंत्र मूल्य ओर उत्पादन नीति का पालन करता हैं जब फर्मे सजातीय उत्पाद का उत्पादन करते है, तब मूल्य कुछ हो सकता है प्रत्येक फर्म प्रतिस्पर्धी स्तर पर मूल्य तय करने के लिए। इसके विपरीत, विभेदित अल्पाधिकार में उत्पाद विभेदिकरण होने के कारण, प्रत्येक फर्म बार पर कुछ एकाधिकार नियंत्रण नही होता है और वे एकाधिकार कीमत (मूल्य) के निकट तक का मूल्य वसूल करते है। इस प्रकार वास्तविक कीमत दो सीमाओं के बीच गिर सकती है।

1. एकाधिकार मूल्य की ऊपरी सीमा और
2. प्रतिस्पर्धी मूल्य की निम्न सीमा

व्यवहारिक रूप से, यहां इन सीमाओं के भीतर सही मूल्य निर्धारित करने के लिए हर संभावना है। हालांकि, यहां निम्नलिखित संभावनाएँ हो सकती है।

1. बाजार में पूर्ण मूल्य अस्थिरता व्याप्त हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप मूल्य युद्ध होता है।
2. बाजार बलों के कार्य को लेकर मूल्य मध्यवर्ती स्तर पर स्थिर हो सकता है।
3. फर्मे मौजूदा मूल्य को स्वीकार कर सकती है और वर्तमान मूल्य के अनुसार स्वयं को समायोजित कर सकते है।

जब तक फर्म प्रचलित मूल्य पर प्रर्याप्त लाभ अर्जित कर लेता है, तब तक वह इसे बदलने की कोशिश नही कर सकता है। इसे बदलने का कोई भी प्रयास बाजार में अनिश्चिता को उत्पन्न कर सकता है। अनिश्चितताओं से बचने के लिए एक फर्म उसी मूल्य पर दृढ़ रहती है। इस प्रकार, मूल्य कठोर (सख्त) हो जाता है जहाँ अल्पाधिकारी स्वतंत्र कार्यवाही करता है।

14.6 सारांश

एकाधिकार प्रतियोगिता बाजार की वह स्थिति है जहां बड़ी संख्या में स्वतंत्र फर्मे मौजूद है वह खरीदारों की दृष्टिगत रखते हुए विभेदित (भिन्न भिन्न) उत्पादों की आपूर्ति कर रहे है। इसलिए प्रत्यक फर्म एक विशेष ब्राण्ड या 'उत्पाद' का एकमात्र उत्पादक हैं एकाधिकार प्रतियोगिता केतहत मांग या औसत आय वक्र किसी व्यक्तिगत फर्म का धीरे–धीरे गिरने की अवस्था को दर्शाता है। एकाधिकार प्रतिस्पर्धा में, प्रत्येक फर्म मूल्य और उत्पादन के उस स्तर पर ध्यान केन्द्रित करती है जो कि लाभ को अधिकतम करता हैं एकाधिकार प्रतियोगिता के अन्तर्गत दीर्घ अवधि सन्तुलन प्रक्रिया इस धारणा पर आधारित है कि प्रतिस्पर्धी कम्पनयिों को अपने बिक्री लागत ओर उत्पाद की गुणवत्ता स्थिर रखने और केवल कीमत (मूल्य) भिन्नता के माध्यम से प्रतिस्पर्धा करनी होती है।

अल्पाधिकार बाजार की वह स्थिति है कुछ विक्रेता ही मौजूद रहते है। वे मूल्य एवं उत्पाद की आपूर्ति पर नजर बनाये रखते है। यह व्यक्तिगत रूप से उनकी सजगता वस्तु के मूल्य व वस्तु की आपूर्ति पर निर्भर करती है।

14.7 शब्दावली

एकाधिकारवादी : किसी वस्तु (उत्पाद) का एकल विक्रेता।

उत्पाद में भिन्नता (विभेदन) : बाजार में उत्पन्न गतिविधियों की एक विस्तृत विविधता जैसे की उत्पाद के डिजाइन में परिवर्तन और विज्ञापन के रूप में किसी प्रतिद्वन्द्वी कम्पनी द्वारा प्रतिद्वन्द्वीयों के उत्पाद से उनके उत्पाद भेद से ग्राहकों को आकर्षित करने का उपाय अपनाना।

मूल्य कठोरता : स्वीजी किंक्ड मांग वक्र मॉडल के अनुसार सन्तुलन का स्वतन्त्र होना को स्वीजी के अनुसार किंक्ड मांग वक्र द्वारा अल्पाधिकार बाजार मे ंकीमतों (मूल्यों) की कमी समझने हेतु विश्लेषण किया गया है।

कारनाट आदर्श (मॉडल): यह समाधान प्रदान करता है कि प्रत्येक विक्रेता बाजार की माग को एक तिहाई आपूर्ति करता है और एक ही मूल्य का शुल्क वसूलता हैं यहाँ बाजार का एक तिहाई अनापूर्ति दर्शाता है। इस मॉडल को सामान्य अल्पाधिकार के लिए बढ़ाया जा सकता है।

कपटपूर्ण अल्पाधिकार : कपटपूर्ण अल्पाधिकार समझौते के तहत, मूल्य युद्ध से बचने के लिए विशाल कंपनियों के मध्य मिलनसार समझौता किया जाता है।

14.8 बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

1. एकाधिकार प्रतियोगिता में, प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के उत्पादन निकट विकल्प होते है न पूर्ण विकल्प .... क्योंकि खरीददार उन्हें एक समान (समरूप) नही मानते हैं।
2. .... कुछ विक्रताओं का बाजार है, जो या तो समरूप या विभेदित उत्पादों की पेशकश करते है।
3. अल्पाधिकार बाजार संरचना के तहत ....का बहुत महत्व है।
4. .... ऐसी स्थिति है, जहां एक मूल्य में कमी नही बल्कि मूल्य में वृद्धि का अनुसरण करता हैं यह अन्य कम्पनियों की समता के

कारण इसके साथ मूल्यों का सामना करने की वजह से है और यह अक्सर किंक्ड मांग वक्र की ओर जाता है।

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पूर्ण विकल्प 2. अल्पाधिकार 3. बिक्री लागत एवं विज्ञापन 4. मूल्य कठोरता

14.10 स्वपरख प्रश्न

1. पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. एक प्रतिस्पर्धी फर्म के हानि को दर्शाने वाले सन्तुलन को समझाइये?
3. पूर्ण प्रतियोगिता के तहत अल्पावधि सन्तुलन में मूल्य व उत्पादन निर्धारण को समझाइये?
4. प्रतिस्पर्धी फर्म के दीर्घअवधि सन्तुलन को दर्शाये।
5. एकाधिकार की क्षमता से क्या आशय है और मूल्य उत्पादन एवं लागत के सन्दर्भ में प्रतिस्पर्धा को समझाइये। क्या एकाधिकार को नियंत्रित किया जा सकता है।
6. मूल्य विभेद क्या है? इसके उद्देश्यों की व्याख्या कीजिये?

14.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रिन्टेक हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली.
2. डी. एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., नई दिल्ली.
3. टी. आर. जैन, ओ. पी. खन्ना एवं वीरसेन, सूक्ष्म अर्थशास्त्र एवं भारतीय अर्थव्यवस्था, बी. के. पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
4. एच. एल. आहुजा, आधुनिक प्रबंधकीय सिद्धान्त, एस चन्द एवं सन्स क. लि., नई दिल्ली.
5. आत्मानन्द, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सैल बुक, दिल्ली.
6. आर. एल. वार्ष्णेय एवं के. एल. माहेश्वरी, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चन्द एवं सन्स, नई दिल्ली.

इकाई 15 लगान–अवधारणा, रिकार्डियन और आधुनिक सिद्धांत

इकाई की रुपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 लगान की अवधारणा
15.3 लगान निर्धारण या लगान के सिद्धांत
15.3.1 रिकार्डियन सिद्धांत
15.3.2 लगान का आधुनिक सिद्धांत
15.4 अर्ध लगान
15.5 स्थिति लगान
15.6 सारांश
15.7 शब्दावली
15.8 बोध प्रश्न
15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
15.10 स्वपरख प्रश्न
15.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- लगान की अवधारणा को समझ सकें ।
- लगान निर्धारण सिद्धांतों का वर्णन कर सकें ।
- अर्ध लगान की अवधारणा को समझ सकें ।
- स्थितिजन्य लगान का विचार समझ सकें ।
- लगान और कीमत के बीच के संबंध का वर्णन कर सकें ।

15.1 प्रस्तावना

लगान, भूमि के उपयोग या किसी भौतिक संपत्ति का, समय की एक विशेष अवधि के इस्तेमाल के लिए किए गया भुगतान है। कार्वर के अनुसार, "भूमि के उपयोग की कीमत लगान है"। प्रो मार्शल ने इन शब्दों को व्यापक रूप दिया और उस पर जोर दिया है कि मानव निर्मित उपकरण भी लगान का उत्पादन करते हैं। बोल्डिंग ने कहा है कि मुख्य रूप से अर्थशास्त्र में एक शब्द का प्रयोग किया जाता है आर्थिक लगान, जिसे किसी भी उत्पादन के एक कारक के भुगतान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो अधिकतम कारक को अपने वर्तमान व्यवसाय में कम से कम राशि रखने के लिए जरूरी है।

15.2 लगान की अवधारणा

व्यापक तौर पर लगान किसी और से संबंधित संपत्ति के उपयोग के लिए एक व्यक्ति द्वारा किया गया भुगतान है। आर्थिक विश्लेषण में लगान एक पारिभाषिक शब्द को संदर्भित करता है जिसका उपयोग आय प्रक्रिया के वितरण में किया जाता है, जो कि अर्थव्यवस्था के सूक्ष्म आर्थिक व्यवहार से संबंधित है । सूक्ष्म आर्थिक विश्लेषण में, अर्थशास्त्र की प्रकृति और क्षेत्र, उपभोग और उत्पादन से संबंधित मांग और आपूर्ति के सिद्धांत, मूल्य निर्धारण के सिद्धांत

और अंत में पर अंतिम नहीं वितरण सिद्धांत का अध्ययन करते है। लगान का संबंध वितरण सिद्धांत से है। प्राचीन समय में लगान भूमि के स्वामित्व की प्राप्त आय तक सीमित था । आधुनिक संस्करण, लगान उत्पादन के एक कारक को आवश्यक आपूर्ति मूल्य के ऊपर और बढ़कर भुगतान के रूप में वर्णन किया जाता हैं । आर्थिक लगान एक कारक के रूप में अनिश्चित काल तक लिया जा सकता है, जिसके कारण आपूर्ति अपेक्षाकृत स्थिर है और भूमि इस भेद का लाभ उठाती है।

सामान्यता माना जाता है कि भौतिक वस्तुयों का एक निश्चित समय तक किया गया उपयोग ही भुगतान कहलाता है । यहां हम एक घर, दुकान, रिक्शा, टैक्सियों, और मशीन आदि के उपयोग के लिए लगान शब्द का उपयोग कर सकते हैं । वास्तव में, यह केवल अनुबंध लगान है । आर्थिक लगान सिर्फ भूमि के उपयोग के लिए भुगतान की गई कीमत है । समय–समय पर अर्थशास्त्रियों द्वारा कई राय दी गई हैं । डॉ. मार्शल कहते हैं कि भूमि के स्वामित्व से ली गई आय और प्रकृति के अन्य निरूशुल्क उपहार आमतौर पर लगान कहलता है । कैरियर के शब्दों में, "भूमि के उपयोग के लिए भुगतान की कीमत लगान है।" रिकार्डो ने खुद के लगान सिद्धांत में कहा है कि वास्तविक और मिटटी की अविनाशी शक्तियों के उपयोग के लिए किया गया भुगतान लगान हैं। "इस संदर्भ में रिकार्डो और अन्य पारंपरिक अर्थशास्त्री ने लगान को भूमि और प्रकृति की अन्य मुफ्त उपहार जैसे की पानी, पहाड़ों और प्रकृति की प्रचुर्ताओ से सम्बंधित किया है, आपूर्ति के बाद से ये पूरी तरह से अस्थिर है और मूल्य में परिवर्तन के साथ भी बदल नहीं सकते हैं न ही शून्य हो सकता है । इस लगान के परंपरागत संस्करण का आधुनिक संस्करण भी आधुनिक विचारकों द्वारा दिया गया हैं। प्रो बोल्डिंग एंड मिसेज़ रॉबिन्सन कहते हैं कि हालांकि भूमि की तरह अन्य उत्पादन के अन्य कारक जैसे, श्रम, पूंजी और उद्यमी पूरी तरह से आपूर्ति में स्थिर नहीं हैं । एक सीमा तक आपूर्ति एक छोटी अवधि के लिए अस्थिर है, जो लगान के लिए प्राप्त कर सकते हैं। यहां पर लगान एक अधिशेष के रूप में परिभाषित किया गया है। प्रोफेसर बोल्डिंग के शब्दों में "आर्थिक लगान को किसी भी उत्पादन के कारक के भुगतान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो कि अपने वर्तमान व्यवसाय में जो न्यूनतम रखने के लिए जरूरी राशि से अधिक है ।"

15.3 लगान निर्धारण या लगान के सिद्धांत

लगान की पारंपरिक और आधुनिक अवधारणा लगान निर्धारण कों दो सिद्धांतों में बांटती हैं, एक रिकार्डियन सिद्धांत और दूसरा आधुनिक सिद्धांत है।

15.3.1 रिकार्डियन सिद्धांत

रिकार्डो के अनुसार मूल्य उत्पादन की लागत से निर्धारित होता है, यह उन्होंने न केवल माल के लिए बल्कि उत्पादन कारकों के लिए भी इस विचार को लागू किया। भूमि पर लागू होने पर उत्पाद की लागत कम नहीं कर सकती क्योंकि भूमि किसी के द्वारा निर्मित नहीं की जा सकती, यह मनुष्य को प्रकृति का उपहार है। इस प्रकार एक अलग सिद्धांत लगान का निर्माण करना आवश्यक है। दरअसल लगान मूल्य भूमि पर उगाए गए उपज द्वारा निर्धारित

किया गया था। अपने प्रसिद्ध तर्क में, "लगान अधिक है क्योंकि धान्य अधिक है बल्कि धान्य अधिक नहीं है क्योंकि लगान अधिक है"।

रिकार्डो ने लगान को इस प्रकार से परिभाषित किया है ष्पृथ्वी के उपज का वह भाग जिसे मूल और मिट्टी की अविनाशी शक्तियों के उपयोग के लिए भू–स्वामी को किया गया भुगतान हैष। रिकार्डो ने कहा कि आर्थिक लगान कृषि के अन्य लागतों का भुगतान उदाहरण के लिए श्रम, पूंजी और कृषि के अन्य लागतों का भुगतान करने के पश्चात बचा हुआ शुद्ध अधिशेष हैं। रिकार्डो ने लगान को उत्पादन की लागत के रूप में नहीं माना। रिकार्डियन लगान सिद्धांत के विवरण का विश्लेषण करने से पहले, सिद्धांत कों मुख्य मान्यताओं के माध्यम से जाना चाहिएः

सिद्धांत की धारणाएं

1. समय की दीर्घअवधि सिर्फ सुविचारित है ।
2. बाजार में बिल्कुल पूर्ण प्रतियोगिता ।
3. मिट्टी की मूल और अविनाशी शक्तियां ।
4. कृषि के लिए भूमि की सीमित और नियत आपूर्ति ।
5. भूमि प्रकृति का एक मुफ्त उपहार है ।
6. भूमि के विभिन्न भागों की उर्वरता क्षमता में अंतर मौजूद है ।
7. उर्वरता में अंतर के क्रम में विभिन्न ग्रेड कार्ड ।
8. कृषि के संचालन में घटते हुये सीमांत लाभ का सिद्धांत ।
9. बढ़ती दर पर जनसंख्या बढ़ जाती है ।
10. सीमांत का अस्तित्व या कोई लगान भूमि जहां लागत और उत्पादन बराबर हों ।

लगान कैसे उत्पन्न होता है?

रिकार्डियन कि मान्यता में, बढ़ती हुई आबादी के बढ़ते क्रम में उत्पादन भूमि के लिए अधिक मांग को जन्म देती है। इस प्रकार कृषि भूमि के अन्य उपलब्ध भागों को, भूमि द्वारा गहन उपयोग के लिए पूंजी और मजदूर इकाइयों की विस्तारित होने की आवश्यकता होती है। लगान की उपस्थिति का सही कारण भूमि की कमी है । रिकार्डो के पहले फ्रांसीसी अर्थशास्त्रियों के समूह ने इस विषय पर काफी चर्चा की कि लगान कैसे बढता हैं ? भूमि प्रकृति के द्वारा दिया गया एक उपहार है, भूमि उस पर नियोजित श्रम से ज्यादा उत्पादन करती है।

इस प्रकार भूमि द्वारा अधिशेष उत्पादन लगान के रूप में जाना जाता है रिकार्डो की लगान पर पूरी तरह से अलग राय थी, प्रकृति की उदारता की तुलना में, प्रकृति की कृपणता (बहुत थोडा) लगान का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है । चूंकि इसकी कुल आपूर्ति स्थिर हैं और भूमि के विभिन्न भागों की उर्वरता भिन्न है।

रिकार्डियन का सिद्धांत स्पष्टीकरण

रिकार्डो के लगान विवरण के आधार पर, भूमि उर्वरता और भूमि की स्थिति भिन्न–भिन्न स्थान पर भिन्न होती है जो लगान का कारण बन जाती है। इसके अलावा लगान है सीमांत भूमि के अस्तित्व की अवधारणा से निर्धारित होता है । इसको "लगान रहित भूमि" से भी जानते है । उच्च उत्पादकता

भूमि अंतर सीमांत हैं, भूमि इस प्रकार लगान एक बेहतर अधिशेष है जिसके ऊपर श्रेष्ठ भूमि द्वारा सीमांत या अवर भूमि लगान निर्धारण कर अर्जित किया गया है । रिकार्डो कृषि की दो तकनीकों की बात करते है जो की, गहन और व्यापक कृषि, इसलिए लगान दो तरीकों से निर्धारित होता है:

1. व्यापक कृषि के मामले में लगान
2. गहन कृषि के मामले में लगान
3. व्यापक कृषि

जनसंख्या दबाव के कारण भूमि के उत्पादन की अतिरिक्त मांग को पूरा करने के लिए, जब श्रम की अधिक इकाइयां और पूंजी, कृषि के अंतगर्त अधिक भूमि का उपयोग किया जाता है, इसे व्यापक कृषि के रूप में जाना जाता है। लगान की अवधारणा को रिकार्डो द्वारा अपनी पुस्तक "राजनीतिक अर्थव्यवस्था एवं कर निर्धारण के सिद्धांत" में आर्थिक नीति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है । लगान के आधुनिक सिद्धांत भी लगान के रिकार्डो विचार से प्रभावित होते है। व्यापक कृषि के संबंध में लगान पर अपने विचार को सिद्ध करने के लिए, रिकार्डो ने एक दृवीप के मामले, लोगों को एक झुंड माना और वह वहाँ गए व वहां बस गए। प्रारंभिक चरण में यह की भूमि अधिक थी वहां रहने वाले निवासियों की संख्या के संबंध में लोग इस भूमि के लिए किसी भी लगान का भुगतान नहीं करना पड़ता क्योंकि भूमि प्रकृति का एक मुफ्त उपहार थी।

फिर से वह इस दृवीप पर मौजूद चार प्रकार के भूमि के भागों की कल्पना करता है जो की, A, B, C, और D ग्रेड भूमि है । A वर्गीकृत भूमि सबसे उपजाऊ एंवम उत्तम भूमि के रूप में दृवीप पर रहने वाले लोगों द्वारा चिह्नित है और D ग्रेड को सबसे निम्न उपजाऊ एंवम सीमांत भूमि के रूप में चिह्नित है दृवीप इस प्रकार भूमि के A, B, C, और D ग्रेड हैं उर्त्यता के संबंध में अवरोही क्रम में यहां चिह्नित किया गया। स्वाभाविक रूप से, लोग सबसे अच्छी भूमि यानी 'A' ग्रेड भूमि की कृषि करके उनकी कृषि शुरू करें हम मानते हैं कि 100 टन अनाज पैदा करता है। जैसा कि भोजन की मांग बढ़ जाती है आबादी में वृद्धि के साथ, पूरे 'A' ग्रेड भूमि अग्रणी उपयोग करने के लिए रखा जाएगा 'B' ग्रेड की कृषि के लिए जो 75 टन अनाज पैदा करता है। अधिक आबादी के दबाव के साथ 'C' ग्रेड में सीमांत भूमि अर्थात् श्क्श ग्रेड भूमि को भी कृषि के अंतर्गत उपयोग में लाया जायेगा । 'C' ग्रेड भूमि का उत्पादन 50 टन और सीमांत माना जाता है श्क्श ग्रेड में 25 टन अनाज पैदा करता है। इस प्रकार भूमि A, B, C ग्रेड को अंतर–सीमांत भूमि कहा जाता है। स्थल 'D' ग्रेड जो है कम से कम उत्पादक भूमि को कृषि के लिए अंतिम रूप दिया जाएगा और इससे कोई भी फायदा नहीं होगा लगान इस प्रकार केवल अंतर सीमांत भूमि 'A' 'B' और 'C' ग्रेड लगान अर्जित करेंगे। इन भूमि का लगान सीमांत 'D' ग्रेड भूमि की उपज का अतिरिक्त अधिशेष है । इसलिए A ग्रेड भूमि का लगान । ग्रेड भूमि का उत्पादन से श्क्श ग्रेड की भूमि का उत्पादन घटाकर अर्थात, 100 – 25 = 75 होता है। 'B' ग्रेड का लगान है 'B' ग्रेड भूमि का उत्पादन से 'D' ग्रेड की भूमि का उत्पादन घटाकर अर्थात, 75 – 25 = 50 होता है। "C" ग्रेड का लगान 'C' भूमि का उत्पादन से 'D' ग्रेड की भूमि का उत्पादन

घटाकर अर्थात 50 – 25 = 25 होता है। इस प्रकार भूमि के भिन्न भिन्न भाग और उसकी भिन्न भिन्न उर्वरता लगान में भिन्नता बताते हैं । इसीलिए भिन्न भूमि की भिन्न उर्वरता लगान की भिन्नता का कारण बनती है। इसके रूप में लगान पर चर्चा ऊपर सीमांत भूमि के ऊपर अधिशेष की मदद से स्पष्ट किया जा सकता है ।

निम्न तालिका विभेदित लगान की अवधारणा को बताती है:

तालिका 15.1: लगान की उत्पत्ति और व्यापक कृषि

भूमि का वर्गीकरण	उत्पादन (टन)	पूर्ति (लगान टन मे)
A	100	100-25 =75
B	75	75-25 = 50
C	50	50-25 =25
D	25	25-25=0

ऊपर तालिका में यह दर्शाया गया है कि 'A', 'B', और 'C' ग्रेड का ग्राउंड कम विभेद लगान के रूप में अधिशेष जो की, 75, 50 और 25 टन उपज सीमान्त के लिए शून्य लगान भूमि, 'D' ग्रेड भूमि जो कि आखिरी में नए प्रवेशकों द्वारा उपयोग की जाने वाली है एक ही विचार एक आरेख की मदद से दिखाया जा सकता है

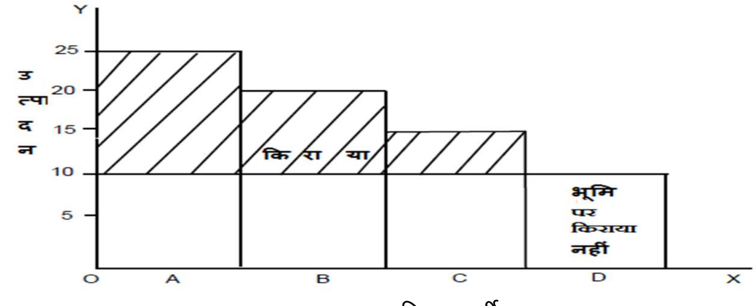

आरेख 15.1 लगान की उत्पत्ति और व्यापक कृषि

उपरोक्त उदाहरण में स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है कि रिकार्डो के विचारानुसार इस तरह की स्थिति जो पूरे कृषि समुदाय के लिये कृषि को व्यापक अंतर से परे कोई लगान नहीं दिखाती है। वास्तव में उपजाऊ भूमि कि पृथकता का विचार काफी यथार्थवादी है।

2. गहन कृषि के अन्तर्गत लगान

जब परिस्तिथिया बदलती हैं तो किसान को भी उनके साथ खुद को बदलना पड़ता है । जब से आबादी का दबाब बढ़ता जा रहा है, माल्थूसियन के आबादी के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए भोगोलिक प्रगति और कृषि उत्पादन द्वारा अंकगणित प्रगति पर बढ़ता है, जिससे अनाज की मांग में उच्च दर से बढ़ोतरी होती है । अनाज की उच्च मांग के साथ सामना करने के लिए किसान व्यापक और गहन मार्जिन दोनों में अपनी गतिविधियों का विस्तार करता है, ताकि वह स्वयं को संतुलन की स्थिती में वापस लाये जो की किसी भी आर्थिक गतिविधि के लिए आवश्यक है।

अधिक भूमि पर कृषि करने के तहत, वह अधिक भोजन का वादा पूरा नहीं कर सकता । बल्कि किसान को अधिक तीव्रता से अपने अपनी भूमि पर कृषि करना पड़ता है जिससे उसको सामान्य लाभ मिलता रहे।

इस तरह गहन कृषि उतनी ही उपयोगी है जितनी व्यापक कृषि । कृषि से अधिक उत्पाद प्राप्त करने के लिए किसान अधिक श्रम और पूंजी की अधिक इकाइयां नियुक्त करता है।

रिकार्डो का मानना है कि कृषि पर घटते लाभ के सिद्धांत का संचालन, यह धारण है कि, भूमि की उर्वरता या परिस्थिती में अंतर मायने नही रखता अपितु श्रम और पूँजी की अतिरिक्त नियुक्ति से भूमि में अधिक या कम उपज पैदा कर सकती है।

यहाँ श्रम और पूंजी की अतिरिक्त संख्या में नियुक्ति से कुल उत्पादन में वृद्धि होगी लेकिन कम दर पर। इस प्रकार सीमांत उत्पाद श्रम और पूंजी की अतिरिक्त संख्या के साथ कम हो जाती है जो कि उत्पादन के चार कारकों में से है। जबकि निश्चित कारक जैसे भूमि नहीं बदली जा सकती।

यहाँ उदाहरण की मदद से समझाया जा सकता है कि 100 टन के साथ पहली मात्रा, 50 टन के साथ तीसरी मात्रा, और श्रम और पूंजी की आखिरी चौथी मात्रा का उत्पदन सिर्फ 25 टन है।

पूंजी की चौथी इकाई श्रम और पूंजी की सीमांत इकाई कहा जाता है, जो की आंदोलन इकाई के रूप में भी जानी जाती है। बाकि की तीन आंतरिक सीमांत इकाईया अपनी पहली और आखिरी उपज के बीच के अंतर के बराबर लगान कमाती हैं ।

निष्कर्ष ये है कि, पहली इकाई का श्रम और पूंजी का अधिकृत लगान 100 – 25 = 75 टन और दूसरी इकाई के श्रम और पूंजी का हिस्सा 75 – 25 = 50 टन और तीसरी इकाई का लगान 50 – 25 = 25 टन है। लेकिन सीमांत इकाई कोई लगान नही कमाती है।

यहाँ नीचे दिए गए तालिका और चित्र के माध्यम से समझाया जा सकता है।

श्रम की इकाई और नियोजित पूंजी सीमांत उत्पाद	(टन) अधिशेष	(लगान टन में)
1 मात्रा	100	100-25 = 75
2 मात्रा	75	75-25 = 50
3 मात्रा	50	50-25 = 25
4 मात्रा	25	25-25 = 0

यहाँ प्रत्येक टुकड़े के लिए अलग–अलग लगान से कमाई का कारण मिटटी की उर्वता में अंतर नहीं है, लेकिन कृषि पर घटते लाभ के सिद्धांत का संचालन मिटटी के एक ही टुकड़े की कृषि पर जोर देता है ।

स्पष्ट रूप से श्रम और पूंजी के 1, 2 और 3 दर्जे में लगान अधिशेष उपज के रूप में है। सीमांत मात्रा का कोई लगान नही है क्योंकि इसमें कोई अधिशेष उत्पादन नही है, अतः भूमि के उर्वरता और परिस्तिथि में कोई परिवर्तन किये बिना लगान प्राप्त किया जा सकता है।

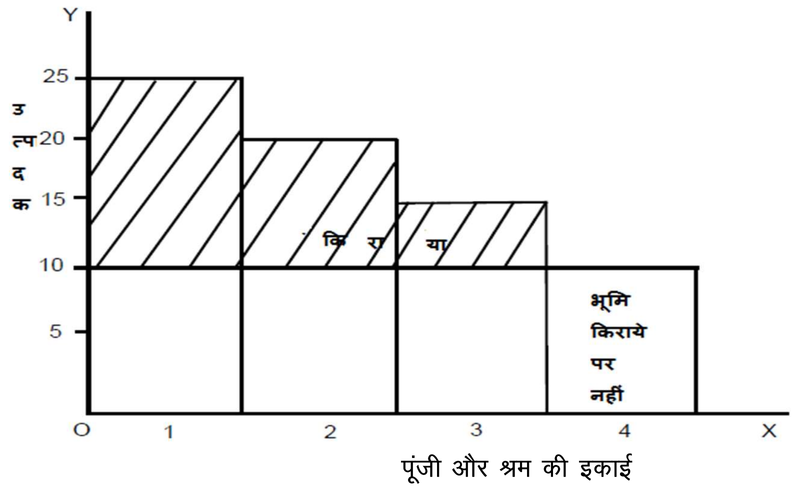

आरेख 15.2 : लगान की उत्पत्ति और गहन कृषि

ऊपर दिया गया आरेख दर्शाता है की रिकार्डो का लगान तय नही है । भोजन की मांग में वृद्धि के साथ विसरित भूमि या मौजूद भूमि में अधिकता से कृषि की जाती है जिसमें श्रम और पूंजी की नियुक्ति से भीतरी सीमान्त भूमि पर प्रगतिशील कृषि से लगान प्राप्त होता है।

अब कुछ निष्कर्ष तैयार किया जा सकता है और रिकार्डो द्वारा दिया गया लगान अवधारणो को और स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है। रिकार्डियन मॉडल के अनुसार भूमि आपूर्ति में शून्य लोच है।

ब्रिटिश अर्थशास्त्री, डेविड रिकार्डो के अनुसार, जिन्होंने हमें लगान का व्यवस्थित सिद्धान्त दिया, हमें इस तथ्य से ज्ञात होता है कि मिटटी की मूल अविनाशी शक्तिया लगान का मूल कारण है ।

रिकॉर्डियन के लगान के सिद्धान्त की आलोचना

जब से रिकार्डो के सिद्धान्त का प्रतिपादित किया गया है, तब से उसकी भिन्न कारणों से आलोचना की जा रही है जो कि नीचे सूचिवद्ध किया हैं।

1. ऐतिहासिक रूप से अपरिणाम :

कैरी और रीचर ने बताया कि मानव जाति के कब्जे वाले नए दृवीप में सबसे अच्छी भूमि की कृषि की जाती है, जो नए प्राप्त कि गई हुई भूमि में व्यापक कृषि की ऐतिहासिक अनुक्रम द्वारा समर्थित नहीं है।

वास्तव में शुरुआती बसने वालों के लिए भूमि की स्थिति सबसे ज्यादा मायने रखती है क्योंकि मानव अस्तित्व के लिए पानी की आवश्यकता थी, इसलिए समुद्र के निकट की भूमि पहले कृषि के लिए ली गई। तो रिकार्डो का विशेष भूमि सबसे अच्छी भूमि मे स्थित हो सकती है और जरूरी नहीं कि यह सबसे अच्छी उपजाऊ भूमि हो।

2. माल्थूसियन सिद्धान्त पर आधारित

यह सिद्धांत जनसंख्या के गणित सिद्धांत पर आधारित भूमि सिद्धांत को दोषपूर्ण सिद्धांत के रूप में बनाता है। जनसंख्या और खाद्य उत्पादन दोनों के

ज्यामितीय और अंकगणितीय प्रगति, माथ्यूलस द्वारा वर्णित है,जो आर्थिक विकास के युग में अब कोई मान्य तर्क नहीं हैं।

3. पूर्ण प्रतिस्पर्धा की धारणा:

यह धारणा आज वास्तविकता से दूर है कि वास्तविक जीवन में बाजार में अपूर्ण प्रतिस्पर्धा प्रचलित होती है।

4. लंबी अवधि की अवधारणा :

जीवन के सामान्य व्यवसाय में, लोग वास्तविक अल्पकालिन समस्या से संबंधित हैं, इसलिए लंबे समय तक अवधारणाएं नियमित जीवन में स्वीकार नहीं की जा सकती हैं।

5. कृषि में घटते लाभ का सिद्धांत का अनुउपयोग :

आधुनिक युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी उन्नति का दौर है, नवीन विचारों को कृषि पर भी लागू किया गया है, इसलिए बढ़ते हुए, निरंतर और घटते हुए रिटर्न जैसे रिटर्न के सभी सिद्धांत कृषि पर लागू होते हैं जो सिद्धांत को स्वतः ही अमान्य बनाते हैं।

6. मिटटी की मूल और अविनाशी शक्तियों का विचार :

एक प्रश्न चिह्न इस विचार पर रखा जाता है कि किस लगान का भुगतान किया जाता है। दुनिया में कोई भी भूमि में बिना सुधार के कृषि नहीं की जाती है और इसमें भी कठिन परिश्रम की आवश्यकता है। जलवायु भी उत्पादन संभव बनाने में एक बड़ी भूमिका निभाता है।

7. सीमांत भूमि की अवधारणा पूरी तरह से काल्पनिक:

दुनिया में कोई शबिना–लगान भूमिश वास्तव में मौजूद नहीं है। अगर कोई विशेष भूमि की कृषि के लिए पूरी तरह से अयोग्य है, तो इसका उपयोग अन्य उत्पादन उद्देश्यों जैसे कि उद्योग, वाणिज्यिक सार्वजनिक या निजी घरों आदि के लिए किया जाता है। इसलिए हर भूमि पर लगान पैदा होगा।

8. संकीर्ण संकरण:

केवल कृषि उत्पादन को ध्यान में रखा जाता है, परंतु भूमि के कई अन्य प्रयोक्ताओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, जो भूमि की मांग और आपूर्ति को प्रभावित करता है, लगान भी है इसलिए प्रस्ताव में सिद्धांत संकीर्ण है ।

9. कम लगान की उपेक्षा:

भले ही सभी भूमि समान रूप से उपजाऊ हो, फिर भी लगान उत्पन होगा। इतने लंबे से सबसे उपयुक्त और सबसे अच्छी भूमि दुर्लभ है और उस पर लगान उत्पन होता है। असल में, यदि भूमि की मांग उसकी आपूर्ति से अधिक हो, लगान भुगतान किया जाएगा। इस प्रकार भूमि की कमी में लगान का तत्व होता है, जो कि अर्थशास्त्र के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है।

10. लगान और मूल्य :

रिकार्डो का कहना है कि लगान मूल्य राशि में प्रवेश नहीं करता है, सीमांत भूमि जो की लगान की भूमि नहीं है, केवल लगान निर्धारित करती है। लेकिन आधुनिक विचारकों का मानना है कि विशिष्ट स्थितियों में लगान उत्पादन और मूल्य की लागत का हिस्सा भी है। एक किसान के लिए, लगान

उत्पादन की लागत का एक हिस्सा है जो बदले में उत्पादन की कीमत निर्धारित करता है।

11. लगान की कोई विशिष्ट सिद्धान्त की आवश्यकता नहीं

लगान निर्धारण के आधुनिक संस्करण में लगान निर्धारण के लिये एक अलग सिद्धांत की आवश्यकता नहीं है। मांग और भूमि की आपूर्ति के सामान्य सिद्धांत चीजो को संभव बना सकते हैं । रिकार्डो यह नहीं समझाते हैं कि लगान कैसे निर्धारित होता है, लेकिन समानतः वे बताते है कि अलग–अलग भूमि और परिस्तिथियो में लगान का अंतर बोध होता है।

सारांश:

ऊपर की गई आलोचना को पूरी तरह से स्वीकार नहीं किया जा सकता है और इसलिए रिकार्डियन सिद्धांत की अस्वीकृति की गई। बल्कि रिकार्डो द्वारा भूमि सिद्धांत का पहला व्यवस्थित प्रयास कभी भी असल में नहीं हो सकता है। यह एक विलक्षण योगदान है जो हमारे विभाजित योगदान के सिद्धांत की अवधारणा को आगे बढ़ाता है। विभेदकों के अधिशेष का विचार भूमि के अलावा अन्य कारकों के योगदान जो उत्पादन के उद्देश्यों को समझाता है, उपयोग में लाया जा रहा हैं। इस प्रकार रिकॉर्डियन सिद्धांत लगान के आधुनिक सिद्धांत का आधारशिला बन गया जो उत्पादन की प्रक्रिया में कई नए आयाम लाया ।

15.3.2 लगान का आधुनिक सिद्धान्त

किसी भी आधुनिक अर्थशास्त्री द्वारा गहराई में प्रस्तावित लगान का कोई ऐसा सिद्धांत नहीं है। डॉ. मार्श, प्रोफेसर बोल्डिंग और श्रीमती जॉन रॉबिन्सन आदि ने रिकार्डो के लगान के सिद्धांत में सुधार किया और उन्होंने लगान का एक संशोधित संस्करण दिया जो लगान के आधुनिक सिद्धांत के रूप में जाना जाता है। रिकर्डियन और आधुनिक संस्करण में प्रमुख अंतर यह है कि रिकार्डो ने कहा कि मिट्टी की उर्वरता क्षमता अलग है और अच्छी गुणवत्ता वाली भूमि की कमी हैं और भूमि की कुल आपूर्ति स्थिर है जबकि आधुनिक विचारकों का मानना है कि विशिष्टताओं में उत्पादन के अन्य कारक भी है। आधुनिक दृश्य मूल रूप से एक लघु संस्करण है। इसलिए अल्पकाल में अन्य कारक भी ऐसे गुण होते हैं जैसे भूमि की आपूर्ति में असंगति होती है। चूंकि रिकार्डियन लगान सिद्धांत इस प्रश्न का उत्तर नहीं देता है कि कैसे और कब लगान निर्धारित होता है, आधुनिक सिद्धांतवादी ने लगान लेने के लिए मांग और आपूर्ति सिद्धांत को विकसित किया है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि किसी भी कारक की मांग और आपूर्ति इसकी कीमत निर्धारित करती है, उसी तरह भूमि का लगान भी मांग और आपूर्ति के बल पर निर्धारित होता है। मृदा की उर्वरता में अंतर लगान का कारण नहीं है, बल्कि लगान का मुख्य कारण मांग के संदर्भ में सीमित आपूर्ति है । भूमि की कमी पर लगान अधिक होगा, भूमि की अधिकता के कारण लगान की राशि कम होगी। इसलिए इसकी मांग के संबंध में भूमि के लगान और कमी के बीच प्रत्यक्ष संबंध हैं।

लगान के आधुनिक सिद्धांत का विस्तार करने से पहले, हम रिकार्डियन और लगान के आधुनिक संस्करण की तुलना कर विकसित रूप से देख सकते हैं, इसके बारे में कोई दो राय नहीं है कि आधुनिक सिद्धांत रिकार्डो के लगान सिद्धांत का एक प्रवर्धित और संशोधित रूप है। रिकार्डियन सिद्धांत के प्रवर्धन

के परिप्रेक्ष्य को सिद्ध करने के लिए, आधुनिक विचारकों ने कहा कि भूमि की आपूर्ति सीमित और स्थिर है, लेकिन यह सुविधा कम से कम अल्पकाल में भी उत्पादन के अन्य कारकों में पाई जा सकती है। जब उनके लिए मांग कम हो जाती है तो उन्हें सामान्य आय की तुलना में अधिक राजस्व प्राप्त होता है। अल्पकाल में अर्जित अधिशेष लगान के रूप में जाना जाता है। लगान का आधुनिक सिद्धांत कारक मूल्य निर्धारण का सामान्य सिद्धांत है। अब रिकार्डियन सिद्धांत के संशोधन के बारे में बात करते हैं । जबकि रिकार्डो ने जोर दिया कि लगान तत्व को मापने के लिए सीमांत भूमि का उपयोग करना आवश्यक है, आधुनिक दृश्य सीमांत भूमि के अस्तित्व की अवधारणा से सहमत नहीं है बल्कि उनके लिए लगान वास्तविक आय और अंतरण आय के बीच का अंतर है। रिकार्डो के सिद्धांत में संशोधित किए जाने का अन्य बिंदु, लगान का कारण था । रिकार्डो के अनुसार उर्वरता क्षमता में अंतर ही लगान के निर्धारण का मुख्य कारण है। आधुनिक सिद्धांत उत्पादन के एक कारक के विनिर्देशन पर बल देता है। उत्पादन का कारक अधिक विशिष्ट है, इस से लगान का हिस्सा अधिक होगा। आधुनिक विचार अधिक तर्कसंगत और वैज्ञानिक लगता है तीसरी बात रिकार्डो सिद्धांत बताता है कि लगान और कीमत के बीच का संबंध है। लगान कीमत में प्रवेश नहीं करता बल्कि लगान कीमत भी निर्धारित नहीं करता है, लेकिन लगान मूल्य द्वारा निर्धारित किया जाता है, आधुनिक संस्करण यह है की, लगान मूल्य निर्धारित करता है । अधिक सटीक होने के लिए हम कहते हैं कि आधुनिक सिद्धांत पूरी तरह से अलग नहीं है और पूरी तरह से नया परिप्रेक्ष्य है, लेकिन रिकार्डो के सिद्धांत का एक संशोधित रूप है जो लगान के आधुनिक राय के लिए एक आधार के रूप में कार्य करता है।

लगान–आधुनिक विश्लेषण का निर्धारण

लगान का आधुनिक आर्थिक विश्लेषण मूल रूप से "जे एस मिल" द्वारा विकसित किया गया था। मांग और आपूर्ति न केवल उत्पाद की कीमत निर्धारित करते हैं बल्कि लगान भूमि के उपयोग के लिए भुगतान की जाने वाली कीमत है, और कारक बाजार में बाजार बलों द्वारा निर्धारित होता है। भूमि की मांग एक प्रत्यक्ष मांग नहीं बल्कि पैदा की हुई मांग है। कारण यह है कि, भूमि की मांग उसके इस्तेमाल के लिए की जाती है, मानव जाति द्वारा भूमि के उत्पादों की मांग की जाती है , अगर लोग अधिक मांग करते हैं, तो भूमि की कीमत अधिक होगी और यदि मांग कम है तो कीमत कम हो जाएगी। भूमि की आपूर्ति इस तथ्य पर निर्भर करती है कि भूमि के पास इसके वैकल्पिक उपयोग हैं, अर्थात, एक विशेष उपयोग के लिए उपयोग की जाने वाली भूमि का एक टुकड़ा दूसरे उद्देश्यों के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। लगान निर्धारण की मांग और आपूर्ति विश्लेषण को दो तरीकों से समझाया जा सकता है:

1. संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए
2. उद्योग में विशेष उपयोग के लिए

1. संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए

चूंकि पूरी तरह से अर्थव्यवस्था के लिए भूमि की आपूर्ति तय हो गई है, इसलिए लगान परिवर्तन की स्थिति में आपूर्ति में बदलाव नहीं किया जा सकता

है। तो आपूर्ति वक्र पूरी तरह से स्थिर और एक ऊर्ध्वाधर सीधी रेखा होगी। यहां भूमि की मांग उन उत्पादों की मांग पर निर्भर करती है जिनके लिए भूमि का इस्तेमाल करना होता है, जो कि भूमि की कीमत से विपरीत है। मांग की अवस्था बाएं से दाएं नीचे नकारात्मक हो जाएगी जैसा कि आपूर्ति पूरी तरह से स्थाई हो गई है, फिर भूमि की कीमत मांग मे घटती या बढती रहती है। मांग वक्र में बदलाव अलग–अलग समय पर अलग–अलग लगान के कारण होते हैं। कारक बाजार में, जहाँ पर मांग और आपूर्ति का वक्र दोनों एक दूसरे को परस्पर विभाजित करते हो वहाँ लगान प्रचलित होगा । इस प्रकार लगान बदला जा सकता है लेकिन केवल मांग स्तर में बदलाव के साथ ही।

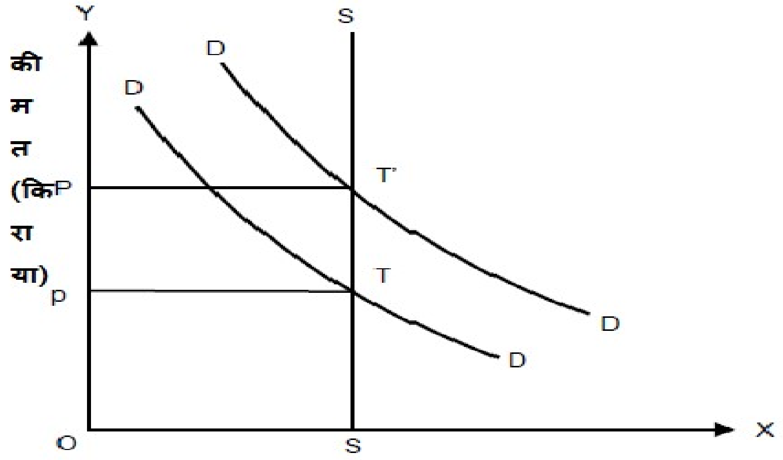

आरेख 15.3 पूर्ण रूप में अर्थव्यवस्था में उपयोग के लिए निर्धारित लगान

2. **उद्योगों में विशेष उपयोग के लिए**

भूमि की मांग उत्पादन की क्षमता के कारण पैदा होती है। भूमि की मांग के वक्र में सीमांत राजस्व उत्पादकता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भूमि के अधिक उपयोग के साथ, सीमांत राजस्व उत्पादकता कम हो जाती है, इस प्रकार सीमांत राजस्व उत्पादकता वक्र नकारात्मक रूप से कम हो जाएगा। नतीजतन वक्र की मांग भी बाएं से दाएं नीचे की ओर जाने लगेगी, इस प्रकार, यह संपूर्ण या आंशिक उधोग के मामले की अर्थव्यवस्था के लिए हो सकता है, मांग की वक्र समान ढलान का है, अंतर आपूर्ति वक्र में है। आपूर्ति वक्र यहां कोई स्थिरता नहीं है, बल्कि यह लोचदार वक्र है। उच्च स्तर के लगान पर अधिक भूमि एक विशेष उधोग के लिए लाया जाएगा और इसके विपरीत, हम यहां मान सकते हैं कि महाराष्ट्र की भूमि में गन्ने की जगह कपास की कृषि की जा रही है, तो कपास उत्पादक को कम से कम गन्ना उत्पादक को दिया गया लगान देना चाहिए। यह हमें आश्वासन देता है की न्यूनतम सकारात्मक लगान और आपूर्ति वक्र के विचार लगान पर निर्भर करेगा । भूमि और लगान की आपूर्ति सीधे संबंधित होगी और इस प्रकार आपूर्ति वक्र लोचदार है। आधुनिक विचार हमें बताते हैं कि लगान भूमि की कमी के कारण होता है, जहां रिकार्डो सिद्धांत केवल उर्वरता में अंतर की बात करता है, आधुनिक अर्थशास्त्री दोनों उर्वरता और स्थान के कारण भूमि की श्रेष्ठता की बात करते

हैं। विषम भूमि के परिणाम से लगान में भिन्नता होती हैं, अर्थात् मार्शल के उदाहरण के लिए, सभी लगान अप्राप्त लगान होते हैं और सभी लगान भिन्न लगान होते हैं। स्पष्टीकरण ऊपर वर्णित है नीचे दिया गया चित्र 15.4 की मदद से समझाया जा सकता हैरू

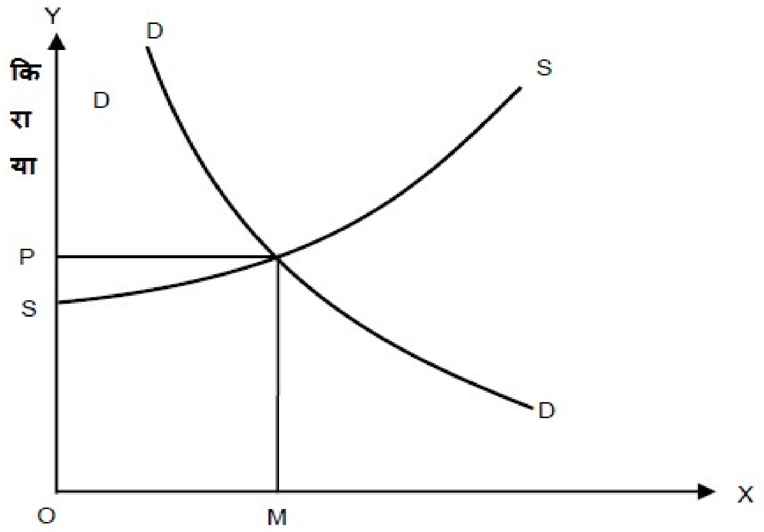

भूमि के लिये माँग और पूर्ति

आरेख 15.4 लगान निर्धारण उधोगो में विशेष उपयोग के लिए

उपरोक्त आरेख में सचित्र दर्शाया हैं, कि लगान के निर्धारण के लिए आधुनिक रूप मे भूमि की मांग और आपूर्ति, पूरी तरह से अर्थव्यवस्था के लिए, आपूर्ति में बदलाव नहीं किया जा सकता है, इसलिए मांग में कोई बदलाव लगान में बदल जाता है। सिर्फ किसी विशेष उघोग के मामले में नहीं, यहां दोनों, मांग और आपूर्ति वक्र लोचदार हैं इसलिए दोनों बलों ने निर्धारित किया है और साथ ही भूमि का लगान प्रभावित कर सकते हैं। यहां लगान को अंतर अधिशेष के रूप में देखा जाता है यदि भूमि की आपूर्ति पूरी तरह से स्थिर है और इसकी आपूर्ति की कीमत शून्य है, तो भूमि की संपूर्ण आय अधिशेष के रूप में लगान है। अल्पकाल में, अन्य कारक भी कम आपूर्ति में हैं और उनकी आपूर्ति स्थिर है। इसलिए वे अपनी अचल आपूर्ति के कारण अधिशेष कमाई भी कमा सकते हैं। मार्शल ने ठीक तरह से टिप्पणी की है, "यहां तक कि भूमि के लगान को सिर्फ लगान की तरह ही नही देखा जाता, बल्कि एक बड़ी महत्वपूर्ण वर्ग की प्रमुख प्रतिभा के रूप में देखा जाता हैं "। लगान के आधुनिक सिद्धांत एक या दो अर्थशास्त्रीयों का अनुमान नहीं है, यह विभिन्न विचारकों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न रायओं का एक संयोजन है अल्फ्रेड मार्शल ने अपनी पुस्तक "अर्थशास्त्र के सिद्धांतों" में अल्पकाल अवधारणा की बात की, उत्पादन के कारकों की आपूर्ति की स्थिरता कम नहीं है , श्रीमती जोन रॉबिन्सन ने अपनी पुस्तक "अपूर्ण प्रतियोगिता का अर्थशास्त्र" में हमें बताया है कि उत्पादन के सभी कारकों में अल्पकाल में भूमि पहलू शामिल हैं। श्रीमती रॉबिन्सन कहती हैं, "लगान की अवधारणा का सार यह है कि वह अपने काम

को करने के लिए प्रेरित करने के लिए कम से कम कमाई वाले उत्पादों के विशेष उपयोग से अर्जित अधिशेष की अवधारणा है।" यह कथन अधिशेष के विचार को स्पष्ट करता है। किसी भी उत्पादन कारक को लगान पर लेना उसके अंतरण आय के अलावा अन्य कमाई के अधिशेष द्वारा मापा जाता है। हस्तांतरण की कमाई की अवधारणा अधिशेष लगान के आधुनिक सिद्धांत का आधार है। स्वाभाविक रूप से, हमें अंतरण अर्जित आये का विचार स्पष्ट करना होगा। अर्जित आय, वह राशि है जो उत्पादन का हर पहलू अपने सर्वोत्तम के भुगतान को किए गए के वैकल्पिक उपयोग में कमा सकता है। यहां अर्जित आय, हमें उत्पादन के एक कारक के वैकल्पिक उपयोग बताता है। उत्पादन के एक कारक का सर्वोत्तम उपयोग करने का प्रयास किया जाता है। इसलिए यदि कारक के वर्तमान उपयोग को जारी रखने की आवश्यकता है तो अगले सर्वोत्तम वैकल्पिक उपयोग के बराबर कीमत को देने की आवश्यकता है। इसे 'न्यूनतम आपूर्ति मूल्य' कहा जाता है । एक कारक के वर्तमान उपयोग से अर्जित कमाई को वास्तविक कमाई कहा जाता है। उद्योग में इसे बनाए रखने के लिए एक उत्पादक कारक के लिए कमाई स्थानांतरण करना आवश्यक मूल्य है। अधिशेष लगान वो है, जो वास्तविक कमाई से कम करके पाई गई अंतरण आय है। इसलिए लगान वास्तविक कमाई से कम अंतरण आय के बराबर होता है। केवल विशिष्ट कारक लगान कमा सकता है क्योंकि उसे स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है। उत्पादन के कारक का केवल एक ही उपयोग किया जा सकता है इसलिए, स्थानांतरण शून्य हो जाएगा। गैर–विशिष्ट कारकों में स्थानान्तरण आय है, जितनी अधिक स्थानांतरण आये होगी उतना कम लगान होगा। विशिष्ट और गैर–विशिष्ट कारक उत्पादन के कारकों की आपूर्ति की लोच का संकेत देते हैं। हमें विशिष्ट या गैर विशिष्ट के रूप में उत्पादन के कारकों के विभाजन के बारे में परेशान होने की जरूरत नहीं है, केवल ध्यान रखने वाली बात आपूर्ति की लोच है जो इन कारकों की प्रकृति के अनुसार भिन्न है।

लगान निर्धारण को समझाने के लिए, हमें आपूर्ति की लोच के साथ वर्णन करना होगा जो पूरी तरह से पूर्णता और लोचदार है । रॉबिन्सन की लगान की अवधारणा की मांग वक्र में एक ही नकारात्मक ढलान है, बाएं से नीचे की ओर जहां उत्पादन के कारकों की सीमांत राजस्व उत्पादकता हर समय कम हो रही है, आपूर्ति वक्र का आकार वास्तव में भिन्न होगा, इसलिए लगान निर्धारण भी अलग तरह से समझाया जाएगा। आपूर्ति की लोच में तीन सामग्रियां हैं, अर्थात् पूरी तरह से स्थिर आपूर्ति, पूरी तरह से लोचदार और लोचदार आपूर्ति।

1. **पूरी तरह से स्थिर आपूर्ति और लगान:** एक ऊर्ध्वाधर सीधी रेखा पूरी तरह स्थिर आपूर्ति को दर्शाती हैं परंतु अस्थिर नकारात्मक ढाल मांग वक्र है। मांग वक्र क्क और आपूर्ति वक्र` के साथ व्स्ड की पूरी कमाई लगान है क्योंकि इसमें कोई अंतरण नहीं है। वृद्धि के साथ मांग है, अर्थात D1D1 वक्र दोनों वास्तविक आय और लगान वृद्धि है ।

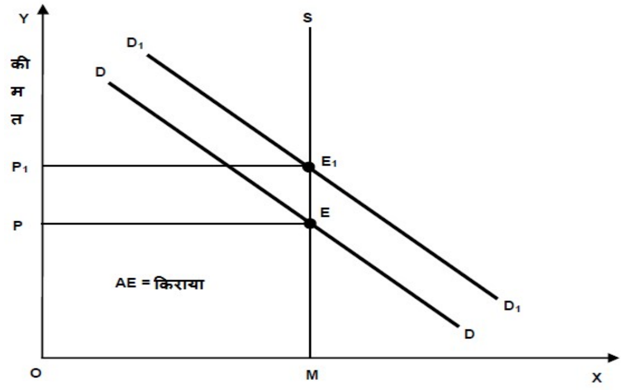

भूमि

आरेख 15.5 पूरी तरह से स्थिर आपूर्ति और लगान

2. **पूरी तरह से लोचदार आपूर्ति और लगान:** इस तथ्य से तात्पर्य है कि किसी दिए गए मूल्य पर किसी भी मात्रा में भूमि की आपूर्ति की जा सकती है। यहाँ भूमि की सभी इकाइयों की आय में अंतर समान है। तो वास्तविक कमाई अर्जन करना होगा। इसलिए कोई लगान प्रचलित नहीं होगा।

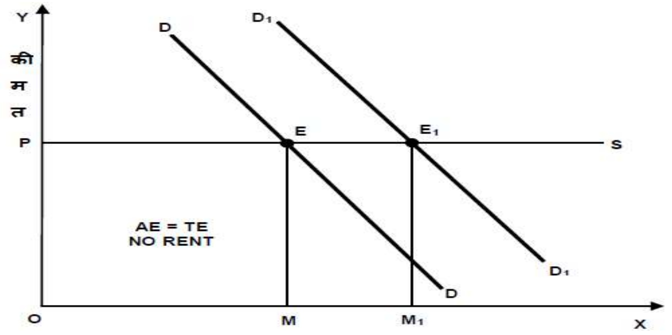

भूमि

आरेख 15.6 पूर्ण लोच पूर्ति

ऊपर दिया गया उदाहरण, मांग आपूर्ति संतुलन दिखाता है, चूंकि कोई भी लगान और अंतरण आय और वास्तविक आय संतुलन स्तर पर बराबर होती है। मांग बढ़ सकती है पर पोषक तत्व शून्य रहते हैं ।

3. **लोचदार आपूर्ति और लगान:** यह पूरी तरह से अर्थव्यवस्था के लिए है, भूमि एक विशिष्ट उपयोग के लिए पूरी तरह से स्थिर या लोचदार है, यह आसानी से लोचदार हो सकती है। इस मामले में अंतरण अर्जित आय वास्तविक आय से कम होती हैं और उनके अंतर को लगान कहा जाता है। भूमि की मांग और आपूर्ति दोनों लचीले हैं और भूमि के प्रति इकाई मूल्य निर्धारित करते हैं।

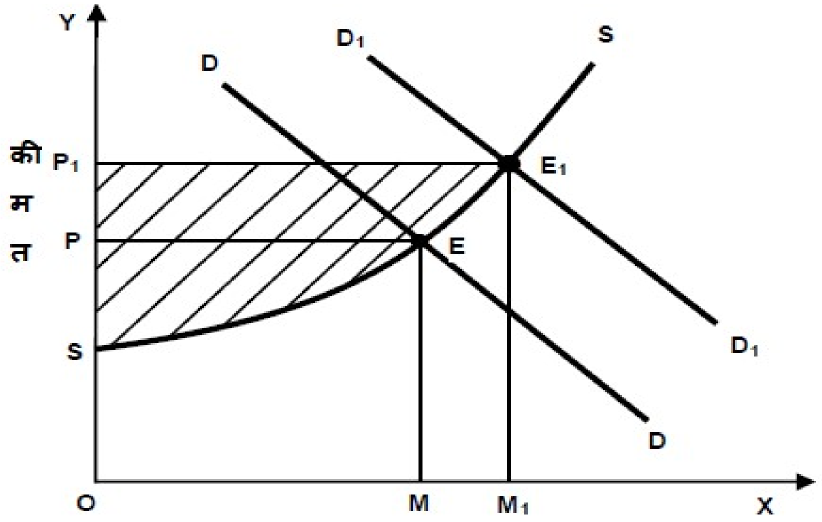

भूमि
आरेख 15.7 पूर्ति और लगान में लोच

दिए गए आंकड़े में वास्तविक कमाई "OMEP " है DD के साथ मांग वक्र और SS आपूर्ति वक्र है। यहाँ कमाई स्थानांतरण "OMES" है, यहां अंतर का लगान "SER = OMEP–OMES" है मांग में वृद्धि के साथ, मांग वक्र D1 D1 वक्र में बदल जाएगा और नए संतुलन ई 1 पर स्थापित किया जाएगा। अब वास्तविक कमाई OM1 E1 P1 है और स्थानांतरण आय "OM1 E1 S" है, इसलिए अधिशेष "SE 1 पी 1" है।

15.4 अर्ध लगान

अर्ध लगान की अवधारणा डॉ अल्फ्रेड मार्शल द्वारा विकसित की गई थी। अर्ध लगान से हमारा तात्पर्य है कि एक वस्तु या सेवा के लिए किया गया भुगतान जो निश्चित समय के लिए आपूर्ति में सीमित है। यहां हम उस उत्पाद के लिए और अधिक भुगतान करते हैं जो मौजूदा आपूर्ति को बनाए रखने के लिए आवश्यक होगा। अर्ध लगान के अस्तित्व का आशय है सही अधिशेष या आर्थिक लगान, या तो आपूर्ति में वृद्धि या मांग में गिरावट अर्ध लगान को समाप्त करने की सक्षम हो सकती है। अर्ध लगान की मार्शल की अवधारणा संक्षिप्त–अवधि की अवधारणा है और अर्ध लगान उन कारकों से प्राप्त होता है जिनकी आपूर्ति असीमित हैं।

अर्ध लगान के लिये दृढ़ संकल्प:

पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी बाजार में छोटी अवधि में मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया यहां पर बहुत प्रासंगिक है। मांग में कोई भी बदलाव अल्पावधि में आपूर्ति में बदलाव से मेल नहीं खाता। केवल लंबे समय तक चलने से हमें संयंत्र पैमाने को बदलने या यहां तक कि एक नया संयंत्र स्थापित करने की अनुमति मिल जाती है। संयंत्र और उपकरणों की आपूर्ति तय और स्थिर रहने के लिए मानी जाता है। लघु अवधि में भले ही अर्ध लगान दिया गया हो, यह लंबे समय तक उपस्थित नहीं रहता है। डा. मार्शल ने अपनी पुस्तक श्अर्थशास्त्री सिद्धांतश में

"पर्ब्ले ऑफ़ मीटर और स्टोन" का उदाहरण लेकर इस अवधारणा को समझाया। तीन स्थितियों को मान लिया जा सकता हैरू

पत्थरों का बरसना केवल एक ही स्थान पर होता है। ये पत्थर उधोग के लिए उपयोगी हैं, लोग इन पत्थरों को प्रकृति के मुफ्त उपहार के रूप में मानते हैं और उनसे प्राप्त आय उन्हें भूमि की रकम जैसी है। इन पत्थरों की आपूर्ति कम और लंबी अवधि में बदल सकती है, इसलिए आपूर्ति लोचदार नही है।

दूसरी परिस्थितियों पत्थरों का अप्रत्याशित लाभ भूमि के सभी अलग–अलग क्षेत्रों में अनुभव होता है। इस प्रकार, आपूर्ति असीमित होती है इसलिए पत्थरों की आपूर्ति कम और लंबी–दौड़ में पूरी तरह से लोचदार है।

तीसरी स्थिति इस तथ्य से संबंधित है कि पत्थरों की सप्लाई छोटी अवधि में सीमित है, लेकिन लंबे समय तक असीमित हो सकती है, इसलिए लंबी अवधि में आपूर्ति पूरी तरह से और छोटी अवधि में थोड़ी–थोड़ी लोचदार है। अल्पकाल में पत्थरों के लिए कोई कीमत नहीं है, इसलिए उनसे प्राप्त आय को अर्ध–लगान कहा जाता है, लेकिन लंबी अवधि में पत्थरो की लागत बढ़ जाती है, इसलिए बिक्री के बाद प्राप्त होने वाली कुल आय से लागत का भुगतान करने के बाद अंतर उधोग के लिए पत्थरों का अर्ध–लगान होता है।

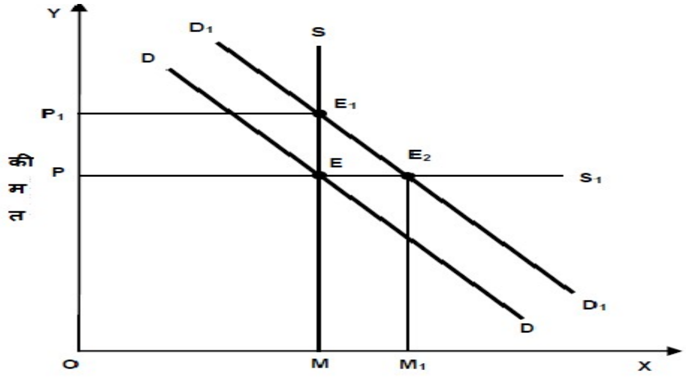

आरेख 15.8 मार्शल का अर्ध लगान के लिये दृढ़ संकल्प

आरेख में, SM अल्पकाल में पत्थरों की वक्र की आपूर्ति है जो लोचदार नहीं है, और S1 P लंबे समय तक रेने वाला पत्थरों का आपूर्ति वक्र है जो पूरी तरह से स्थिर है। आपूर्तिवक्र SM और S1 P के साथ पत्थर की एक इकाई का मूल्य DD के वक्र के मेल से निर्धारित किया जाता है। पत्थर की मात्रा की माँग और आपूर्ति OM है, जिसके साथ मांग वक्र DD और प्रति इकाई की कीमत OP है। पत्थरों से आय "OMEP" होगी, चूंकि अल्पकाल में आपूर्ति वक्र स्थिर है तो पत्थरों से आय OMEP के बराबर है। यह आय यहां भूमि के लगान जैसी है लंबे समय तक, लंबे समय तक चलने वाला आपूर्ति का लोच वक्र द्रश्य बदलता है, यदि मांग स्तर D1 D1 तक बढ़ाया गया है, तो अल्पकाल में कीमत OP के बजाए OP 1 से बढ़ेगी। लेकिन लंबे समय में मांग में वृद्धि के साथ पत्थर की अधिक मात्रा की आपूर्ति की जा सकती है, अर्थात् ओएम 1 के बजाय OM1 अब कीमत OP से नीचे आ जाएगी, जो पत्थरों को खोजने पर

खर्च के बराबर है। तो अर्ध लगान और नही पाया जा सकता, जो अल्पकाल में पाया जाता है।

मार्शल द्वारा कहा गया है कि अर्ध–लगान को फिर से चर लागतों के अतिरिक्त अधिशेष माना जाता है, उत्पादन की लागत दो प्रकार की होती हैं, अर्थात् स्थाई और परिवर्तनीय लागत। उधोग को कम से कम औसत परिवर्तनीय लागतों को सम्मिलित करने की आवश्यकता है, अगर उत्पादन प्रक्रिया को जारी रखने के लिए औसत तय लागत नहीं है तो यह केवल अल्पकाल की स्थिति है, लंबे समय तक चलने वाली सभी लागतों में, ATC = AFC + AVC को उधोग में बने रहने के लिए सम्मिलित किया जाना चाहिए, इसलिए मशीन अल्प अवधि में राजस्व का कारण बनती है। अर्ध लगान कुल परिवर्तनीय लागतों पर कुल राजस्व से अधिक है। अर्ध लगान = कुल राजस्व–कुल चर लागत

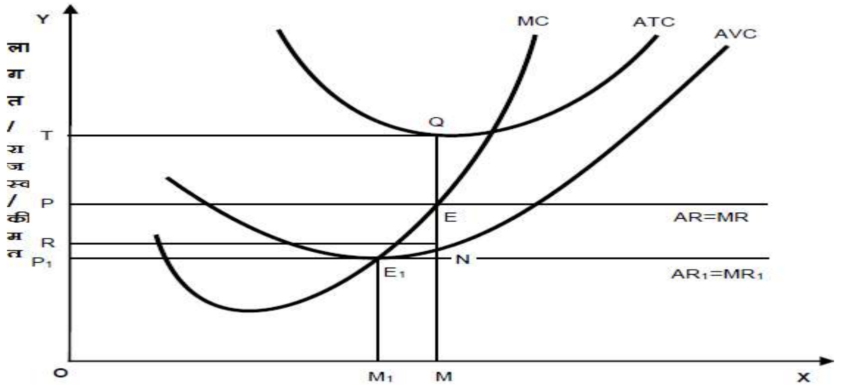

आरेख 15.9 परिभाषा अर्ध लगान

अल्पकाल में अर्ध–लगान जो ऊपर दिए गए आंकड़े की मदद से समझाया गया है। व अक्ष पर उपरोक्त आरेख में दर्शाया गया है कि उत्पाद की मात्रा और उत्पाद की OY–अक्ष लागत / राजस्व मूल्य पर है । ATC और AVC वक्र औसत कुल लागत और औसत परिवर्तनीय लागत की कमी है, डब सीमांत लागत वक्र है I AR = MR औसत और सीमांत राजस्व का पूर्ण प्रतियोगिता के तहत फर्म है। MR = MC फर्म के संतुलन की स्थिति है, E संतुलन बिंदु है जहां मूल्य OP है और OM संतुलन उत्पादन है। यहां फर्म का कुल राजस्व OMEP है और कुल लागत ओएमक्यूटी हैं यह चित्र से स्पष्ट है कि फर्म नुकसान उठा रहा है, यानी, "PEQT" । एक अन्य तथ्य यह है कि परिवर्तनीय लागत OMEP हैं जो फर्म के कुल राजस्व से कम है। RNEP में कुल राजस्व और परिवर्तनीय लागत का अंतर, जिसे फर्म के अर्ध लगान कहा जाता है। तो अर्ध लगान यहां है OMEP & OMNR = RNEP अब अगर कीमत OP पर आती है, तो फर्मों के संतुलन की बात E1 और संतुलन स्तर 1, नई फर्मों की कुल लागत = OM1E1P1 होगी। फिर कुल चर लागत E1 संतुलन स्तर पर भी समान है, इसलिए फर्म द्वारा कोई अर्ध–लगान अर्जित नहीं किया जाता है। यहां तक कि अगर कीमत फिर से गिरती है, तो अब फर्म उत्पादन नहीं करेगा, इसलिए फर्म को बंद कर दिया गया क्योंकि यहां तक कि

परिवर्तनीय लागत नहीं मिल रही हैं। हम इस बात पर बल दे सकते हैं कि अल्पकाल में अर्ध लगान मिलता है लेकिन यह शून्य या नकारात्मक नहीं होता है । जहां तक दीर्घ समय का संबंध है, स्थिर और चर लागतों के बीच कोई अंतर नहीं है। एक पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी फर्म लंबे समय तक चलने में केवल सामान्य लाभ कमाता है, जहां कुल राजस्व और कुल लागत बराबर होती है। सामान्य लाभ ऐसे समय के बाजार की अवधि के अंतर्निहित हैं। परिवर्तनीय लागत द्वारा लागतों के अलावा कोई राजस्व अर्जित नहीं किया जाता है, इसलिए फर्म के पास लंबे समय तक कोई अर्ध–लगान नहीं होता है। हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि अर्ध–लगान एक छोटी सी अवधारणा है।

लगान और अर्ध–लगान के बीच का अंतर

लगान और अर्ध लगान की परिचर्चा हमें दोनों के बीच का अंतर और दोनों की समानता समझने में मदद करेगा।

समानताएं

1. लगान और अर्ध–लगान दोनों को अधिशेष कहा जा सकता है। जबकि लगान की भूमि के उपयोग पर अधिशेष प्राप्त होता है, इसके विपरीत अर्ध–लगान मानव–निर्मित मशीनरी पर अधिशेष अर्जित होता है।
2. जब भूमि की मांग और मशीन की मांग बढ़ती है तो लगान और अर्ध लगान भी बढ़ जाता है ।
3. उन दोनों का कारण उनकी सीमित आपूर्ति है, असीमित आपूर्ति लगान या अर्ध–लगान नहीं ला सकता है।
4. दोनों वास्तविक और हस्तांतरण आय के बीच अंतर से निर्धारित होते हैं।

अन्तर

1. लगान प्रकृति के मुफ्त उपहारों से प्राप्त होता है, लेकिन मानव निर्मित संसाधनों से अर्ध–लगान प्राप्त होता है।
2. लगान दोनों ही अल्पकाल और दीर्घसमय में प्राप्त होता है, लेकिन अर्ध लगान केवल एक अल्पकाल की अवधारणा है।
3. लगान स्थायी है लेकिन अर्ध–लगान बाजार की एक अस्थायी सुविधा है।
4. लगान शून्य नहीं होता है, लेकिन कुल राजस्व कुल चर की लागत के बराबर होने पर अर्ध–लगान शून्य हो सकता है।
5. लगान कुल राजस्व और कुल लागत के बीच का अंतर है, लेकिन अर्ध–लगान कुल राजस्व और परिवर्तनीय लागत के बीच का अंतर है।

15.5 स्थिति लगान

जब हम लगान की बात करते हैं तो हम हर दिन के जीवन में प्रचलित लगान के एक महत्वपूर्ण रूप को अनदेखा नहीं कर सकते। स्थिति लगान उस लगान की अवधारणा है जो भूमि की स्थिति से संबंधित है। आज की दुनिया के खुले बाजार और व्यापार प्रणाली में, वाणिज्यिक प्रतिष्ठान अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। मान लीजिए एक डीलर एक दुकान लगान पर लेना चाहता है। वह इसे शहर में कहीं भी प्राप्त करने के लिए नहीं पसंद करेंगे बल्कि एक प्रासंगिक बाजार में अपनी पसंद की दुकान लेने का

निर्णय लेंगे। दिल्ली के सदर बाजार और कनॉट प्लेस बाजार की बात करते हुए, कनॉट प्लेस का पसंदीदा विकल्प होगा। इसका कारण यह है की कनॉट स्थान एक फैशनेबल शॉपिंग सेंटर है। इस क्षेत्र में भूमि की अधिक आपूर्ति सीमित है। अच्छी तरह से स्थापित दुकानो की मांग ज्यादा होगी। सदर बाजार की दुकान से कनॉट प्लेस में स्वाभाविक रूप से लगान अधिक होगा। वही अन्य शहरों और गैर शहरी भूमि पर भी यही नियम लागू होता है। यहां तक कि कोने की दुकान, मुख्य सड़क की भूमि और अन्य सभी संभव मतभेद अलग–अलग लगान हो जाते हैं। वास्तव में यह है कि, भूमि अपने वैकल्पिक उपयोगों की बड़ी मांग के कारण ही उच्च कीमत लाती है। अलग–अलग स्थलों के मिले–जुले लाभ हैं जब भी स्थल के फायदे में बदलाव होता है तो उनके तुलनात्मक लगान भी बदलते हैं। लगान, भूमि या स्थल मे स्पष्ट रूप से अधिशेष रहता है।

लगान और मूल्य

यह बहस का विषय रहा है कि कैसे लगान और मूल्य संबंधित हैं एक लोकप्रिय धारणा थी श्लगान ऊंचा है क्योंकि मक्का अधिक है, मक्का अधिक है क्योंकि लगान ऊंचा हैश जो दोनों में से एक सही है, आसानी से उत्तर नहीं दिया जा सकता है। एक ब्रिटिश अर्थशास्त्री, रिकार्डो, जिन्होंने लोकप्रिय ष्लगान के सिद्धांतष का विकास किया, उन लोगों की राय के साथ कभी सहमत नहीं हुए जिन्होंने मकई को उच्च भूमि की कीमत के उच्च कारण माना। किसानों को भूमि मालिक को उच्च मूल्य का भुगतान करना पड़ता था, इसलिए उन्हें मजबूर किया गया, इस प्रकार लगान उत्पादन का एक हिस्सा माना जाता था। रिकार्डो ने लोगों की राय बदल दी। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने भी अपने विचारों को संशोधित किया इसलिए यहां एक महत्वपूर्ण चर्चा हुई है। दो संस्करण हैं , जिसमे से एक रिकार्डो और दूसरा आधुनिक संस्करण है

रिकॉर्डियन का दृष्टिकोण

रिकार्डो कहते हैं कि उच्च लगान उच्च कीमत का कारण नहीं है बल्कि मक्का की उच्च कीमत उच्च लगान का कारण है। लगान के विभेदित अधिशेष संस्करण पर आधारित कोई लगान भूमि नहीं है। इसलिए लगान कीमत में प्रवेश नहीं कर सकता है, लगान कीमत द्वारा निर्धारित नहीं किया जाता बल्कि मूल्य द्वारा निर्धारित किया जाता है। तो मक्का उच्च नहीं है क्योंकि उसका लगान भुगतान किया जाता है, बल्कि लगान भुगतान किया जाता है क्योंकि मक्का अधिक है इस प्रकार लगान निर्धारित मूल्य निर्धारण के लिए कीमत नहीं है।

आधुनिक विचारधारा

आधुनिक विचारक कहते हैं कि भूमि में वैकल्पिक उपयोग होते हैं। सबसे लाभदायक वैकल्पिक उपयोग भूमि की स्थानांतरण लागत है जो उत्पादन की लागत का रूप है। तो लगान कीमत में सम्मलित होता है। रिकॉर्डियन का यह विचार अच्छा है कि अगर हम समुदाय की कीमत देखने के लिए भूमि देखते हैं तो,लगान कीमत में सम्मलित नही होता है। यदि भूमि का विशेष उपयोग माना जाता है कि यह सत्य नहीं है, तो वास्तव में हमें इसे अलग तरह से विश्लेषण करना होगा। आधुनिक दृष्टिकोण इसे समाज, एक उधोग और

एक अलग–अलग निर्माता के विश्लेषण के रूप में देखें। समाज के परिप्रेक्ष्य मे, भूमि की लागत शून्य हो जाएगी क्योंकि समाज को प्रकृति का मुफ्त उपहार मिलेगा। जब भूमि की मांग बढ़ती है, आपूर्ति असुविधाजनक होती है, कीमत, अर्थात, लगान पैदा होगा। इसलिए लगान निर्धारित मूल्य है किसी विशेष उद्योग की बात करना, स्थानांतरण लागत उत्पादन की लागत का हिस्सा है, इसलिए लगान मूल्य में प्रवेश करता है भूमि की आपूर्ति पूरी तरह से लोचदार से कम है, अगर कोई विशेष उद्योगपति अपने उत्पादन का पता लगाना चाहता है तो उसे अधिक भूमि खरीदनी होगी। इसलिए एक न्यूनतम अंतरण मूल्य आवश्यक है जो उत्पादन की लागत है। इसलिए उत्पादन की कीमत लगान द्वारा निर्धारित की जाती है। किसी व्यक्ति की दृष्टि से लगान उत्पादन की लागत है और मूल्य में प्रवेश करता है क्योंकि यह आवश्यक भुगतान है ।

15.6 सारांश

लगान भूमि के उपयोग के लिए भुगतान किया जाता है, जो कि न केवल प्रकृति का एक मुफ्त उपहार है, बल्कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए आपूर्ति में सीमित है। यह उत्पादन के किसी भी कारक के लिए भुगतान किया गया है। लगान निर्धारण के लिए दो सिद्धांत हैं, अर्थात् लगान के रिकार्डियन सिद्धांत और लगान के आधुनिक सिद्धांत। रिकार्डियन सिद्धांत इस बात पर जोर दिया गया है कि केवल भूमि के इस्तेमाल के लिए लगान का भुगतान किया जाता है और आधुनिक सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि मानव निर्मित मशीनों के लिए किया गया भुगतान भी लगान है। मार्शल द्वारा दिए गए अर्ध लगान की अवधारणा अल्पकाल में सही है जहां परिवर्तनीय लागत को समाविष्ट किया जा सकता है।

15.7 शब्दावली

- **लगान:** किसी विशेष अवधि के लिए भूमि के उपयोग या किसी भौतिक सम्पति के इस्तेमाल के लिए किया गया भुगतान ।
- **व्यापक कृषि:** कृषि जिसमें अधिक जनसंख्या के कारण भूमि की उपज की अतिरिक्त मांग को पूरा करने के लिए अधिक भूमि पर श्रम और पूंजी की अधिक इकाइयां समाहित की जाती है ।
- **अर्ध लगान:** किसी वस्तु या सेवा के लिए किया गया भुगतान है, जिसकी कुछ समय के लिए आपूर्ति सीमित है ।

15.8 बोध प्रश्न

(ए) रिक्त स्थान भरें

(ए) लगान .... के उपयोग के लिए भुगतान की गई कीमत है द्य

(बी) रिकार्डो के अनुसार, लगान .... भूमि द्वारा सीमांत भूमि की आय पर अर्जित किया गया अंतर अधिशेष है ।

(सी) रिकार्डियन सिद्धांत के लगान में ग्रेड डी भूमि को .... भूमि कहा जाता है द्य

(डी) आर्थिक लगान = वास्तविक कमाई – .... कमाई

(ई) प्रकृति के .... के कारण लगान प्राप्त होता है द्य

(बी) सही या गलत

(ए) अर्ध लगान लंबी अवधि की अवधारणा है।

(बी) अर्ध लगान कुल चर से अधिक कुल राजस्व से अधिक है।

(सी) हस्तांतरण अर्जन आय की वह राशि है जो कि एक विशेष कारक अपने अगले सर्वोत्तम भुगतान वैकल्पिक उपयोग में कमा सकता है।

(डी) आधुनिक सिद्धांत के आधार पर लगान एक अंतर अधिशेष नहीं है ।

(ई) प्रो. वीजर ने दो भागों में उत्पादन के कारकों को विभाजित किया है अर्थात, विशिष्ट और गैर विशिष्ट

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए) (ए) भूमि, (बी) अंतर सीमांत, (सी) कोई लगान, (डी) स्थानांतरण, (ई) कृपणता

(बी) (ए) असत्य (बी) सत्य(सी) सत्य(डी) असत्य (ई) सत्य

15.10 स्वपरख प्रश्न

1. रिकार्डियन के लगान के सिद्धांत का समीक्षात्मक मूल्यांकन कीजिए ।
2. आधुनिक अर्थशास्त्रीयों द्वारा लगान पर क्या प्रभाव और संशोधन लागू किये गए है ? व्याख्या कीजिए ।
3. अर्ध–लगान की अवधारणा की व्याख्या कीजिए । यह कैसे निर्धारित किया जाता है?

15.11 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रेंटिस हॉल ऑफ़ भारत, नई दिल्ली।
2. डी.एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. टी.आर. जैन, ओ.पी. खन्ना और विरसेन, माइक्रो इकोनॉमिक्स एंड इंडियन अर्थव्यवस्था, वी.के. प्रकाशक, नई दिल्ली ।
4. एच.एल. अहुजा, एडवांस्ड इकोनॉमिक थ्योरी, एस चंद एंड कं लिमिटेड,नई दिल्ली।
5. आत्मानंद, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सेल बुक, दिल्ली।

इकाई 16 ब्याज – अवधारणा और ब्याज के सिद्धांत

इकाई की रुपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 सकल ब्याज और शुद्ध ब्याज
16.3 ब्याज दर अंतर
16.4 ब्याज का सिद्धांत
16.5 सारांश
16.6 शब्दावली
16.7 बोध प्रश्न
16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
16.9 स्वपरख प्रश्न
16.10 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- ब्याज का अर्थ समझ सकें।
- सकल ब्याज और शुद्ध ब्याज का वर्णन कर सकें।
- ब्याज की विभिन्न दरो का अध्ययन कर कर सकें।
- ब्याज की सिद्धांतों को समझ सकें।

16.1 प्रस्तावना

पूंजी के उपयोग के लिए किए गए भुगतान को ब्याज कहते है। ब्याज बेहतर भविष्य के लिए वर्तमान इच्छाओ को त्याग करने का पुरस्कार है। सकल ब्याज में पूंजी के ऋण के लिए सभी प्रकार के भुगतान शामिल हैं, हानि के जोखिम को समाविष्ट करने के लिए, असुविधा के लिए एंव प्रबंधन के लिए और साथ ही जहां शुद्ध ब्याज का भुगतान पूंजी के उपयोग के लिए किया जाता है। बाजार में कई अलग–अलग ब्याज दर संरचनाएं उपलब्ध हैं। ब्याज दरों में अंतर के लिए मुख्य कारण अपूर्ण बाजार की स्थितिया, जोखिम का स्तर, एकाधिकाराम्त्क, ऋण की राशि और उधारकर्ता की योग्यता है।

अर्थ

ब्याज पूंजी के मालिक द्वारा प्राप्त भुगतान है। ब्याज संयम के लिए पुरस्कार है, प्रतीक्षा पर इच्छाओ का त्याग, जैसा कि कार्वर ने बताया कि ब्याज वह आय है जो पूंजी के मालिकों को जाती है। जॉन राये और बोहम बावर ने ब्याज को समय प्राथमिकता के लिए बट्टा या प्रीमियम माना हैं। केन्स के अनुसार तरलता के साथ विभाजन का भी नाम है। मिल कहते हैं, ब्याज संयम के लिए पारिश्रमिक है। आधुनिक अर्थशास्त्री ने मांग और आपूर्ति के आधार पर ब्याज का निर्धारण किया है।

16.2 सकल ब्याज और शुद्ध ब्याज

उधार लेने वाले निधियों के उपयोग के लिए उधारकर्ता को ऋणदाता द्वारा किए गए कुल भुगतान को सकल ब्याज कहा जाता है। इसमें पूंजी के

इस्तेमाल के लिए भुगतान, जोखिम के कारण, भुगतान असुविधा और ऋण का प्रबंधन शामिल है। प्रो. चौपमैन के अनुसार सकल ब्याज पूंजी के ऋण के लिए भुगतान, हानि के जोखिम को समाविष्ट करने के लिए भुगतान जो कि

क) व्यक्तिगत जोखिम या,

ख) व्यापार जोखिम है।

सकल ब्याज

सकल ब्याज एक व्यापक शब्द है जिसमें निम्नलिखित भुगतान शामिल हैं:

1) **शुद्ध या शुद्ध ब्याज:** या पैसे के उपयोग के लिए इनाम है।

2) **असुविधा के लिए इनाम:** जब ऋणदाता उधारकर्ता को पैसे देता है तो वह भविष्य के लिए वर्तमान में पैसे का खर्च नहीं कर रहा है, वह पैसे को अपनी वर्तमान योजनाओं के लिये एकत्रित कर रहा है, इसके बदले भविष्य मे उसे ब्याज मिल जाएगा ।

3) **प्रबंधन के लिए इनाम:** ऋण दाता को खाते की पुस्तकों के रखरखाव के लिए व्यय करना पड़ता है, स्मरणपत्र भेजना पड़ता है और उधारकर्ता के खिलाफ कुछ कानूनी कार्रवाई भी करनी पड़ती है, अगर वह पैसे समय पर नहीं चुकाता तो , यह सब प्रबंधन के लिए कुछ अतिरिक्त पैसा ब्याज के रूप में देते है।

4) **जोखिम लेने के लिए इनाम:** अधिक से अधिक जोखिम तत्व के लिए अधिक इनाम होता है। सुरक्षा के बिना ऋण अधिक जोखिम वाले हैं।

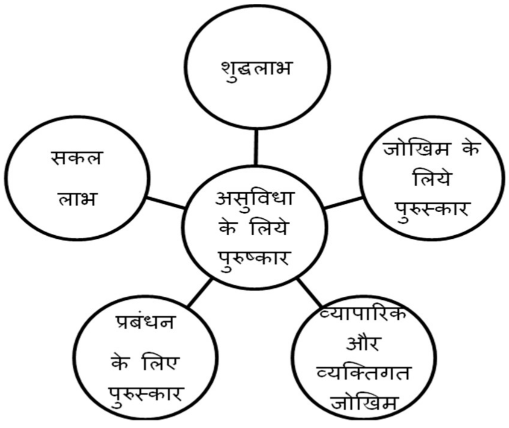

आरेख 16.1 : सकल लाभ अवयव

शुद्ध ब्याज

शुद्ध ब्याज पूंजी के उपयोग के लिए भुगतान है। इसमें जोखिम लेने, असुविधा और प्रबंधन के लिए इनाम शामिल नहीं है। चौपमैन के अनुसार शुद्ध ब्याज पूंजी के ऋण के लिए एक भुगतान है, जब कोई जोखिम नहीं, कोई भी असुविधा नहीं है और ऋणदाता पर कोई काम नहीं है।

सकल ब्याज = शुद्ध ब्याज + असुविधा के लिए पुरस्कार + जोखिम लेने के लिए पुरस्कार + प्रबंधन के लिए पुरस्कार

शुद्ध ब्याज = सकल ब्याज – (असुविधा के लिए इनाम – जोखिम लेने के लिए पुरस्कार – प्रबंधन के लिए इनाम)

16.3 ब्याज दर अंतर

बाजार में कई अलग–अलग ब्याज दर संरचना मौजूद हैं। ब्याज दरों में एकरूपता मौजूद नहीं है, ब्याज दरों के बड़े प्रभाव के प्रसार को ब्याज दरों की संरचना कहा जाता है । प्रतिस्पर्धी बाजार के मामले में, ब्याज दरों में एकरूपता रहेगी। लेकिन वास्तव में अपूर्ण बाज़ार के कारण ब्याज दरों में अंतर है । बॉब के अनुसार, ब्याज दरों में अंतर के चार बुनियादी कारण हैं जिनमें शामिल हैं: (i) जोखिम (ii) तरलता (iii) ऋण की परिपक्वता (iv) एकाधिकार तत्व। विभिन्न ब्याज दरों के अस्तित्व के लिए प्रमुख कारण निम्न हैं:

(I) **जोखिम के स्तर:** यदि जोखिम अधिक है, तो उस पर ब्याज का अधिक से अधिक शुल्क लिया जाएगा। सामलात ऋण की तुलना में व्यक्तिगत ऋण के लिए उच्च शुल्क है।

(II) **अपरिपक्व बाजार की स्थितियां:** बाज़ार की स्थिति क्षेत्र से क्षेत्र और उघोग से उघोग भिन्न होती है, इसलिये ब्याज दर मे अंतर होता है।

(III) **पूंजी की गतिशीलता:** यदि पूंजी पूरी तरह से गतिशील है, तो ब्याज दरें एक समान हो जाएंगी और कम हो जाएंगी, लेकिन अपूर्ण बाजार स्थितियों में जहां पूंजी कम गतिशील है ब्याज दरों में वहां अधिक होगा।

(IV) **ऋण की राशि:** यदि ऋण की राशि बड़ी है तो ब्याज दर कम होगी, और दूसरी तरफ अगर ऋण की रकम कम है और यह छोटी अवधि के लिए है, तो ब्याज का भुगतान अधिक होगा।

(V) **अंतर:** ऋणदाता और उधारकर्ताओं के बीच अंतर ब्याज दरों में अंतर के अस्तित्व के कारण हो सकते हैं।

(VI) **पूंजी की उत्पादकता:** अगर पूंजी की उत्पादकता अधिक है, तो उधारकर्ता ऋणदाता से पूंजी प्राप्त करने के लिए ब्याज की उच्च दर का भुगतान करना होगा।

(VII) **उधारकर्ता की योग्यता :** जिन व्यक्तियों की अधिक से अधिक क्रेडिट क्षमता है और जो अखंडता के लिए जाने जाते हैं, वे आसानी से शर्तों पर अन्य की तुलना में कम ब्याज दर के साथ ।ऋण प्राप्त कर सकते हैं।

(VIII) **सुरक्षा का प्रकार :** ब्याज दर सुरक्षा प्रकार के साथ भिन्न होती है संपत्ति आदि की तरह अचल संपत्तियों की तुलना सोने की संपत्ति में ब्याज दरें कम होती हैं। जितनी संपत्ति की तरलता है, ब्याज की दर उतनी कम होगी।

(IX) **बैंकिंग संस्थाओं के आविर्भाव:** विकसित बैंकिंग संरचना के उद्भव के साथ, ब्याज दर मे कम भिन्नता है। लेकिन आज भी महाजनों और सहूकारों द्रवारा उधारकर्ताओं से फायदा उठाने और बेहद ब्याज लेने की भूमिका मौजूद है।

16.4 ब्याज का सिद्धांत

मुख्य रूप से ब्याज के दो सिद्धांत हैं एक दृष्टिकोण का संबंध है कि ब्याज का भुगतान, क्यों किया जाता है और अन्य दृष्टिकोण ब्याज दरों के निर्धारण के मुद्दे से संबंधित है।

ब्याज की सीमांत उत्पादकता सिद्धांत

इस सिद्धांत के प्रतिपादक जे बी से और माल्थस हैं। पूंजी की सीमान्त उत्पादकता के कारण ब्याज का भुगतान किया जाता है। पूंजी अपनी उत्पादकता उत्पन्न करती है और यही कारण है कि पूंजी की इस गुणवत्ता के लिए ब्याज का भुगतान किया जाता है। पूंजी के मामले में घटती उत्पादकता का सिद्धांत भी लागू होता है। उघमी तब तक पूंजी का काम करेगा जब तक कि उसकी सीमांत उत्पादकता इसके लिए ब्याज के बराबर न हो जाये ।

संयम और प्रतीक्षा सिद्धांत

यह सिद्धांत मार्शल और एन सीनियर द्वारा प्रस्तावित है। उनके अनुसार बचत मे कुछ प्रकार के त्याग शामिल हैं तो लोगों को बचत के लिए प्रेरित करने के लिए उन्हें ब्याज के रूप में इनाम दिया जाता है, इसलिए ब्याज संयम के लिए एक पुरस्कार है। मार्शल के अनुसार 'ब्याज इंतजार करने का इनाम है' लेकिन यह सिद्धांत अपूर्ण है; यह ब्याज की और उसके दर निर्धारित करने के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं प्रदान करता है।

ब्याज का बट्टा सिद्धांत

यह बोहम बावर्क द्वारा प्रस्तुत किया गया था, वे कहते हैं कि भविष्य उपभोग से अधिक वर्तमान उपभोग को प्राथमिकता दी जाती है। परंतु जिस तरह से व्यक्ति अनुभव करते हैं कि भविष्य अनिश्चित है, इसलिए अनिश्चित भविष्य के लिए वर्तमान उपभोग को रोकना आवश्यक है, यह कुछ पुरस्कार या प्रोत्साहन देकर संभव है, कि अगर इनाम अधिक होता है, तो मनुष्य वर्तमान उपभोग को त्यागने के लिए प्रेरित होता है। यह इनाम ब्याज के रूप में जाना जाता है।

फ़िशर का समय प्राथमिकता ब्याज सिद्धांत

1907 में इरविंग फ़िशर ने ब्याज के समय प्राथमिकता सिद्धांत का प्रस्ताव किया। बाद में उन्होंने 1930 में अपने सिद्धांत को संशोधित किया। फ़िशर के समय की प्राथमिकता का सिद्धांत बोम बावर के अग्रणी काम से प्रभावित होता है। बावर्क ने यह विचार दिया कि वर्तमान उपभोग को हमेशा भविष्य की खपत के लिए पसंद किया जाता है। फ़िशर के समय की प्राथमिकता के सिद्धांत में, उनका कहना है कि लोगों को आम तौर पर भविष्य की उपभोग पर वर्तमान उपभोग की प्राथमिकता है, इसलिए फ़िशर सिद्धांत के पीछे मूलभूत दर्शन लोगों द्वारा उपभोग का अंतर–अस्थायी विकल्प हैं। आय के भुगतान के बजाय लोगों को बाद में आय के लिए तैयार की जाने वाली कीमत को ब्याज दर कहा जाता है। लोग वर्तमान उपभोग के लिए भविष्य की इच्छाओं को छूट देना चाहते हैं, इसलिए फ़िशर के अनुसार ब्याज की दर लोगों को बेहतर भविष्य के पुरस्कार के कारण अपनी वर्तमान खपत की

जरूरतों को रोकने के लिए दी जाने वाली प्रलोभन है, अगर उच्च त्याग के लिए प्रलोभन होगा तो ब्याज भुगतान भी अधिक होगा।

उन्होंने यह भी कहा कि लोग वर्तमान उपभोग पसंद करते हैं क्योंकि यह उन्हें निवेश का मौका देता है और यह निवेश अवसर लागत पर वापसी की दर के आधार पर निर्धारित होता है। फ़िशर का कहना है कि भविष्य की आय के लिए लोगों की प्राथमिकता की तीव्रता व्यक्तिपरक और उद्देश्य प्रेरक से निर्धारित होती है। ये प्रेरक हैं: (1) इच्छा (2) अवसर

फ़िशर सिद्धांत के अनुसार ब्याज दर का निर्धारण, आकृतियों के रूप में निम्नानुसार समझाया गया हैरू

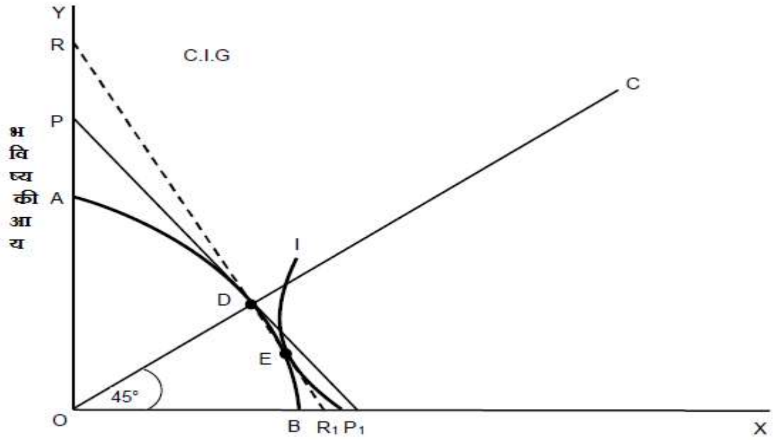

वर्तमान आय

आरेख 16.2 फ़िशर का समय सिद्धांत में ब्याज दर निर्धारण

उदासीनता वक्र 'I' इच्छा वक्र है जो वर्तमान और भविष्य की आय के संबंध में लोगों का समय प्राथमिकता दिखाता है। यह दर्शाता है कि आय में वृद्धि के कारण MV की आय घट जाती है। AB एक अवसर वक्र है जिस पर वर्तमान आय भविष्य की आय में बदल जाती है। यह वक्र पूंजी की घटती सीमांत उत्पादकता को इंगित करने वाले मूल से अवतल है।

ब्याज दर बिंदु E पर निर्धारित किया जाता है, इसका मतलब है कि ब्याज दर इस बिंदु पर सकारात्मक है। यदि तकनीकी परिवर्तन वक्र AB और उदासीनता वक्र के बीच स्पर्श रेखा D पर होता है, जो OC पर है, ब्याज दर इस बिंदु पर शून्य होता हैं।

फ़िशर के मुताबिक पूरी तरह से अर्थव्यवस्था में संतुलन के लिए कुल राशि जो लोग निवेश करना चाहते हैं, उस राशि के बराबर होनी चाहिए, जो लोगों को बचत की इच्छा रखते है ।

ब्याज दर का संतुलन स्तर आरेख रूप से निम्नानुसार दिखाया गया है:

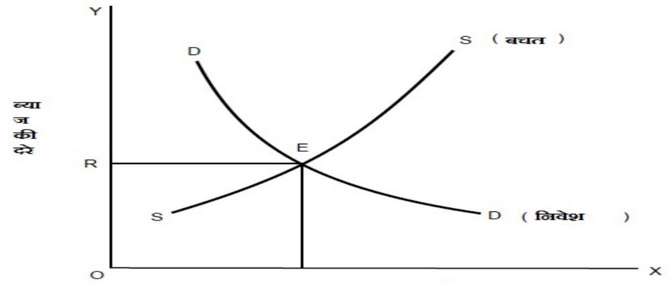

बचत और निवेश

आरेख 16.3 : ब्याज की दरो के बीच संतुलन

बदलते ब्याज दर संरचनाओं के साथ, दोनों उत्पादकों और उपभोक्ताओं को अपनी बचत और निवेश कार्यक्रमों में बदलाव करना पड़ता है। विभिन्न उपभोक्ताओं के बीच धन आवंटन और वर्तमान और भविष्य की जरूरतों के बीच तय करने के लिए उधारकर्ता और उधारदाता वित्तीय बाजारों में बातचीत करते हैं। ऊपर दी गई आकृति में, SS आपूर्ति वक्र है और क्क वित्तीय बाजार में धन के लिए मांग वक्र है। ब्याज दर बिंदु E पर निर्धारित किया जाता है जहां बचत और निवेश समानता होगी।

निम्नलिखित आधार पर एफ एच नाइट द्वारा फ़िशर के सिद्धांत की आलोचना की गई है

1. यह पूंजीकरण पर ज्यादा जोर देता है क्योंकि परिसंपत्तियों के किराये बाजार और उनके पुनर्विक्रय बाजारों में पूंजीकृत दरों के बीच महत्वपूर्ण विचलन है।
2. फ़िशर की सिद्धांत परिपत्र तर्क के चारों ओर घूमती है क्योंकि संपत्ति का वर्तमान मूल्य ब्याज की मौजूदा दर पर सुविधाओं को छूट के द्वारा संपत्ति से आय अर्जित से प्राप्त होता है। लेकिन सवाल यह है कि ब्याज की वर्तमान दर को कैसे निर्धारित किया जाए। सिद्धांत यह मानता है कि वर्तमान में जो इसे निर्धारित करना चाहता है वही दिया गया है ।
3. फ़िशर ब्याज दर के निर्धारण के लिए आधुनिक बैंकिंग संस्थानों की भूमिका पर ध्यान नहीं देता।
4. इस सिद्धांत में उम्मीदों की भूमिका और ब्याज दर पर अनिश्चितता का असर कि अनदेखा किया गया है।

ब्याज का प्राचीन सिद्धांत

ब्याज की प्राचीन सिद्धांत मार्शल, पिगौ, नाइट, ताउसीग और कैसल जैसे कई लेखकों का योगदान है। इसको ब्याज का वास्तविक सिद्धांत का भी नाम दिया गया है क्योंकि यह निवेश और बचत पर पूंजी की मांग और आपूर्ति की असली दबावों पर आधारित है। ब्याज की दर उस बिंदु पर निर्धारित की जाती है जहां पूंजी की मांग और आपूर्ति समान होती है।

1. **पूंजी की मांग:** निवेश के कारण पूंजी की मांग की जाती है यदि पूंजी की उत्पादकता अधिक है, तो पूंजी की मांग भी उच्च होगी और इसके विपरीत भी हो सकती है। चूंकि पूंजी की सीमान्त उत्पादकता बढ़ी हुई आवेदन से घटती जाती है, उघयमी या पूंजीपति ब्याज की कम दरों पर अधिक पूंजी का

उपयोग करेंगे। दूसरे शब्दों में निवेश ब्याज दर के साथ प्रतिलोम से संबंधित है।

I= f (r) ⇨ प्रतिलोम फलन

इसका आशय है कि निवेश वक्र का ढलान नीचे की ओर होगा।

2. **पूंजी की आपूर्ति:** पूंजी की आपूर्ति पैसे बचाने के लिए लोगों की बचत या इच्छा के साथ जुड़ी हुई है। बचत में त्याग से बचना या इंतजार करना शामिल है ताकि वे ज्यादा ब्याज की दर पर अधिक बचत कर सकें। कुछ लोग ब्याज की शून्य दर पर भी बचत करते हैं, लेकिन आम तौर पर बचत ब्याज दर के साथ सकारात्मक रूप से जुड़ी होती है। पूर्ति वक्र इसलिए ऊपर की तरफ बढ़ता है।

S= f (r) (प्रत्यक्ष फलन)

तालिका 16.1 : ब्याज दरों की व्याख्या

ब्याज दर	(प्रतिशत मे) पूंजी के लिये माँग, निवेश (करोड़ में) पूंजी की पूर्ति बचत	(करोड़ में)
14	1200	800 I > S
15	1100	900 r बढेगा
16	1000	1000 I=S
17	900	1100 I < S
18	800	1200 r में कमी आयगी

तालिका दर्शाती है कि निवेश 1200 करोड़ है और बचत 14% की ब्याज दर पर 800 करोड़ है। इससे पता चलता है कि निवेश 400 करोड़ से ज्यादा बचत है; यह ब्याज दर 15% से आगे बढ़ेगा, ब्याज निवेश की दर पर भी बचत से अधिक है। जब ब्याज की दर 16% है, तो बचत और निवेश समानता है जैसा कि आलेख 16.4 में दिखाया है।

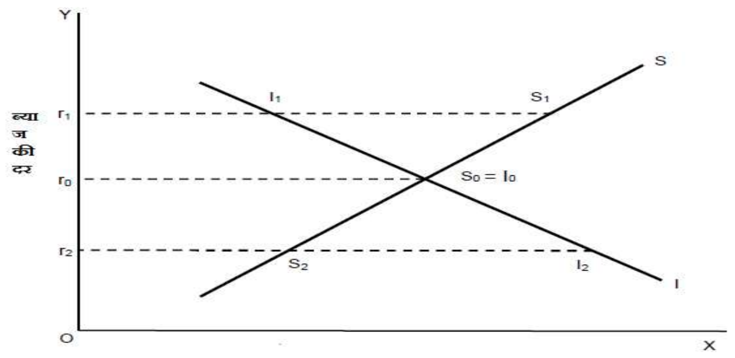

बचत और निवेश

आरेख 16.4 ब्याज का प्राचीन सिद्धांत के अंतर्गत दरो की व्याख्या

I1I निवेश की अवस्था है और S2S आपूर्ति वक्र है Or1 में, ब्याज बचत की दर S1r1 है जो निवेश से अधिक है, यह r0 की दर को कम करने की प्रवृत्ति है जहां बचत और निवेश की समानता होगी। दूसरी ओर r2 ब्याज दर पर, बचत निवेश से कम है, यह ब्याज दर को फिर से r0 के तरफ़ धक्का देगा। ब्याज दर के संतुलन दर पर r0, ऊपर या नीचे की ओर दिशा में आगे बढ़ने के लिए

ब्याज दरों की कोई प्रवृत्ति नहीं होगी। ब्याज की समतुल्य दर वह है जो कि एक ओर पूंजी की सीमान्त उत्पादकता के साथ उधार लेने की लागत के बराबर होती है और अन्य पहलुओं से वह सीमांत बचतकर्ता को बचाता हैं।

परंपरागत के अनुसार, बाजार में ब्याज की वास्तविक दर मांग और आपूर्ति दबाव के आधार पर निर्धारित होती है। ब्याज की वास्तविक दर माल के संदर्भ में परिलक्षित होती है। वास्तविक मांग उधार ली गई पूंजी की उत्पादकता के साथ जुड़ी होती है और धन की वास्तविक आपूर्ति उपभोक्ता की वर्तमान इच्छा से उसकी वर्तमान उपभोग को छोड़ने के लिए नियंत्रित होती है। समस्या वास्तव में ब्याज की वास्तविक दर और वास्तविकता में ब्याज की बाजार दर दो स्थितियों के कारण समाविष्ट नहीं करती हैरू (1) अनुमानित मुद्रास्फीति (2) अनुमानित अपस्फीति

परंपरागत सिद्धांत की आलोचना

1. **आय में परिवर्तन बचत और निवेश के बीच संतुलन लाता है और नाकि ब्याज दर में :** कींस के मुताबिक आय के कारण बचत और निवेश मे समानता होती है। बचत और निवेश आय संबंधी परिवर्तनों के कार्य हैं I बचत, आय और निवेश के प्रत्यक्ष कार्य है जो पूंजी की सीमांत क्षमता पर निर्भर करता है।

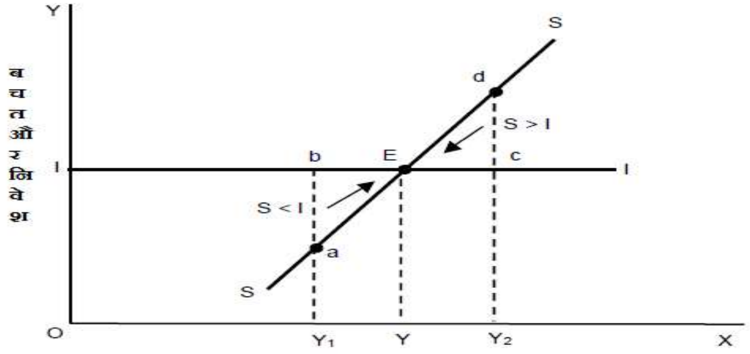

आरेख 16.5 बचत और निवेश का संतुलन निर्धारण चूंकि दोनों आय के फलन है

चित्र का विवरण

आय का स्तर	बचत और निवेश में संबध	प्रभाव	अंतिम परिणाम
OY	S = I	------	------
OY1	S<I	आय बढेगी बचत कम होगी	S = I
OY2	S>I	आय कम होगी बचत बढेगी	S = I(दोनों तरह प्रयास संतुष्ट है)

2. **समय की लंबी अवधि की धारणा अवास्तविक है:** जे.एम. केन्स के अनुसार "लंबे समय तक हम सब मर चुके या दफन हो चुके होगे", और कल कभी नहीं आता है । यह जो आज है वह महत्वपूर्ण है।

3 **ब्याज प्रतीक्षा के लिए पुरस्कार नहीं है:** केन्स के अनुसार ब्याज इंतजार का पुरस्कार नहीं है, लेकिन तरलता के साथ विभाजन भी है।

4. **पूर्ण रोजगार की धारणा:** प्रो. डिल्लार्ड ने सही तरीके से देखा है कि ष्पूर्ण रोजगार की धारणा पर निर्मित सिद्धांत की एक प्रणाली के ढांचे के भीतर, ब्याज प्रतीक्षा या इंतजार करने के लिए एक पुरस्कार के रूप में बहुत प्रशंसनीय है। यह वादा है कि संसाधनों को आमतौर पर पूर्ण नियोजित किया जाता है जो समकालीन संसार में बुद्धिगम्यता का अभाव है। इसलिए पूर्ण रोजगार की धारणा वास्तविक दुनिया परिदृश्य में अवास्तविक और अव्यावहारिक है।

5. **अनिर्णित सिद्धांत:** बचत आमतौर पर आय के स्तर पर निर्भर करती है, ब्याज की दर जानने के लिए संभव नहीं है जब तक कि आय स्तर पहले से नहीं जाना जाता है। आय का स्तर निर्धारित करने के लिए हमें ब्याज दर के निचले स्तर, उत्पादन, रोजगार, निवेश, आय और बचत के साथ क्रमवर्ध में जाना होगा और यह बढ़ता प्रभाव दिखाएगा। आय के प्रत्येक स्तर के लिए, अलग बचत वक्र खींचा जाना चाहिए। इसलिए यह सब परिपत्र तर्क है और कोई समाधान नहीं सुलभ है। केन्स के अनुसार ब्याज के लिए कोई संकल्पित समाधान नहीं है।

6. **आय पर निवेश के प्रभाव की उपेक्षा:** प्राचीन सिद्धांत आय पर निवेश के प्रभावों की उपेक्षा करता है। जैसा कि ब्याज दर में बढ़ोतरी, निवेश कम लाभदायक होगा, जिससे उत्पादन, रोजगार और आय के स्तर में और कमी आएगी। ये आगे बचत घटाएगा । इसलिए ब्याज की उच्च दर का बचत पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जबकि शास्त्रीयों का मानना है कि बचत ब्याज दर का प्रत्यक्ष कार्य है।

7. **मौद्रिक कारकों की उपेक्षा की गई:** केन्स ने तर्क दिया कि ब्याज पूरी तरह से एक मौद्रिक घटना है, लेकिन शास्त्रीयों ने संयम, बलिदान, इंतज़ार और उत्पादकता के लिए एक उपहार के रूप में ब्याज का श्रेय दिया है लेकिन मौद्रिक नीति, अटकलें आदि की भूमिका जैसे मौद्रिक कारकों के प्रभाव की उपेक्षा की है।

8. **बाजार और स्वाभाविक ब्याज की दर के बीच कोई स्वत:** समानता नहीं शास्त्रीयों के अनुसार, ब्याज की वास्तविक दर और ब्याज की बाजार दर अंततः लंबे समय में संतुलन में है। उनके बीच थोड़े समय के असंतुलन हो सकते हैं, लेकिन लंबे समय तक वे हमेशा समान होंगे।लेकिन केनेस ने इस पर असहमत किया और कहा कि बैंक ऋण के विस्तार से बाजार में ऋण योग्य निधियों की आपूर्ति में वृद्धि हुई है, वहां संतुलन या स्वाभाविक ब्याज दर के नीचे ब्याज दर की बाजार दर में गिरावट आएगी, इसलिए ब्याज की बाजार दर और ब्याज की स्वाभाविक दर के बीच समानता का कोई स्वचालित प्रक्रिया नहीं है।

ब्याज का ऋण योग्य धन सिद्धांत या नव शास्त्रीय सिद्धांत

स्वीडिश अर्थशास्त्री (निट विक्सेल) द्वारा ब्याज के ऋण योग्य सिद्धांत का समर्थन किया गया था और इसे आगे बिट्र ऑलिन, रॉबर्टसन, गुन्नार मिरदल, याकूब वीनर, पगौ आदि ने विस्तारित किया था।

ऋण योग्यधन सिद्धांत या नव–शास्त्रीय सिद्धांत बताता है कि ब्याज की दर ऋण योग्य धन की मांग और आपूर्ति द्वारा निर्धारित होती है। "ब्याज तो मूलतः क्रेडिट की जगह है" प्रो. लर्नर के अनुसार, "यह वह कीमत है जो क्रेडिट की आपूर्ति के समान है।"

नव–शास्त्रीय सिद्धांत का विश्लेषण करने के लिए, हमें ऋण योग्य धन की मांग और ऋण योग्य धन की आपूर्ति की मूल अवधारणाओं को समझना होगा।

1. **ऋण योग्य धन की मांग**

मूल रूप से तीन बल हैं जो ऋण योग्य धन की मांग निर्धारित करते हैं, लेकिन प्राथमिक प्रश्न यह है कि जो ऋण योग्य धन की मांग कौन करता है। मांग व्यापार के घरों, सरकार और व्यक्तियों से उत्पन्न होती है और मांग के कारणों को निवेश करने, संग्रह करने और असुरक्षित करने की आवश्यकता होती है। (1) निवेश I (2) होर्डिंग H (3) निर्बचत DS

1. निवेश I : आमतौर पर निवेश के उद्देश्य के लिए व्यापारिक घरों, कंपनियों, उघद्मियों से ऋण योग्य निधियों की मांग होती है।निवेश की मांग ब्याज की कम दर पर अधिक होगी और इसके विपरीत होगी। निवेश में ब्याज दर के साथ विपरीत संबंध है और इसलिए ढलान नीचे की ओर है।

2. संचय H: व्यापारिक संस्थाएं और व्यक्ति अपनी तरलता को पूरा करने के लिए नकद रूप में धन और ऋण योग्य फंड जमा करना चाहते हैं। संचय ब्याज दर के साथ विपरीत संबंधित है। ब्याज की उच्च दर पर, कम ऋण योग्य धन को जमा होगा और विपरीतक्रम से और यही कारण है कि संचय वक्र भी बाएं से दाएं नीचे की ओर ढलान है।

3. निर्बचत DS: यह बचत के विपरीत है । लोगों को ब्याज दरों के निचले स्तर पर उपभोग के लिए अधिक धन की आवश्यकता हो सकती है और इसके विपरीत। इसलिए, निर्बचत वक्र ब्याज दर से भी नकारात्मक रूप से ढीली पड़ रहा है और इसके विपरीत है।अपने वर्तमान उपभोग की जरूरतों को पूरा करने के लिए कभी–कभी लोग पिछली बचत का उपयोग कर करते हैं या वे अन्य स्रोतों से उधार लेते हैं।

ऋण योग्य धन की मांग निवेश, संचय और निर्बचत का कुल है।

$$\Sigma D=I+H+DS$$

2. ऋण योग्य धन की आपूर्ति

ऋण योग्य निधियों की आपूर्ति के मुख्य स्रोत बचत, विसंग्रहण, विनिवेश और बैंक के पैसे हैं:

1. **बचत:** बचत आम तौर पर घरों में, व्यापार क्षेत्र और सरकारी क्षेत्र से उत्पन्न होती हैं। बचत ब्याज दर के प्रत्यक्ष कार्य हैं । ब्याज दरों के उच्च स्तर पर, अधिक बचत और इसके विपरीत होगी, इसलिए बचत वक्र ऊपर की ओर बढ़ेगी और एक सकारात्मक ढलान होगा।

2. **विसंग्रहण:** यह दूसरों की ओर से पुराने परिसंपत्तियों या प्रतिभूतियों की खरीद का प्रतिनिधित्व करता है जो निवेश के लिए अपने स्वयं के निधि के निष्क्रिय नकद शेष राशि से या आय में कमी के कारण खरीदारी में खपत का प्रतिनिधित्व करता है। ब्याज की उच्च दरों पर, लोगों को अपने अधिलेखित स्रोतों से दूसरों को बड़ी रकम दी जाती है दूसरी ओर, विसंग्रहण के लिए ब्याज प्रोत्साहन की कम दर पर कमजोर हो जाएगा। इसका ब्याज दर के साथ एक प्रत्यक्ष संबंध है।

3. **विनिवेश:** व्यापारिक घराने मूल्यह्रास और प्रतिस्थापन से धन को बनाये रखते है। अगर उन्हें इन रख–रखाव से धन का हिस्सा वापस लेना है, तो इसे विनिवेश कहा जाता है। यदि ब्याज दर अधिक है, तो विनिवेश के लिए और अधिक प्रलोभन और इसके विपरीत होगा।

4. **बैंक मुद्रा:** बैंक मनी पैसे की आपूर्ति का प्रमुख घटक है। बैंकिंग संस्थान ग्राहकों को क्रेडिट प्रदान करते हैं। ब्याज की उच्च दर पर, बैंकिंग क्षेत्र से व्यापार क्षेत्र तक के ऋण का बड़ा प्रवाह है और इसके विपरीत होगा।

ऋण योग्य धन की आपूर्ति: यह बचत (S), विसंग्रहण (DH), विनिवेश (DI) और बैंक मुद्रा (ड) का योग है। ऋण योग्य धन की आपूर्ति निम्नानुसार समीकरण के रूप में लिखी जा सकती हैरू

$$\Sigma S = S+DH+DI+M$$

3. **ब्याज दर का निर्धारण**

ब्याज की दर उस बिंदु पर निर्धारित की जाएगी जहां ऋण योग्य धन की मांग ऋण योग्य धन की आपूर्ति के बराबर होगी।

$$DL=SL$$

$$I + H+ S = S+DH+DI+M$$

निर्धारित ब्याज की समतुल्य दर चित्र में दिखाया जा सकता है

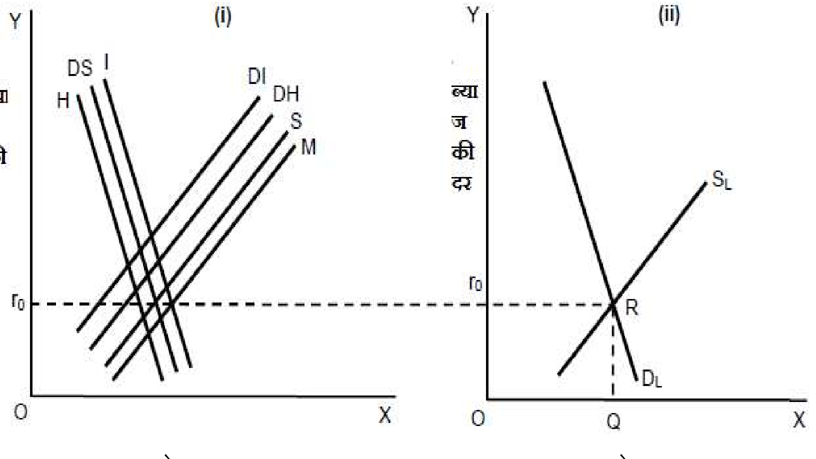

आरेख 16.6: ऋण योग्य धन के अंतर्गत ब्याज दरों में संतुलन का निर्धारण

चित्र में (1)H,DS,I अर्थात् संचय, निर्बचत और निवेश ऋण योग्य निधियों की मांग का नकारात्मक ढालन बाएं से दाएं की ओर है और DI, DH, S, M ऋण योग्य निधियों की आपूर्ति का प्रतिनिधित्व करता है जिसका मतलब है विनिवेश,

विसंग्रहण, बचत और बैंक मुद्रा के वक्र हैं। ये सभी वक्र सकारात्मक ढलान ऊपर की दिशा में हैं। तो यह ब्याज की दर है जो DL और SLQM के मिलन के बिंदु पर निर्धारित किया गया है, जैसा कि आलेख (ii) दिखाया गया है ।

यह परम्परागत सिद्धांत का एक बेहतर संस्करण है क्योंकि उन्होंने सिद्धांत में वास्तविक और मौद्रिक कारक को एकीकृत किया है। उन्होंने बैंक धन और संचय जैसी अवधारणाओं को शामिल किया है जो ब्याज पर प्रभाव डालते हैं, जिन्हें शास्त्रियो द्वारा पूरी तरह से नजरअंदाज किया गया था। तो नव–शास्त्रीय सिद्धांत अधिक यथार्थवादी है नव–शास्त्रीय ने उनके दृष्टिकोण में संचय या तरलता के लिए प्राथमिकता की अवधारणा को महत्व दिया है जो बाद में केन्सियन केन्सियन सिद्धांत के विकास के लिए कारण बन गए थे।

आलोचना

निम्न आधार पर नव–शास्त्रीय सिद्धांत की आलोचना की गई है:

1. **पूर्ण रोजगार की धारणा अवास्तविक है:** वास्तविकता में पूर्ण रोजगार का मामला असंभव या असत्याभासी है केन्स द्वारा बताए गए अनुसार कम रोजगार संतुलन या अधिक पूर्ण रोजगार संतुलन के तहत एक ऐसा मामला हो सकता है, इसलिए अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की धारणा अवास्तविक है।

2. **राष्ट्रीय आय का निरंतर स्तर संभव नहीं है:** ब्याज दर के उच्च स्तर पर लोगों को अधिक बचाने की प्रवृत्ति होती है और ब्याज दर के इस उच्च स्तर का भी आय पर प्रभाव पड़ता है, लेकिन नव–शास्त्रीय इस मुद्दे पर कोई स्पष्टीकरण नहीं देते हैं। नव–शास्त्रीय सिद्धांत के अनुसार, राष्ट्रीय आय निरंतर स्थिर होती है जो व्यावहारिक रूप से संभव नहीं है।

3. **अनिश्चित सिद्धांत:** केन्स ने इस सिद्धांत की आलोचना की है, कि वह ब्याज का स्तर निर्धारित नहीं करता है। ई.एच. हैनसेन का भी कहना है कि "नए पैसे से बचत के साथ ऋण योग्य निधियों के अतिरिक्त शुद्ध जोड़ और निष्क्रिय बैलेंस का असंचय करना ऋण योग्य निधि का अनुसूची मिश्रिण है । जो ऋण योग्य फंडों के लिए है। लेकिन चूंकि अनुसूची के बचत हिस्से में प्रयोज्य आय के स्तर के साथ भिन्न होता है यह ऋण योग्य निधियों की कुल आपूर्ति अनुसूची के अनुसार होती है, जो ब्याज की अनिश्चितता के कारण आय के साथ भिन्न होती है।"

4. **बचत ब्याज लोच रहित है:** सिद्धांत बचत पर ब्याज की भूमिका पर जोर देता है, लेकिन वास्तविकता में बचत में आय और ब्याज का कार्य लोच रहित है, उचित ब्याज का कारण न सिर्फ बचाने के लिए होता हैं, बल्कि एहतियाती उद्देश्य को पूरा करने के लिए हैं ।

5. **वास्तविक और मौद्रिक कारक अंतर–संबंधित नहीं:** वास्तविक और मौद्रिक कारकों को इकट्ठा करना उचित नहीं है जैसे बचत और निवेश के साथ बैंक क्रेडिट और असंचय, आय के स्तर में परिवर्तन लाने के बिना । इसलिए सिद्धांत के सच के लिए कोई व्यावहारिक आधार नहीं है।

कुछ अर्थशास्त्री जैसे एच.जी. जॉनसन का दावा करते हैं कि नव–शास्त्रीय संस्करण वाकई किनेसियन ब्याज के सिद्धांत से बेहतर है। एच .जी. जॉनसन

के अनुसार "केन्सियन सिद्धांत केवल छोटी अवधि के संतुलन और परिस्थितियों में परिवर्तन संतुलन मूल्यों को कैसे परिवर्तित करेगा,को समझने की कोशिश कर रहा है जबकि ऋण योग्य सिद्धांत सक्रिय है और यहा समझाने का प्रयास करता है कि परिस्थितियों में किस प्रकार ब्याज और आय एक संतुलन स्तर से दूसरे स्थान पर आ जाएगी। "

ब्याज की केन्सियन का तरलता प्राथमिकता सिद्धांत

ब्याज की तरलता प्राथमिकता सिद्धांत जेएम केन्स ने अपनी पुस्तक में "रोजगार के सामान्य सिद्धांत, ब्याज और धन" नामक पुस्तक में अपनाया है। मेयर के शब्दों में "तरलता प्राथमिकता दूसरों के खिलाफ दावों के बजाय नकदी की बराबर राशि के लिए प्राथमिकता है "

केन्सियन सिद्धांत के अनुसार, ब्याज पूरी तरह से एक मौद्रिक घटना है, क्योंकि यह पैसे की मांग और आपूर्ति से निर्धारित होता है। पैसे की मांग दिन–प्रतिदिन के लेन–देन के लिए या दूसरों को धन उधार देने के लिए या किसी भी संकट को पूरा करने के लिए या कल्पनिक प्रयोजनों के लिए किया जाता है। लोग पैसे को नकद या तरल रूप में रखते है और यह इसे उधार देने के लिए पसंद करते है। तरलता के लिए इसे प्राथमिकता को तरलता प्राथमिकता कहा जाता है। यदि वे उस पर कुछ इनाम प्राप्त करते हैं, तो वे तरलता का ही भाग हैं, तरलता के साथ विभाजन के लिए यह इनाम ब्याज के लिए कहा जाता है।

केन्सियन द्वारा ब्याज की परिभाषा

केन्स के अनुसार, "ब्याज एक निश्चित अवधि के लिए तरलता के साथ विभाजनता के लिए पुरस्कार है"। लोग पैसे, ऋण–पत्र, सरकारी प्रतिभूति आदि जैसे विभिन्न रूपों में पैसा या संपत्ति धारण कर सकते हैं। ऋण–पत्र और बांड के रूप में संपत्ति को पैसा के रूप में परिवर्तित किया जाता है, वे धारक को असुविधा पैदा कर सकते हैं और एक जोखिम भरा उघम है, कभी धारकों को नुकसान भी उठाना पड़ता है। इसलिए धारक केवल ऐसे जोखिम को लेने के लिए तैयार होंगे यदि इनाम बहुत अधिक है, इसलिए केनेस के मुताबिक, "ब्याज की दर प्रीमियम है जो लोगों को धन इकट्ठा होने के अलावा किसी अन्य रूप में धन धारण करने के लिए प्रेरित करने की कोशिश की जाती है।"

ब्याज का निर्धारण

ब्याज, धन की मांग और आपूर्ति की दबाव से निर्धारित होता है। ब्याज उस बिंदु पर निर्धारित किया जाएगा जहां मांग पैसे की आपूर्ति के बराबर होगी।

1. धन की मांग या धन की मांग उद्देश्य

केन्स के अनुसार धन की मांग कुछ भी नहीं है, लेकिन तरलता के लिए प्राथमिकता है। केनेस ने पैसे के दो मुख्य कार्यों को जिम्मेदार ठहराया (1) विनिमय के माध्यम (2) धन का संग्रह। विनिमय के माध्यम के रूप में, यह सामान खरीदने में मदद करता है या लेनदेन के प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जाता है और धन का संग्रह के रूप में यह परिकाल्पनिक प्रयोजनों में शामिल होता है, इसलिए मूल रूप से तीन प्रमुख कारणों के लिए पैसे की मांग

की जाती है (1) लेनदेन उद्देश्य (2) एहतियाती उद्देश्य (3) परिकाल्पनिक प्रयोजनों उद्देश्य ।

1. **लेन–देन उद्देश्य:** लोगों को दैनिक व्यय को पूरा करने के लिए, रोटी या दूध आदि खरीदने के लिये नकद रूप में पैसों रखने की जरूरत है। लेनदेन प्रयोजनों के लिए या दिन–प्रतिदिन वस्तुओं को खरीदने के लिए तरल रूप में मांग की जाती है । यदि आय का आकार बड़ा है तो लेनदेन प्रयोजनों के लिए तरलता के लिए अधिक प्राथमिकता होगी। लेनदेन की मांग के उद्देश्य (प) आय के आकार (पप) आय की प्राप्ति के बीच का समय अंतर पपप) व्यय का प्रकार पर निर्भर करती है। लेनदेन प्रयोजनों के लिए धन की मांग आय के स्तर पर निर्भर करती है।

$$Lt = f(Y)$$

लेन देन उद्देश्यों के लिए तरलता प्राथमिकता (Lt), आय (Y) का कार्य है।

2. एहतियाती उद्देश्यरू व्यक्तिगत, व्यावसायिक फर्मों को अप्रत्याशित परिस्थितियों, आकस्मिकताओं, दुर्घटनाओं और भविष्य की अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए वे नकदी रूप में पैसा रखना चाहते हैं, ताकि बीमारी, बेरोजगारी, अग्नि, चोरी, दुर्घटना आदि जैसी स्थितियों का सामना करना पड़े। यहां तक कि कंपनियां अचानक मशीनरी खाराब होने पर, व्यापार में नुकसान आदि के लिए नकदी देने की ज़रूरत होती हैं। तरलता एहतियाती उद्देश्य के लिए आय के स्तर पर निर्भर करता है और सकारात्मक आय से संबंधित है

$$Lp = f(Y).$$

तरलता ही प्राथमिकता या एहतियाती उद्देश्यों के लिए पैसे की मांग आय का एक सीधा कार्य है।

दोनों लेनदेन और एहतियाती उद्देश्य के लिए धन की संयुक्त मांग निम्नानुसार बताई जा सकती है, क्योंकि दोनों ही आय के स्तर पर निर्भर हैंरू

$$M1 = Lt + Lp = f(Y)$$

यह एक चित्ररूप में भी व्यक्त किया जा सकता हैः

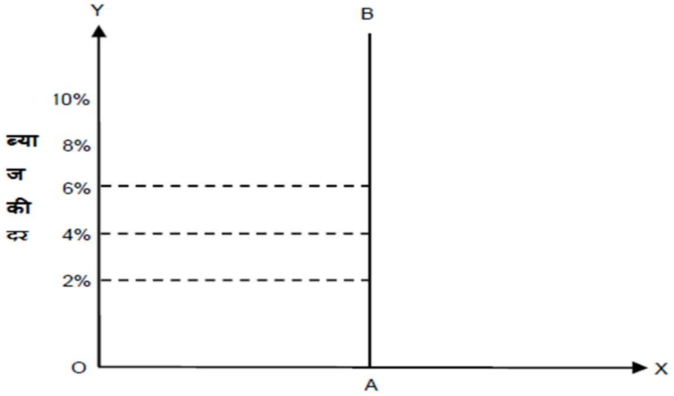

धन

आरेख 16.7 : लेनदेन और एहतियाती उद्देश्य के लिए धन की मांग

AB रेखा लेनदेन और एहतियाती उद्देश्यों के लिए पैसे की मांग को दर्शाता है। AB रेखा OY अक्ष के समानांतर है, जिसमें दिखाया गया है कि इन दोनों उद्देश्यों के लिए धन की मांग बनी हुई है।

OA ब्याज दरों में किसी भी बदलाव के बावजूद है। इसका आशय है कि दोनों लेनदेन और एहतियाती इरादों की मांग आय के स्तर पर निर्भर करती है और ब्याज लोचरहित है।

3. परिकल्पना प्रयोजनरू केन्स के अनुसार परिकल्पना प्रयोजन भविष्य में, लाभ कमाने के उद्देश्य बाजार में बेहतर तरीके से जो आगे बढ़ेगा । अगर ब्याज की दर भविष्य में बढ़ने की उम्मीद है तो सट्टेबाजों को बांड या परिसंपत्तियों का निपटान करते और इसके विपरीत करते है। दूसरे शब्दों में, परिकल्पना वाले उद्देश्य के लिए तरलता की पसन्दगी जो किन्स ने निष्क्रिय या निष्क्रिय शेष राशि के रूप में भी कहा, वह ब्याज दर के विपरीत कार्य है।

$$LS = f(r)$$

जहां परिकल्पना (LS) के उद्देश्य के लिए तरलता ब्याज दर (r) से विपरीत से संबंधित है। 16.8 में नीचे दिए गए अनुसार इसे चित्र रूप में व्यक्त किया जा सकता है:

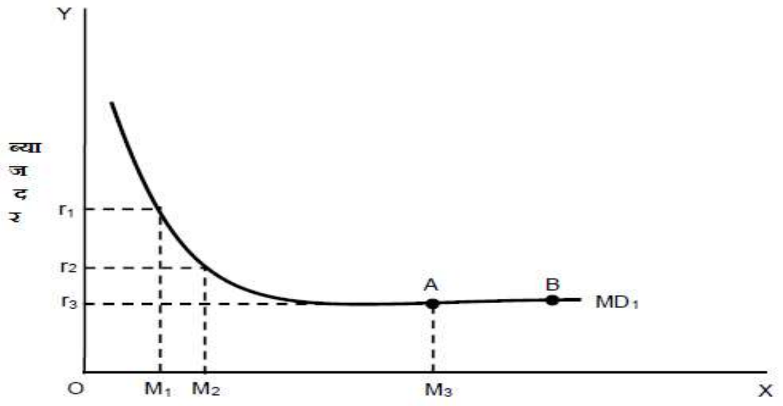

धन की मांग की परिकल्पना प्रयोजन

आरेख 16.8 : धन की मांग परिकल्पना प्रयोजन

OX अक्ष पर परिकल्पना उद्देश्य के लिए पैसे की मांग को मापा जाता है और OY अक्ष की ब्याज दर पर ऊर्ध्वाधर पैमाने पर मापा जाता है।

r3 दर में M1 पैसे की परिकल्पना मांग है।चूंकि ब्याज दर r3 से r2 पर आती है, पैसे की परिकल्पना मांग M1 से M2 तक बढ़ जाती है और यदि ब्याज दर r2 से r1 पर आती है, तो पैसे की परिकल्पना मांग M2 से M3 तक बढ़ती है, जो विपरीत रिश्ते का प्रदर्शन करती है।

धन की कुल मांग

यह सक्रिय शेष राशि और निष्क्रिय शेष राशि है:

MD = MDA+MDI

MDA = f(Y)

MDI = f(r)

अत:,MD = L (Y] r)

धन की कुल मांग लेनदेन के लेटरल समीकरण से प्राप्त की जा सकती है, एहतियाती जो सक्रिय शेष (MDA) और परिकल्पनानिष्क्रिय संतुलन उद्देश्य (MDI) है।

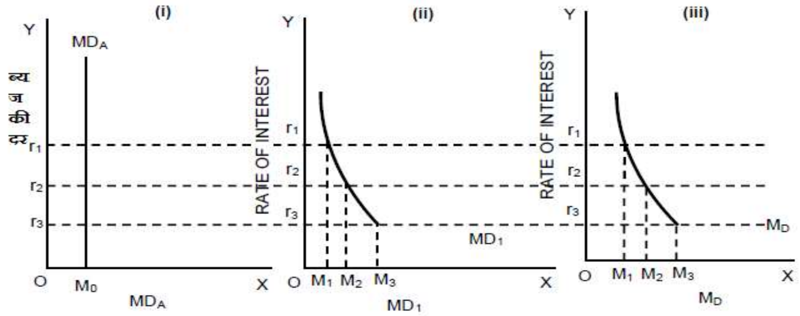

आरेख 16.9 पैसे के लिये पूर्ण मांग

चित्र 16.9 (i)MDA में पूरी तरह से ब्याज लोच रहितहै।चित्र के अनुसार (ii) MDI और ब्याज दर में विपरीत से संबंधित है।चित्र के अनुसार (Iii) MD (कुल मांग) MDA + MDI का योग है।

ब्याज की समतुल्य दर का निर्धारण

ब्याज की समतुल्य दर निर्धारित की जाएगी, जहां MD = MS इसलिए सवाल यह है कि पैसे की आपूर्ति क्या है।

पैसे की आपूर्ति

केन्स के मुताबिक देश में पैसे की आपूर्ति केंद्रीय बैंक द्वारा नियंत्रित कि जाती है। यह खुला बाजार परिचालन करता है, बहुत ही आरक्षित आवश्यकता जो बदले में पैसे की आपूर्ति को प्रभावित करती है। पैसे की आपूर्ति लोच रहित ब्याज है और ऊर्ध्वाधर अक्ष पर मापा जाता है।

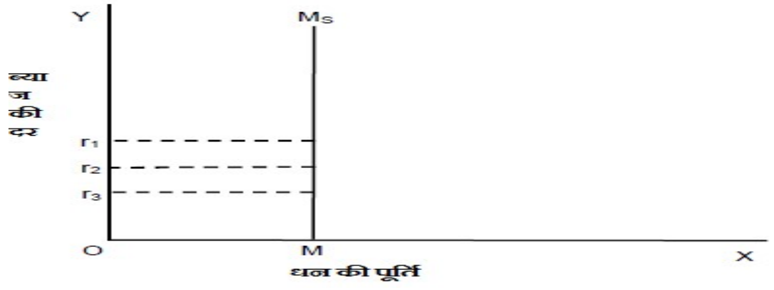

आरेख 16.10 ब्याज की पूर्ति का अलोचक वर्क

MS एक पैसा है, आपूर्ति वक्र जो OY अक्ष के समानांतर है और एक सीधी रेखा दिखा रहा है, यह पूरी तरह से ब्याज लोच रहित है।

समतुल्य ब्याज दर

ब्याज की समतुल्य दर उस बिंदु पर निर्धारित की जाती है जहां धन की मांग मुद्रा आपूर्ति के बराबर होती है।

MD=MS=r

यदि धन की मांग आपूर्ति से अधिक है, तो ब्याज दर बढ़ने और इसके विपरीत होने की संभावना है।

यदि MD>MS, तो ब्याज दर बढ़ जाएगी
यदि MD<MS, तो ब्याज दर गिर जाएगी
यदि MD = MS ब्याज की संतुलन दर निर्धारित की जाएगी।
इसे चित्र के रूप में दिखाया जा सकता है।

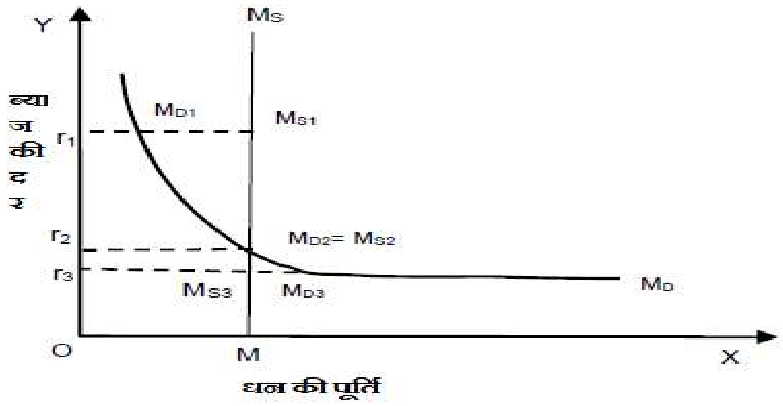

आरेख 16.11 समतुल्य ब्याज दर

ऊपर दिए गए चित्र में MD धन की मांग है और MS पैसे की आपूर्ति है। यदि ब्याज की दर r1 है तो मांग आपूर्ति से कम है, तो ब्याज की दर गिर जाती है और ब्याज की दर r3 है की मांग धन की आपूर्ति से ज्यादा है, ब्याज की दर बढ़ेगी। r2 ब्याज दर पर पैसे की मांग और पैसे की आपूर्ति के बीच समानता है। यह ब्याज की संतुलन दर है।

संपत्ति तरल की धारणा

ऐसी स्थिति जहां ब्याज दर बहुत कम है और कोई भी उसे आगे गिराने कि उम्मीद नहीं करता है। संपत्ति तरल का आशय है कि जब ब्याज किसी विशेष स्तर से नीचे आता है, तो लोग तरलता के साथ भाग नहीं लेंते। वे इसे पकड़े रहना चाहते हैं और वे इसे किसी को भी उधार नहीं देगे। क्योंकि वह ब्याज दर एक इनाम है, लोगों को उम्मीद है कि प्रतिभूतियों या बांडेस में अपने पैसे का निवेश करके, उन्हें हानि या असुविधाएं भुगतना पड़ सकता है, अगर उन्हें कोई इनाम नहीं मिलेगा तो वे अपनी तरलता के साथ हिस्सा नहीं लेना चाहेंगे। इस स्तर की ब्याज दर के नीचे न्यूनतम ब्याज दर कम नहीं हो सकती, लोगों को नकद रूप में अपना पैसा रखने के लिए बजाय इसे किसी अन्य उघम में जोखिम के इस कारण से संपत्ति में रहना होगा।

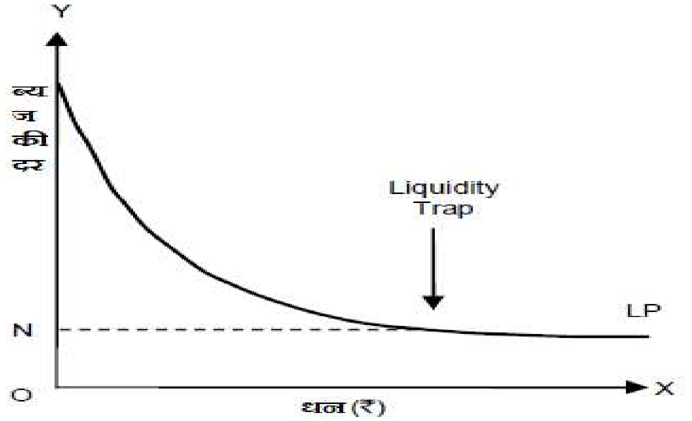

आरेख 16.12 तरलता संपत्ति

OX अक्ष में पैसा है और OY के अक्ष की ब्याज दर पर। जैसा कि चित्र में दिखाया गया है कि व्छ ब्याज दर पर LP वक्र OX अक्ष के समानांतर हो, इसका मतलब है कि लोग तरलता के साथ भाग नहीं लेना चाहेंगे, वे अपने पैसे नकद रूप में रखेंगे और ब्याज की दर और आगे इस न्यूनतम स्तर से कम नहीं होगी ।

आलोचना

प्रोफेसर हेनसेन, हजलिट, डॉन पटिंकिन आदि ने निम्नलिखित आधार पर सिद्धांत की आलोचना की है:

1. **असंगत सिद्धांत:** यह प्रायोगिक तथ्यों पर आधारित नहीं है । केनस के अनुसार, जब पैसे की आपूर्ति कम हो जाती है तो ब्याज दर बढ़ जाती है और इसके विपरीत। लेकिन हकीकत में तेजी से पैसे की आपूर्ति के दौरान ब्याज की दर बढ़ती है और मन्दी के दौरान पैसे की कम आपूर्ति के साथ ब्याज की दर मे कमी होती हैं। इसलिए, सिद्धांत असंगत है।

2. **बचत की भूमिका को नजरअंदाज किया गया:** हजलिट के मुताबिक, तरलता के साथ विभाजन का सवाल ही उठाता है। बचत निवेश योग्य फंडों का मुख्य स्रोत है यहां तक कि जेकब वाइनर के मुताबिक "बिना बचत के कोई तरलता समर्पण नहीं हो सकती।" रॉबर्टसन ने भी बचत और व्यक्ति की भूमिका पर ज़ोर दिया और सबसे ज्यादा अपनी आय की कमाई के बाद फैसला किया कि इसका क्या हिस्सा बचाया जाना है और क्या निवेश किया जाए, इसलिए बिना बचत के कोई तरलता नहीं हो सकती है

3. **अनिश्चित:** केन्सियन सिद्धांत अनिश्चित है और परिपत्र कारणों पर आधारित है। केनेस आय का एक विशेष स्तर मानते हैं और फिर एक तरलता प्राथमिकता अनुसूची बनाते है। जब आय में परिवर्तन होता है, तो एक नया LP तैयार किया जाता है, इसलिए कोई निर्धारक बिंदु नहीं है।

4. **मौद्रिक कारकों पर जोर और वास्तविक कारकों को छोड़ देना:** प्रोफेसर हज़लिट केन्स के मुताबिक उत्पादकता, संयम, समय की पसन्दगी की भूमिका पर ध्यान नहीं दिया गया है जो वास्तविक कारक और महत्वपूर्ण निर्धारक हैं। केन्स ने ब्याज को एक पूरी तरह मौद्रिक घटना के रूप में

जिम्मेदार ठहराया है जो कि गलत धारणा है। ब्याज मूलतः मौद्रिक और वास्तविक दोनों कारकों का संश्लेषण है।

5. **स्वयं विरोधाभासी:** प्रोफेसर है हज़लिट ने किनेसियन सिद्धांत को स्वयं विरोधाभासी बताया। अगर कोई व्यक्ति बैंक जमा या लघु अवधि के राजकोषीय बिल के रूप में अधिशेष संपत्ति रखता है, तो उसे इस पर ब्याज मिलता है, अर्थात वह ब्याज कमाता है और नकदी भी हासिल करता है। यह निष्कर्ष निकालता है कि ब्याज तरलता के साथ भिन्नता के लिए इनाम है।

6. **अवास्तविक धारणाओं के आधार पर:** टोबिन के मुताबिक अल्पावधि ऋण–पत्र लोगों को तरलता और ब्याज दोनों का लाभ देते हैं, इसलिए पैसे की परिकल्पना मांग दोनों आय और ब्याज पर निर्भर है।

7. **लघु अवधि के विश्लेषण के आधार पर:** केन्स ने स्वयं टिप्पणी की है कि लंबे समय में हमें दफन किया जा सकते है या मर सकते है, तो भविष्य में ब्याज दर के परिवर्तन से का क्या असर होगा, उसका कोई जवाब नहीं है।

8. **तरलता सिर्फ तीन उद्देश्यों के आधार पर नहीं है :** तरलता में अन्य उद्देश्य भी हो सकते हैं, जैसे अपस्फिती उद्देश्य , सुविधा के उद्देश्य, व्यवसाय विस्तार आदि।

हिक्स– हैनसेन मॉडल

जे आर हिक्स और ए एच हैनसेन ने ब्याज का एक निर्धारित मॉडल प्रदान किया है। उन्होंने नव प्राचीन सिद्धांत और केन्सियन संस्करण के आधार पर ब्याज की आलोचना की है कि इन सिद्धांतों ने ब्याज ग्रहण किया है या पहले से मौजूद है और ये सिद्धांत आंशिक संतुलन विश्लेषण पर आधारित थे। हिक्स और हैनसेन ने अपने मॉडल को सामान्य संतुलन विश्लेषण पर आधारित किया है और बल दिया है कि इसमें कई तरह के चर शामिल होना चाहिए:

1. निवेश मांग का फलन
2. उपभोग का फलन
3. तरलता प्राथमिकता
4. धन फलन की आपूर्ति

हिक्स और हैनसेन के अनुसार सामान्य संतुलन विश्लेषण के अनुरूप हित की दर के लिए एक निश्चित समाधान के लिए आवश्यक है कि ब्याज की दर और धन के स्तर को एक साथ निर्धारित किया जाना चाहिए।

मुद्रा बाजार और वास्तविक बाजार में समसामयिक संतुलन ब्याज दर के निर्धारण समाधान प्रदान करेगा। तो, हिक्स और हैनसेन ने मौद्रिक और वास्तविक कारक संश्लेषित किए हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए दो शर्तों को पूरा करना होगारू

(I) प्रत्याशित बचत प्रत्याशित निवेश के बराबर होना चाहिए।

(II) धन की मांग धन की आपूर्ति के बराबर होनी चाहिए।

IS और LM कार्यों की व्युत्पत्ति

IS फंक्शन वास्तविक बाजार कार्यों से प्राप्त होता है जहां प्रत्याशित बचत प्रत्याशित के निवेश के बराबर होनी चाहिए i-e- $S = I$.

$I = f$ (त) अर्थात निवेश फंक्शन

S = f (Y) अर्थातबचतफलन

S = I अर्थात संतुलन फ़ंक्शन

इन कार्यात्मक संबंधों को आकृतियों के रूप में निम्नानुसार व्यक्त किया जा सकता हैरू

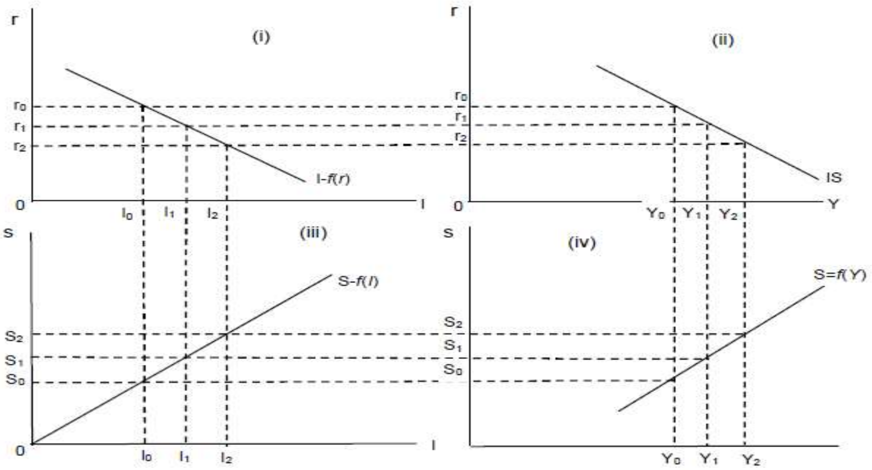

आरेख 16.13 निवेश ब्याज दर से व्यतिकृत

चित्र 16.13 में, I = f(r), दिखाए गए चित्र में निवेश ब्याज दर से व्यतिकृत है। चित्र Ii में, S = f(I) है, जो 45 डिग्री लाइन है जो निवेश के विभिन्न स्तरों पर बचत के विभिन्न स्तरों को दर्शाती है। चित्र iii में, S = f(Y) दिया गया है, Y0] Y1] Y2 के विभिन्न स्तरों पर, संबंधित बचत स्तर को S 0] S1 और S2 के रूप में दिखाया गया है। चित्र iv में, ब्याज की दर, r0]r1 और r2 के अनुसार उनकी समान आय Y0] Y1] Y2 दी गई है। Is निवेश की बचत वक्र है जो संबंधित ब्याज दर और आय के स्तर से खींचा गया है और नीचे की ओर ढलान है।

IS फलन का लोच बचत और निवेश दोनों के लोच पर निर्भर करता है। जब निवेश में वृद्धि होती है निवेश बचत फलन दाईं ओर की तरफ जाता है। और इसके विपरीत होता है।

स्ड फलन की व्युत्पत्ति

स्ड फलन मनी फलन के लिए तरलता की मांग है और इसे मनी मार्केट संतुलन से प्राप्त किया जा सकता है जहां MD=MS है।

MD1 = f (r) निष्क्रिय बैलेंस फलन का प्रतिनिधित्व करता है।

MDA = f (MD1) संतुलन फलनका प्रतिनिधित्व करता है।

MDA = f(Y) सक्रिय संतुलन फलन का प्रतिनिधित्व करता है।

MD1 = f(r) ब्याज दर के विपरीत विपरीत है।

MDA = f(Y) यह सीधे आय के स्तर से संबंधित है।

इन कार्यात्मक संबंध को आकृतियों के रूप में निम्नानुसार व्यक्त किया जा सकता हैरू

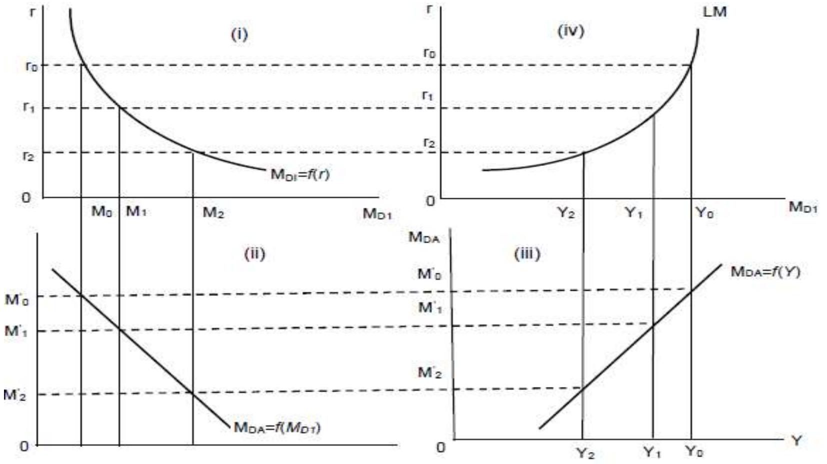

आरेख 16-4 : निष्क्रिय नकदी शेष ब्याज दर

आरेख 16.14 में (i) MD1 अर्थात् निष्क्रिय नकदी शेष ब्याज दर से विपरीत से संबंधित है। चित्र (ii) में, MDA = MD1 निष्क्रिय नकद शेष राशि M0, M1, M2 को सक्रिय शेष M0] M1]M2 के साथ दिखाया गया है। चित्र (III) में, MDA = f(Y) जो दर्शाता है कि सक्रिय शेष राशि आय के स्तर का सीधा कार्य है।चित्र (iv) में, ब्याज की दरों को r0, r1 और r2 के रूप में और आय के अनुरूप स्तर Y2, Y1 और Y0 के साथ LM फलन की स्थापना की जा सकती है।

स्ड फलन का लोच तरलता प्राथमिकता के लिए निष्क्रिय बैलेंस फलन के लोच पर निर्भर करता है। यदि परिकल्पना के उद्देश्य के लिए प्राथमिकता में वृद्धि हुई है और पैसे की आपूर्ति में कमी आई है तो LM फलन दाईं ओर में बदलाव करता है और इसके विपरीत होता है।

ब्याज की समतुल्य दर का निर्धारण

जहां IS और LM समारोह मिलेंगे वहां ब्याज और आय और आय का संतुलन स्तर एक साथ निर्धारित की जाएगा । IS और स्ड फलन के बीच समानता, ब्याज की संतुलन दर कापता लगाती है जैसा कि नीचे चित्र में समझाया गया है:

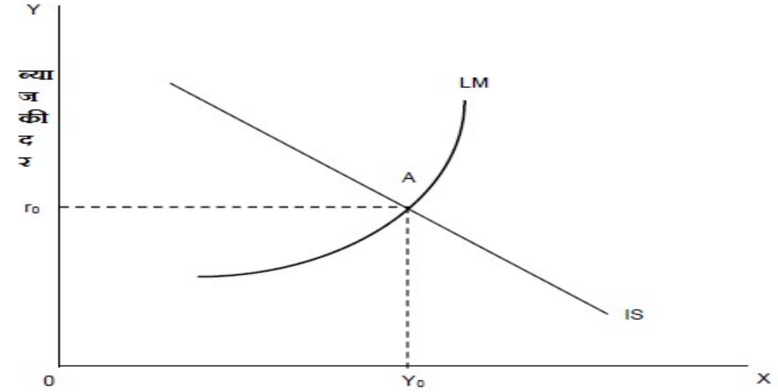

आरेख 16.15 ब्याज की समतुल्य दर का निर्धारण

OX अक्ष पर हमने आय ली है और OYअक्ष पर ब्याज की दर को मापा गया है। जहां IS और LM मिलते है, E वह ब्याज की संतुलन दर है। आकृति में

IS वक्र में नीचे ढालान दिखाया गया है और LM को सकारात्मक ढलान दिखाया गया है। इस पर, आय के संतुलन स्तर Y0 को भी निर्धारित किया जाता है। इस मॉडल में आय और ब्याज दोनों एक साथ निर्धारित किए जाते हैं।

आलोचना

1. **बंद अर्थव्यवस्था के आधार पर:** यह ब्याज दरों में परिवर्तन से अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर प्रभाव को नहीं दर्शाता है।

2. **सष्क्रिय सिद्धांत नहीं:** यह आय और ब्याज स्तर में लंबे समय के परिवर्तनों और समय के अंतराल के इन दो महत्वपूर्ण विषयों को कैसे प्रभावित करते है यह इसकी व्याख्या नहीं करता है ।

3. **मूल्य स्तर एक निष्क्रिय कारक:** मूल्य स्तर को निष्क्रिय कारक माना जाता है लेकिन वास्तविकता में यह आय और ब्याज के स्तर का निर्धारण करने में एक प्रमुख भूमिका निभाता है।

4. **लचीले ब्याज दर की अवधारणा:** वास्तविकता में ब्याज दर सकत है लचीला नहीं है, ब्याज दर के मामले में स्वतरू समायोजन सही नहीं है। यह अडिग हो जाता है।

5. **अतिसरलीकर्त सिद्धांत:** पैटिंकिन के मुताबिक, यह बड़ा सिद्धांत है क्योंकि यह अर्थव्यवस्था को दो क्षेत्रों में विभाजित करता है। वास्तविक क्षेत्र और मौद्रिक क्षेत्र लेकिन वास्तविकता में ये क्षेत्र एक दूसरे पर निर्भर हैं और एक दूसरे से जुड़े हुए हैं और इनका एक–दूसरे पर लगातार प्रभाव पड़ता है।

16.5 सारांश

सामान्य हित में तरलता के साथ अलग करने का पुरस्कार है, यह त्याग, संयम, इंतजार आदि के लिए प्राप्त प्रीमियम है। मूल रूप से ब्याज निर्धारित करने के लिए, वास्तविक और मौद्रिक दोनों कारकों का संश्लेषण आवश्यक है। सामान्य संतुलन विश्लेषण पर आधारित ब्याज का आधुनिक सिद्धांत एक निश्चय समाधान ढूँढता है। अन्य सिद्धांतों की अपनी योग्यताएं और दोष हैं लेकिन हम इन सिद्धांतों के प्रभाव को अनदेखा नहीं कर सकते क्योंकि उन्होंने ब्याज की अवधारणा का विश्लेषण करने में काफी योगदान दिया है।

16.6 शब्दावली

सकल ब्याज: उधार फंडों के उपयोग के लिए ऋणदाता द्वारा कुल भुगतान का भुगतान ।

शुद्ध ब्याज: अकेले पूंजी के उपयोग के लिए भुगतान ।

संपति तरल : एक स्थिति है जब विस्तार की मौद्रिक नीति ब्याज दर में वृद्धि नहीं करता और जहां ब्याज नीचे गिरता है विशेष स्तर है ।

16.7 बोध प्रश्न

(ए) **रिक्त स्थान भरें**

(ए) ब्याज का बट्टा सिद्धांत ———————— द्वारा प्रस्तावित किया गया है

(बी) मार्शल के अनुसार 'ब्याज ———————— के लिए इनाम है।

(सी) ऋण योग्य फंडों की मांग में निवेश की मांग ———————— और fo–बचत या उपभोग की मांग में शामिल है।

(बी) सही या गलत

(ए) संतुलन निर्धारित किया जाता है I + C + H = S + BM + DI + DS (प्रतीकों का उपयोग कर)

(बी) प्राचीन सिद्धांत के अनुसार अगर I > S, ब्याज की दर गिर जाएगी।

16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए) (ए) बोहम बावर्क, (बी) प्रतीक्षारत, (सी) होर्डिंग

(बी) (ए) सही , (बी) गलत

16.9 स्वपरख प्रश्न

1. ब्याज के आधुनिक सिद्धांत का विस्तार से वर्णन करें?
2. ब्याज के शास्त्रीय संस्करण पर नव–शास्त्रीय सिद्धांत की श्रेष्ठता को सिद्ध करें ?
3. ब्याज का निर्धारण कौन सा सिद्धांत करता है? इसका विस्तार से वर्णन करें ?
4. केन्सियन ब्याज की तरलता पसन्दगी सिद्धांत का विस्तार से विश्लेषण करें ?

16.10 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रेंटिस हॉल ऑफ़ भारत, नई दिल्ली
2. डी.एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली
3. टी.आर. जैन, ओ.पी. खन्ना और विरसेन, माइक्रो इकोनॉमिक्स एंड इंडियन अर्थव्यवस्था, वी.के. प्रकाशक, नई दिल्ली
4. एच.एल. अहुजा, एडवांस्ड इकोनॉमिक थ्योरी, एस चंद एंड कं लिमिटेड, नई दिल्ली।
5. आत्मानंद, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सेल बुक, दिल्ली।
6. आर.एल. वर्शनी और के.एल. माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चंद एंड संस, नई दिल्ली

इकाई 17 मजदूरी के सिद्धांत

इकाई की रुपरेखा

17.1 प्रस्तावना
17.2 नाममात्र और वास्तविक मजदूरी
17.3 वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले कारक
17.4 मजदूरी के सिद्धांत
17.5 सामूहिक सौदेबाजी और मजदूरी
17.6 विभेदकारी मजदूरी
17.7 श्रम के शोषण की संकल्पना
17.8 सारांश
17.9 शब्दावली
17.10 बोध प्रश्न
17.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
17.12 स्वपरख प्रश्न
17.13 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:—

- मजदूरी की अवधारणाओं को समझ सकें।
- वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकें।
- मजदूरी और मजदूरी निर्धारण के सिद्धांतों का वर्णन कर सकें।
- व्यापार संघो की और अवधारणा सामूहिक अवधारणा की भूमिका समझ सकें।
- द्विपक्षीय एकाधिकार के तहत मजदूरी निर्धारण का वर्णन कर सकें।

17.1 प्रस्तावना

मजदूर द्वारा प्रदान की जाने वाली कारक सेवाओं और अर्थव्यवस्था में कुल उत्पाद के लिए किए गए योगदान के लिए प्राप्त भुगतान हैं। मजदूरी राष्ट्रीय आय की मुख्य सामग्री हैं | पिगू के अनुसार, मजदूरी राष्ट्रीय आय के अनुपात से बाहर भुगतान लाभांश हैं मजदूरी मासिक मजदूरी के रूप में, अर्धमासिक, या साप्ताहिक आधार पर या दैनिक आधार पर भी भुगतान किया जा सकता है। कभी—कभी उत्पादन का हिस्सा श्रम को मजदूरी के रूप में दिया जाता है। मजदूरी श्रम की मांग और आपूर्ति के आधार पर निर्धारित होती है। मजदूरी कम दी जाती हैं, अर्थात अगर बहुत कम मजदूरी की प्रवृत्ति होती है, तो श्रमिक काम करने की बजाय घर पर बैठना पसंद करते हैं। अगर श्रमिकों को प्रेरित किया जाता है और वे अपने काम के दौरान घंटों के विश्राम कर रहे हैं, यहां तक कि वे अतिरिक्त घंटे के लिए मुआवजे की पेशकश करते हैं, वे निश्चित रूप से बेहतर काम करेंगे, उनकी उत्पादकता में बढ़ोतरी की वजह से बाजार में अधिक मांग बढ़ जाएगी । आज आधुनिक अर्थव्यवस्था में, रोजगार मजदूरों में खुद को बनाए रखने के लिए नए कौशल प्राप्त करने की

जरूरत है और खुद को संपूर्ण पर्यावरण के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है।

मजदूरी की अवधारणा

श्रमिक दृारा प्रदान की जाने वाली मानसिक या शारीरिक सेवाओं के लिए पुरस्कार मजदूरी के रूप में परिभाषित किया जा सकता हैद्य नियोक्ता दृारा मजदूरी नकदी या नकदी की तरह भुगतान कि जाती सकती है द्य जब ये मजदूरों को मजदूरी राशि के रूप में भुगतान की जाती है, उन्हें मौद्रिक मजदूरी या मामूली मजदूरी कहा जाता है, जब ये मजदूरी राशि के बदले के रूप में मजदूरों को दी जाती है, अर्थात् मजदूर को उसकी सेवाओ के बदले का भुगतान किया जाता है, उन्हें वस्तुगत मजदूरी के रूप में जाना जाता है, जो एक निशिचत समय प्रति घंटा, प्रति दिन, सप्ताह, महीने आदि का भुगतान मजदूर को किया जाता है,जब विशिष्ट कार्य पूरा करने के लिए मजदूरी का भुगतान किया जाता है, उस मजदूरी को समय अनुसार मजदूरी कहा जाता है | एक अन्य श्रेणी का कार्यानुसार मजदूरी है, अर्थात मजदूर का मजदूरी उत्पादन के आधार पर प्रति यूनिट पर दिया जाता है। सबसे उचित रूप मजदूरी नाममात्र या मौद्रिक मजदूरी और वास्तविक मजदूरी है।

17.2 नाममात्र और वास्तविक मजदूरी

नाममात्र या मौद्रिक मजदूरी, वह वास्तविक मजदूरी है जो कार्यकर्ता को उसके द्वारा दी गई सेवाओं के लिए दी जाती है। नकद मूल्य के रूप में या धन के रूप में भुगतान किया जाता है, मान लीजिए कि एक मजदूर 200 रुपये प्रति दिन कमाता है और वह एक महीने में 28 दिन काम करता हैं, फिर एक महीने में उसकी मौद्रिक मजदूरी या नाममात्र मजदूरी 200 × 28 दिन =5600 के बराबर होगी। वास्तविक मजदूरी मौद्रिक मजदूरी की क्रय शक्ति का प्रतीक है| जब प्रचलित मूल्य सूचकांक के आधार पर मजदूरी का मूल्यांकन किया जाता है, वे वास्तविक मजदूरी के रूप में जाना जाता है।

वास्तविक मजदूरी = मौद्रिक मजदूरी / मूल्य

वास्तविक मजदूरी में मोटे तौर पर मजदूरी के मामले में धन की राशि, अन्य अनुषगी (फ्रिंज लाभ) प्रकार या बोनस में दिए जाते हैं, मजदूरों के लिए आवास, भोजन और कपड़े जैसी अतिरिक्त सुविधाएं। उनके पास अधिक प्रासंगिकता है क्योंकि वे मजदूर के जीवन के स्तर को मापते हैं।

17.3 वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले तत्व

निम्नलिखित मुख्य कारक हैं जो श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करते हैं:

1. **कीमतों का स्तर:**

श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी कीमतों के स्तर के विपरीत भिन्न होती है अगर वस्तु की कीमतें अधिक हैं, तो वास्तविक मजदूरी कम हो जाएगी और यदि वस्तुओं की कीमतें कम हैं, वास्तविक मजदूरी की तुलना में अधिक होगी, क्योंकि यह दर्शाता है कि कम कीमत के मामले में राशि की क्रय शक्ति अधिक है और दूसरी परिस्थिती में इसके विपरीत कार्य होता है।

2. **अतिरिक्त आय:**

यदि कार्यकर्ता कुछ पूरक काम के माध्यम से या ओवरटाइम काम कर रहा है, तो इसका आशय है कि उसका असल मजदूरी उच्च है उदाहरण के लिए, एक मेडिकल चिकित्सक अपनी सरकार नौकरी के जरिए कमाई 10,000/– कर रहा है, और इसके साथ ही वह अपनी निजी प्रैक्टिस का आनंद ले रहा है और उस प्रैक्टिस के माध्यम से उसकी पूरक आय 5000/– है, इसलिए उसकी कुल आय 15,000/– सकल होगी। यह दर्शाता है कि उनकी असल मजदूरी अपेक्षाकृत अधिक है |

3. **कार्य की स्थिति:**

अगर कार्य की स्थिति कठिन, लंबे समय तक, तनावपूर्ण जीवन, कम छुट्टियां और कामकाजी माहौल बीमारी की तरह है, तो असल मजदूरी कम होगी क्योंकि मजदूर बीमार हो सकता है, अतिरिक्त व्यय से जुड़े दवाइयां लेनी होती है |

4. **अतिरिक्त भुगतान के बिना अतिरिक्त कार्य:**

यदि मजदूर बिना प्रोत्साहन के काम के अतिरिक्त घंटे लगा रहा है, तो वास्तविक मजदूरी कम हो जाएगी, भले ही नाममात्र मजदूरी अधिक हो। मान लीजिए कि किसी सचिव को दूसरे कर्मचारी की तुलना में लंबे समय तक कार्यालय में जाना पड़ता है, उच्च मजदूरीमान के बावजूद उसकी मजदूरी कम है।

5. **मजदूरी भुगतान की विधि:**

यदि कार्यकर्ता को भुगतान किया जाता है तो, सामान की गुणवत्ता उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं होती है, इसलिए श्रमिकों को उन वस्तुओं से संतुष्टि नहीं मिलेगी, परिणामस्वरूप वास्तविक मजदूरी कम हो जाती है।

6. **अवधि और प्रशिक्षण की लागत:**

कुछ व्यवसायों में व्यापक और महंगी और लंबे समय तक प्रशिक्षण शामिल है, अर्थात डॉक्टरों, वकील, इंजीनियरों, सीए आदि के मामले में। इन मामलों में, अगर मजदूरी अधिक होती है तो वास्तविक मजदूरी इन व्यवसायों में शामिल निवेश मूल्य के कारण कम होती है।

7. **सामाजिक स्तर:**

कुछ नौकरियों को कार्यकर्ता पर अधिक सामाजिक प्रतिष्ठा और अधिकार मिलना चाहिए, जैसे IAS अधिकारी हालांकि राजनीतिज्ञों की तुलना में कम धन मिलता है लेकिन काम की संतुष्टि अधिक है और सामाजिक में स्थिति सम्मानित है, इसलिए वास्तविक मजदूरी अधिक होगी।

8. **भविष्य की संभावनाएं:**

यदि नौकरी की भविष्य की संभावनाएं बेहतर हैं, तो पदोन्नति का एक मौका है,असल मजदूरी से तो उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएं अधिक है, हालांकि वर्तमान में धन मजदूरी कम है, अगर नौकरी भविष्य की प्रगति की संभावनाओं को नहीं लेती है, तो असल मजदूरी कम है।

9. **रोजगार की नियमितता या अनियमितता:**

अगर नौकरी निरंतर, नियमित, पूर्ण समय के आधार पर है, इसमें अधिक से अधिक सुरक्षा शामिल है इस मामले में भले ही मौद्रिक मजदूरी कम हो, वास्तविक मजदूरी ज्यादा हो जाती है। दूसरी ओर यदि नौकरी अंशकालिक है, कम समय के लिए है, तो कार्यकर्ता को पिछले बचत पर भरोसा करना पड़ेगा, जिसका आशय है कि अगर उसका वर्तमान मौद्रिक मजदूरी अधिक है, तो उसकी वास्तविक मजदूरी कम है।

10. **रोजगार का स्थान:**

अगर किसी व्यक्ति या कार्यकर्ता को किसी गांव या शहर में कार्यरत किया जाता है, जहां आधार सुविधाएं अच्छी तरह से विकसित की जाती हैं और उनका कार्यस्थल निकट होता है तो उसकी वास्तविक मजदूरी अधिक होगी क्योंकि इसमें कम परिवहन लागत शामिल है। दूसरी तरफ अगर उसे दैनिक आधार पर पलायन करना पड़ता है, तो उसे यात्रा में कुछ राशि खर्च करना पड़ेगी है और उसका असल मजदूरी कम हो जाएगी।

17.4 मजदूरी के सिद्धान्त

मजदूरी निर्धारण को समझने के लिए कई सिद्धांत समय–समय पर आगे बढ़ाए गए हैं। प्रमुख सिद्धांतों के बारे में चर्चा की गई है:

1. **निर्वाह सिद्धांत**

18 वीं सदी के भौतिक स्कूल फ्रांसीसी अर्थशास्त्री द्वारा मजदूरी के निर्वाह सिद्धांत का प्रस्ताव दिया गया। सिद्धांत बाद में जर्मन अर्थशास्त्रियों द्वारा विकसित किया गया था और वे इसे "मजदूरी का लोह सिद्धांत" कहते हैं इस सिद्धांत के अनुसार श्रम शक्ति को एक वस्तु के रूप में माना जाएगा और इसकी कीमत उत्पादन की लागत के आधार पर निर्धारित की जाएगी। उत्पादन की लागत श्रमिक और उसके परिवार को बनाए रखने के लिए आवश्यक न्यूनतम निर्वाह स्तर होगा, ताकि श्रमिक की निरंतर आपूर्ति को बनाए रखा जा सके। मजदूरी के लोहे सिद्धांत ने जोर देकर कहा कि, अगर मजदूरो के स्तर में वृद्धि होगी और आबादी में वृद्धि भी अनिवार्य रूप से होगी। इस प्रकार मजबूरी में मजदूर फिर से आजीविका स्तर पर आते हैं। दूसरी तरफ यदि मजदूरी निर्वाह स्तर से नीचे आ जाती है तो वहां जनसंख्या में भूखमरी या बीमारियों के कारण कमी होगी, परिणामस्वरूप श्रम की आपूर्ति की कमी होगी। यह प्रवृत्ति तब तक जारी रहेगी जब मजदूरी न्यूनतम निर्वाह स्तर पर वापस ना आ जाएगी।

आलोचनाए

1. **एक तरफा सिद्धांत:** यह सिर्फ श्रम की आपूर्ति पक्ष पर जोर देता है, मांग की भूमिका को बहुत ही महत्वपूर्ण बताते हैं।

2. **गलत तरीके से जनसंख्या के मल्थुसियन सिद्धांत पर आधारित:** आबादी का मल्थुसियन सिद्धांत एक विवादास्पद सिद्धांत है और पश्चिमी अर्थव्यवस्थाओं में अत्यधिक उपेक्षित है, इसलिए निर्वाह सिद्धांत जो इस विवादास्पद सिद्धांत पर आधारित है, इसमें कोई सार नहीं छोड़ा गया है।

3. **अत्यधिक निराशावादी दृष्टिकोण:** यह मजदूर वर्ग के लिए बहुत ही अंधकार भविष्य प्रस्तुत करता है। इससे पता चलता है कि वे जीवन यापन के

ऊपर नहीं बढ़ सकते हैं, जिसका आशय है कि उनके भविष्य में कोई उम्मीद नहीं है।

4. **ऐतिहासिक रूप से सही नहीं:** पिछले अनुभव से पता चलता है कि मजदूरी में वृद्धि जनसंख्या में वृद्धि के साथ नहीं की जा सकती है, इसके बजाय जनसंख्या वृद्धि दर में कमी के रूप में परिष्कार और जीवन स्तर के उच्च स्तर जन्म दर को कम करते हैं।

5. **मजदूरी में अंतर को स्पष्ट करने में असमर्थ:** श्रम बाजार में मजदूरी की विविधता है अगर मजदूरी दर को निर्वाह स्तर पर बनाए रखा जाना है, तो मजदूरी में एक समानता क्यों नहीं है? इसलिए सिद्धांत यह समझाने में विफल रहता है कि विभिन्न मजदूरों को दिए गए मजदूरी की अलग श्रेणी क्यों है।

6. **दक्षता और उत्पादन के लिए कोई ध्यान नहीं:** इस सिद्धांत के अनुसार, मजदूरी अंततः निर्वाह स्तर के बराबर होती है लेकिन वास्तविकता में ऐसा नहीं होता क्योंकि दक्षता और उत्पादन में अंतर होता है। जो कुशल और गुणी हैं, उसे दूसरे मजदूरी की तुलना में अधिक मिलेंगे।

2. जीवन स्तर का मजदूरी सिद्धांत

यह सिद्धांत सबसे पहले पारंपरिक अर्थशास्त्रियों द्वारा पेश किया गया था जिन्होंने मजदूरी के निर्वाह सिद्धांत को बेहतर संस्करण देने का प्रयास किया था। यह सिद्धांत बताता है कि लंबे समय तक जो मजदूर होता है वो मजदूर के जीवन स्तर के बराबर होता है। जीवन स्तर की अवधारणा एक तरह से श्रमिकों को जीवित रहने के लिए उपयोग है, अर्थात उनके जीवन शैली के लिए किसी तरह की आशंका है और वहां सुविधा क्षेत्र है, वे जीवित रहने के मानक के आराम क्षेत्र को बनाए रखना चाहते हैं। यह उनके लिए एक सुविधा क्षेत्र है जो उन्होंने स्वयं स्थापित किया है, अब वे न ही इसे कम करना चाहते हैं या बढ़ाना चाहते हैं। यह स्तर उनके भौतिक और जैविक आवश्यकताओं के लिए बनाए रखा गया है, यह पर्यावरण द्वारा भी तय किया जाता है जिसमें वे रहते हैं, समाज, सीमा शुल्क, मूल्य और मानदंडों में वे सह मौजूद हैं, जो बदले में अपने बच्चों के पालन पर प्रभाव डालते हैं। यदि मजदूरी जीने के मानक से नीचे गिर गई तो वे बच्चों को अच्छा जीवन देने के लिए संघर्ष करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप आबादी में कमी आ जाएगी और सीमान्त उत्पादकता में वृद्धि होगी। दूसरी ओर, यदि मजदूरी जीवित आबादी के स्तर से अधिक है तो वृद्धि होगी और सीमान्त उत्पादकता में गिरावट आएगी, फिर से जीवन स्तर तक मजदूरी लाई जाएगी। इस सिद्धांत को चित्र में दिए गए एक आलेख संस्करण में समझाया गया है।

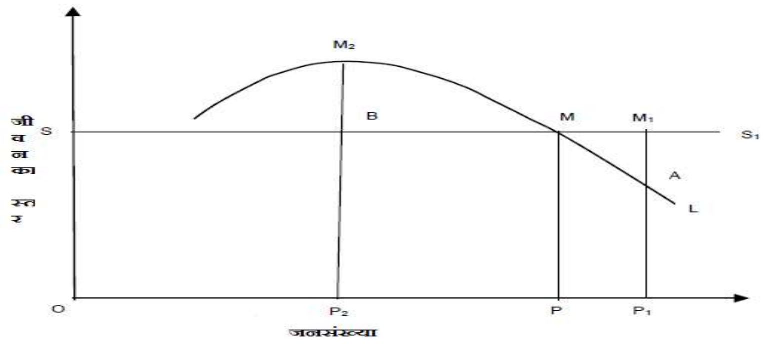

आरेख 17.1 जीवन स्तर का मजदूरी सिद्धांत

OP वास्तविक आबादी है और OM आंकड़े में जीने का मानक है, अगर जनसंख्या OP1 स्तर तक बढ़ती है, तो वास्तविक स्तर की जीवित वक्र जीवन SS1 के स्तर से नीचे होगी। जैसा कि AM1 दूरी के अनुसार दिखाया गया है, श्रमिक बच्चो को जन्म देना बंद कर देंगे और श्रम की आपूर्ति में गिरावट होगी। दूसरी ओर, यदि आबादी OP2 स्तर पर आती है, तो जीवन स्तर का वास्तविक स्तर SS2 स्तर से ऊपर होगा, अर्थात BM2, श्रमिकों के अधिक बच्चे होंगे, श्रम की आपूर्ति बढ़ेगी और मजदूरी घट जाएगा। श्रमिकों के जीवन स्तर का OP स्तर फिर से जनसंख्या वृद्धि दर पर M स्तर पर होगा।

आलोचना

1. **परस्पर निर्भरः**

जीवन के स्तर की अवधारणा और मजदूरी एक दूसरे से परस्पर सम्बंधित हैं और सिद्धांत के आधार पर परस्पर निर्भर हैं कि जीवित रहने के मानक मजदूरी का निर्धारण करते हैं, लेकिन वास्तव में ज़िंदगी का स्तर मजदूरी से निर्धारित होता है। दोनों चीजें एक दूसरे पर निर्भर हैं।

2. **जीने का मानक निश्चित नहीं हैः**

यह सिद्धांत इस धारणा पर आधारित है कि जीवित रहने के मानक को तय किया गया है जैसा कि ऊपर दिए गए चित्र में दिखाया गया है (चित्र 17.1) SS वक्र द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है, लेकिन जब श्रमिक की मजदूरी में वृद्धि होती है, तो जीवन का स्तर स्वतः ही बढ़ जाएगा।

3. **मजदूरी विभेदकों को समझने में विफलः**

सिद्धांत मानता है कि मजदूरी जीने के मानक के बराबर होती है, जिसका मतलब है कि मजदूरी में एकरूपता है। लेकिन विभिन्न व्यवसायों के लिए मजदूरी की विभिन्न श्रेणियां मौजूद हैं। कुशल कर्मचारियों को निश्चित रूप से दूसरों की तुलना में अधिक मजदूरी मिलती है

4. **श्रम की मांग पर ध्यान नहीं देताः**

यह सिद्धांत श्रम की आपूर्ति पक्ष पर आधारित है। श्रम की मांग की अवधारणा पर ध्यान न दें, इसलिए यह विशुद्ध रूप से एक तरफा सिद्धांत है।

मजदूरी निधि सिद्धांत

जेएस मिल द्वारा मजदूरी निधि सिद्धांत का प्रस्ताव तैयार किया गया था। जेएस मिल के मुताबिक मजदूरी आबादी और पूंजी के बीच या श्रमिक वर्ग की संख्या के बीच निर्भर करती है जो लगान के लिए काम करती है और उसमें से

एक को मजदूरी निधि कहा जा सकता है। परिचालित पूंजी का वह हिस्सा होता है जो श्रम के प्रत्यक्ष लगान में खर्च होता है। मजदूरी दो कारकों द्वारा निर्धारित की जाती है, पहले मजदूरी निधि है और दूसरा जनसंख्या है मजदूरी निधि यह है कि उधमी द्वारा आवंटित श्रम और आबादी की सेवाओं की खरीद के लिए श्रम, लोगों या आबादी की वास्तविक आपूर्ति का मतलब है जो रोजगार के लिए बाजार में प्रवेश करता है। सिद्धांत को समीकरण रूप में समझाया जा सकता है।

औसत मजदूरी = मजदूरी / आबादी

यह समीकरण दर्शाता है कि मजदूरी का मजदूरी के साथ प्रत्यक्ष संबंध है और जनसंख्या के साथ व्युत्क्रम से संबंधित है।

आलोचना

1. **श्रम एकरूप नहीं है:**

यह सिद्धांत इस धारणा पर आधारित है कि श्रम समरूप है लेकिन वास्तविकता में श्रमिक अपने कौशल, उत्पादकता और दक्षता में अलग हैं। तो यह विरोधाभासी धारणा है |

2. **मजदूरी और लाभ के बीच कोई संघर्ष नहीं:**

इस सिद्धांत का कहना है कि मजदूरी में वृद्धि लाभ की हिस्सेदारी स्वतः ही कम कर देती है, लेकिन वास्तविकता में दोनों मजदूरी और लाभ है ।

3. **अत्यधिक अवैज्ञानिक:**

मजदूरी निधि की अवधारणा की कोई वैधता नहीं है, क्योंकि मजदूरी का राष्ट्रीय आय से भुगतान किया जाता है, जो एक प्रवाह की अवधारणा है, एक शेयर नहीं बल्कि मजदूरी निधि है। तो सिद्धांत अत्यधिक अवैज्ञानिक है|

4. **अवशिष्ट दावेदार सिद्धांत:**

यह सिद्धांत एक अमेरिकी अर्थशास्त्री फ्रांसीसी ए वाकर ने कहा था कि अपने उधोग के उत्पादन से बाहर मजदूरों की मजदूरी दी जाती है।

दूसरे शब्दों में इसका मतलब है कि मजदूरी, शेष उत्पादक से लगान और ब्याज घटाकर शेष है। जैवंस के शब्दों में, "मजदूर वर्ग की मजदूरी अंततः लगान, करों और पूंजी पर ब्याज की कटौती के बाद जो उत्पन करती है, उसके साथ संयोग है"। सिद्धांत श्रमिकता को समझने का दावा करता है, अगर वह अधिक काम करता है तो उसे राष्ट्रीय आय का बेहतर हिस्सा या अनुपात मिलेगा। सिद्धांत में जोर दिया गया है कि श्रम में अपनी उत्पादकता, कौशल और दक्षता के कारण अपने स्वयं के बाजार को प्रभावित करने की शक्ति है।

आलोचना

1. **उधमी अवशिष्ट दावेदार है जो श्रमिक नहीं है:** वास्तव में उधमी को लगान, ब्याज और मजदूरी के वितरण के बाद उसका हिस्सा मिलता है। इसलिए वह वास्तव में अवशिष्ट दावेदार हैं और सिद्धांत में श्रमिकों के रूप में दावा नहीं करते ।

2. **ट्रेड यूनियन की भूमिका पर ध्यान नहीं देता:** ट्रेड यूनियन द्वारा मजदूरी बढ़ाने के लिए तैयार किए गए दबावों को सिद्धांत में पूरी तरह से नजरअंदाज किया गया है।

3. **परिकलित सिद्धांत:** सिद्धांत श्रम की मांग पक्ष से समस्या का दृष्टिकोण है, आपूर्ति की तरफ की ओर ध्यान नहीं देता। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि सिद्धांत एक तरफा है।

4. **लगान, ब्याज और लाभ का कोई निर्धारण संभव नहीं है:** यह सिद्धांत व्यक्तिपरक और आदर्श अवधारणाओं पर आधारित है, इसमें लगान, ब्याज और मजदूरी के स्तर का निर्धारण करने के लिए उद्देश्य का आधार नहीं है।

सीमांत उत्पादकता मजदूरी सिद्धांत

सीमान्त उत्पादकता सिद्धांत, की अवधारणा और कई लेखकों के कार्य को दर्शाता है, प्रत्येक विचार सुधार, विश्लेषण, संशोधन और संशोधित अन्य लेखकों द्वारा विकसित करना है। सबसे पहले, एडवर्ड वेस्ट और डेविड रिकार्डो ने उनके काम "भूमि पर पूंजी का उपयोग" और "राजनीतिक अर्थव्यवस्था के सिद्धांत" को आगे रखा था। पहले सिद्धांत का इस्तेमाल लगान का निर्धारण करने के लिए किया गया था लेकिन बाद में येवॉन ने सीमांत विश्लेषण की अवधारणा को पेश करने के बाद अपने विचार को मजदूरी के स्तर को निर्धारित करने के लिए बढ़ा दिया। मार्शल और पिगू मजदूरी जैसे नव पारंपरिक लेखकों के मुताबिक श्रम के सीमान्त उत्पादकता के अनुसार निर्धारित किया जाएगा। हम इसे नीचे दिए गए समीकरण में जोड़ सकते

सीमांत उत्पादकता = मजदूरी

इसका अर्थ है कि सीमांत उत्पादकता श्रम की एक अतिरिक्त इकाई को रोजगार के द्वारा कुल उत्पाद में एक अतिरिक्त वस्तु है और यह प्रत्येक सफल रोजगार के साथ घटती जाती है एक उधमी को श्रम के रोजगार के बारे में फैसला करना होता है, वह अपने राजस्व के दृष्टिकोण को मानते हैं, इसलिए सीमांत राजस्व उत्पादकता में अधिक रुचि रखते हैं।

सीमांत राजस्व उत्पादकता = सीमांत शारीरिक उत्पादकता' उत्पाद की कीमत

इस सिद्धांत के अनुसार, उधमी अधिकतम मुनाफा कमाएगा, जहां श्रम का मामूली उत्पाद मजदूरी के बराबर होगा और इस बिंदु पर न्यूनतम नुकसान भुगतना होगा।

6. **मजदूरी का आधुनिक सिद्धांत**

मजदूरी के आधुनिक सिद्धांत बताता है कि मजदूरी श्रम की मांग और आपूर्ति के आधार पर निर्धारित की जाती। संपूर्ण प्रतिस्पर्धा और अपूर्ण प्रतियोगिता जैसी बाजारों में, मजदूरी निर्धारण मांग और आपूर्ति के बल द्वारा नियंत्रित किया जाएगा।

1. पूर्ण प्रतिस्पर्धा के मामले में मजदूरी निर्धारण

एक अच्छे प्रतिस्पर्धी बाजार में ट्रेड यूनियनों की कमी है इसमें कुछ मान्यताओं हैं जो नीचे विस्तृत हैं:

(i) मजदूर किसी भी नियोक्ता के पास जा सकता है और नियोक्ता किसी भी मजदूर को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप कर्मचारी रख सकता है। व्यवसाय की पूर्ण स्वतंत्रता है|

(ii) बाजार में कई कर्मचारी हैं, कोई भी कार्यकर्ता मजदूरी संरचना को प्रभावित नहीं कर सकता है|

(iii) अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार है।

(iv) दोनों श्रमिक और नियोक्ता बाजार के बारे में सही ज्ञान रखते हैं।

(v) श्रम बाजार में सही गतिशीलता मौजूद है।

पूर्ण रूप से प्रतिस्पर्धी बाजार मजदूरी में मांग और आपूर्ति बलों द्वारा निर्धारित किया जाएगा। मजदूरी के निर्धारण को समझने के लिए, मांग और आपूर्ति की अवधारणा को स्पष्ट किया जाना चाहिए।

प्रथमत:, श्रम के लिए मांग – श्रम की मांग है कि यह उत्पाद बनाने की दिशा में उत्पन होती है। श्रमिकों की मांग दो कारकों पर निर्भर होती है: (1) श्रम की मांग का लोच (2) उत्पाद के लिए मांग की लोच। उत्पाद की मांग में लोच जितनी अधिक होगी, जो उस उत्पाद को बनाता है उतनी अधिक लोचदार श्रम के लिए मांग होगी । विशेष रूप से, श्रमिकों ने अपनी दक्षता और उत्पादकता के लिए मांग की।

दूसरा, श्रम की आपूर्ति: इसका मतलब है कि कितने कार्यकर्ता खुद को प्रत्येक संभावित मजदूरी दर पर रोजगार के लिए पेश करेंगे। आम तौर पर यदि प्रचलित मजदूरी दर अधिक होती है, तो अधिक मजदूर खुद को पेश करेंगे और अगर मजदूरी में गिरावट आएगी, तो कम श्रमिक होंगे जो रोजगार के लिए आएंगे। इसलिए, श्रम और मजदूरी की आपूर्ति के बीच प्रत्यक्ष संबंध है। इसलिए आपूर्ति की पिछड़े झुकाव सकारात्मक वक्र है। श्रम की आपूर्ति में बहुत महत्वपूर्ण कारक कार्यकर्ता अवकाश अनुपात है कम मजदूरी पर, श्रमिकों को लंबी अवधि के लिए काम करना पड़ता है, काम करने और बिताने के लिए अधिक समय होता है, लेकिन जब मजदूरों का मजदूरी में महत्वपूर्ण तेजी से ऊपर उठता है, तो वे आसानी से महसूस करते हैं, वे पहले की तुलना में कम समय के लिए अवकाश लेते है और अधिक काम करते हैं क्योंकि उनकी जरूरतों को आसानी से पूरा किया जाता सकता है और उन्हें जीवन की बुनियादी चीजों के बारे में चिंता करने की आवश्यकता नहीं होती है। इस मामले में आपूर्ति वक्र पीछे की और नीचे जाता है ।

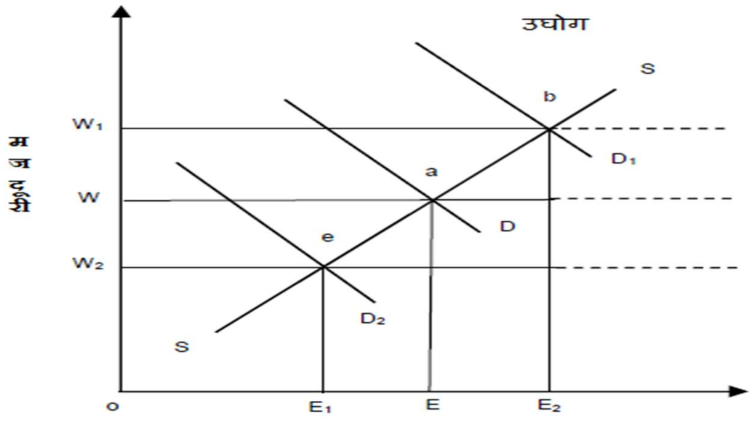

आरेख 17.2 उधोग में मजदूरी निर्धारण

17.2 आरेख में श्रमिकों को OW मजदूरी दर पर नियोजित किया जाता है, यदि मजदूरी की दर OW मजदूरी दर से ऊपर बढ़ती है, तो अधिक श्रमिक खुद को रोज़गार के लिए पेश करेंगे और इसके परिणामस्वरूप मजदूर की मांग कम हो जाएगी और मजदूरी की दर स्वतः ही OW मजदूरी दर में आ जाएगी जो कि मजदूरी की संतुलन मूल्यांकन दर है। यदि मजदूरी दर ओ ओ से OW 2 तक कम हो जाती है तो वहां कम श्रमिक होंगे जो काम करने के लिए तैयार होंगे और मांग अधिक होगी, इसलिए नियोक्ता ने OW2 से OW ऊपर की मजदूरी दर बढ़ा दी है।

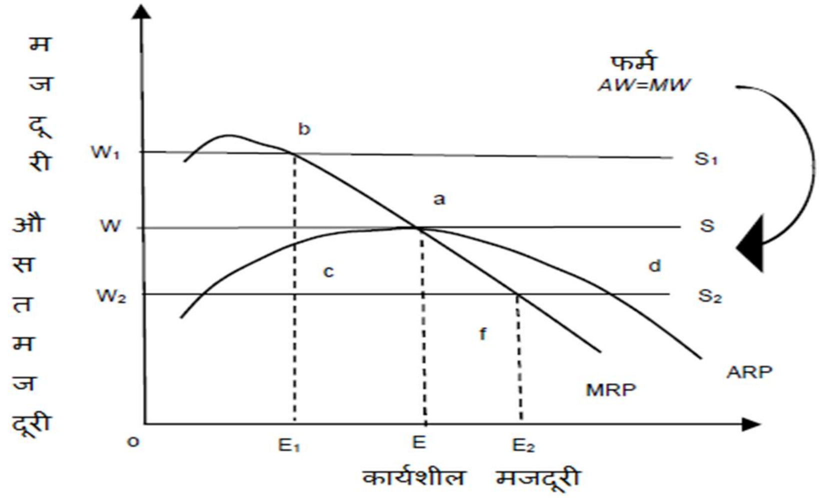

आरेख 17.3 फर्म में मजदूरी निर्धारण

संपूर्ण प्रतियोगिता के तहत सभी कंपनियों के लिए आंकड़ा 17.3 में, मजदूरी दर उद्योग की मांग वक्र और श्रम की आपूर्ति वक्र से निर्धारित होती है। पूर्ण रोजगार संतुलन में, श्रम का सीमांत राजस्व उत्पाद इसकी सीमांत लागत के बराबर है और औसत राजस्व उत्पाद इसकी औसत लागत के बराबर है

$MRV = MW$

$ARP = AW$,

इसीलिए $MRV = MR = ARP = AW$

2. अपूर्ण प्रतियोगिता के तहत मजदूरी निर्धारण

अपूर्ण श्रमिक बाजार का अर्थ है कि खरीदारों और विक्रेताओं की संख्या कम है। एकाधिकार का एक विशेष मामला है इसका आशय है कि एकल खरीदार जो विशेष प्रकार के श्रम की सेवाएं खरीदता है। इस प्रकार का बाजार खनन शहरों में मौजूद है। यहां श्रम स्थिर है, विशेष रूप से एक नौकरी के लिए काम करने के लिए इसे विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाता है, मजदूरों को उनके भौगोलिक क्षेत्र से परे जाने के लिए कोई ज्ञान या जड़ता नहीं है। इस मामले में खरीदार या उधमी श्रम के शोषण के माध्यम से सामान्य लाभ कमाते हैं। यह निम्नलिखित आकृति 17.4 से स्पष्ट किया जा सकता है:

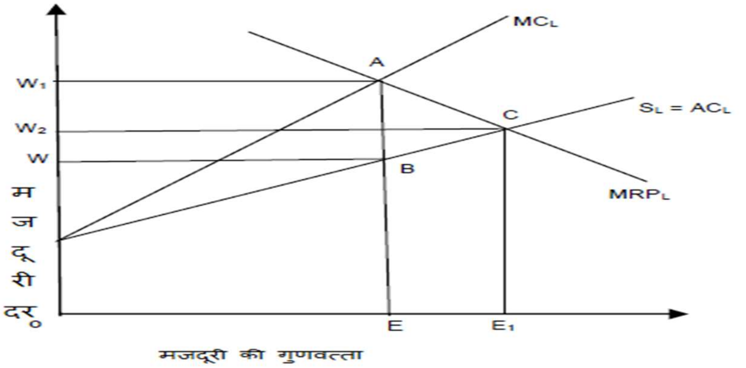

आरेख 17.4 अपूर्ण श्रमिक बाजार में मजदूरी निर्धारण

आरेख 17.4 में बताता है कि MCL श्रम की सीमांत लागत है और ACL या SL श्रम की आपूर्ति है। MRPL श्रम के लिए मांग है। अधिकतम लाभ के लिए, एकाधिकार कर्मचारी बिन्दु ए से MRPL = MCL तक कर्मचारी श्रमिक होगा, वह कर्मचारी के श्रमिक व्य स्तर पर होगा, सीमांत राजस्व से सीमांत लागत कम होगी, Eb मजदूरी दर सीमांत राजस्व उत्पाद है,एकाधिकारी BA का लाभ अर्जित करेगा, दूसरे शब्दों में, WBAW1 अति सामान्य मुनाफा है, दूसरी तरफ, सामूहिक सौदा करने वाली संघ द्वारा उच्च मजदूरी की मांग कर उत्पाद मजदूरी के बराबर है।

17.5 सामूहिक सौदेबाजी और मजदूरी

इसे द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल के रूप में भी कहा जाता है जब श्रमिक स्वयं को एकजुट करते हैं और अपने हितों की रक्षा के लिए और खुद को शोषण के खिलाफ रखने के लिए एक समूह बनाते हैं, तो श्रमिक संघों या ट्रेड यूनियनों की अवधारणा उभर आती है। ये ट्रेड यूनियन श्रमिकों की ओर से काम के घंटे, कामकाजी परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, रोजगार की अवधि और रहने की परिस्थितियों के बारे में बातचीत करते हैं, यह सामूहिक सौदेबाजी का प्रतीक है द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल में दो दल हैं, एक विक्रेता (ट्रेड यूनियन) है और दूसरा खरीदार (एकाधिकार) है। इस मामले में सामूहिक सौदेबाजी के ट्रेड यूनियनों के जरिए मोहनों के लिए अधिक मजदूरी और संबद्ध सुविधा, अच्छा काम करने की स्थिति आदि के लिए एकाधिकार पर दबाव डालने की कोशिश होती है। वे मजदूरी की ऊपरी सीमा निर्धारित करते हैं, दूसरी तरफ मोनोसोनीवादी उन्हें कम मजदूरी के लिए मनाएंगे । सैद्धांतिक रूप से द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल में मजदूरी का निर्धारण करना कठिन है,

व्यावहारिक रूप से यह अन्य पार्टी को नुकसान पहुंचाने के लिए प्रत्येक पार्टी की वार्ता शक्ति, दबाव शक्ति और क्षमता पर निर्भर करता है और इन घाटे को बनाए रखने के लिए प्रत्येक पक्ष की क्षमता भी है। द्विपक्षीय एकाधिकार के मामले में मजदूरी दर के निर्धारण में नीचे दी गई आरेख के माध्यम से समझाया जा सकता है:

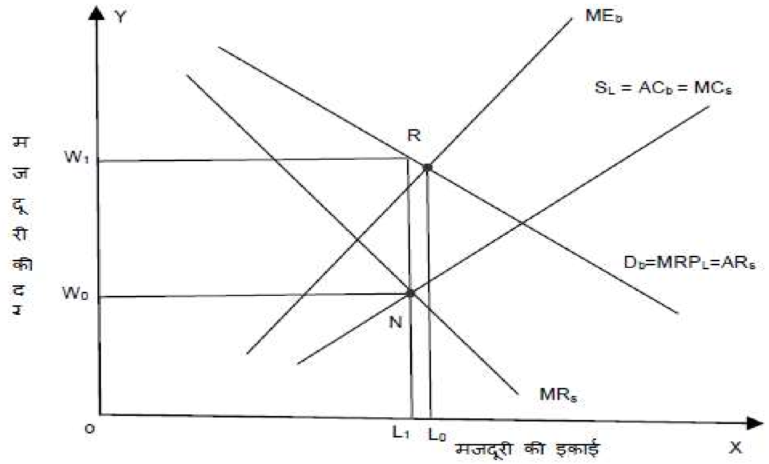

आरेख 17.5 एकाधिकार द्विपक्षीय मॉडल

उपरोक्त आंकड़ों में SL श्रम की आपूर्ति वक्र है। क्ड श्रम के लिए एकाधिकार की मांग वक्र है। MR_S विक्रेता या ट्रेड यूनियन का राजस्व वक्र है। एकाधिकार के दृष्टिकोण से संतुलन बिंदु R पर निर्धारित किया जाएगा जहां ME_b , MRP_L के बराबर है। इस बिंदु पर, एकाधिकार कर्मचारी स्ट श्रम होगा और W_O मजदूरी दर का भुगतान करेगा, दूसरी तरफ श्रमिक संघ उच्च मजदूरी W_1 के लिए सौदेबाजी करेगा और श्रमिकों की L_1 इकाइयों को कर्मचारी के लिए चाहेंगे। लेकिन दृढ़ता में होगा क्योंकि दोनों अपने स्वयं के लाभ के लिए सौदेबाजी करना चाहते हैं। वास्तव में मजदूरी दर दो पार्टियों की सापेक्ष शक्ति के आधार पर W_O और O_1 के बीच होगी |

मजदूरी निर्धारण के फेलनेर की द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल

विलियम फेलनेर ने रोजगार और मजदूरी के बीच अंतर वक्र तकनीक में रोजगार के द्वारा मजदूरी निर्धारण के द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल के रूप में नामित मॉडल विकसित किया है। फेलनेर के अनुसार यदि श्रमिक संघ रोजगार के स्तर पर इसके प्रभाव पर विचार किए बिना अधिक मजदूरी का लक्ष्य निर्धारित करना चाहता है, तो उदासीनता वक्र OX अक्ष के समानांतर पंक्ति होगी। उच्चतर वक्र में, ऊंचे मजदूरी को दर्शाते हुए संतोष का स्तर होगा। इसे नीचे दिए गए आंकड़े 17.6 के माध्यम से समझाया जा सकता है:

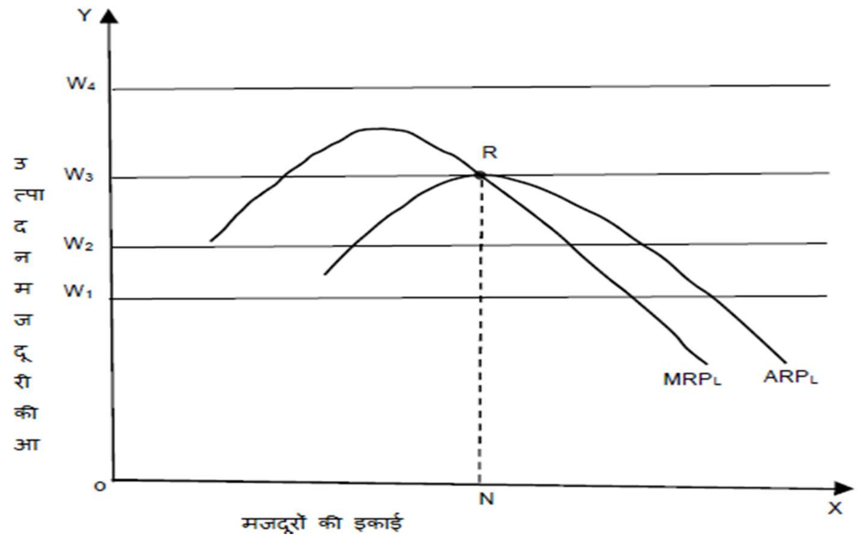

आरेख 17.6 मजदूरी निर्धारण के फेलनेर की द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल

फैलनेर के अनुसार, श्रमिक संघ एकतरफा मजदूरी का निर्धारण कर सकता है क्योंकि वे अपनी शक्ति और ताकत का प्रदर्शन करते हैं और रोजगार के स्तर पर इसके प्रभाव को परेशान नहीं करते; वे ऐसी मजदूरी दर का चयन करेंगे, जहां उपरोक्त आरेख के अनुसार उदासीनता वक्र ।त्व्स् स्पर्श करेगा, I_1, I_2, I_3 और I_4 को , यही उदासीन वक्र घटता हैं और W_1, W_2, W_3 और W_4 हैं उनकी मजदूरी दरें श्रमिक संघों को संतुष्ट करने के लिए, मजदूरी दर में बड़े मजदूरी का संकेत देते हुए लगातार दो उदासीनता वक्र के बीच की दूरी बढ़ रही है। यद्यपि श्रमिक संघ यहां सभी शक्तिशाली है, लेकिन वे W_3 मजदूरी दर से आगे नहीं जा सकते, क्योंकि उत्पादन का W_3 मजदूरी दर लागत के बाद उत्पादक को नुकसान हो सकता है, इसलिए W_3 मजदूरी दर है जो श्रमिक संघ द्वारा निर्धारित किया जाएगा।

न्यूनतम मजदूरी निर्धारण

न्यूनतम मजदूरी निर्धारण मजदूरी का मतलब श्रम के हितों की रक्षा के लिए सरकार या सरकारी एजेंसियों द्वारा मजदूरी की नीचली सीमा निर्धारित करना है। न्यूनतम मजदूरी का मतलब यह नहीं है कि श्रमिकों के लिए सबसे कम मजदूरी का भुगतान होगा। इसका अर्थ है कानून के द्वारा, सरकार न्यूनतम मजदूरी दर को निर्धारित करती है जिसमें कोई नियोक्ता को न्यूनतम मजदूरी दर से नीचे मजदूरी का भुगतान करने की अनुमति नहीं है। न्यूनतम मजदूरी कानून निर्धारित करने का प्रारंभिक प्रयास 1894 में न्यूज़ीलैंड में किया गया था। भारत में, निर्दिष्ट उधोग के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित किया गया था। न्यूनतम मजदूरी यह है कि मजदूरी जो जीवन के अस्तित्व और जीविका के लिए उपलब्ध कराती है लेकिन कार्यकर्ता की दक्षता के संरक्षण के लिए भी। प्रो डॉब न्यूनतम मजदूरी को परिभाषित करता है, "मानक दर, जो एक ट्रेड यूनियन सामूहिक सौदेबाजी द्वारा स्थापित करने का प्रयास करती है"

न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण के लिए दोनों सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव हैं जो नीचे सूचीबद्ध हैं:

सकारात्मक प्रभाव

यह श्रम का शोषण हटाने में मदद करता है, यह औद्योगिक शांति बनाए रखने में मदद करता है, प्रबंधन और ट्रेड यूनियनों के बीच कोई संघर्ष या विवाद उत्पन नहीं होता है। यदि मजदूरी का स्तर अधिक है तो राष्ट्रीय आय पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। न्यूनतम मजदूरी के नुस्खे मजदूर की दक्षता और उत्पादकता बढ़ाता है। यह आय के न्यायसंगत वितरण की ओर जाता है और न्याय और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देता है|

नकारात्मक प्रभाव

मुख्यतः, यह रोजगार के स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और यह उधोग को खराब वातावरण भी देता है। सबसे पहले, यह रोजगार के स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, नियोक्ता रोजगार को कम करने वाले श्रमिक बचत उपकरणों का सहारा लेगा, और अधिक मजदूरी का अर्थ है कि वे मौजूदा श्रमिकों के साथ बांटना चाहते हैं। न्यूनतम मजदूरी से निर्धारण नियोक्ता को कम मुनाफा होगा, इसलिए वह अपने व्यवसाय को कम करेगा और किसी भी मजदूर को और आगे रोजगार नहीं देगा। दूसरे, इसका उघोग पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, उन उघोगों को जो कानून के तहत निर्धारित न्यूनतम मजदूरी का भुगतान नहीं कर सकते हैं, उनका समापन हो सकता है। कुछ समय, न्यूनतम मजदूरी अधिकतम हो सकती है क्योंकि यह उघगोंपतियों के लाभ को कम करता है। विशेष रूप से निर्यात उधोग के उत्पादन में गिरावट, लागत में वृद्धि और लाभ में कमी आती है।

17.6 विभेदकारी मजदूरी

विभिन्न उधोगों, व्यवसायों या क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के श्रम के मजदूरी में अंतर का अस्तित्व मजदूरी अंतर को दर्शाता है। मजदूरी अंतर के अस्तित्व के लिए तीन मुख्य कारण हैं। सबसे पहले, गैर–प्रतिस्पर्धी समूहों के अस्तित्व की वजह से मजदूरी अंतर। दूसरा, श्रम की विविधता के कारण मजदूरी अंतर। तीसरा, मजदूरी के अंतर को मुआवजा या समान करना एडम स्मिथ के अनुसार पांच कारणों से भिन्न अंतर हैरू

1. सहमतता या असहमति
2. रोजगार की स्थिरता और अस्थिरता
3. छोटे या बढ़ा विश्वास
4. सफलता की संभावना या असंभवना
5. सहजता और सस्तीपन

"प्रोफेसर ताउसिग" ने यह तर्क दिया है कि मजदूरी अंतर गैर–प्रतिस्पर्धी समूहों के कारण मौजूद है, क्योंकि हर कोई कुशल नहीं हो सकता है, और अन्य व्यक्तियों को कला और रचनात्मकता नहीं दी जा सकती, प्रोफेसर ताउसिग ने इसके पांच समूहों को प्रतिष्ठित किया:

(i) अकुशल श्रमिकों जैसे मजदूर

(ii) अर्ध–कुशल जो आवश्यक अनुपात में रेत और सीमेंट मिश्रण कर सकते हैं

(iii) कुशल श्रमिकों को विशेष प्रशिक्षण और कौशल की आवश्यकता होती है
(iv) विशिष्ट शैक्षिक योग्यता के साथ लिपिक श्रमिक
(v) पेशेवर समूह जैसे वकील, शिक्षक, चिकित्सक, अभिनेता और प्रबंधकों।
भारत में, मजदूरी के अंतर भौगोलिक दूरी के साथ–साथ बाजार की खामियों के कारण मौजूद हैं। कभी–कभी भारत के विशेष संदर्भ में, मजदूरी भिन्नता लिंग, जाति और जाति के भेदभाव की वजह से होती है, जो राज्य के बहुत ही बुरे मामलों को दर्शाती है।

17.7 श्रम के शोषण की संकल्पना

श्रम का शोषण यह दर्शाता है कि उनके द्वारा किए गए योगदान की तुलना में श्रमिकों को काफी कम भुगतान किया जाता है। यह हमारी अर्थव्यवस्था में आजकल सामाजिक, आर्थिक और नैतिक समस्या का सामना कर रहा है। मार्क्स के अनुसार, श्रम में अधिशेष शक्ति है, अर्थात मजदूर इसकी कीमत से अधिक योगदान देता है लेकिन इसकी रुचि को संरक्षित किया जाना चाहिए और समाज में वर्ग विभाजन को टालना चाहिए। अन्यथा एक दिन वे सड़कों पर अपने अधिकारों के लिए लड़ेंगे, जो आर्थिक व्यवस्था में कुल असफलता का कारण बनेंगी।

श्रम के शोषण के पिगू–रॉबिन्सन की अवधारणा

जॉन रॉबिन्सन के शब्दों में "वास्तव में शोषण से क्या आशय है, आम तौर पर मजदूरी, मजदूरी के सीमांत उत्पाद से कम है"। यह श्रम और उत्पाद दोनों बाजारों में अपूर्ण बाजारी स्थितियों के अस्तित्व के कारण है। प्रतिस्पर्धी बाजार मजदूरी में सीमांत उत्पाद के मूल्य के अनुसार भुगतान किया जाएगा।

श्रम के शोषण में चौंबरलिन की अवधारणा

चौंबरलिन के मुताबिक, श्रम के शोषण की एक अवधारणा है "जब मजदूर को अपने सीमांत राजस्व उत्पाद से कम कीमत चुकाई जाती है |"
सवाल है के श्रमिक शोषण को कैसे दूर किया जाये ? इसका अनुमान लगाया जा सकता है कि श्रमिकों के शोषण को उचित स्वच्छता और स्वच्छता की सुविधा देकर, उन्हें प्रोत्साहित करके, कार्यकर्ता की मजदूरी में वृद्धि के माध्यम से दूर जा सकता है और सबसे महत्वपूर्ण बात, सरकार को हर उद्योग में न्यूनतम मजदूरी के कानून को लागू करना चाहिए।

17.8 सारांश

मजदूरी को श्रम द्वारा की गई सभी गतिविधियों के भुगतान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, यह मानसिक या शारीरिक हो सकता है । मजदूरी की दो श्रेणियां हैं, अर्थात् नाममात्र और वास्तविक मजदूरी नाममात्र मजदूरी आर्थिक मजदूरी है | वास्तव में, उसके द्वारा प्रदान की गई सेवा के लिए राशि के मामले में कामगार को भुगतान किया जाता है। दूसरी ओर वास्तविक मजदूरी का मूल्यांकन प्रचलित मूल्य सूचकांक के आधार पर किया जाता है; इसलिए वे मौद्रिक मजदूरी / कीमतों के बराबर है, मजदूरी निर्धारण के संबंध में विभिन्न लेखकों द्वारा कई सिद्धांत प्रस्तावित किए गए हैं। पारंपरिक धारणा के अनुसार, मजदूरी मांग और आपूर्ति के मुक्त बलों द्वारा निर्धारित होती है और आर्थिक व्यवस्था में स्वतरू समायोजन होता है और मजदूरी को संतुलन

स्तर पर स्वचालित रूप से बहाल किया जाता है। लेकिन किनेस ने जोर देकर कहा कि मजदूरी में लचीलापन नहीं हो सकती और नीचे की कठोरता हो सकती है, इसलिए रोजगार का स्तर गहराई से प्रभावित होता है। यहां इस इकाई में हमने मजदूरी के छह सिद्धांत दिए हैं। दो आधुनिक संस्करण शामिल नहीं किए गए हैं जिनमें से एक मजदूरी के दक्षता सिद्धांत से संबंधित है, जो कि सबसे विकसित बहस वाली अर्थव्यवस्थाएं हैं। यद्यपि दक्षता को मापना कठिन है लेकिन दक्षता सिद्धांत बताता है कि जो व्यक्ति जानकार, कुशल, दक्ष, मेहनती है उसे अधिक मजदूरी मिलना चाहिए।

17.9 शब्दावली

मजदूरी: मजदूर मानसिक या शारीरिक सेवाओं के लिए पुरस्कृत ।

वास्तविक मजदूरी: प्रचलित मूल्य सूचकांक के आधार पर मजदूरी का भुगतान।

मजदूरी का अनुदान सिद्धांत: सिद्धांत जिसमें श्रम शक्ति को एक वस्तु के रूप में माना जाता है और कीमत उत्पादन की लागत पर निर्धारित होती है |

आधार श्रम का शोषण: जब श्रमिकों को उनके द्वारा किए गए योगदान की तुलना में काफी कम भुगतान किया जाता है |

17.10 बोध प्रश्न

(ए) रिक्त स्थान भरें

(ए) मजदूरी का अनुदान सिद्धांत .... द्वारा दिया गया था |

(बी) सीमान्त उत्पादकता सिद्धांत का मानना है कि मजदूरी का भुगतान किया जाएगा श्रम के ....के अनुसार |

(सी) मजदूरी का आधुनिक सिद्धांत बताता है कि .... मजदूरी का स्तर निर्धारित करता है |

(डी) वास्तविक मजदूरी मौद्रिक मजदूरी और ....से संबंधित हैं |

(ई) नाममात्र मजदूरी को .... भी कहा जाता है |

(बी) सही या गलत

(ए) एडम स्मिथ ने मजदूरी अंतर के पांच कारण दिए हैं।

(बी) श्रम के शोषण की अवधारणा यह मानती है कि इसकी उत्पादकता से अधिक श्रम का पुरस्कृत है |

(सी) श्रम के दक्षता सिद्धांत की उत्पादकता मजदूरी पर जोर दिया है।

(डी) सामूहिक सौदेबाजी मजदूरी की अवधारणा में आम तौर पर अनिश्चित है |

(ई) ट्रेड यूनियनों ने हड़ताल मे उत्पादन की लागत से ज्यादा श्रमिकों के लिए सौदेबाजी की है ।

17.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए) (ए) भौतिक विद्यालय, (बी) सीमान्त उत्पादकता, (सी) आपूर्ति, (डी) मूल्य, (ई) मौद्रिक मजदूरी।

(बी) (ए) सही है, (बी) गलत, (सी) गलत, (डी) सही है, (ई) गलत

17.12 स्वपरख प्रश्न

1. विस्तार से मजदूरी के आधुनिक सिद्धांत का वर्णन करें?
2. वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले कारक क्या हैं?
3. मजदूरी निर्धारण के द्विपक्षीय एकाधिकार मॉडल की अवधारणा के बारे में सूक्षम रूप से वर्णन करे?

17.13 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रेंटिस हॉल ऑफ़ भारत, नई दिल्ली।
2. डी.एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. टी.आर. जैन, ओ.पी. खन्ना और विरसेन, माइक्रो इकोनॉमिक्स एंड इंडियन अर्थव्यवस्था, वी.के. प्रकाशक, नई दिल्ली ।
4. एच.एल. अहुजा, एडवांस्ड इकोनॉमिक थ्योरी, एस चंद एंड कं लिमिटेड,नई दिल्ली।
5. आत्मानंद, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सेल बुक, दिल्ली।

इकाई 18 लाभ– प्रकृति, अवधारणा और लाभ के सिद्धांत

इकाई की रुपरेखा

18.1 प्रस्तावना

18.2 लाभ: प्रकृति और रचना

18.3 सकल और शुद्ध लाभ

18.4 लाभ के सिद्धांत

18.4.1 हॉले का जोखिम सिद्धांत

18.4.2 नाइट् का लाभ का सिद्धांत

18.4.3 क्लार्क का "गतिशील सिद्धांत"

18.4.4 शुम्पीटर का "नव –प्रवर्तन सिद्धांत"

18.4.5 शैकल का निर्णयन व लाभ का सिद्धांत

18.4.6 लाभ का एकाधिकार सिद्धांत

18.4.7 लाभ का लगान सिद्धांत

18.4.8 लाभ का मजदूरी सिद्धांत

18.5 सामान्य और अधिशेष लाभ

18.6 क्या लाभ शून्य हो जाते हैं?

18.7 सारांश

18.8 शब्दावली

18.9 बोध प्रश्न

18.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

18.11 स्वपरख प्रश्न

18.12 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- अर्थव्यवस्था में लाभ सिद्धांतों और अनुप्रयोगों का वर्णन कर सकें।
- प्रकृति की रचना और रचना की व्याख्या कर सकें।
- लाभ के अर्थ और अभिव्यक्तियों को समझ सकें।
- लाभ के विभिन्न सिद्धांतों का वर्णन कर सकें।
- लाभ के बुनियादी तत्वों, शक्तियां और कमजोरियों का वर्णन कर सकें।

18.1 प्रस्तावना

भूमि, श्रम, पूंजी और उघमी चार कारक हैं जो अर्थव्यवस्था में व्यवहार उत्पादन की प्रक्रिया बनाते हैं तीन कारक कम से कम सिद्धांत में भूमि, श्रम और पूंजी जरुरी है, जबकि उघमी नहीं है। उघमी की प्रकृति अन्य सभी कारकों से बहुत ही अलग है। वास्तव में, वह एक व्यक्ति है जो सभी दूसरों को काम पर रखता है एक उघमी एकल व्यक्ति या एक व्यक्तियों का समूह हो सकता है जो कि लाभ को अधिकतम करने के लिए काम कर रहा है। अत: व्यवसाय अकेले स्वामित्व या व्यक्तियों का समूह हो सकता है यह उघोग को बनाता हैं। मालिकों की संख्या के आधार उत्पादन बड़े और छोटे पैमाने पर भिन्न हो सकता हैं। बदलती कंपनियों के स्वामित्व पैटर्न से हमे बदल

विकासवादी प्रकृतियों का पता चलता हैं । आधुनिक समय में, उन्नीसवीं सदी के एकमात्र उद्यमशीलता एक सीमित कंपनी के गठन की अवधारणा दृारा प्रतिस्थापित किया गया है। बीसवीं सदी में, संयुक्त स्टॉक कंपनी व्यापार करने का मुख्य दृष्टिकोण था अब, इक्सबी शताब्दी में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की अवधारणा ने गति अर्जित की हैं। गतिविधि के आयोजकों के समूह में एक नया प्रबंधकीय प्रतिमान उभरा है। यह स्पष्ट है कि उद्यमशीलता के फैसले लाभ और हानि पर आधारित किए जाते हैं। बदलते आर्थिक निर्माण के साथ,एक पुरुस्कार के रूप में लाभ तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है। इस मकान मालिक लगान प्राप्त करते हैं, पूंजीपतियों को ब्याज, मजदूर मजदूरी कमाते हैं और उघमी लाभ के साथ पुरस्कृत किया है । भूमि, श्रमिक, पूंजी और उघमी के पारितोषिक के बीच प्रमुख अंतर यह है कि जबकि अन्य सभी कारकों का पारितोषिक पहले से तय हो चुका होता है (जब वे काम पर रखे जाते है) और उघमी को कुल आय में से भुगतानों का अवशिष्ट प्राप्त होता है। संक्षेप में, उघमी वह प्रर्वतक और आयोजक हैं जो उत्पादन के सभी कारकों को जोड़ता है और उन्हें एक साथ काम करने के लिए प्ररित करता हैं। जिसके परिणामस्वरूप औद्योगिक उत्पादन होता हैं।

18.2 लाभ: प्रकृति और रचना

शुरूआत में, 'लाभ' शब्द के अर्थ को समझाने के लिए ज़रूरी है। लाभ का आशय है कि मौजूदा खर्च भुगतान के बाद बची हुई व्यापारिक कमाई अर्थात् राजस्व में से उत्पादन की लागत और व्यापार की परिसंपत्तियों का धन मूल्य के रखरखाव की लागत को घटाने के पश्च्यात। एकमात्र स्वामित्व के मामले में कहा जाता हैं केवल "शुद्ध लाभ" कहा जाता है, जिसे अक्सर जोखिम लेने और उत्पादन की अनिश्चितता के लिये पुरुस्कार दिया जाता हैं। ना तो नियोक्ता द्वारा किये कार्य के लिये वेतन व्यवसाय में निवेश की गई अपनी पूंजी पर ब्याज होता हैं।

आर्थिक सिद्धांत में उपयोग किए गए लाभ के विचार को समझना महत्वपूर्ण है। यह उत्पादन इकाई में पूंजी के निवेश को प्रेरित करने के लिये उद्यमी को दिए जाने वाले निम्नतम राशि का उलेखे करता है। किसी भी हैं एक उद्यमी द्वारा तीन प्रकार की परिस्थितियां का सामना करना पड़ता हैं । अतिसामान्य लाभ,सामान्य लाभ और हानि का वहन करना । सामान्य लाभ उत्पादन की लागत का एक आवश्यक भाग के रूप में जाना जाता है।

सामान्त: हम यहां आगे कहना चाहेगे कि, लाभ= कुल राजस्व – कुल लागत फर्म अर्थात् सीमांत राजस्व सीमांत लागत के बराबर (MR = MC) की संतुलन स्थिति अपरिवर्तित बनी हुई है । उद्यमी को नवचार अपनी अतिरिक्त क्षमता और उत्पादन क्रिया में अनिश्चितता के लिए लाभ मिलता है। लाभ नीचे दिये गये तीन प्रमुख विशेषताओं के आधार पर लगान, मजदूरी और ब्याज से अलग है ।

सबसे पहले, अन्य सभी भुगतान करने के बाद यह अवशिष्ट भुगतान होता है। दूसरा कभी अन्य भुगतानो ब्याज और मजदूरी की तुलना में, कभी लगान

विपरीत नकारात्मक हो सकता है जो हमेशा सकारात्मक बना रहता हैं। लाभ की मात्रा में अधिक उतार–चढ़ाव और अंत में, विशेष लाभ शून्य हो सकता है।

18.3 सकल और शुद्ध लाभ

फर्म के दोनों प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष व्यय कुल राजस्व प्राप्ति से घटाये जाते हैं शेष बचा हुआ आर्थिक लाभ होता है।

सकल लाभ

सकल लाभ कुल प्रत्यक्ष लागतों पर राजस्व का अधिक है। कुल आय में लगान, मजदूरी, परिवहन और बिजली व्यय स्पष्ट रूप से शामिल हैं। कच्चे माल, खर्च, ब्याज निम्न तरीके से इसे व्यक्त किया जा सकता है।

सकल लाभ = कुल राजस्व – कुल प्रत्यक्ष लागत

मान लीजिए कि एक वर्ष में होजियरी फर्म अपने उत्पाद को बेचता है और 50 लाख रूपए प्राप्त करता है स्पष्ट लागत पर खर्च के रूप में 40 लाख का कटौती करने के बाद कुल राजस्व, शेष 10 लाख को फर्म के सकल लाभ के रूप में संदर्भित किया जाता है।

प्रत्यक्ष लागत, लाभ की वैचारिक समझ के अभिन्न अंग हैं। भूमि पर लगान, उद्यमी की नियोजित पूंजी पर ब्याज, सभी स्पष्ट वेतन और फर्म के मालिक द्वारा अपने स्वयं के पक्ष की लागत हैं । यह अब स्पष्ट है कि सकल लाभ के तत्व उद्यमी की जमीन पर लगान पर उनके द्वारा नियोजित पूंजी पर ब्याज और प्रबंधकीय कौशल पर मजदूरी । यह महत्वपूर्ण उल्लेख हैं कि शुद्ध लाभ भी सकल लाभ का एक हिस्सा है।

संक्षेप में, सकल लाभ के मुख्य तत्व निम्न हैं:

1. आयोजकों भूमि पर लगान
2. अपनी पूंजी पर ब्याज
3. स्वयं द्वारा प्रबंधकीय कार्य की मजदूरी
4. शुद्ध लाभ

शुद्ध लाभ

इसमें कोई संदेह नहीं है कि उद्यमी कई तरह के कार्य करता है। जोखिम लेने, अनिश्चितता को वहन, नवाचार करना, सभी रूप से फर्म की लागत को कम से कम करने की कोशिश । इन सभी कार्य को निष्पादित करने के लिये पारितोषक और उत्पादन की निहित लागत कहते हैं। शुद्ध लाभ कुल राजस्व से निहित और स्पष्ट लागत दोनों कटौती के बाद छोड़ दिया शेष राशि हैं इसे निम्न रूप से व्यक्त किया जा सकता है।

शुद्ध लाभ = कुल राजस्व – (स्पष्ट लागत + निहित लागत)

चूंकि शुद्ध लाभ सकल लाभ का एक हिस्सा है, इस को निम्न अनुसार व्यक्त किया जा सकता है

शुद्ध लाभ = सकल लाभ – निहित लागत

संक्षेप में, शुद्ध लाभ के मुख्य तत्व निम्न हैं:

1. जोखिम लेने और अनिश्चितता असर के लिए पारितोषक।
2. नवाचार बनाने के लिए पारितोषक।
3. फर्म की लागत में कटौती करने के लिए सौदेबाजी की क्षमता।

4. अप्रत्याशित लाभ ।
5. एकाधिकार शक्ति के कारण लाभ।

तालिका: 1 सकल लाभ के तत्वों की व्याख्यात्मक प्रस्तुति दिखाता है

सकल लाभ के घटक			
लगान पर आयोजको के मालिक हैं भूमि	आयोजको दृारा प्रंबधकीय कार्य की मजदूरी	उघमी की अपनी पूंजी पर ब्याज	उघमी क्षमता के लिय आर्थिक लाभ

तालिका: 2 शुद्ध लाभ के तत्वों की व्याख्यात्मक प्रस्तुति दिखाता है

शुद्ध लाभ के घटक				
जोखिम लेने और अनिश्चितओ को उठाने के लिये पुरुस्कार	नवाचार बनाने के लिय पुरुस्कार	उत्पादन की लागत में कमी करने के लिय सोदेवादी की शक्ति का भुगतान	अप्रत्याशित लाभ	एकाधिकार शक्ति पर लाभ

18.4 लाभ के सिद्धांत

अर्थशास्त्र में लाभ के सिद्धांतों का वैचारिक आधार की उत्पत्ति और विकास के कई सिद्धांतों का योगदान प्रचलित है। लाभ का सिद्धांत, लाभ की प्रकृति और विस्तार को दर्शाता हैं। संकीर्ण संस्करण एक उद्यमी द्वारा किए गए महत्वपूर्ण कार्यों के लिए पारितोषक के रूप में लाभ को बताना है ।

प्रो. एच ग्रेसन ने टिप्पणी की है कि "जोखिम ,लाभ को नवाचार, और अनिश्चितताओं को स्वीकार करने और बाजार संरचना में कमियों का परिणाम के लिये विचार करने का एक पारितोषक हैं"। प्रो.ग्रेसन के बयान पर आधारित नाइट्, वॉकर, हावेली और शुम्पीटर जैसे अर्थशास्त्री लाभ के सिद्धांत को बताते हैं। दूसरी ओर डॉ मार्शल, ताउसीग, रॉबर्टसन आदि ने उनके विचारों में लाभ का एक व्यापक संस्करण प्रदान किया। यहाँ लाभ है अवशिष्ट भुगतान के रूप में माना जाता है समान्य शब्दों में, लाभ वस्तु का उत्पादन, कुल राजस्व प्राप्तियों और कुल खर्च के बीच में अंतर। यह स्पष्ट रूप से बताता है कि लाभ का मामला है लंबे समय के लिए अर्थशास्त्रियों के बीच बहस का मुद्दा रहा हैं। अलग–अलग समय पर, हर युग के अर्थशास्त्री ने लाभ के विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए। आज तक कोई एकल सिद्धांत लाभ का संतोषजनक निर्धारण नहीं पाया है। बहुत समय पहले प्रो. ताउसीग लाभ को "मिश्रित और व्यथित" आय कहा था।

विभिन्न अर्थशास्त्री द्वारा दिए गए लाभ की सिद्धांत निम्न हैं:

1 हॉले का "जोखिम सिद्धांत"
2 नाइट् का "लाभ का अनिश्चितता उठाने का सिद्धांत"
3 क्लार्क का "गतिशील सिद्धांत"
4 शुम्पीटर का "नव –प्रवर्तन सिद्धांत"
5 शैकल "लाभ सिद्धांत"

6 लाभ का एकाधिकार सिद्धांत
7 लाभ का लगान सिद्धांत
8 लाभ का मजदूरी सिद्धांत

18.4.1 हॉले का "जोखिम सिद्धांत"

प्रख्यात अमेरिकी अर्थशास्त्री प्रो. फ्रेडरिक बी. हॉले ने अपनी किताब "एंटरप्राइज़ एंड प्रोडक्टिव प्रोसेस" 1893 में लाभ के जोखिम सिद्धांत प्रस्ताव दिया। प्रो. फ्रेडरिक बी. हॉले ने कहा कि प्रत्येक व्यवसाय गतिविधि में अधिक या कम अंश जोखिम होता है। उनका कहना है कि भूमि, श्रम और पूंजी के मालिकों का भुगतान करने के बाद लाभ अवशेष नहीं है यह जोखिम और जिम्मेदारी लेने के लिए एक पुरस्कार है। व्यवसाय के प्रबंधन और समन्वय मुआवजे के लिये कोई संबध नहीं हैं। अर्थव्यवस्था मे एक व्यवसाय करने में अनेक जोखिमो का सामना करना पड़ता हैं। उदाहरण के लिए युद्ध या दंगा, बाढ़ या आगजनी जैसी समस्या हो सकती हैं। उत्पादन की माँग में कमी या कीमतों में गिरावट या पुराने की जगह नई तकनीक स्थान ले सकती हैं। इसके अलावा उद्यमी को कई अन्य औद्योगिक समस्याओं के कारण जोखिम का सामना करना पड़ता है जैसे कि बिजली बंद होना, मशीनरी ख़राब होना, श्रमिको के द्वारा हडताल और उघोगपतियों द्वारा तालाबंदी बहिष्कार कई प्रकार के जोखिमों में से, हॉले किसी भी प्रकार के व्यवसाय उघम में चार प्रकार के जोखिमों पर केंद्रित है । वे हैं (i)प्रतिस्थापना (ii) प्रेक्षण (iii) अनिश्चितता (iv) उचित जोखिम । एफ.बी. हॉले को जोखिम को उद्यमी के मुख्य कार्य के रूप में लेते हैं उद्यमी इस जोखिमपूर्ण कार्य के बदले में लाभ प्राप्त करता है । उन्होंने तर्क दिया कि चूंकि जोखिम बहुत ज्यादा, व्यापर पर सामान्य आय लोगों को पहली बार में व्यवसाय शुरू करने के लिए आकर्षित नहीं करेगा इसलिए जोखिम हैं। इसके आलावा लेने के लिए पुरस्कार जोखिम वाले वास्तविक मूल्य से अधिक होना चाहिए। व्यक्ति जोखिम उत्पन करने में सक्षम नहीं है। इसलिए जोखिम उपक्रम की आपूर्ति के लिए एक निवारक के रूप में कार्य करता है। संक्षेप में, जोखिम लेना एक विशिष्ट कार्य है और वह भी उघमियों द्वारा "बुद्धिमानी से जोखिम चुना जाता हैं" हॉले ने कहा कि लाभ दो भागों से बना था एक हिस्सा जोखिम के विभिन्न कारणों के लिए आकस्मिक मुआवजे का प्रतिनिधित्व करता है। और दूसरा भाग जोखिम सामने आने के परिणामो कों भुगतने के लिए प्रलोभन का प्रतिनिधित्व करता है। हॉले का मानना था कि जब तक स्वामित्व में जोखिम शामिल था तब तक लाभ स्वामित्व उत्पन से होता है ।अगर उद्यमी इसके खिलाफ बीमा करने से जोखिम से बच जाता हैं,तो वह एक उद्यमी नहीं रह गया और लाभ प्राप्त नहीं करना चाहिए। हॉले के मुताबिक लाभ अपूर्वदृष्ट जोखिम से निकलता हैं। अनिश्चितता उद्यमी के उत्पाद की बिक्री के साथ समाप्त होती है इस प्रकार लाभ एक अवशेष है।

हॉले ने कहा था कि व्यापार में जोखिम और लाभ के बीच एक प्रत्यक्ष और एक आनुपातिक संबंध मौजूद है एक उघोग में शामिल जोखिम अधिक है, तो लाभ का हिस्सा अधिक; इसके विपरीत उद्यमी उघोग में काम करने के लिए तैयार नहीं होगे, यदि कोई विशेष उघोग में कम जोखिम शामिल है, यहां तक कि कम लाभ भी प्रेरित कर सकते हैं अपने व्यवसाय में रहने के लिए उद्यमी

इस प्रकार, जोखिम और लाभ के बीच आनुपातिकता हमेशा वहाँ है पूर्व में होने वाली राशि जिसमें जोखिम शामिल है व्यवसाय हमेशा रखा जाता है और उद्यमी द्वारा लागत में शामिल किया जाता है पहले से ही हॉले ने निष्कर्ष निकाला है कि लाभ जोखिम के लिए एक इनाम है, लेकिन कुछ भी नहीं है।

प्रोफेसर हॉले के सिद्धांत की आलोचना:

हॉले का सिद्धांत केवल जोखिम के एक ही कार्य की बात करता है एक उद्यमी; इसलिए निम्न आधार पर इसकी आलोचना की गई है:

1. आलोचकों का कहना है कि लाभ एक मिश्रित घटना है। जोखिम लेना, उद्यमी क्षमता, प्रशासनिक दक्षता, उद्यमी के सौदेबाजी की क्षमता और हानि एक व्यवसायिक व्यक्ति द्वारा किए गए अन्य मुख्य कार्य हैं जो चाहिए भी लाभ निर्धारण में शामिल किया जाएगा।

2. वास्तविकता जोखिम और लाभ के बीच आनुपातिक संबंध भी एक नहीं है । कभी–कभी किसी व्यवसाय में शामिल जोखिम बहुत ज्यादा होते हैं इसके परिणामस्वरूप व्यापारी को बहुत हानि हुई है। इसलिए, स्थिरता का खतरा न केवल लाभ कम करता है, लेकिन इसका फायदा हो सकता है अल्पावधि में हानि दूसरी ओर कुछ स्थितियों में शामिल हैं

व्यापार के लिए कम या कोई जोखिम नहीं; तब भी बड़े लाभ अर्जित किए जाते हैं। इसलिए, व्यापार में शामिल लाभ और हानि हमेशा जोखिम से नहीं जोड़ा जा सकता है ।

3. प्रोफेसर कार्वर बताते हैं कि लाभ उद्यमी के जोखिम उठाने के कारण नहीं बढ़ता है पर उद्यमी के कम करने की उनकी क्षमता के कारण बढाता है। लेकिन यह श्रेष्ठ उद्यमी है जो जोखिम कम करने की अधिक क्षमता वाले हैं जो लाभ को लाभ बनाता है इसलिए व्यापारिक कंपनियां जो अधिक सफल हैं उन्हें जोखिम को कम करने के साथ–साथ बड़े लाभ भी प्राप्त हो सकते हैं।

4. प्रोफेसर नाइट् ने दावा किया कि जोखिम के कारण लाभ उत्पन्न नहीं होता है। इस सबके बाद भी जोखिमों का आकलन नहीं किया जाता सकता है, इसलिए उनमें से सभी में लाभ शामिल नहीं है। कुछ जोखिमों का अनुमान लगाया जा सकता है किसी भी समय क्योंकि वे किसी भी समय अधिक से अधिक होते हैं। वे बीमा कंपनियों द्वारा संचालित किया जा सकता है फर्मों द्वारा केवल छोटे प्रीमियम का भुगतान नियमित रूप से कर सकते हैं जो प्राकृतिक आपदाओं के कारण हानि हुआ हो । लेकिन कुछ जोखिम हैं जों एक उद्यमी द्वारा वहन करने के लिए है । कई अनिश्चितताओं का उसे सामना करना पड़ता है जैसे जब उत्पाद तैयार है बाजार में बेचने के लिए तब मांग में बेबजह गिरावट, प्रौद्योगिकी में परिवर्तन और प्रगति का जोखिम । वे 'व्यवसाय में रहने की लागत' के रूप में जाने जाते हैं।

18.4.2 नाइट् का लाभ का सिद्धांत

लाभ के इस सिद्धांत में प्रो. एफ एच नाइट् ने अपनी पुस्तक 'जोखिम, अनिश्चितता और लाभ' में पेश किया हैं। नाइट् ने जोर देकर कहा कि जोखिम के कारण लाभ नहीं बढ़ते हैं, लेकिन उद्यमीयों द्वारा अनिश्चितताओं के कारण उत्पन होता है। जोखिम का लाभ लेने के लिए, अनिश्चितताओं को जन्म देने,

उत्पादन लागत में कटौती, अभिनव और एकाधिकार शक्ति प्राप्त करने के लिए परितोषिक हैं।

लाभ के दो मुख्य प्रकार हैं, सकल लाभ और शुद्ध लाभ। सकल लाभ, कुल राजस्व और प्रत्यक्ष लागत और शुद्ध लाभ में अंतर है, सकल लाभ के साथ असंतुलित लागत को काटने के बाद, कई सिद्धांतों को विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा लाभ का मूल्यांकन करने के लिए आगे बढ़ाया गया है, लेकिन कोई भी सिद्धांत लाभ का निर्धारण नहीं करता है। यद्यपि शुम्पीटर द्वारा अग्रेषित किया गया सिद्धांत आधुनिक व्यापारिक दुनिया में मान्यता प्राप्त है, क्योंकि उन्होंने उद्यमी के काम के लिए व्यापार नवोन्मेष की भूमिका पर जोर दिया है और इस घटना के लिए लाभ के साथ पुरस्कृत किया है। "नाइट् के विचारों ने लाभ के अध्ययन में व्यापक लोकप्रियता हासिल की हैं ।"

नाइट् के सिद्धांत की मुख्य विशेषताएं

1. **बीमा योग्य जोखिम और गैर–बीमा योग्य जोखिम के बीच विभाजन :** नाइट् ने हॉले के लाभ सिद्धांत को बढाते हुए कहा हैं। उद्यमीयों द्वारा सभी जोखिम को वहन करना होता हैं । वास्तव में जोखिम दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है,

(1) बीमा योग्य जोखिम

(2) गैर–बीमा योग्य जोखिम

i- **बीमा योग्य जोखिम:**

आग, चोरी, दुर्घटना के कारण जोखिम और व्यापारिक संघर्षों का आकलन किया जा सकता है। आधुनिक अर्थव्यवस्था में इस प्रकार के जोखिम के प्रकार बीमा प्रक्रिया द्वारा समाविष्ट किए गए हैं बीमा खर्च उत्पादन की लागत में जोड़ा जाता है इस तरह घटनाएं अनुमानित जोखिमों के तहत आती हैं अनिश्चितता यहाँ उत्पन नहीं कर सकते हैं प्रत्याशित जोखिम हमेशा पहले से समाविष्ट किया होते हैं। इस प्रकार भविष्य के भुगतान को जोखिम नहीं कहा जा सकता है

ii- **गैर–बीमा योग्य जोखिम:** ऐसे अन्य जोखिम हैं जो गैर–लाभकारी हैं और अप्रत्याशित हैं और उनका आकलन नहीं किया जा सकता। ये अप्रत्याशित आकस्मिकताओं, मशीनों और उपकरणों में तकनीकी परिवर्तन, खरीदारों की ओर से अनिश्चित बाजार की स्थितियां, बाजार मी प्रतिद्वंद्वियों के अनिश्चित व्यवहार, व्यापारिक चक्र और सरकारी हस्तक्षेप हैं। ये अप्रत्याशित और अपर्याप्त जोखिम को नाइट् द्वारा श्अनिश्चितताश कहा जाता है आने वाले समय में उद्यमीयों को बाज़ार में और प्रतिद्वंद्विता का सामना करना पड़ सकता है, बाजार में नवाचार, उछाल और अवसाद के कारण अप्रचलित मशीनरी का सामना करना पड़ सकता है। ये वास्तविक अनिश्चितताएं हैं नाइट् इस बात पर जोर देता है कि इस तरह की अनिश्चितता के कारण लाभ उत्पन होता है।

2. **अनिश्चितता का असर एक प्रक्रिया है :**नाइट् का कहना है कि अनिश्चितता का असर उद्यमी का मुख्य कार्य है सरल शब्दों में, उद्यमीयों की आपूर्ति किसी भी व्यावसायिक उद्यम में अनिश्चितता की स्तर पर निर्भर करती है। यदि व्यापारिक उद्यम से एक निश्चित वापसी की उम्मीद है तो केवल

उद्यमी को अनिश्चितता को सहन करने का साहस होगा। अनिश्चित रूप से उद्यमी की क्षमता के मुताबिक चरम लाभ की ओर अग्रसर होता है जो हाथ से पहले आकलन करता है।

3. **प्रतियोगिता में अनिश्चितता के तहत सकारात्मक लाभ की भी बढ़त:** नियो पांरपरिक अर्थशास्त्रियों ने कहा था कि रैखिक और समरूप उत्पादन कार्य के मामले में और श्रम और पूंजीगत उपकरणों जैसे भौतिक निविष्टियों का एक कार्य है, फिर मजदूरी और ब्याज का भुगतान करके उनकी सीमान्त उत्पादकता के अनुसार कुल उत्पाद समाप्त हो जाता है लेकिन नाइट् ने यह स्पष्ट कर दिया कि भविष्य की अनिश्चितता की उपस्थिति के कारण उद्यमी को उत्पाद के ह्रास और प्रतिस्पर्धी संतुलन के बावजूद सकारात्मक लाभ मिलना चाहिए।

4. **नाइट् की अनिश्चितता एक अद्वितीय कारक के रूप में लाभ का उदय:** नाइट् का सिद्धांत केवल गतिशील परिवर्तन के लिए लाभ का गुण नहीं देता है। गतिशील परिवर्तन और ज्ञात जोखिम लाभ नहीं उत्पन कर सकते हैं वास्तव में लाभ में अद्वितीय प्रकार के जोखिमों के कारण उद्यमी के लिए अतिसंवेदनशील नहीं होते हैं केवल उन्हीं घटना की विशिष्टता जो उद्यमी को अपने उद्यम में सामना करना पड़ता है, अनिश्चितता की ओर जाती है जिसके बदले में लाभ होता है।

5. **राजनीतिक और अंतर्राष्ट्रीय कारक भी आर्थिक प्रणाली में अनिश्चितता का कारण:** राजनीतिक वातावरण, युद्ध और शांति की स्थिति, राजनीतिक अस्थिरता, राष्ट्र की आर्थिक नीतियां और अंतरराष्ट्रीय व्यापार और विदेशी पूंजी आदि की स्थिति भी अर्थव्यवस्था में कई अनिश्चितताएं उत्पन करती हैं। किसी भी अर्थव्यवस्था में इन अनिश्चितताओं का बिल्कुल सही आकलन करना संभव नहीं है। नाइट् सिद्धांत की उपर्युक्त सभी विशेषताएं इस तथ्य से संकेत मिलता है कि उद्यम अनिश्चितता की ऐसी प्रवाही शर्तों में स्थापित है और उद्यमी को लाभ के माध्यम से प्रेरित होने की आवश्यकता है। अधिक से अधिक अनिश्चितता, लाभ को अधिक से अधिक सुनिश्चित करेगी। इसके विपरीत, अनिश्चितता को कम करने के लिए अपने स्वयं के उद्यम को शुरू करने के लिए बड़े पैमाने पर व्यापारी को प्रोत्साहित करना होगा यहां तक कि अगर वे कम लाभ कमाते हैं, तो भी यह पर्याप्त होगा। उत्पादन के अन्य कारकों की तरह, अनिश्चितता भी उत्पादन की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए नाइट् ने जोर दिया कि अनिश्चितता को एक अलग कारक माना जाना चाहिए और इसके पारिश्रमिक के रूप में लाभ का भुगतान करना होगा।

नाइट् सिद्धांत की आलोचना:

लाभ के इस सिद्धांत पर व्यापक रूप से चर्चा की गई है। इसका पालन किया जाता है, कई अर्थशास्त्रियों द्वारा विस्तृत और संशोधित किया जाता है। आलोचकों ने सिद्धांत में कई विसंगतियां बताई हैं आलोचना के कुछ मुख्य बिंदुओं पर चर्चा की गई है:

1. **अपूर्ण सिद्धांत:**

आलोचकों का कहना है कि अनिश्चितता का असर एक उद्यमी का एकमात्र कार्य नहीं है। उत्पादन की लागत को कम करने के लिए अच्छे संगठन, प्रबंधकीय कौशल और सर्वोत्तम सौदेबाजी की शक्ति उद्यमशीलता गतिविधि में अंतर्निहित अन्य वास्तविक जिम्मेदारियां हैं। यदि अनिश्चितता का असर उत्पादन का एक अलग पहलू था, तो लाभ के लिए एक विशेष सिद्धांत की कोई ज़रूरत नहीं होगी, क्योंकि सामान्य तौर पर सीमांत उत्पादक सिद्धांत पहले से मौजूद है। नाइट् एक सूक्ष्म संस्करण के रूप में लाभ के सिद्धांत को बनाता है इन सभी कर्तव्यों का निर्णय लेने, समन्वय और पर्यवेक्षण निश्चित रूप से उघोग के मालिक द्वारा किया जाता है। उद्यमी द्वारा किए गए सभी कार्यों के कारण लाभ अर्जित करता है।

2. **निश्चित और अनिश्चित जोखिम वर्गीकरण सत्य नहीं है:**

हिक्स का दावा है कि जोखिमों का वर्गीकरण जो निश्चित या अनिश्चित है अर्थात, एक बीमा योग्य और गैर–बीमा योग्य जोखिम सही नहीं है। यह स्थायी और आम तौर पर स्वीकार वर्गीकरण नहीं है।

3. **अनिश्चितता और लाभ के बीच कोई आनुपातिक संबंध नहीं:**

समीक्षकों का कहना है कि अनिश्चितता और लाभ में कोई समानुपातिक संबंध नहीं हैं। उच्च स्तर की अनिश्चितता कभी भी फर्म को भारी हानि लाती है व्यापार में थोड़ा अनिश्चितता व्यापारकर्ता को बड़ी लाभ बनाने में सक्षम बनाता है ।

4. **अनिश्चितता और मनोविज्ञान अविभाज्य हैं:**

अनिश्चितता एक मनोवैज्ञानिक कारक है जो गैर–बीमा योग्य और गैर– मापनीय है यह सिद्धांत को अस्पष्ट बना देता है।

5. **संयुक्त स्टॉक कंपनियों के लिए लागू नहीं:**

यह भी व्यापक रूप से तर्क दिया जाता है कि सिद्धांत संयुक्त स्टॉक कंपनियों के मामले में प्रासंगिक नहीं है। ज्वाइंट स्टॉक कंपनी में बोर्ड ऑफ़ डायरेक्टर्स शामिल हैं प्रमुख निर्णय प्रबंध निदेशक और अन्य वेतनभोगी वर्ग के अधिकारियों द्वारा लिया जाता है। शेयरधारकों द्वारा पूंजी को कंपनी में विनियोग किया जाता है और लाभ भी शेयर धारकों के बीच वितरित किया जाता है, जिन्हें व्यापार की अनिश्चितता से कोई लेना–देना नहीं है।

6. **केवल परिपूर्ण प्रतियोगिता के तहत वैध नहीं अपूर्ण प्रतिस्पर्धा:**

परिपूर्ण प्रतियोगिता के तहत बाजार के अलावा, सिद्धांत लागू करने में विफल रहता है। अपूर्ण बाजार की स्थितियों में जैसे एकाधिकार अनिश्चितता थोड़ी देर के लिए एकाधिकार उच्च लाभ बनाते है।

7. **अपेक्षाओं की भूमिका पर स्पष्ट नहीं:**

सिद्धांत उद्यमी के व्यवसाय की अपेक्षाओं को ध्यान में नहीं लेता है अपरिवर्तनीय अल्पकालिक और दीर्घकालिक उम्मीदें लाभ अर्जित के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। प्रो. शेकले ने इस परिप्रेक्ष्य पर प्रकाश डाला है, जहां यह सिद्धांत उम्मीदों की भूमिका पर स्पष्ट नहीं है।

8. **केवल एक सूक्ष्म सिद्धांत:**

सूक्ष्म रूप में एक विशेष उद्यमी के लाभ दृढ़ संकल्प के इस सिद्धांत के बारे में बात करती है। लाभ अंश का निर्धारण लाभ के नव–पारंपरिक सिद्धांत में बेहतर समझाया गया है।

18.4.3 क्लार्क का गतिशील सिद्धांत:

जे बी क्लार्क ने लाभ का गतिशील सिद्धांत दिया क्लार्क के अनुसार अर्थव्यवस्था में लगातार परिवर्तन आते हैं स्थिर राज्य की अर्थव्यवस्था में उत्पादन का काम एक नियमित व्यवसाय है। कोई जोखिम और अनिश्चितता शामिल नहीं है। वेतनभोगी प्रबंधक पूरे मामले का प्रबंधन कर सकते हैं। चूंकि लागत और बिक्री मूल्य हमेशा समान होते हैं; निराक्षणात्मक काम के लिए मजदूरी के अलावा कोई लाभ नहीं है एक स्थिर अर्थव्यवस्था में, पूंजी निवेश, उत्पादन की विधि, तकनीकी और प्रबंधकीय संगठन और मांग की संरचना एक समान है। केवल घर्षण लाभ अर्थव्यवस्था के मुताबिक संभावित मताधिकार के कारण उभर सकते हैं।

क्लार्क का कहना है कि आज परिवर्तन की दुनिया है और एक गतिशील प्रणाली में उद्यमी को अत्यधिक जोखिम भरा, अनिश्चित और गतिशील परिस्थितियों में काम करना है। इसलिए उसे लागत से अधिक अधिशेष प्राप्त करना चाहिए। यह गतिशील अधिशेष के रूप में जाना जाता है, यह लाभ एक उद्यम शुरू करने के लिए प्रलोभन है और फिर संचालन चालू होता है। क्लार्क अर्थव्यवस्था के बीच पांच प्रमुख गतिशील परिवर्तनों की वार्तारू

1. जनसंख्या परिवर्तन
2. पूंजीगत माल में बदलाव
3. उत्पादन की तकनीक में बदलाव
4. उपभोक्ता की रूचि और आदतों में परिवर्तन
5. संगठन में बदलाव व्यवसाय का उतार–चढ़ाव

क्लार्क स्पष्ट रूप से बताता है कि ये बदलाव अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाते हैं और उद्यमी बदलाव के परिणाम को उठाने का जोखिम लेते हैं जो बदले में लागत पर अधिशेष उत्पन्न करता है चूंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है, केवल प्रबंधन की मजदूरी व्यवसायिक संचालन को जारी रखने के लिए एक व्यवसायी को प्रेरित नहीं कर सकती है। गतिशील परिवर्तन वास्तविक लाभ की ओर ले जाता है ऊपर कहा गया पांच सामान्य परिवर्तन अर्थव्यवस्था के समग्र मानकों को बदलते हैं। तथ्य यह है कि सामान्य गतिशील परिवर्तन एक आविष्कार है। एक आविष्कार उद्यमी को अधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित करता है जिससे लागत कम हो जाती है। बिक्री का मूल्य और उत्पादन की लागत के बीच अंतर लाभ कहा जाता है। ऐसे लाभ अस्थायी होते हैं क्योंकि जब दूसरे लोग उसी आविष्कार को अपनाने वाले होते हैं, तो लाभ अद्रश्य हो जाते हैं। उद्यमी द्वारा नवप्रवर्तन के कारण प्राप्त लाभ को लंबे समय तक उद्यमी द्वारा नहीं रखा जा सकता है। इसके बाद, एक ही विनियोग इस तरह के आविष्कारों के लिए अपने व्यवसाय में उपयोग किया जाता है। सांराश में कम गतिशील प्रणाली में लगातार अधिक परिवर्तन लाए जाते हैं। और जल्द ही लाभ का आकर्षण अधिक सुधार लाता है ।

क्लार्क के सिद्धांत की आलोचनाः व्यापक स्वीकृति के बावजूद, गतिशील सिद्धांत की कई मोर्चों पर आलोचना की गई हैरू

1. क्लार्क द्वारा चर्चा की गई पांच सामान्य बदलावों को आगे या आकस्मिक रूप में वर्गीकृत नहीं किया गया है। केवल अप्रत्याशित परिवर्तन लाभ के उभर सकते हैं। अनुमानित परिवर्तन लाभ उत्पन्न नहीं कर सकते।

2. सिद्धांत के तत्वों के ठीक विपरीत, यह तर्क दिया जाता है कि बिना गतिशील परिवर्तन लाभ के भी हो सकते हैं यहां तक कि जब व्यापार में उतार–चढ़ाव का अनुमान लगाया जाता है, तो प्रतिस्पर्धा बाजार में मौजूद रहती है और लाभ अनिवार्य रूप से बढ़ता है।

3. इससे पहले नाइट् ने यह निश्चय किया था कि लाभ अनिश्चितता के लिए इनाम है। अपने सिद्धांत में क्लार्क ने जोर दिया कि जब परिवर्तन जारी रहता है तो एक अर्थव्यवस्था में तब ही लाभ होता है। नाइट् ने स्पष्ट किया कि यह निरंतर परिवर्तन अनिश्चितता की ओर जाता है। इसलिए अनिश्चितता और प्रणाली में परिवर्तन अंततः लाभ की ओर ले जाता है।

4. सिद्धांत को इसके सूक्ष्म वर्गीकरण के संबध में आलोचना की गई है परिवर्तन की श्रेणियां क्लार्क ने केवल पांच बदलावों की बातचीत की वास्तव में, क्लार्क ने कई अन्य बदलावों को देखा है जो अर्थव्यवस्था में हो रहे हैं। इससे पता चलता है कि सिद्धांत गतिशील परिवर्तनों की एक सीमित धारणा को समाहित करता है।

18.4.4 शुम्पीटर का नव –प्रवर्तन सिद्धांत

जे.ए. शुम्पीटर ने अपनी पुस्तक "आर्थिक विकास का सिद्धांत" में अभिनव के सिद्धांत को बताते हुए कहा यह सिद्धांत लाभ बढाने की तकनीकी पहलू पर प्रकाश डालता है। शुम्पीटर ने दावा किया है कि अर्थव्यवस्था में नवाचार की वजह से गतिशील परिवर्तन हो रहे हैं। उन्होंने आगे कहा कि नवाचार एक उद्यमी का एक महत्वपूर्ण कार्य है शब्द नवाचार व्यापक रूप से व्यावसायिक रूप से शोषण की गई तकनीकी आविष्कारों, संगठन संरचना, प्रबंधकीय कौशल और विपणन रणनीति से संबंधित व्यवसाय उद्यम में लाए गए नए विचारों सहित व्यापक हैं। एक उद्यमी को कौशल और क्षमताओं के साथ कुछ नया करना होगा। एक साधारण व्यक्ति प्रबंधक की क्षमता से उद्यमी नहीं बन सकता है।

शुम्पीटर ने पांच प्रकार के नवप्रवर्तनों के बारे में बताया, जो कि उद्यमी के समान है।

(ए) एक नया उत्पाद का परिचय
(बी) एक नई मशीन का परिचय
(सी) नए बाजार में उत्पादों का परिचय
(डी) कच्चे सामग्रियों के नए स्रोतों की खोज करना
(ई) व्यापारिक संगठनों में परिवर्तन

शुम्पीटर बताते हैं कि नवाचार न केवल विकसित एक नए विचार का जन्म है बल्कि यह भी विचार के वाणिज्यिक उपयोग के लिए तैयार है, विचार अकेले कोई नवीनता नहीं है। उद्यमी का काम, विचार–विमर्श कर जोखिम उठाने का है। वह अपनी अभिनव क्षमता के कारण ऐसा करने में सक्षम है।

अपने हिस्से पर नवाचार लाभ की ओर जाता है। शुम्पीटर का मानना है कि नवप्रवर्तन उद्यमी का एक महत्वपूर्ण कार्य है यह उत्पादन की प्रक्रिया और लागत में कटौती की गति बढ़ाता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि नवाचार की वजह से अर्जित लाभ एक अस्थायी घटना है। निरंतर लाभ के लिए उद्यमी को उत्पादन के नए और परिष्कृत मोड, बेहतर संगठन और बेहतर विपणन रणनीतियों और प्रथाओं से उत्पन्न उच्च बिक्री के लिए लगातार प्रयास करना चाहिए। प्रो. शुम्पीटर कहते हैं कि लाभ उद्यमी के लिए एक अस्थायी अधिशेष है जो दिखाई देता है, अद्रश्य हो जाता है और फिर से प्रकट होता है। नतीजतन लाभ एक गतिशील आय है। एक अनुकरणीय लाभ कमा नहीं सकता; वह केवल अपने प्रबंधन के लिए मजदूरी प्राप्त कर सकते हैं फर्म के दोनों लागत और बिक्री घटता नवाचारों द्वारा बदल सकते हैं। यह पहले से ही स्थापित किया गया है कि लाभ की अधिकता उद्यमी का एकमात्र उद्देश्य है, इसे प्राप्त करने के लिए एक प्रर्वतक बदलाव लागत और बिक्री वक्र या तो उत्पादन समारोह या उत्पाद के प्रकार को बदलकर, निष्कर्ष निकालने के लिए, उद्यमी को लाभ से प्रलोभित किया जाता है जो उसे नवोन्मेष और अन्वेषण के प्रति प्रेरित करती है।

शुम्पीटर सिद्धांत की आलोचना:

यद्यपि सिद्धांत के आधारभूत आधार समय की कसौटी पर खड़ा है, इसके कारण नीचे दिए गए कारणों की आलोचना की गई है:

1. **लाभ न केवल नवाचार के लिए एक पुरस्कार है:**

लाभ का उचित और पूर्ण विवरण पाने के लिए, नवाचार सिद्धांत अपर्याप्त है। नवाचार, कुशल प्रबंधन, सुशासन, सौदा करने की शक्ति, अनिश्चितता उठाने वाले जोखिम, तकनीकी जानकारियों में बदलाव के मुकाबले शानदार लाभ की कुंजी है।

2. **बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की धारणा:**

सिद्धांत को पूर्ण प्रतियोगिता के लिए स्थाई अस्तित्व माना जाता है। हालांकि वास्तविकता में अपूर्ण बाजार दिन का क्रम है।एकाधिकार में नवाचार के सिद्धांत की धारणा पर सवाल रखने वाले प्रतियोगिता का अभाव है। यहां, लाभ कमाने के लिये तकनीकी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं हैं। नैतिकता के आधार पर उच्च लाभ काटना एकाधिकारवादी है।

3. **सीमित अभिनव:**

शुम्पीटर ने तकनीकी और गैर तकनीकी प्रकारों में उन्हें अलग–अलग किए बिना नवाचार के प्रकारों का उल्लेख किया है। शुम्पीटर के पांच नवाचारों के अलावा, अन्य अर्थशास्त्रीयों द्वारा विचार–विमर्श के बाद अर्थव्यवस्था में कई नवाचार दिये हैं।

4. **लाभ अस्थायी घटना नहीं हैं:**

एक तथ्य के रूप में कुछ कंपनियां एक अनिश्चित समय के लिए लाभ काटना जारी रखती हैं और वह भी बिना किसी रूकावट के। नवाचार सिद्धांत इस तरह की स्थिति को नहीं समझाता।

5. **लाभ और अभिनव क्षमता के बीच प्रत्यक्ष संबंध असंभव है:**

सिद्धांत ने लाभ और नवाचार की क्षमता के बीच एक सीधा संबंध प्रस्तावित किया है। आलोचकों ने इस तर्क का खंडन किया है क्योंकि अप्रत्याशित आय में गिरावट और अस्तित्व के हानि के कारण स्थिति स्पष्ट रूप से पता चलता है, कि साधारण व्यापारी बहुत लाभ कमाता है, जो उनकी क्षमता से संबंधित नहीं है ।

6. केवल एक संस्थागत सिद्धांत:

सिद्धांत उद्यमी के गुणों पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है। उद्यमी को नवाचार सिद्धांत में एक संस्था माना जाता है , इस प्रकार प्रकृति से यह समाजशास्त्रीय कहा जाता है। वास्तव में एक आर्थिक सिद्धांत आर्थिक कारकों पर आधारित होना चाहिए।

18.4.5 शैकल्स का निर्णय लेने/ निर्णयन और लाभ का सिद्धांत

प्रो जी.आई.एस. शैकल्स के लाभ का सिद्धांत इस बात पर आधारित है कि संभावना के सिद्धांत अनिश्चितता के आकलन में प्रासंगिक नहीं हैं जो लाभ के एक सिद्धांत के निर्माण के लिए आवश्यक है। उनका तर्क है कि एक प्रभावी लाभ के सिद्धांत के साथ संबंधित बुनियादी बातों में निहित होना चाहिए उद्यमी के बदले निवेश का फैसला । अनिश्चितता की उपस्थिति के कारण निवेश का फैसला उठता है। अनिश्चितता का वहन करना उद्यमी का एक प्रमुख काम है । कितनी अनिश्चितता शामिल है, इसका ठीक से मूल्यांकन किया जाना चाहिए, यह मूल्यांकन निर्णय लेने से संबंधित है। स्पष्ट रूप से निवेश करने का निर्णय एक विशेष निर्णय है जो किसी उद्यमी को किसी भी व्यावसायिक उद्यम में शामिल होने से पहले अनिश्चितता की उपस्थिति के कारण होने की उम्मीद है। जबकि नाइट् ने कहा कि अनिश्चितता मापन योग्य नहीं है, शेकल्स ने जोर देकर कहा कि ऐसी अनिश्चितता की सीमाएं हैं आमतौर पर उद्यमी निवेश के अपने कार्यों के लिए सीमा निर्धारित कर सकते हैं।

इस सिद्धांत में, प्रोफेसर शैकल्स ने अविश्वास की धारणा पेश की। जो उद्देश्य स्वरूप में अनिश्चितताओं की उपस्थिति हैं, जिससे उद्यमीयों की अपेक्षायों का निर्माण होता है। वे अर्थशास्त्र के सिद्धांत में व्यावसायिक अपेक्षा के रूप में जाने जाते हैं, जो अल्प या दीर्घकालिक उम्मीदें हो सकती हैं। कीर्स्टर्ड द्वारा श्व्यक्तिपरक निश्चितताश के रूप में परिभाषित स्थिति के लिए एक उम्मीद 'एक भावना' है इस आधार पर उन्होंने अपने कार्यों के संभव परिणाम के लिए परिकल्पना विकसित की निवेश की कार्रवाई के लिए संतोष और असंतोष की एक मजबूत भावना विश्वास या अविश्वास की धारणा की ओर जाता है। अविश्वास की धारणा का अनुमान श्संभावित आश्चर्यश की अवधारणा की ओर जाता है परिकल्पना से पता चलता है कि भविष्य के निवेश के बारे में अलग–अलग अनुमान हैं जो उद्यमी के लिए 'संभावित आश्चर्य' के विभिन्न स्तर हैं। एक शून्य संभावित आश्चर्य की बात है सबसे अच्छा और पूरी तरह से संभव परिकल्पना।

संभावित अधिशेष आगे प्रोत्साहन कार्यों के विचार की ओर जाता है श्संभावित अप्रत्याशित तथ्य श के ढांचे की धारणाएं अपेक्षाओं की दो सीमाएं लेती हैं। श्एक शून्य संभावित अप्रत्याशित तथ्य श और श्अधिकतम संभावित अप्रत्याशित तथ्य श परिकल्पना के दो चरम बिंदु हैं इन दो सीमाओं के बीच में संभावनाएं

हैं जो अलग–अलग स्तर में दोगुनी हो गई हैं। इसलिए संभावित अप्रत्याशित तथ्य की स्तर को एक 'निरंतर कार्य' कहा जाता है। प्रोत्साहन कार्यों इस निरंतर कार्य के साथ सहयोग। फिर से प्रोत्साहन कार्यों के आधार पर शतटस्थ परिणामश की प्रोत्साहन की अवधारणा विकसित की गई है। 'तटस्थ परिणाम' 'संभावित अप्रत्याशित तथ्य' के पैमाने पर एक संतुलन बिंदु है उद्यमी को लाभ और हानि की उम्मीदों के लिए उद्यमों के निष्पक्ष परिणाम के श्शुद्ध आकर्षणश के आधार पर निवेश करने का निर्णय करना है।

शैकल्स के दृष्टिकोण में नियमित निर्णय उघोगो द्वारा श्रेणीवद्ध क्रम में लिया जाता है लेकिन महत्वपूर्ण निर्णयों को उद्यमी द्वारा लिया जाता है। एक विशेष क्षण या समय की अवधि में उद्यमी के अनूठे और उचित कार्य अनिश्चितता निर्णय के तहत किया जाता है। शैकल्स सिद्धांत मौलिक रूप से एक मनोवैज्ञानिक निर्माण होता है जिसे आसानी से सत्यापित नहीं किया जा सकता।

आलोचना :

हालांकि शैकल्स का सिद्धांत एक उद्यमी के दृष्टिकोण में मनोवैज्ञानिक निर्माण लागू करने के निकट है, फिर भी इसे एक आदर्श सिद्धांत नहीं माना जा सकता है। इसके भी कई खामियां हैं:

1. निर्णय लेना उद्यमी का ही कार्य नहीं है। लाभ भी आयोजक के सभी अन्य कार्यों का एक इनाम है तो यह एक पूर्ण सिद्धांत नहीं है।
2. अनिश्चितता का आकलन इस सिद्धांत का उद्देश्य था। इस अनिश्चितता के सिद्धांत माप के वर्णन में 'संभाव्य आश्चर्य' 'प्रोत्साहित कार्य' और 'तटस्थ परिणाम' के विचारों के कारण संभवतः संभव नहीं हो सका है, जो आसानी से समझाया नहीं जा सकता है।

18.4.6 लाभ का एकाधिकार सिद्धांत

प्रख्यात अर्थशास्त्री कलेकी और सैमुएलसन ने संयुक्त रूप से लाभ के एकाधिकार सिद्धांत का विस्तार किया। सिद्धांत के अनुसार, जब एक निर्माता या निवेशक बाजार में एक और केवल एक ही है, तो इसे निर्माता के लिए एक फायदे की स्थिति माना जाता है। एक एकाधिकार का उत्पाद की आपूर्ति पर पूर्ण नियंत्रण होता है। इसलिए, वह कीमत को नियंत्रित कर सकता है। इसके अलावा, वह बाजार में प्रतिद्वंद्वियों या प्रतिद्वंद्वियों के प्रवेश को अवरुद्ध करने की क्षमता रखता है। बाजार में उत्पादकों के कॉपीराइट और पेटेंट उनकी स्थिति की रक्षा करते हैं। ट्रेड यूनियनों की अनुपस्थिति में, यहां तक कि श्रम बाजार में एक एकाधिकार अपने एकाधिकार की स्थिति के कारण लाभ कमा सकता है।

तकनीकी सुधार यानी नवीनताएं, उत्पाद विविधता, मूल्य भेदभाव, भ्रम या बनाने वाले उत्पादक संघ, एकाधिकार द्वारा अधिशेष लाभ अर्जित करने के कई अन्य तरीके हैं। बाजार में प्रतिद्वंद्वियों का अभाव उच्च एकाधिकार कीमत में है एक एकाधिकारवादी सस्ती दरों पर उत्पादन के साधनों को प्राप्त कर सकते हैं जिससे श्अधिशेष कमानेश हो। गतिशील परिवर्तन और एकाधिकार प्रवृत्ति की प्रक्रिया एकाधिकार लाभ में लाना।

निश्चित रूप से निर्माता की एकाधिकार शक्ति बाजार में सामान्य लाभ का कारण है। अल्पावधि में न केवल, एकाधिकार वाले लंबे समय तक अति सामान्य लाभ में भी अधिक लाभ कमाता है एकाधिकार द्वारा अर्जित किया जाता है। केवल एक एकाधिकार लंबे समय तक इन अति सामान्य लाभ कमा सकते हैं। सिद्धांत के अनुसार, शुम्पीटर ने उल्लेख किया था कि जब एकाधिकार का कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती है, तो उद्यमी के लिए कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती है, तो बाजार नये उत्पादन में प्रवेश करती है। यह स्पष्ट है कि संतुलन की स्थिति, अर्थात् $MR = MC$ मूल्य निर्धारण के लिए एकाधिकार बाजार में प्रचलित है।

आलोचना

निम्नलिखित आधार हैं जिन पर लाभ का एकाधिकार सिद्धांत की आलोचना की गई है:

1. उत्पादक के एकाधिकार की स्थिति अधिशेष लाभ के निर्माण में योगदान करने वाले एकमात्र कारक नहीं है। उनके द्वारा अपनाई गई एकाधिकार प्रथा भी अधिशेष लाभ उत्पन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उसी समय सौदा करने की शक्ति, प्रबंधकीय दक्षता, जोखिम लेने, निर्माता द्वारा अनिश्चितता और उत्पादन की नवीनतम तकनीकों के उपयोग में लाभ, एकाधिकार को प्रभावित करने के लिए अधिक प्रभावी कारक हैं । सिद्धांत इन सभी कारकों की उपेक्षा करता है

2. एकाधिकार शक्ति एक पूर्ण शब्द नहीं है बाजार में एकाधिकार शक्ति की स्तर एकाधिकार बाजार में एक महत्वपूर्ण कारक है। एकाधिकार सिद्धांत बताता है कि एकाधिकार शक्ति की स्तर लाभ की मात्रा का सूचक है, जबकि एकदम सही प्रतिस्पर्धा में बाजार में शून्य स्तर की एकाधिकार शक्ति होती है, वहां अतिरिक्त लाभ की संभावना होती है। हालांकि लंबे समय तक अति सामान्य लाभ में मौजूद नहीं है। इस स्थिति की व्याख्या करने में सिद्धांत विफल रहता है।

3. अपने आप में एकाधिकार बाजार बाजार की एक सामान्य विशेषता नहीं है। शुद्ध एकाधिकार, क्रेता एकाधिकार आदि बाजार के विशेष मामले हैं। इसलिए, एकाधिकार लाभ केवल निर्माता या खरीदार के लिए विशिष्ट स्थिति में उत्पन्न होने वाले विशेष लाभ हैं।

18.4.7 लाभ का लगान सिद्धांत

एफ.एल. वाकर एक अमेरिकी अर्थशास्त्री ने "लाभ का लगान सिद्धांत" का विकास किया। उद्यमशीलता की योग्यता लगान के रूप में लाभ पर लेती है रिकार्डियन का लगान सिद्धांत है कि भूमि के विभिन्न भागों और प्रकृति की निगाहता (प्रकृति का अनुग्रह नहीं) लगान का कारण है। सीमान्त भूमि एक लगान पर कोई भूमि नहीं है। यह सीमांत भूमि बेहतर भूमि के लिए लगान के प्राप्ति को जन्म देती है। वाकर के सिद्धांत में एक उद्यमी की विभेदक क्षमता के लिए विभेदित लगान की अवधारणा लागू की गई है। सिद्धांत बताता है कि उद्यमीयों को भी अलग–अलग क्षमता है। सुपीरियर की क्षमता उद्यमी सीमांतिक उद्यमशीलता की क्षमता के साथ कमाई लाभ कमाते हैं। जैसे कि सीमान्त भूमि पर उद्यमी लगान कमाते है, वह भी लाभ नहीं कमाता है। लाभ उत्पादन की

लागत में शामिल नहीं है लगान की अवधारणा के समान, जब मूल्य उत्पादन की लागत के बराबर है, तो लाभ समीकरण में प्रवेश नहीं करता है। लाभ वास्तव में एक अंतर अधिशेष है जो उद्यमी की सीमांत या बिना किसी लाभकारी उद्यमी की बेहतर क्षमता से अर्जित किया जाता है।

लाभ के लगान सिद्धांत की आलोचना

लाभ के अन्य संस्करणों की तरह, लाभ के लगान के सिद्धांत को भी विभिन्न मोर्चों पर हमला किया जाता है:

1. मार्शल की टिप्पणियां है कि लाभ एक सही अधिशेष नहीं बनाते हैं हालांकि वहां कोई लगान पर कोई जगह नहीं है लेकिन नकारात्मक लगान कभी नहीं मिलते हैं। लेकिन हम अभ्यास के लाभ में पाते हैं कि वे न केवल शून्य होते हैं जिन्हें नकारात्मक कहा जाता है, अर्थात् उद्यमी को हानि लाभ और लगान इसी तरह का अर्थ साझा नहीं करते हैं
2. आधुनिक अर्थव्यवस्था में संयुक्त स्टॉक कंपनियां होती हैं जहां पूंजी का एक बड़ा हिस्सा शेयरधारकों से आता है। उनके पास कंपनी के लाभ और हानि में हिस्सेदारी होती है, जो उनके शेयर होल्डिंग के अनुसार मिलती है। सुपीरियर या उद्यमी की कोई भी क्षमता शेयरधारक के लाभ के हिस्से के हिस्से में नहीं है।
3. लगान दोनों स्थिर और गतिशील स्थिति में उत्पन होता है जबकि लाभ गतिशील स्थिति में उत्पन होता है ।
4. क्या कीमत में लाभ दर्ज होता है इस तथ्य से उत्तर दिया जाता है कि सामान्य लाभ उत्पादन की लागत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। तो सिद्धांत की मुख्य धारणा को चुनौती देने वाले मूल्य में लाभ दर्ज करते हैं
5. लाभ कमाई का एकमात्र मानदंड नहीं है। जोखिम लेने, अनिश्चितता का असर, वाणिज्यिक और एकाधिकार पदों/उद्यमी की शक्तियां नवाचारों का उपयोग लाभ के उभरने के अन्य प्रमुख कारण हैं।
6. वॉकर की सीमांत या कोई लाभ उद्यमी धारणा वास्तविकता से बहुत दूर नहीं है। ऐसे मामले में, कोई भी व्यापार जोखिम मे उद्यमी निवेश नहीं करेगा। इससे फर्म बंद हो सकती है।

18.4.8 लाभ का मजदूरी सिद्धांत

अमेरिकी अर्थशास्त्री ताउसिग, 19 वीं सदी में लाभ के मजदूरी के सिद्धांत को आगे बढ़ाया। ताउसिग एक उद्यमी और एक मजदूर के साथ विशेष क्षमता की तुलना करता है। उन्होंने कहा कि दो प्रकार की क्षमताएं हैंरू शारीरिक और मानसिक जबकि मजदूर अपनी शारीरिक क्षमता का उपयोग करते हैं, जैसे कि उद्यमी, अन्य सेवा प्रदाताओं को शिक्षकों, डॉक्टरों, वकील, प्रशासक आदि के रूप में व्यक्त करते हैं, वे उद्देश्य को प्राप्त करने की अपनी मानसिक क्षमता का उपयोग करते हैं। इस मानसिक क्षमता को विशेष मानसिक श्रम की क्षमता के रूप में संदर्भित किया जाता है। लाभ उनके विशेष मानसिक श्रम की क्षमता के लिए पुरस्कार हैं। लाभ और मजदूरी में अंतर यह है कि जब लाभ उत्पादन के कारकों को सभी भुगतान करने और परिवहन लागत के मजदूरी सहित उत्पादन के अन्य सभी खर्चों को पूरा करने के बाद एक

अधिशेष है, तो उत्पादन की लागत का केवल एक हिस्सा है। तो, लाभ मूल्य में प्रवेश नहीं करता हैं।

लाभ की मजदूरी की आलोचनात्मक समीक्षा

1. विशेष मानसिक क्षमता के साथ, एक उद्यमी के काम में जोखिम और अनिश्चितता का व्यवसाय शामिल है। इसलिए लाभ को केवल अपने काम के लिए मजदूरी नहीं कहा जा सकता है ।
2. मजदूरी निश्चित और पूर्व निर्धारित हैं, लेकिन लाभ नहीं हैं। कभी–कभी वह नकारात्मक या शून्य लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं ।
3. कंपनी के शेयरधारकों को लाभ मिलता है, लेकिन शायद ही किसी भी कार्य का प्रदर्शन। उनके द्वारा निवेश की गई पूंजी के जोखिम के लिए उन्हें लाभांश दिया जाता है, मजदूरी सिद्धांत आधुनिक अर्थव्यवस्था में इस महत्वपूर्ण बिंदु पर कोई रोशनी नहीं डालता है।
4. अप्रत्याशित लाभ या संयोग से लाभ या हानि केवल उद्यमी के साथ मिलते हैं, मजदूर कभी उन्हें नहीं मिलते।

लाभ के सिद्धांतों की एक बड़ी संख्या के ऊपर जोखिम, अनिश्चितता, नवीनता, एकाधिकार, लगान और मजदूरी के संबंध में लाभ के विभिन्न पहलुओं की आलोचनापूर्वक जांच की गई। सिद्धांतों की प्रकृति और लाभ की सीमा को समझाने का प्रयास किया है । यह स्पष्ट है कि कोई भी सिद्धांत पूरी तरह से लाभ निर्धारण को संतोषपूर्वक समझा नहीं सकता है। सभी अधूरे हैं और खामियों से भरे है। अब तक किसी भी अर्थशास्त्री ने कोई संतोषजनक सिद्धांत नहीं रखा है।

18.5 सामान्य और अधिशेष लाभ

दुनिया भर में अर्थशास्त्रियों ने सामान्य और अधिशेष लाभ के संबंध में लाभ की अवधारणा पर चर्चा की है। सामान्य लाभ उद्यमी द्वारा प्राप्त प्रबंधन की मजदूरी है, इस प्रकार फर्म के उत्पादन की लागत का एक हिस्सा बनता है। सामान्य लाभ उद्यमी प्रयास का इनाम है सामान्य लाभ को कम से कम आय के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसे एक उद्यमी को कमाया जाना चाहिए, ताकि उसे मौजूदा व्यवसाय या उघोग में बने रहने के लिए प्रेरित किया जाए, यदि उद्यमी बुनियादी न्यूनतम नहीं जानता तो वह उत्पादन नहीं करेगा। यह लाभ एक निश्चित राशि है जो उत्पादन की लागत में शामिल है। सामान्य लाभ को बड़ी मात्रा में उत्पादन पर वितरित किया जाता है। इस प्रकार सामान्य लाभ उत्पादन को उत्पन्न करने के लिए एक प्रोत्साहन है।

किसी फर्म को कुछ न्यूनतम उद्यमी क्षमता की आवश्यकता होती है जिसके लिए सामान्य लाभ प्राप्त होता है। स्टोनियर और हेग के शब्दों में श्उघोग में रहने के लिए उद्यमी को प्रेरित करने के लिए केवल सामान्य लाभ पर्याप्त हैंश लंबे समय तक चलने वाला उघोग सामान्य लाभ कमाता है। यह एक ऐसी प्रवृत्ति है जहां न तो एक नई फर्म चाहता है और न ही एक मौजूदा फर्म उघोग में गायब हो जाता है। संतुलन की स्थिति बनी हुई है जहां सभी संसाधन पूरी तरह नियोजित हैं। इसमें कोई अनिश्चितता नहीं है वर्तमान शुद्ध लाभ वास्तव में प्रबंधन की मजदूरी हैं। दूसरी ओर, अल्पगतिशील स्थिति की अर्थव्यवस्था अधिशेष या सामान्य लाभ को जन्म देती है, सामान्य या अधिशेष

लाभ सामान्य लाभ से ऊपर बताया गया है। अतिसामान्य लाभ सामान्य लाभ से ज्यादा उद्यमी द्वारा अर्जित लाभ है जो उत्पादन की लागत का हिस्सा हैं। कारोबार में जोखिम और अनिश्चितता के कारण असाधारण लाभ या अन्यथा असामान्य लाभ उत्पन्न होता है। यह भी एकाधिकार लाभ और मौका के कारकों के कारण उठता है। हाउले के मुताबिक एक उद्यमी व्यवसाय में जोखिम के कारण असामान्य लाभ कमाता है। गैर–बीमा योग्य जोखिम के कारण असामान्य लाभ उठता है। गैर–बीमा योग्य जोखिम अनुमान नहीं लगाए जा सकते हैं। वहां जोखिम पहले से नहीं जान सकते हैं उद्यमी की बड़ी और कम दक्षता लाभ के मार्जिन को प्रभावित करती है। यहां तक कि लंबे समय तक इस तथ्य के कारण अतिसामान्य लाभ हो सकता है। एकाधिकार लाभ यह विशेष मामला है, जहां लंबे समय तक चलने वाली मांग कठोर और अनिश्चितता प्रचलित है ।

सामान्य और अतिसामान्य लाभ की अवधारणा के विपरीत, नकारात्मक लाभ का विचार भी बना हुआ है, यानी कुछ समय के लिए उद्यमीयों द्वारा भी हानि उत्पन होती है लेकिन यह स्थिति दीर्घकालिन नहीं है। यदि उद्यमी की लागत में कटौती करने के बावजूद भी उसे सामान्य लाभ नहीं है, वह लंबे समय मे अपनी फर्म को बंद कर देगा।

18.6 क्या लाभ शून्य हो जाते हैं?

शून्य होने की वजह से लाभ के बारे में एक बड़ा सवाल अभी भी एक रहस्य है रिकार्डो, शुम्पीटर और क्लार्क जैसे अर्थशास्त्रियों का मानना है कि लंबे समय तक पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी बाजार में अति सामान्य लाभ अब मौजूद नहीं है। नई कंपनियों का प्रवेश उद्योग में उद्यमी की आपूर्ति को बढ़ाता है जिससे कीमत में कमी आ सकती है। जैसे कि मूल्यों की कीमत औसत लागत के बराबर होती है बाजार में प्रतिस्पर्धा की तीव्रता के कारण गायब होने के लिए सामान्य लाभ होता है। नवाचार बनाये जाते हैं लेकिन उद्योग में अन्य लोगों द्वारा उनकी नकल भी की जाती है। शुद्ध परिणाम केवल सामान्य लाभ का प्रचलन है शून्य या नकारात्मक लाभ का शुद्ध लाभ का अनुमान केवल एक अल्पगति विश्लेषण है। लंबे समय तक चलने वाले सामान्य लाभ में बाजार का आदेश दिया जाता है।

सैमुअल्सन, कालेकी और नाइट् जैसे अर्थशास्त्री के विपरीत दृष्टिकोण हैं। शुद्ध प्रतिस्पर्धा को मिथक माना जाता है, वास्तविकता में अपूर्ण प्रतियोगिता मिलती है। एकाधिकार और बाजार के स्वामित्व वाले रूपों में, अति सामान्य लाभ उद्यमीयों दोनों के साथ अल्पावधि और साथ ही लंबे समय तक प्राप्त की जाती हैं। ऐसी परिस्थितियों में लाभ में गिरावट नहीं होती है, इसलिए लाभ फिर भी बराबर नहीं होता और न ही बढ़ता। बाजार में कोई हानि नहीं हुई है।

18.7 सारांश

लाभ जोखिम उठाने, अनिश्चितताओं को जन्म देने, उत्पादन की लागत में कटौती, अभिनव और एकाधिकार शक्ति प्राप्त करने के लिए पुरस्कार हैं। लाभ के मुख्य रूप से दो प्रकार होते हैं, अर्थात् सकल लाभ और शुद्ध लाभ । सकल लाभ कुल राजस्व और स्पष्ट लागत और शुद्ध लाभ में अंतर है, सकल

लाभ से असंतुलित लागत में कटौती के बाद। कई सिद्धांतों को लाभ के आकलन के लिए विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा आगे रखा गया है, लेकिन कोई भी सिद्धांत लाभ का निर्धारण नहीं करता है। यद्यपि शुम्पीटर द्वारा अग्रिम सिद्धांत आधुनिक व्यापारिक दुनिया में पहचाना जाता है, क्योंकि उन्होंने व्यवसायिक नवाचारों की भूमिका पर जोर दिया है ताकि उद्यमी का कार्य हो और इस कार्य के लिए लाभ के साथ पुरस्कृत किया गया।

18.8 शब्दावली

लाभ: वर्तमान भुगतान करने के बाद व्यापार आय ।

सकल लाभ: कुल स्पष्ट लागतों पर राजस्व का अतिरिक्त ।

अतिसमान्य लाभ: एकाधिकार की वजह से उत्पन होने वाला लाभ ।

18.9 बोध प्रश्न

(ए) रिक्त स्थान भरें

(ए) .... अनिश्चितता जोखिम के लिए उद्यमी के लिए इनाम है।

(बी) सकल लाभ के .... तत्व हैं।

(सी) अप्रत्याशित लाभ .... लाभ का एक तत्व है।

(डी) नवाचार करने के लिए पुरस्कार .... लाभ का एक तत्व है।

(ई) शुद्ध लाभ = सकल लाभ – ....।

(बी) सही या गलत

(ए) नाइट् के सिद्धांत का लाभ एफ. एच. नाइट् ने अपनी पारंपरिक पुस्तक 'जोखिम, अनिश्चितता और लाभ' में पेश किया था ।

(बी) एक अमेरिकी अर्थशास्त्री शुम्पीटर ने 'लाभ के लगान सिद्धांत' का विकास किया ।

(सी) अमेरिकी अर्थशास्त्री ताउसिग ने 19 वी सदी में 'लाभ के मजदूरी सिद्धांत' बताया ।

(डी) अर्थशास्त्री जैसे लिक्टर और क्लार्क ने 'एकाधिकार लाभ सिद्धांत' के बारे में बात की ।

(ई) शुद्ध लाभ = कुल राजस्व – (स्पष्ट लागत – अप्रत्यक्ष लागत) ।

18.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

(ए)

(ए) शुद्ध लाभ , (बी) चार, (सी) शुद्ध, (डी) शुद्ध, (ई) सम्मिलित

(बी)

(ए) सत्य, (बी) गलत, (सी) सत्य, (डी) गलत, (ई) गलत

18.11 स्वपरख प्रश्न

1. 'लाभ' से क्या आशय है? सकल और शुद्ध लाभ के मध्य अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
2. लाभ की लगान और मजदूरी सिद्धांत के प्रमुख पदों का वर्णन करें।
3. शुम्पीटर के 'लाभ गतिशील सिद्धांत' की गंभीरता से वर्णन करें।
4. लाभ के सिद्धांत से सम्बन्ध रखते हुए हॉले के जोखिम सिद्धांत और नाइट् के अनिश्चितता सिद्धांत की परस्पर तुलना कीजिए ।

18.12 संदर्भ पुस्तकें

1. योगेश माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, प्रेंटिस हॉले ऑफ़ भारत, नई दिल्ली
2. डी.एन. द्विवेदी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली
3. टी.आर. जैन, ओ.पी. खन्ना और विरसेन, माइक्रो इकोनॉमिक्स एंड इंडियन अर्थव्यवस्था, वी.के. प्रकाशक, नई दिल्ली
4. एच.एल. अहुजा, एडवांस्ड इकोनॉमिक सिद्धांत, एस चंद एंड कं लिमिटेड, नई दिल्ली।
5. आत्मानंद, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, एक्सेल बुक, दिल्ली।
6. आर.एल. वर्शनी और के.एल. माहेश्वरी, प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, सुल्तान चंद एंड संस, नई दिल्ली